CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

भारत की आधुनिक राजभाषा स्वरूप और समस्याएँ

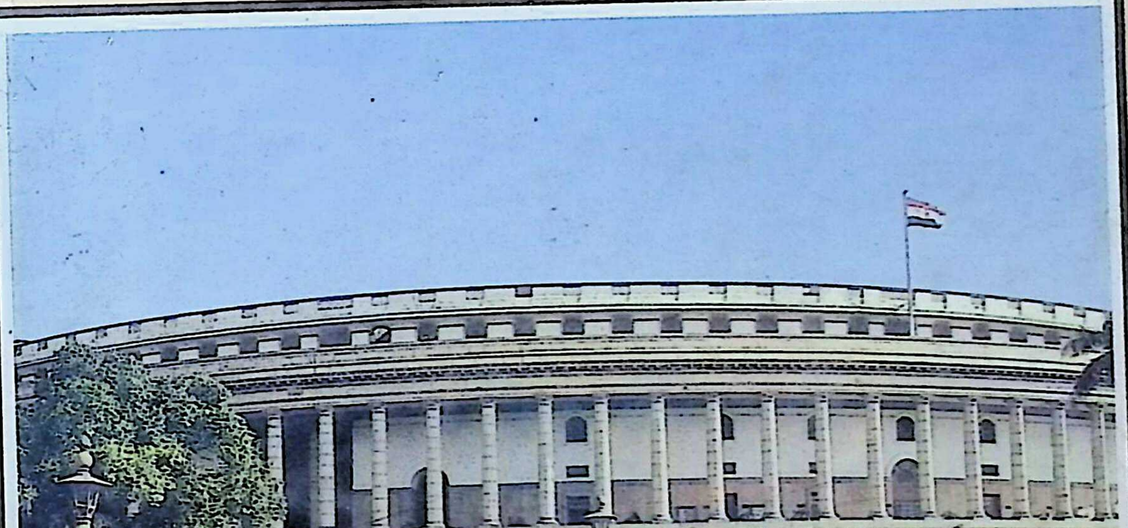

डॉ. दिलीप कुमार चौहान

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

2.2

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

भारत की आधुनिक राजभाषा : स्वरूप और समस्याएँ

(स्वीकृत शोध–प्रबन्ध का संविध प्रकाशन)

लेखक

डॉ. दिलीपकुमार चौहान

एम. ए., पी-एच. डी., साहित्यरत्न,

सम्पादन–कला–विशारद

प्रकाशक

श्री म. भा. हिन्दी साहित्य समिति, इन्दौर

वर्ष–१९९२

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

प्रकाशक :—

श्री मध्यभारत
हिन्दी साहित्य समिति,
११, रवीन्द्रनाथ टैगोर मार्ग,
इन्दौर-४५२.०१ (म. प्र.)

प्रथम संस्करण–१९९२

मूल्य रुपये १००।—

आवरण–कर्णकेतू

मुद्रक :—

समिति प्रेस,
इन्दौर (म. प्र.)

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

संकेतिका

भोलानाथ तिवारी	:	भो. ना. तिवारी, भो. तिवारी
धीरेन्द्र वर्मा	:	धी. व.
हिन्दी साहित्य का इतिहास	:	हि. सा. इ.
खड़ीबोली का स्वरूप और साहित्यिक परम्परा.	:	ख. बो. स्व. और सा. प.
खड़ी–बोली	:	ख. बो.
प्रवेश–१, साहित्य परिचय	:	प्र. १ सा. प.
अनुवादक	:	अनु.
लक्ष्मीनारायण	:	ल. ना.
हिन्दी भाषा–आन्दोलन	:	हिन्दी भा. आ.
राष्ट्रभाषा सन्देश	:	रा. भा. सा.
विश्व हिन्दी सम्मेलन	:	वि. हि. स.
रायबहादुर गौरीशंकर हीराचंद ओझा	:	रा. ब. गौ. ही. ओझा.
स्वतंत्रता रजत जयन्ती अभिनंदन ग्रंथ	:	स्व. र. ज. अ. ग्र.
गोपालप्रसाद व्यास	:	गो. व्यास.
कृष्णविहारी मिश्र	:	कृ. बि. मि.
केवलकृष्ण शर्मा	:	के. कृ. शर्मा
साहित्य-परिचय : भाषा समस्या-विशेषांक	:	सा. प. भा. स. वि.
नागरी-प्रचारिणी-सभा	:	ना. प्र. स.
हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन	:	हि. सा. स.
सस्ता साहित्य मंडल	:	स. सा. मं.
लोक भारती प्रकाशन	:	लो. भा. प्र.
आर्य-साहित्य मंडल	:	आ. सा. मं.
विनोद पुस्तक मंदिर	:	वि. पु. मं.
लोक चेतना प्रकाशन	:	लो. चे. प्र.
मानक-चन्द बुक डिपो	:	मा. च. बुक डिपो.
नागरी-प्रचारिणी-सभा काशी	:	ना. प्र. स. का.
आत्माराम एण्ड सन्स	:	आ. रा. एण्ड सन्स

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

पीठिका

१. प्राचीन काल में भारत की राजभाषा संस्कृत, प्राकृत और अपभ्रंश रही हैं। मध्यकाल में यह पद फारसी को प्राप्त हुआ। ब्रिटिशकाल में अंग्रेजी राजभाषा रही है। आधुनिक काल में यह गौरव हिन्दी को मिला है। डॉ. दिलीपकुमार चौहान ने राजभाषा हिन्दी के स्वरूप और उसकी समस्याओं पर जो प्रबन्ध लिखा है, वह अपने-आपमें पूर्ण और नई दिशा देने वाला है।

२. लिपि भाषा का दृश्य रूप होता है। भारत की समस्त आर्य लिपियों का स्रोत ब्राह्मी लिपि हैं। ब्राह्मी की दक्षिणी शाखा से वर्तमान तेलुगु, कनड़ी, ग्रन्थ, मलयालम्, तुलु और तामिल लिपियाँ विकसित हुई हैं। ब्राह्मी की उत्तरी शाखा से गुप्त, कुटिल, नंदिनागरी, देवनागरी, शारदा (कश्मीरी), टाकरी, कैथी, बंगला, मैथिली, उड़िया, गुजराती, गुरमुखी और बोड़ी लिपियाँ प्रचलन में आई हैं। प्रबन्ध लेखक ने आधुनिक देवनागरी लिपि की वर्णमाला में अक्षरों के विकल्पों को कम करके एकरूपता स्थापित की है तथा अक्षरों और अंकों के रूपों का मानकीकरण किया है। प्रस्तुत प्रबन्ध की यह मौलिक उद्भावना है।

३. भारत के संविधान के अनुसार संघ की राजभाषा हिन्दी और लिपि देवनागरी है। संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग होने वाले भारतीय अंकों का, अन्तर्राष्ट्रीय रूप मान्य है, किन्तु राष्ट्रपति आदेश द्वारा अंकों के देवनागरी रूप के प्रयोग को भी प्राधिकृत कर सकता है। यह प्रावधान भारत के संविधान के १७ वें भाग की धारा ३४३ में संविधानसभा ने १४ सितम्बर, १९४९ ई. में स्वीकार किया है। संविधानसभा का गठन १९४६ ई. में

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

किया गया था, जिसकी पहली बैठक ९ दिसम्बर, १९४६ ई. को हुई। बाबू राजेन्द्रप्रसाद इसके अध्यक्ष थे। लगभग तीन वर्षों के गहन विचार–विमर्श के बाद हिन्दी को राजभाषा बनाने का मसौदा स्वीकार हुआ। इस पर संविधान सभा के अध्यक्ष के रूप में बाबू राजेन्द्रप्रसाद ने घोषणा की थी कि **'आज पहली बार हम अपने संविधान में एक भाषा स्वीकार कर रहे हैं जो भारत संघ के प्रशासन की भाषा होगी और समय के अनुसार इसे अपने आपको ढालना और विकसित करना होगा। हमने अपने देश का राजनैतिक एकीकरण सम्पन्न किया है। राजभाषा हिन्दी देश की एकता को कश्मीर से कन्याकुमारी तक अधिक सुदृढ़ बना सकेगी। अंग्रेजी की जगह भारतीय भाषा को स्थापित करने से हम निश्चय ही एक दूसरे के और भी नज़दीक आ सकेंगे।'** इसके पूर्व सरदार वल्लभभाई पटेल ने कहा था कि हिन्दी का पेट महासागर की तरह विस्तृत है, जिसमें सब भाषाएँ समा सकती हैं। वह राष्ट्रभाषा है। राष्ट्रभाषा न तो किसी प्रांत और न तो किसी जाति की है। वह सारे भारत की भाषा है। इसके लिए जरूरी है कि सारे भारत के लोग इसे समझ सकें और अपनाने में गौरव हासिल कर सकें।' इसी व्यापक परिप्रेक्ष्य में हिन्दी को राजभाषा बनाया गया है और भारत के संविधान में अनुच्छेद ३४३ से लेकर ३५१ तक में इसके प्रयोग, स्वरूप और विकास के लिए प्रावधान किये गये हैं।

४. अनुच्छेद ३४३ में कहा गया है कि भारत की राजभाषा हिन्दी और लिपि देव–नागरी होगी, किन्तु संविधान के प्रारम्भ होने की तिथि से पन्द्रह वर्ष की कालावधि तक जिन प्रयोजनों में अंग्रेजी का प्रयोग होता था, अंग्रेजी का ही प्रयोग होगा, बशर्तें कि राष्ट्रपति हिन्दी के प्रयोग का भी आदेश न दें। यदि राष्ट्रपति आदेश देंगे, तो हिन्दी का भी प्रयोग हो सकेगा। अनुच्छेद ३४३ के खण्ड २ के अधीन २७ मई, १९५२ को राष्ट्रपति ने राज्यों के राज्यपालों, उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों तथा उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों के नियुक्ति अधिपत्रों में हिन्दी भाषा और देवनागरी अंकों के प्रयोग को भी प्राधिकृत किया। ३ दिसम्बर, १९५५ के आदेश द्वारा राष्ट्रपति ने निम्नांकित प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी के अतिरिक्त हिन्दी के प्रयोग को भी प्राधिकृत किया—(१) जनता के साथ पत्र–व्यवहार, (२) प्रशासनिक रिपोर्ट, सरकारी पत्रिकाएँ और संसद में प्रयुक्त की जाने वाली रिपोर्टें, (३) सरकारी संकल्प और विधायी अधिनियम, (४) जिन राज्य सरकारों ने हिन्दी को अपनी राजभाषा के रूप में अपना लिया है, उनसे पत्र–व्यवहार (५) संधियाँ और करार (६) अन्य देशों की सरकारों और उनके दूतावासों और अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों से पत्र–व्यवहार, (७) राजनयिक और कौंसलीय पदाधिकारियों और अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों में भारतीय प्रतिनिधियों के नाम जारी किये जाने वाले औपचारिक दस्तावेज।

५. संघ की राजभाषा हिन्दी के विकास के लिए अनुच्छेद ३५१ में जो निदेश दिया गया है, वह इस प्रकार है, 'संघ का यह कर्तव्य होगा कि वह हिन्दी भाषा का प्रसार बढ़ाए, उसका विकास करे, जिससे वह भारत की सामासिक संस्कृति के सभी तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके और उसकी प्रकृति में, हस्तक्षेप किये बिना हिन्दुस्तानी में और आठवीं अनुसूची में विनिर्दिष्ट भारत की अन्य भाषाओं (असमिया, बंगला, गुजराती, हिन्दी, कन्नड़,

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

कश्मीरी, मलयालम, मराठी, उड़िया, पंजाबी, संस्कृत, सिंधी, तमिल, तेलुगू, उर्दू) में प्रयुक्त रूप, शैली और पदों को आत्मसात् करते हुए और जहाँ आवश्यक या वांछनीय हो, वहाँ उसके शब्द-भण्डार के लिए मुख्यतः संस्कृत से और गौणतः अन्य भाषाओं (कोंकणी, नेपाली, मणिपुरी आदि देशी या विदेशी) से शब्द ग्रहण करते हुए उसकी समृद्धि सुनिश्चित करे।' इससे यह स्पष्ट है कि केन्द्रीय सरकार ऐसी हिन्दी के विकास के लिए वचनबद्ध है जो सार्वदेशिक और सर्व समावेशक हो। दिल्ली, हरियाणा, हिमाचलप्रदेश, उत्तरप्रदेश, बिहार, मध्यप्रदेश और राजस्थान में जो हिन्दी प्रयुक्त होती है, वह क्षेत्रीय हिन्दी है। संविधान की आठवीं अनुसूची में इसी हिन्दी का उल्लेख है। इसी क्षेत्रीय हिन्दी की प्रकृति को सुरक्षित रखना, देश की भाषाओं के रूप–पद और शैली को आत्मसात् करना और विविध भाषाओं से शब्द ग्रहणकर ऐसी भाषा विकसित करना जो भारत की समन्वित संस्कृति के तत्वों को अभिव्यक्त कर सके। यही विकसित क्षेत्रीय हिन्दी भारतव्यापी स्वरूप वाली भाषा राजभाषा हिन्दी होगी। हिन्दी के इसी व्यापक स्वरूप की अवधारणा संविधान-निर्माताओं ने की थी। यह इस रूप में गांधीजी की राष्ट्रभाषा की पर्याय बन जाती है।

६. हिन्दी भाषा की उत्तरोत्तर प्रगति के लिए तथा संघ के राजकीय प्रयोजनों के लिए अनुच्छेद ३४४ में एक आयोग गठित करने और तदनुसार आदेश जारी करने का अधिकार राष्ट्रपति को दिया गया। उस आयोग का नाम राजभाषा आयोग है। आयोग के २० सदस्य लोकसभा के और १० राज्यसभा से निर्वाचित किये जाते हैं। यह आयोग ७ जून, १९५५ को गठित हुआ। उक्त आयोग की सिफारिश पर राष्ट्रपति ने २७ अप्रैल, १९६० ई. को आदेश जारी किये कि (१) वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली के निर्माण के लिए शिक्षा मंत्रालय एक स्थायी आयोग स्थापित करे, (२) शिक्षा मंत्रालय सांविधिक नियमों, विनियमों और आदेशों के अतिरिक्त सभी मैनुअलों तथा कार्यविधि-साहित्य का **अनुवाद** हाथ में ले और भाषा में एकरूपता सुनिश्चित करने के लिए यह काम केवल एक ही अभिकरण को सौंपे। (३) एक मानक विधि–शब्दकोश बनाने, हिन्दी में विधि के अधिनियम और विधि शब्दावली के निर्माण के लिए विभिन्न राष्ट्रीय भाषाओं का प्रतिनिधित्व करने वाले कानून-विशेषज्ञों का एक स्थायी आयोग स्थापित करे। तृतीय श्रेणी से नीचे के कर्मचारियों, औद्योगिक संस्थानों के कर्मचारियों और कार्यभारित कर्मचारियों को छोड़कर उन सभी केन्द्रीय कर्मचारियों के लिए हिन्दी का सेवाकालीन प्रशिक्षण अनिवार्य कर दिया जाए; जिनकी आयु १-१-१९६१ को ४५ वर्ष से कम हो, गृह-मंत्रालय टंककों और आशुलिपिकों को हिन्दी टंकन तथा आशुलेखन प्रशिक्षण की व्यवस्था करे। राष्ट्रपति के इस आदेश से जहाँ सक्रियता आई, वहीं हिन्दी विरोध प्रबल हुआ। अंग्रेज़ी-समर्थक उग्र होते गये। सुविधाभोगी बुद्धिजीवियों ने प्रादेशिक भाषावाद को बढ़ावा दिया तथा अंग्रेज़ी पुस्तकों के व्यापारियों और साम्राज्यवादी-पूंजीवादी विदेशी राष्ट्रों ने विदेशी मानसिकता को प्रचारित किया, जिससे दुरंगी नीति वाले नेतागण प्रभावित हुए और उन्होंने २६ जून, १९६५ के बाद भी अनिश्चित काल तक के लिए अंग्रेज़ी के प्रयोग की मान्यता प्राप्त करने में सफलता प्राप्त कर ली। इसके लिए राजभाषा अधिनियम १९६३ पारित कर अंग्रेज़ी को सह-राजभाषा बना दिया गया। परिणाम है–राष्ट्र में

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

द्विभाषिकता की स्थापना याने दुगुना श्रम और दुगुना अर्थ का भार पूरे राष्ट्र पर।

७. राजभाषा अधिनियम १९६३ के १९६७ वाले संशोधन के बाद सरकारी प्रयोजनों में हिन्दी प्रयोग के लिए गृह-मंत्रालय ने ६ जुलाई, १९६८ को विस्तृत अनुदेश दिये हैं। इससे राजभाषा कार्यान्वयन के लिए नगर राजभाषा समितियों संसदीय राजभाषा समितियों तथा केन्द्रीय राजभाषा समिति का गठन किया गया है, जो हिन्दी की प्रगति का लेखा-जोखा लेती रहती हैं।

८. १७ जुलाई, १९७६ को भारत के राजपत्र में राजभाषा नियम प्रकाशित हुए। इन नियमों के अधीन पूरे देश को तीन क्षेत्रों में बाँटा गया–क, ख और ग। 'क' क्षेत्र में हिन्दी भाषी राज्य हैं, जिसमें बिहार, उत्तरप्रदेश ,मध्यप्रदेश, राजस्थान, हरियाणा, हिमाचलप्रदेश और दिल्ली राज्य हैं। 'ख' क्षेत्र में पंजाब, गुजरात और महाराष्ट्र राज्य तथा अण्डमान, निकोबर द्वीप समूह और चंडीगढ़ संघ-राज्य हैं। 'ग' क्षेत्र में भारत के **शेष सभी राज्य** व क्षेत्र आते हैं। इस विभाजन से जहाँ सरकारी कामकाज में हिन्दी के प्रयोग में कुछ क्षेत्रों में तत्परता आई है, वहीं कुछ क्षेत्रों में विषमता पैदा हुई है। इन नियमों के अनुपालन का दायित्व कार्यालयों के प्रशासनिक अधिकारियों पर छोड़ा गया है, जिसमें अधिकारी विशेष की मानसिकता प्रतिबिम्बित होती है। इसके बाद भारत सरकार ने समय-समय पर अनेक अनुदेश और आदेश जारी किये हैं, जिनका पालन सरकारी कार्यालयों, सार्वजनिक उपक्रमों, निगमों, बैंकों तथा कम्पनियों में किया जा रहा है। सरकारी आदेश तो हैं, किन्तु कार्यान्वयन में वरिष्ठ अधिकारियों की उदासीनता या स्वेच्छाचारिता ने हिन्दी को व्यवहार रूप में राजभाषा बनाने में बाधा पहुँचाई है।

९. संसद ने १९६८ में एक संकल्प पारित किया था कि **हिन्दी भाषी क्षेत्रों में हिन्दी और अंग्रेजी के अतिरिक्त, दक्षिण भारत की आधुनिक भाषाओं में से एक तथा हिन्दीतर भाषी क्षेत्रों में प्रादेशिक भाषाओं एवं अंग्रेजी के साथ-साथ हिन्दी का अध्ययन अनिवार्य किया जाए।"** यह संकल्प त्रिभाषा-सूत्र के नाम से विख्यात हुआ। सैद्धान्तिक रूप से महत्वपूर्ण होते हुए भी व्यावहारिक रूप से इस सूत्र का वह परिणाम न हुआ, जो होना चाहिए था। कई राज्यों ने इस त्रिभाषा-सूत्र को ठीक से कार्यान्वित नहीं किया।

संघ लोक-सेवा-आयोग की परीक्षाओं का माध्यम संविधान की आठवीं सूची में सम्मिलित सभी भाषाओं तथा अंग्रेज़ी को मान्य किया गया है। इससे लोगों के मन में अनासक्ति आ गई है। लोग सोचने लगे हैं कि जब अंग्रेज़ी से काम चल सकता है, तब हिन्दी की क्या जरूरत है? शिक्षा के क्षेत्र में और सरकारी भाषा नीति में जब तक कुछ परिवर्तन नहीं होते तब तक ऐसी विचारधारा को रोका नहीं जा सकता है।

१०. राज्यों की राजभाषाओं के सम्बन्ध में यह बताया गया है कि अनुच्छेद ३४५, ३४६ और ३४७ के अनुसार एक राज्य दूसरे राज्य के बीच अथवा राज्य और संघ के बीच संचार के लिए राजभाषा का प्रयोग होगा। राज्य और राज्य के बीच

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

करार होने पर हिन्दी राजभाषा होगी। अनुच्छेद ३४७ के अनुसार यदि किसी राज्य की जनता का पर्याप्त भाग यह चाहता है कि उसके द्वारा बोली जाने वाली भाषा को विनिर्दिष्ट प्रयोजन के लिए मान्यता देने को राज्यपाल निदेश दे सकेगा। इससे प्रादेशिक भाषाओं की मान्यता का प्रश्न अपने-आप हल हो जाता है।

११. संसद में प्रयोग की जाने वाली भाषा अनुच्छेद १२० (१) के अनुसार अंग्रेज़ी या हिन्दी हो सकती है, परन्तु लोकसभा का अध्यक्ष या राज्यसभा का सभापति सदस्य विशेष को अपनी मातृभाषा में बोलने की अनुमति दे सकेगा। इसका तात्पर्य यह है कि आठवीं अनुसूची में उल्लिखित सभी १८ भाषाओं में संसद में बोलने का अधिकार है तथा संसद के पटल पर अंग्रेजी के साथ-साथ हिन्दी में भी बिल, रिपोर्ट, कागज़ात, टिप्पणी आदि रखना ही पड़ता है, किन्तु यह सब आँसू पोंछने के समान है। भारतीय भाषाओं के प्रति अधिकारियों में निष्ठा की कमी परिलक्षित होती ही रहती है।

१२. कानून बनाने तथा न्यायालयों में निर्णय, डिक्री या आदेश देने या कार्रवाई करने की भाषा अंग्रेजी ही है। अनुच्छेद ३४८ के अनुसार संसद और विधानमण्डलों द्वारा बनाये जाने वाले कानूनों के प्राधिकृत पाठ अंग्रेजी में ही होंगे। साथ ही उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों की डिक्री, निर्णय या आदेश का अंग्रेजी पाठ ही प्राधिकृत माना जायगा। यदि उच्च न्यायालयों में किसी प्रादेशिक भाषा में निर्णय, डिक्री या आदेश हैं, तो उसका अंग्रेजी अनुवाद ही प्राधिकृत माना जायगा। इस प्रकार विधि के क्षेत्र में अंग्रेजी का पूर्ण वर्चस्व है, किन्तु १९६३ के अधिनियम की धारा ६ के अनुसार सम्बन्धित राज्यपाल द्वारा अनुमोदित हिन्दी अनुवाद प्राधिकृत माना जायगा। उसी अधिनियम की धारा ७ के अनुसार उच्च न्यायालय द्वारा प्रादेशिक भाषा में दिया गया निर्णय स्वीकार किया जायगा, किन्तु यदि उच्चतम न्यायालय में अपील हुई, तो उस निर्णय का अंग्रेजी अनुवाद प्रामाणिक होगा। कानून के क्षेत्र में राजभाषा हिन्दी का पक्ष अत्यन्त दुर्बल है। इस क्षेत्र में अनुच्छेद ३४८ व ३४९ को संशोधित करना परमावश्यक है। यह कार्य विधि-महाविद्यालयों में हिन्दी के अध्ययन-अध्यापन के माध्यम से सम्पन्न हो सकेगा। उच्च न्यायालय अंग्रेजी अनुवाद कराके इस समस्या का हल करा सकता है।

१३. पीड़ित मनुष्य अपनी व्यथा-निवारण के लिए संघ या राज्य के किसी भी अधिकारी को संघ में या राज्य में प्रयुक्त किसी भी अधिकारी को संघ में या राज्य में प्रयुक्त किसी भी भाषा में प्रतिवेदन दे सकता है। उसे यह अधिकार अनुच्छेद ३५० में दिया गया है। इसी प्रकार भाषाई अल्पसंख्यक अपने बालकों को प्राथमिक शिक्षा अपनी मातृभाषा में दिलाने के अधिकारी हैं; किन्तु भाषाई अल्पसंख्यक शिक्षण संस्थाएं खोलकर अंग्रेजी माध्यम के स्कूलों का जाल बिछा रहे हैं। संविधान प्राथमिक शिक्षा के लिए ही संरक्षण देता है (द्र. अनुच्छेद ३५० अ), किन्तु वे माध्यमिक एवं महाविद्यालयीन शिक्षा में भी अंग्रेजी को ही बढ़ावा देते हैं, अपनी मातृभाषाओं को नहीं। इससे राजभाषा हिन्दी पिछड़ती जा रही है।

१४. हिन्दी को संघभाषा के रूप में स्वीकारना एक महत्वपूर्ण बात है। यह देश के मध्य आन्तर-भारतीयता की माध्यम है। इन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अनुच्छेद ३५१

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

में विशेष निर्देश हैं। इसे देश की सामासिक संस्कृति की अभिव्यक्ति का प्रभावी माध्यम माना गया है। निर्देशित तत्वों के अनुसार इसे विकसित, समृद्ध और प्रसारित किया गया है, जिससे यह न केवल देश की सम्पर्क भाषा, अपितु अपनत्व एवं एकात्मता की भाषा बन गई है। राजकीय, आर्थिक, सामाजिक सेवाओं, वाणिज्य, व्यापार, उद्योग, प्रचार आदि में इसकी महती भूमिका है। अब यह क्षेत्रीय हिन्दी न रहकर अखिल भारतीय व्यवहार की भाषा बन गई है। इसलिए अब इसे व्यापक दृष्टिकोण अपनाकर सामासिक संस्कृति को अभिव्यक्त करना होगा। सर्वप्रथम इसे हिन्दीतरभाषी महानुभावों के संदेहों को दूर करने के लिए सरकारी सेवाओं में हर एक राज्य के उम्मीदवारों को निश्चित संख्या में प्रतिनिधित्व देना होगा। दूसरे, केन्द्रीय राजभाषा हिन्दी और राज्यों की प्रादेशिक हिन्दी के अन्तर उदार भावना से अपनाना चाहिए। तीसरे, हिन्दी के पठन–पाठन और पाठ्यक्रम में आधुनिकता होनी चाहिए। आज हिन्दीतर प्रान्तों के विद्यार्थियों को डिंगल, ब्रज, अवधी और पुरानी हिन्दी पढ़ाना अनावश्यक है। प्रारंभिक हिन्दी का ज्ञान पाने वालों को पुरानी हिन्दी आवश्यक नहीं। चौथे, हिन्दीतर राज्यों के प्रतिष्ठ हिन्दी लेखकों को भी हिन्दी पाठ्यक्रमों में समुचित स्थान मिलना चाहिए। विचारों के परस्पर आदान--प्रदान के लिए यह आवश्यक है। अनुच्छेद ३५१ का सामासिक संस्कृति शब्द तभी सार्थक होगा, जबकि समस्त भारतीयों के आचार--विचार, रीति--नीति और साहित्य--संस्कृति को अभिव्यक्ति प्रदान करने वाली हिन्दी राजभाषा के पद पर यथार्थ रूप में प्रतिष्ठित होगी तथा भारत के सभी लोग उसके साथ अपनत्व की भावना को अपनायेंगे।

१५. संविधान के ३४३ वें अनुच्छेद में कहा है कि संघ की लिपि देवनागरी होगी।' देवनागरी लिपि भारतीय लिपियों की प्रकृति के अनुकूल है। यह परम्परा प्राप्त लिपि है। यह भारत की प्राचीनतम लिपि ब्राह्मी से विकसित हुई है। ब्राह्मी की उत्तरी शाखा से गुप्त लिपि, फिर कुटिल लिपि, बाद में शारदा लिपि और अन्त में देवनागरी लिपि का विकास हुआ है। देवनागरी की दो विशेषताएँ हैं--एक तो, इसका व्यंजन अक्षर बोलने का आधार है और दूसरे, इसके स्वर को लिखने की बजाय केवल उसकी मात्रा लगाई जाती है। इससे जो बोला जाता है, वही लिखा जाता है। विनोबा भावे विश्व की २० लिपियाँ जानते थे। वे देवनागरी को सर्वश्रेष्ठ मानते थे। उनकी मान्यता थी कि विश्व की सभी भाषाएँ देवनागरी अक्षरों में लिखी जा सकती हैं। फिर भी वे दुराग्रही नहीं थे। उनका कहना था; 'देवनागरी 'ही' नहीं, देवनागरी 'भी' चलाओ। इसके पूर्व विख्यात न्यायशास्त्री जस्टिस शारदाचरण मित्र, लोकमान्य तिलक, स्वामी दयानन्द, महात्मा गांधी, काका कालेलकर और बाबू पुरुषोत्तमदास टण्डन जैसे विद्वानों ने देवनागरी की श्रेष्ठता सिद्ध की थी; किन्तु संविधान सभा में देवनागरी की प्रकृति के प्रतिकूल उसकी वर्णमाला में अन्तरराष्ट्रीय अंकों का प्रावधान कर, उसे विकृत कर दिया गया है। इसीसे १९५२ में राष्ट्रपति ने देवनागरी अंकों के प्रयोग को भी प्रयोजन-विशेष के लिए प्राधिकृत कर दिया है।

देवनागरी लिपि में कुछ कमियाँ थीं। उन्हें टंकन, मुद्रण, दूरमुद्रण और शीघ्रलेखन सुलभ बनाने के लिए 'लिपि-सुधार समितियों' के माध्यम से मानकीकृत कर दिया गया है।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

सन् १९७८ में इसे विकसित कर फोटो कंपोजिंग के लिए उपयुक्त बना दिया गया है। हाल ही में पिलानी में बिड़ला इंस्टीट्यूट ऑफ टेकनालॉजी एण्ड साइंस के वैज्ञानिकों ने 'देव सिद्धार्थ संगणक' नामक देवनागरी कम्प्यूटर तैयार कर दिया है। इसलिए देवनागरी लिपि अब सर्वगुण आगरी बन गई है। इस कारण से यदि देश की सभी भाषाएँ एक ही लिपि देवनागरी में लिखी जाए तो देश की एकता और अखण्डता अपने-आप आ जाएगी और देश का अपार श्रम व धन बचेगा।

१६. उक्त निष्कर्षों की पीठिका पर आसीन होकर श्रमशील प्रबन्ध लेखक डॉ. दिलीपकुमार चौहान ने राजभाषा की शैक्षिक, विधिक, न्यायालयीन, प्रशासनिक, लिपिकीय और भाषिक समस्याओं पर ऊहापोहपूर्वक विचार किया है तथा विविध क्षेत्रों से परामर्श कर उनका निदान खोजने की सफल चेष्टा की है। उसने सिद्धान्त पक्ष और व्यवहार पक्ष के अन्तर को स्पष्ट रूप से रेखांकित किया है और चाहा है—दोनों में समन्वय।

१७. शिक्षा के क्षेत्र में त्रिभाषा-सूत्र की व्यावहारिक कठिनाइयों को उजागर करते हुए उन्होंने विभिन्न राज्यों के आचरण पक्ष की कटु आलोचना की है। विद्यार्थियों को तीन भाषाएँ पढ़ाने की योजना को किसी भी राज्य ने ईमानदारी से कार्यान्वित नहीं किया। दूसरे, अल्पसंख्यकों के नाम पर अंग्रेज़ी माध्यम के स्कूल गली-गली मे खुल गये हैं, परिणामतः राजभाषा का विकास अवरुद्ध हो गया है तथा शिक्षा के मंदिर व्यापार की मण्डियाँ बन गई हैं। आवश्यकता है, मातृभाषा में प्रायमरी शिक्षा देने की तथा अंग्रेजी संस्थानों की मान्यता रद्द करने की।

१८. संसद तथा विधानमण्डलों के संकल्पों, विधेयकों, नियमों, उपनियमों, आदेशों और अनुदेशों में द्विभाषिक व्यवस्था है। इससे दोहरा श्रम और दोहरा धन व्यय होता है। सांसद और विधायकगण निर्वाचकमण्डल के समक्ष जिस भाषा में 'वोट' माँगते हैं, उन्हें उसी प्रान्तिक भाषा या राजभाषा में अपने विचार सदन में रखने चाहिए। निर्वाचित प्रतिनिधि अपनी भाषा के अतिरिक्त यदि सदन में अँग्रेज़ी में विचार व्यक्त करें, तो निर्वाचकमण्डल उनका सामाजिक बहिष्कार करे या उसे बाध्य करे कि वह अपने दल विशेष को प्रेरित करे कि वह राजभाषा अधिनियम १९६३ के अनुच्छेद ३ (३), ६ व ७ को संशोधित कराकर आठवीं अनुसूची की विनिर्दिष्ट भाषाओं के प्रयोग का मार्ग प्रशस्त कराये।

१९. न्यायालयों की भाषा की समस्या जटिल है। संविधान के अनुच्छेद ३४८ व ३४९ में संशोधन ही एकमात्र विकल्प है, परन्तु यदि उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों की मानसिकता देश की अखण्डता के नाम पर उदार हो जाय, तो न्यायालयों में जो अनुवाद-प्रकोष्ठ बने हुए हैं, उनके माध्यम से राजभाषा के अनूदित निर्णयों, डिक्रियों, आदेशों, नियमों, विनियमों और उपविधियों के पाठ को प्राधिकृत माना जा सकता है। देश-भाषाओं में दिया गया न्याय सस्ता और सुबोध होगा। यदि विधि-

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

महाविद्यालयों में पढ़ाई प्रादेशिक भाषाओं में ही होने लगे तो न्यायालयों का न्याय स्वयमेव राजभाषा में होने लगेगा।

२०. प्रशासन में राजभाषा का व्यवहार बड़ी सरलता से हो सकता है, बशर्ते कि हमारा उच्च प्रशासक वर्ग अपनी वंश-परम्परा को सदा प्रशासक बनाये रखने की महत्वाकांक्षा को तिलांजलि दे दे। अखिल भारतीय सेवाओं का यह प्रशासनिक ढांचा यह नहीं चाहता कि उसके बेटे-बेटियों, पोते-पोतियों, भांजा-भांजियों या नाती-भतीजों की रोटी-रोजी छिनकर, योग्य एवं राष्ट्रप्रेमी युवकों के हाथों में चली जाय। उसको प्रोत्साहन और सहायता देता है विदेशी विचार थोपने वाला अंग्रेज़ी पुस्तकों का विदेशी व्यापारी। अब विधान ने राजभाषा के प्रयोग के इतने अधिक प्रावधान कर दिये हैं कि प्रशासन में राजभाषा बेरोक-टोक व्यवहार में आ सकती है। जनता का मनोबल ही प्रशासन क्षेत्र में राजभाषा के व्यवहार का प्रेरक है। विभाग प्रमुखों की नीयत ही राजभाषा को उसका स्थान दिला सकती है।

२१. देवनागरी लिपि आज इतनी समृद्ध हो गई है कि वह अन्तर्राष्ट्रीय ध्वन्यात्मक लिपि की आधारशिला है। उसकी परम्परा, इतिहास और कार्य-क्षेत्र भारत है। वह विश्व की किसी भी भाषा का दृश्य रूप हो सकती है, अतः अब अन्तर्राष्ट्रीय अंकों के प्रयोग की आवश्यकता नहीं है। वह स्वावलम्बिनी और अपने-आपमें पूर्ण तथा लचीली है।

२२. राजभाषा हिन्दी और आठवीं सूची में विनिर्दिष्ट प्रादेशिक भाषाओं में कोई स्पर्धा नहीं है। वे एक दूसरे की पूरक हैं। ये तो राजनेतागण हैं, जो 'वोट--बैंक' की खातिर उग्र भाषावाद भड़काते हैं। यदि प्रादेशिक भाषाएँ अपने-अपने राज्यों में राज्य-भाषाएँ घोषित हो जाएँ और हिन्दी उनकी सहभाषा मान्य कर ली जाय, तो अन्तर-प्रान्तीय व्यवहार में स्वयमेव हिन्दी रह जायगी। जिस राज्य की राज्यभाषा अँग्रेज़ी है, वहाँ भी हिन्दी सम्पर्क भाषा रहेगी तो हिन्दी का भारत की किसी भी भाषा से विरोध ही नहीं रहेगा। इसके लिए चाहिए सद्भावना और राष्ट्रप्रेम।

२३. 'भारत की आधुनिक राजभाषा का स्वरूप और उसकी समस्याएं शीर्षक-प्रबन्ध के लेखक डॉ. दिलीपकुमार चौहान ने उल्लिखत परिवर्तों का बड़ी लगन और निष्ठा से प्रतिष्ठापन किया है। मैं उनके साहस और श्रम के लिए बधाई देता हूँ। उन्हीं के शब्दों को दोहराकर लेखनी को विश्राम देता हूँ :–

एक राष्ट्रभाषा हिन्दी हो : एक हृदय हो भारतजननी।

–डॉ. परमेश्वरदत्त शर्मा

प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
इंदौर विश्वविद्यालय (अवकाश प्राप्त)

इन्दौर २१-८-१९९२

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

प्राक्कथन

प्रबन्ध का विषय : एक परिचय :–

१५ अगस्त सन् १९४७ को भारत स्वतंत्र हुआ। उसने विगत ९० वर्षों से राजनीतिक स्वतंमता प्राप्ति हेतु महान संघर्ष किया था। अंग्रेजों ने अन्तर्राष्ट्रीय दबाव और भारतीय राजनीतिक दलों की मांग के समक्ष आत्म-समर्पण कर दिया। स्वराष्ट्र, स्वभाषा और स्वसाहित्य के नवनिर्माण की लालसा भारतवासियों में जाग उठी। भारत ने चाहा कि जो भू-भाग उसके साथ है, उसी के अन्तर्गत रहकर आत्म-विकास किया जाय। इसलिए उसने आत्म-कल्याण और आत्म-विकास के लिये एक ऐसी योजना बनाई जिसके अनुसार वह भविष्य में लोकतन्त्रीय आदर्शों के अनुकूल सर्वतोमुखी प्रगति कर सके। यह योजना उसके संविधान में निहित थी। इस संविधान में भाषा-सम्बन्धी कतिपय धाराएँ थीं। इन धाराओं में संसद में प्रयोग होने वाली भाषा, राज्य के विधान–मण्डलों में प्रयुक्त होने वाली राजभाषा, संघ के राजकीय प्रयोजनों के लिए प्रशासकीय कार्यों की भाषा, केन्द्र और राज्यों के बीच प्रयुक्त होने वाली भाषा, राज्य और संघ के बीच संचार की भाषा, कानून–निर्माण में उपयोग में लाई जाने वाली भाषा, शिक्षण कार्य में प्रयुक्त होने वाली भाषा के रूप, शैली, पदावली और शब्द–भण्डार के सम्बन्ध में प्रावधान किया गया। यह स्वतंत्र भारत का संविधान है। यह स्वतन्त्र भारत अपनी भौगोलिक सीमाओं में पूर्व के अंग्रेज़ी राज्य के प्रान्तों तथा भारत के देशी राज्यों के विलीनीकरण से निर्मित हुआ था। इसी भारत की राजभाषा के सम्बन्ध में जो निर्णय लिये गये थे, वे संविधान की धारा ३४३ से लेकर ३५१ तक में सम्मिलित हैं। ये निर्णय हिन्दी को राजभाषा का पद देते हैं और इसका प्रचलन २६ जनवरी, सन् १९५० ई. से प्रारम्भ हुआ है। संविधान-परिषद् ने हिन्दी को राजभाषा बनाने का प्रस्ताव १४ सितम्बर, सन् १९४९ को पारित किया था और सीलिए इसके भावी-स्वरूप की कल्पना उसी दिन कर ली गई थी।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

यह हिन्दी आधुनिक राजाभाषा होगी यह संकल्प था। इस पदावली में आधुनिक शब्दकाल काल का वोधक है। इसका तात्पर्य यह है कि इसके पूर्व प्राचीन राजभाषाएँ भी थीं। इतिहास साक्षी है कि वैदिक-काल से लेकर, भारत की एक अविच्छिन्न भाषा प्रवाह की धारा प्रवहमान है। वैदिककाल की भाषा छान्दस थी। विद्वानों द्वारा उसे व्याकरणवद्ध किए जाने पर उसका विकास रुक गया और उससे विकसित होकर नई भाषा लौकिक संस्कृत निकली। यही संस्कृत तव से राजपूतकाल तक भारत को राजभाषा रही है। मुस्लिम आक्रान्ताओं के आधिपत्य-काल में इसे फारसीभाषा ने अपदस्थ किया और फ़ारसी तुर्कों, पठानों तथा मुगलों के प्रशासन काल की राजभाषा वन गई। अंग्रेजों के आगमन के साथ उन क्षेत्रों की राजाभाषा अँग्रेजी बनी, जहाँ-जहाँ अंग्रेजों का राज्य था। देशी राज्यों में राज्य-विशेष की वोली ही संवंधित राज्य को सरकारी भाषा थी, किन्तु ब्रिटिश शासन के सत्तान्तरण के वाद, अंग्रेजी, गणतन्त्रीय भारत में २६ जनवरी, सन् १९६५ तक प्रथम राजभाषा और उसके वाद सह-राजभाषा वनी हुई है। भारतीय संविधान ने धारा ३४४ (१) और ३५१ के अधीन हिन्दी को राजभाषा अधिमान्य किया है। तद्नुसार भारत की आधुनिक राजभाषा-हिन्दी है। यह आधुनिक इसलिए है कि वह सन् १९५० से आज तक ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में जो उपलब्धियाँ हो रही हैं, उनको सक्षमता के साथ अभिव्यक्त करने में समर्थ है। इसका आधुनिकता-बोध युग-बोध का प्रतीक है। इसलिए २६ जनवरी १९५० से लेकर आज तक भारत और विश्व में, ज्ञान के क्षेत्र में जो अभिवृद्धि हुई है उसकी प्रगति का लेखा-जोखा हिन्दी-भाषा के माध्यम से अभिव्यक्त हुआ है। यही उसकी आधुनिकता है।

ज्ञान-विज्ञान की अभिव्यंजना में, हिन्दी ने कैसा रूप धारण किया, कौन-सी शैली अपनाई, किन शब्दों का प्रयोग किया और कौन-सी पदावली उसके भाव-सम्प्रेषण में प्रयुक्त हुई, इसका आकलन करना प्रस्तुत शोध का विषय है। हिन्दी का स्वरूप निर्धारण करने के लिए विधान में धारा ३५१ में जो निर्देश दिए हैं वे अपने आप में इतने स्पष्ट हैं कि उनसे हिन्दी का भावी स्वरूप स्वयमेव निर्धारित हो जाता है। संघ के कर्त्तव्य के रूप में यह कहा गया है कि संघ हिन्दी-भाषा का प्रसार करेगा, उसका विकास करेगा: जिससे वह भाषा इतनी सक्षम हो जाए कि वह भारत की समन्वित संस्कृति के सभी तत्वों की अभिव्यक्ति कर सके। साथ ही अपने रूप को बनाए रखकर वह हिन्दुस्तानी और अष्टम अनुसूची में उल्लिखित अन्य भाषाओं के रूप, शैली और पदावली को अपना ले। इसी के साथ हिन्दी का यह भी कर्त्तव्य है कि वह अपने शब्द-भण्डार के लिए संस्कृत तथा अन्य भाषाओं से शब्द लेकर अपनी शब्द-सम्पदा को व्यापक बनाये इसलिए हिन्दी को जिन पन्द्रह भाषाओं से अपने स्वरूप निर्माण के लिये सहायता लेना है वे हैं-असमी, उड़िया, उर्दू, कन्नड़, कश्मीरी, गुजराती, तमिल, तेलगु, पंजाबी, बंगाली, मराठी, मलयालम, संस्कृत, सिन्धी और हिन्दुस्तानी। हिन्दी ने इन भाषाओं को सहायता से जब अपना ध्वनि-विज्ञान, पद-विज्ञान, वाक्यविज्ञान, और अर्थविज्ञान समृद्ध करना प्रारम्भ किया तव इसके सामने समस्याएँ खड़ी हो गई।

हिन्दी के प्रसार-प्रचार-विकास और अभिवृद्धि में जो कठिनाइयाँ आई, वे तीन प्रकार की हैं-प्रथम हिन्दी के स्वरूप-विकास में ध्वनि, पद, वाक्य और अर्थ-संघटन में कैसा ढाँचा

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

बनाया जाय जिससे कि इसका रूप, इसकी मूल प्रकृति के अनुकूल बना रहे। यह प्रश्न अपने आपमें महत्वपूर्ण था। हिन्दी एक मिश्रित भाषा होने से अपने स्वरूप-गठन में आर्यकुल के प्रारूप को लेकर भी दूसरी भाषाओं की ध्वनियों, शब्दों और पदावलियों को आत्मसात् करने में समर्थ हुई। उसने यह सब कैसे किया, शोध का विषय है। द्वितीय समस्या थी उसके प्रयोग में आने वाली बाधा। वह अंग्रेजी को कैसे अपदस्थ करे और कब करे ये प्रश्न जटिल थे। अंग्रेजी के पक्षधरों ने उसकी भाषा और उसकी लिपि को चुनौती दी। यह चुनौती विद्वानों की ओर से थी, राजनेताओं की ओर से थी, विदेशी शक्तियों की ओर से थी। तीसरी समस्या प्रादेशिक भाषाओं से सहयोग की है। प्रादेशिक भाषाओं से राजभाषा-हिन्दी सहयोग करें, उन्हें क्या दे और उनसे क्या ले ? के प्रश्न सामयिक थे। अंग्रेजी के पक्षधरों के द्वारा उकसाये जाने पर तमिल, बंगला और पंजाबी ने असहयोगी रुख अपनाया। इसलिए प्रादेशिक भाषाओं में हिन्दी की भूमिका क्या हो ? यह प्रश्न भी जटिल बन गया।

स्वतन्त्र भारत की आधुनिक राजभाषा अपना स्वरूप संयोजित करने और समस्याओं का निदान करने के बाद किस उपयोग में आ सकती है। यह प्रश्न भी एक अहमियत रखता है। राजभाषा-हिन्दी को उपयोगिता इसी में है कि वह जनताभिमुखी हो। वह लोकभाषा के समीप हो। वह अपने साहित्यिक रूप में विद्वानों की भाषा बनी रहे, प्रादेशिक रूप में हिन्दी प्रदेशों की अभिव्यक्ति क्षमताओं का प्रकटीकरण करती रहे फिर भी राजभाषा के रूप में वह सरकारी कामकाज की भाषा अवश्य बने, यही उसकी उपयोगिता है।

समस्त भारत की राजभाषा के रूप में आज उसके ५ रूप हो जाते हैं। वह हिन्दीभाषी क्षेत्रों की प्रादेशिक भाषा है, अहिन्दी-भाषी क्षेत्रों की संयोजक-भाषा है, प्रवासी-भारतवासियों की सम्पर्क की भाषा है, भारत के अल्पसंख्यकों के हितों की संरक्षिका के रूप में लोकभाषा है और ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र की तकनीकी भाषा है। इसे केन्द्रीय सरकार, विभिन्न मन्त्रालयों, विविध विश्वविद्यालयों और न्यायालयों में प्रयोग कर रही है तथा शिक्षा-मन्त्रालय के तत्वावधान में साहित्य-रचना अकादमियों के माध्यम से इसके परिवर्तित रूप को संवारने में लगी हुई है। यह नई-हिन्दी आधुनिक भारत की सम्प्रेषण क्षमता को अभिव्यक्त करने में कितनी समर्थ हुई है और इसके सामने आई चुनौतियों का सामना इसने कैसे किया है, इन प्रश्नों का समाधान प्रस्तुत प्रबन्ध में खोजा गया है।

००.०१. प्रबन्ध की उपयोगिता व विषय-चयन :-

राष्ट्रध्वज, राष्ट्रगीत और राष्ट्रभाषा की गरिमा बनाये रखने का कर्त्तव्य प्रत्येक भारतीय का है। राजभाषा की गरिमा उसके उपयोग में है। यदि वह व्यक्ति, समाज और राज्य की आवश्यकताओं की पूर्ति संतोषजनक रीति से करती है तो उसे अपना लिया जाता है, अन्यथा तिरस्कृत कर दिया जाता है। हिन्दी को जब राजभाषा के रूप में स्वीकृत किया गया तब उसके उपयोग की कल्पना कर ली गई थी। वह ४ काम करेगी—(१) संघ की भाषा के रूप में समस्त सरकारी प्रयोजनों के लिये विविध मन्त्रालयों में संयोजन की कड़ी बनी रहेगी। (२) राज्यों के मध्य परस्पर सहयोग की संयोजिका होगी। (३) ज्ञान-विज्ञान

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

के क्षेत्र में विश्व की उपलब्धियों का आकलन करने वाली भाषा होगी तथा (४) भारतीय जन-जीवन की सामासिक संस्कृति और शिक्षा के सम्प्रेषण की भाषा होगी। संविधान में परिगणित १५ भाषाओं के अतिरिक्त वह हिन्दुस्तानी से भी सहायता लेगी। हिन्दुस्तानी-भाषा की परिभाषा के सम्बन्ध में महात्मा-गांधी ने जो विचार व्यक्त किए थे, वे थे—हिन्दुस्तानी वह भाषा है जिसे उत्तर हिन्दुस्तान के शहरों और गाँवों में हिन्दू-मुसलमान-सिख-पारसी-ईसाई सब बोलते हैं, समझते हैं और आपस के कारोबार में बरतते हैं। जिसे नागरी और फ़ारसी दोनों लिखावटों में लिखा-पढ़ा जाता है और जिसके साहित्यिक रूप आज हिन्दी और उर्दू नाम से पहचाने जाते हैं। यही पूरी राष्ट्रभाषा है, बाकी अधूरी है। गांधीजी दूरदर्शी नेता और अडिग प्रचारक थे। इसलिए उन्होंने सारे भारत में धार्मिक, व्यापारिक, राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक क्रियाकलापों में व्यवहृत होने वाली भाषा को ही महत्व दिया था। यही वह भाषा है, जो स्वतन्त्र भारत में नाम परिवर्तन-कर हिन्दी कहलाई। हिन्दी भारत के सांस्कृतिक अभ्युत्थान की, विरासत में प्राप्त लोकभाषा है। वह स्वतन्त्र भारत के जन-जन के विचारों को अभिव्यक्त करने का सबसे बड़ा माध्यम है। राजभाषा होने के नाते उसका महत्व और भी अधिक बढ़ गया है इसलिए जब मैंने यह पाया कि यह न केवल साहित्यिक वाणी-विलास की संचालिका है, अपितु समाज, राष्ट्र और विश्व के सम्पर्क में आने का प्रबल साधन भी है, तब मैंने एम. ए. के अध्यन-काल में ही इसके समग्र रूप को जानने के लिए शोध करने का निश्चय कर लिया था।

शोध के लिए जब मैंने पूर्ण रूप से "हिन्दी-भाषा का रूप और समस्याएँ" विषय पर कार्य करना चाहा तो पाया कि यह विषय अतिव्यापक है। इसलिए मैंने भारत की आधुनिक राजभाषा के स्वरूप और उसकी समस्याओं तक ही अपने को सीमित रखा। इसलिए मैंने यह जानने की चेष्टा की कि इस विषय पर कितना और किसने तथा क्या कार्य किया है? मुझे शोध-ग्रंथ के रूप में केवल एक ही ऐसा ग्रंथ मिला जो इससे कुछ सम्बन्ध रखता था। वह ग्रंथ था—"हिन्दी का राष्ट्रभाषा के रूप में विकास।" लेखक हैं—डॉ. शिवराम वर्मा। यह ग्रंथ राष्ट्रभाषा के ऐतिहासिक विकास तक ही सीमित था। इसने राष्ट्रभाषा के नामकरण, विकास क्षेत्र, आंदोलन तथा समस्याओं पर कार्य किया है। यह कार्य विवेचनात्मक अधिक है, इसलिए मेरी जिज्ञासा की तुष्टि करने में असमर्थ है। दूसरा ग्रंथ डॉ. देवेन्द्रनाथ शर्मा का—"राष्ट्रभाषा-हिन्दी : समस्याएँ और समाधान" है। इसमें हिन्दी के महत्व, सरलीकरण, प्रचार-प्रसार और समस्याओं पर विचार किया है। ये विचार शास्त्रीय अधिक हैं और मुक्त रूप से व्यक्त किये गये हैं। एक स्वतंत्र विचारक के ये स्वतन्त्र विचार हैं। तीसरा ग्रन्थ श्री लक्ष्मीचन्दजी का 'हिन्दी-भाषा-आंदोलन" है जो सेठ गोविन्ददास के भाषणों का संकलन मात्र है। इन ग्रंथों के अतिरिक्त मेरे देखने में अन्य कोई रचना नहीं आई। कतिपय भाषा-विज्ञान की पुस्तकों में इस सम्बन्ध में विचार अवश्य संयोजित हैं, किन्तु वे सतही हैं। अतः मैंने अपने शोध कार्य के लिए उपयोगितावादी जिज्ञासु दृष्टि से जो विषय चुना है वह है—"भारत की आधुनिक राजभाषा : स्वरूप और समस्याएँ"।

००.०२. प्रबन्ध की आवश्यकता:—

प्रस्तुत शोध विज्ञजनों को राजभाषा, राष्ट्रभाषा के सम्बन्ध में स्पष्ट दृष्टि देगा। राजभाषा, राष्ट्रभाषा, प्रशासनिक भाषा, सरकारी भाषा, संघ-भाषा, सह-राजभाषा आदि

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

अभिधाएँ, आज समानार्थी के रूप में प्रयुक्त होती हैं। वास्तव में इन सब में अन्तर है। राजभाषा-हिन्दी है। इसे भारत सरकार, सरकारी कामकाज के लिए प्रयोग में लाती है। यह कामकाज चाहे विभिन्न मन्त्रालयों का हो, चाहे शिक्षा के क्षेत्र का हो, चाहे विभिन्न परीक्षाओं का हो, चाहे न्यायालयों का हो, सब कहीं इसका प्रयोग किया जाता है। राज्यभाषा से मैं उस भाषा को जानता हूँ जो भारत के विभिन्न राज्यों के विधान-मण्डलों द्वारा सरकारी भाषा के रूप में स्वीकृत हैं। ये भाषाएँ उतनी ही हैं जितने भारत में राज्य हैं। राष्ट्रभाषा का क्षेत्र व्यापक है। वह सारे देश की सम्पर्क भाषा होती है। स्वतन्त्रता पूर्व भारत में गांधीजी इसे हिन्दुस्तानी कहते थे और भारतीय संविधान में भी इसका नाम हिन्दुस्तानी ही लिखा है। प्रशासनिक भाषा, प्रारूपों की भाषा है, जो बंधे-बंधाये ढांचों में रीतिबद्ध कार्य करती है। सरकारी भाषा कोई भी भाषा हो सकती है और किसी भी राज्य में सरकार द्वारा प्रयुक्त की जा सकती है। संघ-भाषा भारत की राजभाषा है और वह हिन्दी और अंग्रेजी दोनों के रूप में जानी जा सकती है। सह-राजभाषा आज अंग्रेजी है। भाषा सम्बन्धी इन अस्पष्टताओं के निवारण तथा आधुनिक राजभाषा के स्वरूप के निर्धारण एवं उसके समक्ष आने वाली समस्याओं के निराकरण के लिये प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध की आवश्यकता अनिवार्य है, इसके बिना विगत पाँच दशकों में राजभाषा द्वारा की गई प्रगति का ज्ञान सम्भव नहीं है। ऐतिहासिक पृष्ठभूमि और हिन्दी के अधिग्रहण, समस्याओं के निवारण, स्वरूप के स्थिरीकरण के लिये यह आवश्यक था कि एक ऐसा प्रबन्ध प्रस्तुत किया जाए जो इन विषयों की जानकारी दे सके।

००. ०३. प्रबन्ध की शोध-विधि :–

प्रबन्ध की आवश्यकता को देखते हुए मैंने सबसे पहले प्रबन्ध के विषय का स्थिरीकरण किया। उसकी रूपरेखा बनाने के लिए अपने निर्देशक की सहायता से भाषा-विज्ञान की पुस्तकों का अध्ययन किया। उस समय मुझे डॉ. धीरेन्द्र वर्मा का 'हिन्दीभाषा का इतिहास' और 'हिन्दी का वृहद् इतिहास' भाग–२. तथा डॉ. बाबूराम सक्सेना के 'सामान्य-भाषा-विज्ञान' मिले। इसीप्रकार अंग्रेजी में ग्लीसन के 'जनरललिंग्विस्टिक' तथा डॉ. सुनीतिकुमार चटर्जी की 'लैंग्वेजेस एन्ड लिंग्विस्टिक् प्राबलम्स' पुस्तकें पढ़ने को मिलीं। साथ ही मराठी में एन. जी. कालेलकर की 'ध्वनि-विचार' पुस्तक पढ़ने में भी आई। इन सब ग्रंथों के अनुशीलन के पश्चात् मैंने अपने विषय की रूप-रेखा बनाई और इन्दौर विश्व-विद्यालय में पंजीयित हो गया। तब से मैं विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं, ग्रंथों का अनुशीलन करता रहा और विभिन्न पुस्तकालयों में प्राप्त ग्रंथों की टिप्पणियाँ लेता रहा। अध्ययन के उपरान्त मैंने लेखन किया और अपने निर्देशक के परामर्शानुसार प्रस्तुत कृति को प्रत्यक्षीकृत किया है। मेरी यह प्रणाली निगमात्मक रही है। मैंने अपने शोध-काल में इस विषय पर विभिन्न विद्वानों से चर्चाएँ की हैं, जिनमें डॉ. उदयनारायण तिवारी, डॉ. भोलानाथ तिवारी, डॉ. देवेन्द्रकुमार जैन, डॉ. नेमीचन्द जैन, डॉ. शिवसहाय पाठक, डॉ. भगवतीप्रसाद शुक्ल, प्रो. प्रमोद वर्मा, डॉ. कान्तिकुमार जैन, डॉ. के. सी. वर्मा और मेरे सहयोगी प्राध्यापक प्रमुख थे। पुस्तकीय विचार, उन पर मेरा मौलिक चिन्तन, सहयोगी परामर्शदाताओं के विचार और निर्देशक की मान्यताएँ इस शोध

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

के प्राण-प्रतिष्ठा में प्रेरक तत्व रहे हैं। पूर्वपीठिका के रूप में मैंने प्रथम और द्वितीय अध्यायों में हिन्दी की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि प्रस्तुत की है। उसके बाद आगामी पाँच अध्यायों में राजभाषा के स्वरूप, समस्याओं और उपलब्धियों पर प्रकाश डाला है। अन्तिम अध्याय उपसंहार है और अन्त में शोध-सामग्री का संकलन है इसलिए प्रस्तुत प्रबन्ध अपनी शोध-विधि में शोध की आवश्यकताओं की पूर्ति करता है।

००.०४. प्रबन्ध की परिसीमा :–

प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध ८ अध्यायों में विभक्त है। प्रथम अध्याय में "स्वातन्त्र्य पूर्व हिन्दी की ऐतिहासिक पीठिका दी गई है, जिसमें राजभाषा हिन्दी का सामान्य-परिचय, अंग्रेजों की भाषा-नीति, भारतीय पुनर्जागरण के नेताओं, भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस और विभिन्न संस्थाओं की भाषा-नीति का विवरण है। हिन्दी-हिन्दुस्तानी-विवाद और गाँधीजी तथा हिन्दी-साहित्य-सन्मेलन का जयपुर अधिवेशन इन दोनों शीर्षकों पर पर्याप्त आलोड़न किया गया है। इससे प्रथम अध्याय में परिनिष्ठित हिन्दी के स्वरूप का निर्धारण हुआ है।

द्वितीय अध्याय में स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का आकलन करता है। इसमें स्वराज्य-काल की राजभाषा, उत्तरप्रदेश की हिन्दी, हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन का वम्बई अधिवेशन, भारतीय-विधान परिषद की कांग्रेस पार्टी की भाषा-नीति, राष्ट्रभाषा व्यवस्था-परिषद के निर्णय, बाबू पुरुषोत्तमदास टण्डनजी, सेठ गोविन्ददास और नागप्पाजी के कार्य, मुँशी-आयंगार मसौदा, संविधान-सभा का निर्णय, राज्यों द्वारा राजभाषा का अधिग्रहण और राजभाषा का समन्वित रूप शीर्षक देकर विचार मंथन किया गया है।

तृतीय अध्याय में राजभाषा के रूप में "हिन्दी का अधिग्रहण" विषय पर व्यापक चर्चा हुई है। राजभाषा हिन्दी ही क्यों ? एकभाषा की अनिवार्यता, व्यावसायिक भाषा, प्रान्तीय-भाषा, भारत की केन्द्रीय भाषा, बहुसंख्यक जनता की सम्पर्क भाषा, समृद्ध साहित्य की परपरागत भाषा, निर्भ्रांतलिपि की भाषा, विकासशील भाषा, संविधान निर्माताओं का प्रजातान्त्रिक दृष्टिकोण तथा जीवित भाषा, राजभाषा के शीर्षक में ऊहापोहपूर्वक मत-विमत का प्रकाशन हुआ है और अन्तिम निष्कर्ष निकाले गये हैं।

चतुर्थ अध्याय में 'राजभाषा हिन्दी का विरोध और उसके कारण' के विषय पर परिचर्चा की गई है। इस परिचर्चा का परिणाम है कि राजभाषा का संवैधानिक स्वरूप, विरोध का स्वरूप, विरोध की दिशाएँ व कारण, उग्र भाषावाद, प्रशासनिक सेवाएँ, शिक्षा-शास्त्री, राजनैतिक नेता, न्यायालय, बुद्धिजीवियों की हीनता, विरोध के लिए विरोध की नीति, अंग्रेजी के समर्थकों द्वारा विरोध, अहिन्दीभाषियों की दुरंगी-नीति, हिन्दीभाषियों की अकर्मण्यता, अंग्रेजीभाषी देशों की कूटनीति, व्यापारिक प्रतिष्ठानों की भाषा-नीति, हिन्दी की बोलियाँ आदि शीर्षकों के अन्तर्गत गहन विचार व्यक्त किये गये हैं।

पंचम अध्याय 'राजाभाषा की समस्याओं' को अंकित करता है। ये समस्याएँ क्यों उत्पन्न हुई और उनका मूल स्वरूप क्या है ? इस पर भी प्रकाश डाला गया है। यहीं राजभाषा-हिन्दी के स्वरूप पर दृष्टिपात करते हुए उच्चारण, व्याकरण, पदावली, कोश और अनुवाद की समस्याओं का विवेचन किया गया है। [illegible] और दलगत

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

राजनीति के प्रवेश से हिन्दी के व्यावहारिक प्रयोग में आने वाली कठिनाइयों का निरूपण भी किया गया है। "संघर्ष का नाम ही प्रगतिशीलता है' के अनुसार राजभाषा की समस्याओं को निरूपित किया गया है।

षष्ठ अध्याय में 'राजभाषा-हिन्दी और उसकी लिपि देवनागरी' के परस्पर संबंधों पर प्रकाश डाला गया है और फिर देवनागरी की अक्षरात्मकता, कुछ वर्णों की आवश्यकता, संयुक्ताक्षरों का प्रयोग, वर्ण-संख्या की अधिकता, मुद्रण, टंकन एवं शीघ्रलेखन की कठिनाइयाँ, वर्तनी और लिपि की समस्याएँ तथा अंकों के रूप का परिशीलन प्रस्तुत किया गया है।

सप्तम अध्याय में' राजभाषा-हिन्दी की प्रगति' का लेखा-जोखा लिया गया है। विगत वर्षों में जिन क्षेत्रों में हिन्दी को ग्राह्य किया गया है उन क्षेत्रों का वर्गीकरण किया गया है। जनता की अभिस्वीकृति, हिन्दी-भाषी राज्यों, अहिन्दी भाषी राज्यों, केन्द्रीय सरकार और विदेशों में हिन्दी की जो प्रगति हुई है उस पर व्यापक प्रकाश डाला गया है।

अष्टम अध्याय पूर्णतः मौलिक है। इसमें राजभाषा का मूल्यांकन, उसके वर्तमान और भावी स्वरूप तथा उपलब्धियों और महत्व का अनुशीलन है। भारत की राजभाषा की आधुनिकता के सन्दर्भ में हिन्दी के समग्र रूप का प्रस्तुतीकरण किया गया है। हिन्दी-भाषी, अहिन्दी-भाषी, केन्द्र, जनता और विदेशों की राजभाषा हिन्दी के रूप, शैली, शब्द-भण्डार और पदावली का मूल्यांकन किया गया है। भाषा और लिपि की समस्याओं का समाधान प्रस्तुत किया गया है। हिन्दी का भावी स्वरूप और उसके महत्व पर अन्त में प्रकाश डाला गया है।

इस प्रकार विषय की सीमाओं का निर्धारण करके वैज्ञानिक पद्धति से शोध-कार्य पूर्ण किया गया है।

००.०५ प्रबन्ध की मौलिकता व देन

प्रबन्ध के प्रथम दो अध्यायों की ऐतिहासिक पीठिका यदि छोड़ दी जाए तो शेष सभी अध्याय मौलिक हैं। शीर्षक 'भारत की आधुनिक राजभाषा : स्वरूप और समस्याएँ' अपने आप में मौलिक है। राजभाषा, राजलिपि, भारतमूलक अन्तर्राष्ट्रीय अंक, देवनागरी तथा देशभाषाओं के अंक और अक्षरों का निर्धारण प्रबन्ध की मौलिकता का द्वितीय चरण है। तीसरा मौलिक कार्य राजभाषा के स्वरूप--निर्धारण का है। आज की राजभाषा समन्वित भाषा है, यह निष्कर्ष अपने आप में मौलिक है। इसी प्रकार संघ भाषा हिन्दी है, प्रादेशिक भाषा भी हिन्दी है, इन दोनों में जो मौलिक अन्तर है वह भी इसमें दिग्दर्शित किया गया है। चौथे समस्याओं के सम्बन्ध में राजभाषा के स्वरूप, विरोध, समर्थन, अधिग्रहण, प्रसारण और वर्तमान स्थिति के निर्धारण में मूल विचार लेखक के ही हैं। पाँचवीं मौलिकता है, इसकी आधुनिकता। इस परिवेश में हिन्दी ने विश्व-व्यापी रूप धारण किया है और उसकी लिपि विश्वलिपि बनने की क्षमता रखती है। अन्तर्राष्ट्रीय ध्वन्यात्मक वर्णमाला से भी वैज्ञानिक, देवनागरी-लिपि है। इन मौलिकताओं के कारण प्रस्तुत

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

प्रबन्ध आधुनिक हिन्दी को नई दिशा देता है। आधुनिक राजभाषा अपने आप में एक देन है। हिन्दी का भावी-स्वरूप, हिन्दी भाषा के लिए एक नई कल्पना है। अतः प्रस्तुत प्रबन्ध संकलनात्मक होकर भी तथ्यान्वेषक और संकल्पात्मक है।

००.०६. कृतज्ञता-ज्ञापन

प्रस्तुत प्रवन्ध की कल्पना से इसके वर्तमान रूप में प्रस्तुतीकरण के लिए मैं ऋणी हूँ अपने मार्गदर्शक आचार्यश्री डॉ. परमेश्वरदत्तजी शर्मा का, जिन्होंने सब प्रकार की सहायता से इसका कायाकल्प किया है। शोध-सामग्री संकलन में मुझे राजभाषा विभाग के सचिव श्री रमाप्रसन्न नायक ने शासकीय स्तर पर पर्याप्त योग दिया है। केन्द्रीय हिन्दी-समिति के संसद सदस्य श्री नवाबसिंह चौहान ने पुस्तकीय सहायता से मुझे उपकृत किया है। इसी प्रकार मध्यप्रदेश शासन के सचिव श्री गोरेलाल शुक्ल तथा मध्यप्रदेश भाषा-विभाग के संचालक डॉ. सिद्धनाथ शर्मा एवं नव-भारत दिल्ली के सम्पादक डॉ. वेदप्रताप वैदिक ने शोध-सामग्री उपलब्ध कराकर मेरे कार्य को सरल बनाया है। मैं इन सबके प्रति आभारी हूँ।

मैं कृतज्ञ हूँ अपने उन परामर्शदाताओं का जिन्होंने शोध-काल में मुझे दिशा-दान दिया और मेरे लक्ष्य के प्रति दृढ़ता धारण करने की प्रेरणा दी। वे हैं—सर्वश्री डॉ. उदयनारायण तिवारी, डॉ. भोलानाथ तिवारी, डॉ. कान्तिकुमार जैन, डॉ. कृष्णचन्द्र वर्मा डॉ. शिवसहाय पाठक और डॉ. श्यामसुन्दर व्यास। मैं आभारी हूँ डॉ. राममूर्ति त्रिपाठी और डॉ. डी. के. जैन का जिन्होंने विषय को सीमित करने में मेरी सहायता की है। मैं धन्यवाद देता हूँ अपने उन सहयोगियों को जो मेरे अध्ययन-काल में पथ के साथी रहे हैं। मेरे पिताश्री शेषनारायण चौहान ने पारिवारिक कठिनाइयों का भार वहन करते हुए आज तक मुझे इस योग्य बनाया; मेरी साधना का यह प्रतिफल मैं उन्हीं को समर्पित करता हूँ। बुद्धि उनकी है, परिश्रम मेरा। स्नेहमयी, ममतामयी और कर्ममयी मेरी माता ने मेरी साधना में जो प्रेरणा दी है, यह कृति उन्हीं के चरणों में रखकर मैं प्रस्तुत प्रबन्ध सुधी-विद्वानों के समक्ष परीक्षणार्थ प्रस्तुत कर रहा हूँ।

मैंने विचारों को एकत्र किया है, उनका मूल्यांकन किया है, विद्वद्वृन्द जैसा उचित समझें वैसा इनका मोल करें :—

सिमिटि सिमिटि जल भरहिं तलावा।
जिमि सद्गुण सज्जन पहिं आवा॥—रामचरितमानस ४।१३।७

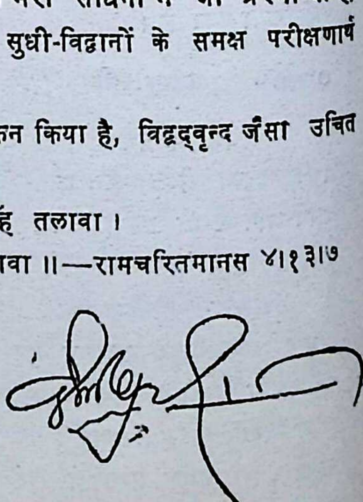

(डॉ. दिलीपकुमार चौहान)
प्रस्तुतकर्त्ता

इन्दौर : दिनांक ३१-७-७८

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

	पीठिका	१–८
	प्राक्कथन	९–१६

अध्याय–१ : हिन्दी की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि - पृष्ठ १ से ३१

०१.००	**स्वातन्त्र्य पूर्व**	१
०१.०१	अंग्रेजों की भाषानीति : लार्ड मैकॉले के सन्दर्भ में	२
०१.०२	भारतीय पुनर्जागरण के नेताओं की भाषानीति	६
	(क) स्वामी दयानन्द सरस्वती–आर्य-भाषा के प्रबल प्रचारक	६
	(ख) केशवचन्द्र सेन	१०
०१.०३	भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की भाषा समस्या	११
०१.०४	विभिन्न संस्थाओं की भाषानीति	१५
	(क) नागरी–प्रचारिणी–सभा, काशी	१५
	(ख) हिन्दी–साहित्य–सम्मेलन, प्रयाग	१७
	(ग) हिन्दी–साहित्य–सम्मेलन की भाषानीति	१८
	१. टण्डनजी की भाषा–नीति : हिन्दी	१८
	२. गाँधीजी की भाषा–नीति : हिन्दुस्तानी	१९
	३. गाँधी और सम्मेलन की राजभाषा–नीति	२०
	(घ) दक्षिण–भारत–हिन्दी–प्रचार–सभा, मद्रास	२०
	(ङ) राष्ट्रभाषा–प्रचार–समिति, वर्धा	२२
	राजभाषा का स्वरूप विवेचन	२३
०१.०४	(च) दिल्ली प्रादेशिक हिन्दी–साहित्य सम्मेलन	२४
०१.०४	(इ) प्रान्तों में राष्ट्रभाषा प्रचार कार्य	२५
०१.०५	हिन्दी और हिन्दुस्तानी का विवाद और गाँधीजी	२६
	विवाद के कारण	२७
	गांधी की मध्यमार्गी–नीति	२९
	हिन्दी साहित्य सम्मेलन का जयपुर अधिवेशन और महात्मा गांधी	३१
०१.०६	निष्कर्ष	३१

अध्याय–२ : हिन्दी की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि - पृष्ठ ३२ से ६८

०.२.००	**स्वातन्त्र्योत्तर**	३२
०२.०१	स्वातन्त्र्योत्तर राजभाषा : हिन्दी	३२
०२.०२	उत्तरप्रदेश की राजभाषा : हिन्दी	३२
०२.०३	हिन्दी–साहित्य–सम्मेलन का बम्बई अधिवेशन	३२
०२.०४	भारतीय विधान–परिषद् की कांग्रेस पार्टी और राजभाषा का प्रश्न	३५
०२.०५	राष्ट्रभाषा–व्यवस्था–परिषद् के निर्णय का प्रभाव	३८
	देश पर प्रभाव	३९
	आर. बी. धुलेकर का संशोधन	३९

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

	संविधान निर्माण में प्रभाव	४१
	व्यवस्था-परिषद् का निर्णय-हिन्दी और अँग्रेजी के मध्य	४२
	देश पर प्रभाव	४२
	संविधान निर्माण पर प्रभाव	४३
०२.०६	२६अगस्त, १९४९ की विधान-परिषद् की कांग्रेस पार्टी में राजभाषा का प्रश्न	४३
०२.०७	सेठ गोविन्ददास एवं नागप्पा के संशोधन	४६
	श्री नागप्पा के प्रयत्न	४८
०२.०८	टण्डनजी एव कांग्रेस दल के मतभद	४८
०२.०९	परिषद् अध्यक्षों की बैठक में राजभाषा का प्रश्न	५१
०२.१०	मुंशी आयंगर मसौदा	५३
अध्याय-१		५५
	भाषा आयोग और समिति-३०१ (ख)	५६
अध्याय-२		५६
	प्रादेशिक भाषाएँ-३०१ (ग)	५६
	अन्तप्रान्तीय भाषा-३०१ (घ)	५७
	वर्ग विशेष की भाषा-३०१ (घ)	५७
अध्याय-३		५७
	सर्वोच्च न्यायालय की भाषा-३०१ (ड.), ३०१ (च)	५७
अध्याय-४		५८
	विशेष हिदायत-३०१ (छ)	५८
	हिन्दी का विकास-३०१ (ङ)	५८
	अनुसूची-७ : प्रादेशिक भाषाएँ	५८
०२.११	भारतीय संघ की राजभाषा का निर्णय	५८
०२.१२	राज्यों द्वारा राजभाषा हिन्दी का अधिग्रहण	५९
	बिहार	५९
	मध्यप्रदेश	५९
	उत्तरप्रदेश	५९
	राजस्थान	६०
	हिमाचल प्रदेश	६१
०२.१३	राजभाषा हिन्दी की स्वरूप प्रतिष्ठा व विकास	६१
०२.१४	स्वरूप-निर्धारण : समन्वित भाषा	६८
०२.१५	उपसंहार	६८

अध्याय-३ : राजभाषा के रूप में हिन्दी का अधिग्रहण-पृ. ६९ से ९०

०३.००	हिन्दी ही राजभाषा क्यों ?	६९
०३.०१	प्रशासन में एक भाषा की अनिवार्य आवश्यकता	६९
०३.०२	हिन्दी भारतभर की व्यावसायिक भाषा के रूप में पूर्व में प्रचलित है	७२

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

०३.०३	हिन्दी और अन्य प्रान्तीय भाषाएं	७५
०३.०४	हिन्दी भारत की केन्द्रीय भाषा है	७६
०३.०५	हिन्दी बहुसंख्यक जनता की भाषा है	७७
	भारतीय भाषाओं की जनगणना	७८
	राज्यों में प्रचलित भाषाएँ	७९
	समाचार पत्रों की संख्या	८१
	विश्व की प्रमुख भाषाओं में हिन्दी का स्थान	८२
	संघ लोक-सेवा आयोग की परीक्षाओं में हिन्दी की स्थिति	८३
०१.०६	समृद्ध साहित्य की परम्परागत भाषा	८४
०३.०७	निर्भ्रान्त लिपि की भाषा है	८८
०३.०८	संविधान निर्माताओं का प्रजातांत्रिक दृष्टिकोण	८८
०३.०९	सतत विकासशील भाषा है	८९
०३.१०	निष्कर्ष	९०

अध्याय–४ : राजभाषा हिन्दी का विरोध और उसके कारण– पृष्ठ ९१ से १२४

०४.००	हिन्दी का संवैधानिक स्वरूप	९१
०४.०१	विरोध की दिशाएँ	९३
०४.०२	विरोध का स्वरूप	९४
०४.०३	विरोध के कारण	९४
०४.३१	राजभाषा हिन्दी, नामों में अराजकता के कारण–अविकसित भाषा है	९५
०४.३२	राजभाषा हिन्दी के विविध नामों के सम्बन्ध में भ्रान्ति	९६
	(अ) संस्कृतनिष्ठ हिन्दी	९६
	(क) इंशा अल्लाखां (१८०० ई. के लगभग रचनाकाल है)	९९
	(ख) राजा शिवप्रसाद सितारेहिन्द (१८२३–१८९५ ई.)	९९
	(ग) राजा लक्ष्मणसिंह (१८२६–१८९६ ई.	१००
	(घ) भारतेन्दुबाबू हरिश्चन्द्र (१८५०–१८८५ ई.)	१००
	(ब) अरबी–फारसीयुक्त हिन्दी : हिन्दुस्तानी	१०१
	(स) बाजारू हिन्दी	१०२
०४.०३३	उग्र-प्रादेशिक भाषावाद	१०४
०४.०३४	प्रशासनिक सेवाओं द्वारा हिन्दी–विरोध	१०६
०४.०३५	शिक्षा-शास्त्रियों द्वारा हिन्दी–विरोध	११०
०४.०३६	राजनीतिक नेताओं का अंग्रेजी मोह	१११
०४.०३७	न्यायालयों द्वारा हिन्दी की उपेक्षा	११४
०४.०३८	बुद्धिजीवियों की हीनता-ग्रंथि	११५
	भारतीय विद्वानों के मत–	११७

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

(क) डॉ. राममनोहर लोहिया ११७
(ख) प्रो. शेरसिंह ११७
(ग) श्री मोरारजी देसाई ११८
विदेशियों के मत—
(घ) डॉ. आडोलन स्मेकेल ११८
(ङ) डॉ. हेरमन वान ओल्फन ११८
(च) डच विद्वान—डॉ. री. ११९
(छ) लोठार लुत्से ११९
(ज) डॉ. मलिक मोहम्मद ११९
०४.०३९ अंग्रेजी समर्थकों द्वारा विरोध ११९
०४.०४० विरोध के लिये विरोध की नीति १२०
०४.०४० अहिन्दी-भाषियों की दुरंगी—नीति १२३
०४.०४१ हिन्दी-भाषियों की अकर्मण्यता १२३
०४.०४२ अंग्रेजी-भाषी देशों की कूटनीति १२३
०४.०४३ व्यापारिक प्रतिष्ठानों की हिन्दी-नीति १२३
०४.०४४ हिन्दी की बोलियों को भाषाई रूप देने का षड्यन्त्र १२४
०४.०५ उपसंहार १२४

अध्याय—५ : राजभाषा की समस्याएँ और समाधान— पृ. १२५ से १४६

०५.०० प्रवेशिकी : हिन्दी, अंग्रेजी और प्रादेशिक भाषाएँ १२५
०५.०१ राजभाषा की मूलभूत समस्याएँ १२६
०५.०२ राजभाषा हिन्दी का स्वरूप कैसा हो ? कौन-सी हिन्दी का व्यवहार करें ? १२६
०५.०३ उच्चारण की समस्या १२७
०५.०४ व्याकरण की समस्या १२९
(अ) कारक और विभक्ति १२९
(ब) सन्धि नियमों में अस्पष्टता १३१
(स) समासों का मनमाना प्रयोग १३२
(द) योजक-चिन्हों के प्रयोग के प्रति उपेक्षा १३३
०५.०५ वैज्ञानिक एवं पारिभाषिक शब्दावली में एकरूपता का अभाव १३४
०५.०६ प्रामाणिक कोशों का अभाव १३६
०५.०५ अनुवाद की समस्या १३९
०५.०६ उग्रभाषावाद तथा स्वार्थ-साधना की मनोवृत्ति १३९
०५.०७ दलगत राजनीति का प्रवेश १४१
०५.०८ हिन्दी के व्यावहारिक प्रयोग की समस्या १४५
०५.०९ उपसंहार १४६

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

अध्याय–६ : राजभाषा हिन्दी और उसकी लिपि देवनागरी– पृ. १४७ से १८२

०६.०१ देवनागरी की अक्षरात्मकता १४७
०६.०२ कुछ वर्णों की आवश्यकता १४९
०६.०३ संयुक्ताक्षरों का प्रयोग १५१
०६.०४ मात्राएँ, अनुनासिक एवं अनुस्वारों का बाहुल्य १५५
०६.०५ कतिपय वर्णों के अनेक रूपों का प्रचलन १५७
०६.०६ वर्ण संख्या की अधिकता १५८
०६.०७ मुद्रण एवं टंकन की कठिनाइयाँ १५९
(अ) मुद्रण १५९
(ब) टंकन १६१
०६.०८ टंकन की कठिनाइयाँ और उनका समाधान १६१
०६.०९ शीघ्रलेखन (आशुलिपि) की कठिनाइयाँ १६४
०६.१० वर्तनी की समस्या १६६
०६.११ लिपि की समस्या १७०
०६.१२ लिपि सुधार के प्रयत्न १७०
(अ) श्री शारदाचरण मित्र और उनकी "एक-लिपि-विस्तार-परिषद्" १७१
(व) काका कालेलकर १७३
(स) काशी–नागरी–प्रचारिणी सभा : श्री निवास शास्त्री एवं गोरखनाथ चौवे १७३
(अ) श्रीनिवास शास्त्री के प्रयत्न १७४
(ब) गोरखनाथ चौवे १७५
(र) राधाकृष्णन् कमेटी १७५
सम्मेलन में स्वीकार किये गये सुधार १७६
(ल) नरेन्द्रदेव कमेटी १७६
नरेन्द्रदेव समिति के सुझावों में परिवर्तन १७७
(ब) विनोबा भावे १७८
(स) भारत सरकार १७९
०६.१२.१ अन्य सुधार १८१
०६.१३ अंकों का रूप : देवनागरी या अन्तर्राष्ट्रीय अंक १८१
०६.१४ उपसंहार १८२

अध्याय–७ : राजभाषा हिन्दी की प्रगति–पृ. १८३ से २२१ तक

०७.०० हिन्दी को अधिमान्यता १८३
०७.०१ जनता की अभिस्वीकृति १८३

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

०७.०११	नागरी प्रचारिणी सभा, काशी	१८३
०७.०१२	हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग द्वारा राजभाषा को समर्थन	१७४
०७.०१३	श्री मध्यभारत हिन्दी साहित्य समिति, इन्दौर	१८५
०७.०१४	दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा	१८६
०७.०१५	मैसूर हिन्दी प्रचार सभा, बंगलोर	१८७
०७.०१६	राष्ट्रभाषा–प्रचार समिति, वर्धा	१८७
०७.१६१	गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबाद	१८८
०७.१६२	विश्व हिन्दी सम्मेलन	१८९
०७.०१७	अन्य हिन्दी संस्थाओं द्वारा राजभाषा हिन्दी को मान्यता	१९१
०७.०१७१	कवि–सम्मेलनों के माध्यम से	१९१
०७.०१७२	चित्रपट के माध्यम से	१९१
०७.०१७३	दूरदर्शन (टी. वी.) के माध्यम से	१९२
०७.०२	(अ) हिन्दीभाषी राज्यों द्वारा	१९२
०७.२१	(ब) उत्तरप्रदेश	१९२
०७.०२२	राजस्थान	१९३
०७.०२३	बिहार	१९४
०७.०२४	मध्यप्रदेश	१९५
०७.०२५	हरियाणा	१९६
०७.०२६	हिमाचल प्रदेश	१९६
०७.०२७	दिल्ली प्रदेश	१९७
०७.०३	अहिन्दीभाषी राज्यों द्वारा	१९७
०७.०३१	गुजरात	१९८
०७.०३२	महाराष्ट्र	१९८
०७.०३३	गोवा	१९९
०७.०३४	उड़ीसा	१९९
०७.०३५	पंजाब	२००
०७.०३६	कश्मीर	२००
०७.०३७	आन्ध्र	२००
०७.०४३८	कर्नाटक	२०१
०७.०४३९	तमिलनाडु	२०२
०७.०४४०	केरल	२०१
०७.०४४१	पश्चिम बंगाल	२०२
०७.०४४२	असम	२०३
०७.०४४३	पूर्वांचल में हिन्दी	२०३
०७.०४	केन्द्रीय सरकार द्वारा	२०३
०७.०४१	साहित्य अकादमी तथा हिन्दी ग्रंथ अकादमियों की स्थापना	२०३
०७.०४२	शिक्षामन्त्रालय द्वारा	२०४

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

	(अ) केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा	२०७
०७.४२१	केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय	२०८
	पत्राचार पाठ्यक्रम	२०९
	छात्रवृत्तियाँ	२१०
	वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग	२११
०७.०४४	सूचना एवं प्रसारण मन्त्रालय	२१७
०७.०४५	अन्य मन्त्रालय	२१८
	निष्कर्ष	२१९
०७.०५	विदेशों में हिन्दी	२२०
०७.०६	उपसंहार	२२१

अध्याय–८ : मूल्यांकन : स्वरूप, उपलब्धियाँ, महत्व– पृ. २२२ से २४४ तक

०८.००	आधुनिक भारत	२२३
०८.०१	आधुनिक राजभाषा	२२३
०८.०२	आधुनिकता और राजभाषा	२२३
०८.०३	आधुनिक हिन्दी की प्रकृति	२२४
०८.०४	विकास के क्रम में हिन्दी के रूप	२२४
०८.०५	हिन्दी का समग्र स्वरूप	२२५
०८.०६	राजभाषा हिन्दी का स्वरूप	२२६
०८.०६१	हिन्दीभाषी राज्यों की राजभाषा	२२८
	१. देहलवी हिन्दी (हिन्दुस्तानी हिन्दी)	२२८
	२. हरियाणवी हिन्दी	२२८
	३. उत्तरप्रदेश की हिन्दी (प्रादेशिक हिन्दी)	२२८
	४. मध्यप्रदेशी हिन्दी	२२९
	५. बिहारी हिन्दी	२२९
	६. राजस्थानी हिन्दी	२२९
	७ हिमाचल प्रदेश की पहाड़ी हिन्दी	२३०
०८.०६२	अहिन्दीभाषी राज्यों की राजभाषा	२३०
	८. कश्मीरी हिन्दी	२३०
	९. पंजाबी हिन्दी	१३१
	१०. गुजराती हिन्दी	२३१
	११. राष्ट्रभाषा की हिन्दी	२३१
	१२. उड़ियाई हिन्दी	२३२
	१३. बंगाली हिन्दी	२३२
	१४. असमी हिन्दी	२३३

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

१५. तमिली हिन्दी २३३

१६. तेलुगू हिन्दी २३३

१७. केरल की हिन्दी २३३

१८. कन्नड़ी हिन्दी २३४

१९. सिन्धी हिन्दी २३४

०८.०६३ केन्द्रीय प्रशासन की राजभाषा २३४

२०. केन्द्र में प्रयुक्त हिन्दी २३४

२१. प्रशासन की भाषा हिन्दी २३५

२२. कानून की भाषा, हिन्दी २३५

२३. शिक्षा का माध्यम, हिन्दी २३५

२४. महामहिम उपराष्ट्रपति श्री बी. डी. जत्ती २३६

०८.०६४ जनता की सम्पर्क भाषा, हिन्दी २३६

२५. आचार्यश्री विनोबा की हिन्दी २३६

२६. प्राध्यापकीय भाषा २३७

२७. जनसंचार की भाषा हिन्दी २३७

०८.०६५ विदेशों में हिन्दी भाषा २३८

२८. इटली की हिन्दी २३८

२९. रूसी हिन्दी २३८

३०. मॉरीशस की हिन्दी २३८

३१. यूनेस्को की हिन्दी २३९

०८.०६६ राजभाषा हिन्दी का आदर्श रूप २३९

०८.०७ हिन्दी की समस्याओं का समाधान २४०

०८.०८ राजभाषा हिन्दी का भावी स्वरूप २४१

०८.०९ उपलब्धियाँ २४२

०८.१० महत्व २४४

अध्याय—९ : शोध सामग्री— पृ. २४५ से २५२ तक

०९.०० ग्रन्थ सूची २४५

०९.०१ पत्र-पत्रिकाएँ २५०

०९.०२ वार्षिक प्रतिवेदन २५२

०९.०३ प्रश्नावली और पत्र-व्यवहार २५२

संकेतिका

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

अध्याय – १

हिन्दी की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

(१) स्वातन्त्र्योत्तर–पूर्व

०१.०० भारत के संविधान में देवनागरी–लिपि में लिखित हिन्दी को भारत की राजकीय भाषा स्वीकृत किया गया है।[१] व्यापक अर्थ में हिन्दी इसलिए भारत संघ की राजभाषा है किन्तु अपने साहित्यिक अर्थ में यह राजस्थान, उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश, बिहार, दिल्ली, हिमाचल–प्रदेश और हरियाणा राज्यों की राज्य–भाषा है, जिसमें उर्दू को छोड़कर इन क्षेत्रों की बोलियों का साहित्य भी सम्मिलित है। भाषा–वैज्ञानिक दृष्टि से इसमें खड़ीबोली, बाँगरू, ब्रज, कन्नौजी, बुँदेली, अवधी, बघेली और छत्तीसगढ़ी के समन्वित रूपों का ही समावेश होता है। आज की वस्तुस्थिति के सन्दर्भ में यही कहा जा सकता है कि भारत के विभिन्न क्षेत्रों में बोलचाल के लिए प्रयुक्त सम्पर्क भाषा परिनिष्ठित हिन्दी है।[२] इसी हिन्दी को भारतीय संविधान के अष्टम परिशिष्ट में राजकीय भाषा के रूप में परिगणित किया गया है।[३] इसकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि व्यापक है। यह १००० ई. के आसपास अपभ्रंश भाषाओं से प्रसूत हुई और फिर अरबी, फ़ारसी, तुर्की और बलूची के सम्पर्क में आकर मिश्रित व साहित्यिक 'भाषा' बन गई। सन् १५०० ई. के आसपास फ़ारसी राजभाषा बन गई, जिससे इस 'भाषा' में 'सेमेटिक' वर्ग की भाषाओं की संरचना का प्रभाव पड़ा और धार्मिकता की प्रचुरता ने संस्कृत भाषा के प्रभाव को बढ़ा दिया।

परिणामतः धार्मिक भाषा और जनभाषा के दो रूपों में हिन्दी विकसित हुई। मुस्लिम प्रभाव ने इसे हिन्दवी कहा,[४] जबकि हिन्दू प्रभाव ने इसे 'भाषा' कहा।[५] इसी समय दक्खिनी

---

१. दि. काँस्टिट्यूशन ऑफ इण्डिया : जगदीशलाल, १९७७, भाग–७, अनु. ३४३–३५१, पृष्ठ १५५–१५८।

२. भाषा–विज्ञान–कोश : डॉ. भोलानाथ तिवारी, पृष्ठ ७३८।

३. अष्टम परिशिष्ट में असमी, बंगाली, गुजराती, हिन्दी, कन्नड़, कश्मीरी, मलयालम्, मराठी, उड़िया, पंजाबी, संस्कृत, सिन्धी, तमिल, तेलुगु और उर्दू को 'राष्ट्रीय भाषाएँ' घोषित किया गया है।
—भारतीय संविधान : १९७७, अष्टम परिशिष्ट, पृष्ठ २३७।

४. (अ) 'तुर्क हिन्दुस्तानियम मन हिन्दवी गोयम जवाब।' (मैं हिन्दुस्तानी तुर्क हूँ, हिन्दवी में जवाब देता हूँ) —अमीर खुसरो (१२५४–१३२५ ई.)
(ब) तुरकी अरबी हिन्दवी भाषा जैसी आहि।
जैहि महं मारग प्रेमकर, सबै सराहैं ताहि——जायसी–(१३९७–१४९४ ई.), 'पदमावत', पृष्ठ ३०१

५. भाषा बद्धमिदं चकार तुलसी——रामचरितमानस —तुलसीदास (१५३२–१६२३ ई.)
भाषा बोल न जानहीं जिनके कुल के दास——केशवदास (१५५५–१६२१ ई.)
——हिन्दी साहित्यकोश : भाग–२ : धीरेन्द्र वर्मा, पृ. १८, ४०२,२१८ व १०२।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

भाषा के कवियों ने हिन्दी की संज्ञा दी।[६] इसका अनुसरण उत्तर भारत में भी हुआ[७] किन्तु उत्तर भारत में यह उर्दू और रेख्ता की समानार्थी हो गई। अँग्रेजों के प्रभुत्वकाल के प्रारंभिक वर्षों में यह उर्दू की समानार्थी रही। फोर्टविलियम कॉलेज के प्राध्यापक जान गिलक्राइस्ट ने इसे इसी रूप में ढाला किन्तु सन् १८२४ ई. में हिन्दी के प्रोफेसर विलियम प्राइस ने हिन्दी को भारतीय-आर्य-भाषाओं से सम्बद्ध माना और उर्दू को सेमेटिक वर्ग की भाषाओं से सम्बद्ध कर दिया। इस प्रकार अंग्रेजों की नीति से हिन्दी हिन्दुओं से और उर्दू मुसलमानों से सम्बद्ध हो गई। इसका प्रभाव सन् १८६२ ई. में भारत की शिक्षा-नीति पर पड़ा तथा हिन्दी व उर्दू भाषाओं में विवाद खड़ा हो गया। अँग्रेजों ने देवनागरी-लिपि में लिखित संस्कृत-निष्ठ फोर्टविलियम कॉलिज वाली भाषा को हिन्दी नाम दिया।[८] बाद में अँग्रेजी-प्रशासन ने 'फूट डालो और राज करो' की नीति अपनाकर हिन्दी और उर्दू के विवाद खड़े किये। फ्रांसीसी विद्वानों ने 'बाबरनामे' के समय से चले आते 'हिन्दुस्तानी' शब्द का प्रयोग हिन्दू-मुस्लिम एकता की प्रतीक भाषा के लिए किया।[९] जिसे स्वतन्त्रता-सँग्राम-काल में महात्मा-गांधी ने भी 'एकता' की भाषा के रूप में अपना लिया।[१०] सन् १९४७ ई. में स्वतन्त्रता प्राप्त होते ही भारत ने अपने संविधान-निर्माण-काल में भाषाई-समस्या का जो निदान निकाला, उसके परिणाम-स्वरूप भारत की राजभाषा हिन्दी हो गई है। राजभाषा पद पर अधिष्ठित होने से पूर्व इसे पर्याप्त संघर्ष करने पड़े। प्रस्तुत अध्याय में इन्हीं सन्दर्भों का उल्लेख है।

०१.०१. अंग्रेजों की भाषा-नीति : लॉर्ड मैकॉले के सन्दर्भ में :-

लॉर्ड मैकॉले की भाषा-नीति—अँग्रेजी की दृढ़ स्थापना।

अंग्रेजों ने फ़ारसी को राजभाषा पद से हटाकर अंग्रेजी को 'सरकारी कामकाज' की भाषा घोषित की। इस कार्य में लॉर्ड मैकॉले की भूमिका प्रमुख थी। लॉर्ड मैकॉले का नाम टामस बार्दिंग्टन मैकॉले था। मैकॉले ने भारत में अंग्रेजों के लिए सरल और सुलभ भाषा-नीति बनाई। ईस्ट इण्डिया कम्पनी की कई समस्याओं का हल मैकॉले ने भाषा में देखा। अतः उसने सर्वप्रथम भाषा-नीति के सम्बन्ध में ही कार्य किया। मैकॉले के समय भारत में मुगलों के प्रभाव के कारण अरबी-फ़ारसी-भाषा का प्रभुत्व था, हिन्दी-भाषा दबी हुई

---

६. यों देखत हिन्दी के बोल—शाही नीराजी (१४७५ ई.)
—ऐब न राखे हिन्दी बोल—शाह बुर्हानुद्दीन (१५२८ ई.)

७. का जो बहुते हिन्दी भाख्यो—सूफी कवि नूरमुहम्मद (१७३३ ई.)
—फ़साहत फ़ारसी से जब निकाली,
ततफ़त शेर में हिन्दी के ढाला—मुरादशाह (१८०० ई.)।

८ हिन्दी-भाषा का इतिहास : डॉ. धीरेन्द्र वर्मा, पृष्ठ ६५-६७

९. इस्त्वार द ला लितेरात्यूर ऐंदुई ऐ ऐन्दुस्तानी, १८७१-गार्सां द तासी का ग्रंथ, हिन्दी अनुवाद (१९५८), पृष्ठ ३४।

१०. [illegible]

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy: Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

थी। हिन्दी का स्वरूप अधिक स्पष्ट नहीं था, वह विकसित हो रही थी और उसके गद्य का निर्माण हो रहा था, ऐसे समय में लॉर्ड मैकॉले ने अंग्रेजी-भाषा को राजभाषा बनाने का विचार किया। यद्यपि भारत में अंग्रेजी-शिक्षा का प्रसार लार्ड मैकॉले ने किया तथापि उसे प्रेरित भारतीय लोगों ने किया। सन् १८२३ ई. में लॉर्ड एम्हर्स्ट के नाम पत्र लिखकर राजा राममोहन राय ने अंग्रेजी-शिक्षा के प्रसार के लिए अनुरोध किया था।[११] भारतीय लोगों में कुछ लोग अंग्रेजी चाहते थे।[१२] ये लोग समाज-सुधारक थे तथा अंग्रेजी पढ़े-लिखे थे। ये चाहते थे कि हमारा देश भी उन्नति करे, नव-जागरण हो और लोगों के जीवन का स्तर सुधरे। इसलिए इन्होंने अंग्रेजी का समर्थन करते हुए उसे लागू करने के प्रयास किये और अंग्रेजी-शिक्षा के लिये अनुकूल वातावरण बनाया।[१३] मैकॉले ने देखा वातावरण उसके पक्ष में है तथा भारतीय लोगों की सहायता भी उसे मिलेगी। अतः उसने शिक्षा के लिये अपना दृढ़ मत निश्चित कर लिया। सन् १८३४ ई. में मैकॉले भारतवर्ष आया, तब १८२३ ई. के चार्टर के सम्बन्ध में उसकी राय पूछी गई। उसने अपनी राय देते हुए अंग्रेजी भाषा के प्रचार का कार्य तेजी से करने के उद्देश्य से चार्टर का कार्य अपने हाथ में लिया। १८३५ ई. में अंग्रेजों की शिक्षा-नीति स्पष्ट हुई।[१४] ७ मार्च, १८३५ ई. को सरकार का प्रस्ताव प्रकाशित हुआ। कम्पनी की सरकार ने अंग्रेजी-शिक्षा के प्रसार के लिए एक प्रस्ताव स्वीकार किया और धीरे-धीरे देश में अंग्रेजी के स्कूल खोले जाने लगे, जिनमें उर्दू की पढ़ाई की व्यवस्था अनिवार्य कर दी गई। हिन्दी की पढ़ाई उपेक्षित रही। अंग्रेजी-शिक्षा की व्यवस्था स्कूलों और कॉलेजों में तो हो गई किन्तु मुगलों के समय से राजा टोडरमल द्वारा प्रचलित फारसी को कचहरी और अदालती भाषा बनाये रखा, जिससे लोग फ़ारसी भाषा और लिपि से अपरिचित रहने के कारण कठिनाई का

---

११. राजा राममोहन राय के पत्र : दि ब्रिटिश पेरामाउण्टेंसी एण्ड इण्डियन रिनैसां : खण्ड-२, डॉ. आर. सी. मजूमदार, पृ. ३४-३५.

१२. इसी समय भारत में अंग्रेजी-शिक्षा का प्रवेश करने या न करने के विषय में एक चर्चा उठ खड़ी हुई। हिन्दुस्तानियों में राजा राममोहन राय और अंग्रेजों में मैकॉले अंग्रेजी-शिक्षा देने के जबर्दस्त समर्थक थे। अन्त में भारतीय भाषाओं और साहित्य के स्थान पर अंग्रेजी भाषा के पक्ष में निर्णय हुआ और उस शिक्षा-पद्धति की नींव पड़ी जो आज तक प्रचलित है—कांग्रेस का इतिहास, पट्टाभिसीतारामय्या, भाग-१, चौथा संस्करण, १९४६, पृ. ४.

१३. 'The ground had already prepared long before macaulay arrived in India.'—दि ब्रिटिश पैरामाउण्टेंसी एण्ड इण्डियन रिनैसां—खण्ड-२, डॉ. आर. सी. मजूमदार, पृ. ४५.

१४. हमें अपनी समस्त शक्ति लगाकर ऐसा प्रयत्न करना चाहिए कि हम भारतवासियों की एक ऐसी श्रेणी बना सकें जिसमें व्यक्ति, जाति और रंग में तो भारतीय ही रहें परन्तु रुचि, विचार और भाषा में पूर्ण अंग्रेज हों—२ फरवरी, १८३५, लार्ड मैकाले।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

अनुभव करने लगे।[१५] १८४४ ई. में लॉर्ड हार्डिंग्ज का घोषणा-पत्र प्रकाशित हुआ—'कि नौकरियाँ अंग्रेजी पढ़े-लिखे लोगों को दी जाय। इसके उपरान्त १८५३ ई में नए चार्टर तक अंग्रेजी का पर्याप्त प्रचार हुआ।[१६]

मैकॉले ने अपने पिता को, भारत में अंग्रेजी स्कूलों के विषय में एक पत्र लिखा।[१७] पत्र से स्पष्ट ज्ञात होता है कि मैकॉले का विचार था कि भारत में शिक्षा-प्रसार के माध्यम से शासन का कार्य करने के लिए कर्मचारी सरलता से देश में ही उपलब्ध हो सकेंगे तथा धर्म का प्रचार भी बड़ी सहजता से किया जा सकेगा जिससे कि लोग ईसाई बन सकें और वे ईस्ट इण्डिया कम्पनी के पक्के अनुयायी तथा समर्थक बन जायेंगे। शिक्षा के साथ-साथ अंग्रेजी के समर्थकों ने प्रयत्न किया कि फ़ारसी के स्थान पर अदालती भाषा भी अंग्रेजी हो जाय। इसके पूर्व लम्बे समय तक देश में मुगलों का शासन रहा, जिसके कारण देश के अधिकाँश हिस्सों में उनके द्वारा स्थापित न्यायालयों में फ़ारसी का ही प्रयोग किया जाता था। सरकार ने लोक-भाषाओं का स्थान अंग्रेजी को देने का प्रयत्न कभी नहीं किया। १८३७ ई. के रेग्युलेशन के अनुसार अदालतों से फ़ारसी हट जाने पर लोक-भाषाओं को उसका

---

१५. राष्ट्रभाषा-हिन्दी का स्वरूप-विधान--डॉ. रामेश्वर मिश्र, प्रथम संस्करण-१९७५, पृष्ठ २९५.

१६. आधुनिक हिन्दी-साहित्य की भूमिका : डॉ. लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय : १९५२ ई, पृष्ठ. २९६.

१७. प्रिय पिताजी,

हमारे अंग्रेजी स्कूलों की आश्चर्यजनक प्रगति हो रही है। जरुरत भर के लोगों को अंग्रेजी-शिक्षा देने की हम कोशिश कर रहे हैं। कहीं-कहीं यह कार्य असम्भव ही बताया जा सकता है। केवल हुगली नामक एक शहर में डेढ़ हजार लड़कों को अंग्रेजी-शिक्षा दी जाती है। हिन्दुओं पर इस शिक्षा का गहरा और व्यापक प्रभाव पड़ रहा है। अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त कोई भी हिन्दू अपने धर्म में विश्वास नहीं रखते हैं। यद्यपि यहाँ बहुत से लोग अपने को आस्तिक कहते हैं, लेकिन कुछ ईसाई धर्म में दीक्षित भी हैं। अगर हमारी शिक्षा-योजना मजबूती के साथ प्रचलित रहेगी तो तीन साल के अन्दर बंगाल के प्रतिष्ठित परिवारों में कोई भी मूर्तिपूजक नहीं रह जाएगा। इसका मुझे अटल विश्वास है कि हम परिवर्तन की योजना के बिना ही यह सब सिद्ध कर सकते हैं। ज्ञान एवं मनन से ही यह अनायास सिद्ध हो सकता है। धार्मिक स्वतन्त्रता से इसका किसी तरह विरोध नहीं होगा। सुदूर भविष्य की इस सम्भावना से मैं हार्दिक आनंद का अनुभव कर रहा हूँ।

आपका प्रिय पुत्र

मैकॉले

राष्ट्रभाषा सन्देश, गंगानगर, १६ नवम्बर, १९७१, भाग-७, अंक १०, पृ. ७

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

स्थान दिया गया।[१८] मैकॉले की इस भाषा-नीति का विरोध भारतीयों ने ही किया हो ऐसा नहीं बल्कि अंग्रेजों ने भी किया। ऑनरेबुल फ्रेडेरिक जान शोर ने अंग्रेजी के अदालती भाषा हो जाने पर मत व्यक्त किया कि सभ्य भारतवासियों पर यह अनावश्यक भार लादा गया है, जिससे अंग्रेज व्यापारियों, अधिकारियों तथा भारतीय नागरिकों के बीच एक बड़ी खाई पट जायगी।[१९] मैकॉले अपनी भाषा-नीति के अनुसार अंग्रेजी को ही राजभाषा बनाना चाहता था परन्तु उसे प्रबल विरोधों के कारण फ़ारसी को भी स्थान देना पड़ा। इस प्रकार मैकॉले को अपनी भाषा-नीति के लिए परिस्थिति के साथ समझौता करके यह संशोधन मानना पड़ा। देश में मुगलों के प्रभुत्व के कारण हिन्दी को राज्याश्रय और महत्व नहीं मिला इससे हिन्दी-भाषा में शिक्षा ग्रहण करने वालों को रोजगार की समस्या का सामना करना पड़ा, जिससे उसका महत्व कम हो गया। फ़ारसी-भाषा का विरोध बढ़ जाने के कारण अंत में १८३७ ई. में निश्चित रूप से उसका स्थान लोक-भाषाओं को दिया गया।[२०] लोक-भाषाओं का अस्तित्व महत्वपूर्ण इसलिए भी बन गया कि साधारण-जन न तो फ़ारसी के अच्छे ज्ञाता थे, न अंग्रेजी के ही। इस समय सम्पूर्ण देश में संस्कृत के प्रभाव से संस्कृत के शब्द पण्डितों की भाषाओं में, फ़ारसी के शब्द मुगल शासन के अधिकारियों और मुस्लिम जाति के लोगों की भाषाओं में थे तथा हिन्दी के टूटे-फूटे शब्द जन-साधारण की बोलियों में प्रयुक्त होते थे। अंग्रेजी भाषा में इन सब भाषाओं के प्रचलित शब्द सम्मिलित हो गये। इसके साथ विभिन्न छोटी-छोटी भाषाओं, बोलियों और उपबोलियों के शब्द भी प्रचलित थे। लोक-भाषाओं का सर्वमान्य स्थिर स्वरूप नहीं था, फिर भी उस समय

---

१८. आधुनिक हिन्दी-साहित्य की भूमिका-डॉ. लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय, १९५२ ई, पृ. २९८.

१९. अंग्रेजी के अदालती भाषा हो जाने से सबसे बुरा प्रभाव जन-साधारण के बीच के सम्बन्धों पर पड़ेगा। उन लोगों के मध्य एक जबर्दस्त खाई बन जाएगी और अंग्रेज तिजारतियों को दिक्कत वैसी ही है जैसी उनको रूस, जर्मनी या फ्रांस जाने पर होगी। उन्हें यहाँ किसी ने बुलाया तो नहीं था। वे स्वयं धनोपार्जन के लोभ से यहाँ आए हैं। उस पर भी वे यह चाहते हैं कि उनकी आसानी के लिए करोड़ों आदमियों पर एक व्यर्थ का बोझ लाद दिया जाय। ये सब बातें कभी न्याय-संगत नहीं मानी जा सकती। वास्तव में हम भारतवासियों को जंगली और जाहिल समझते हैं परन्तु ऐसा समझना या उन पर एक विदेशी भाषा लाद देना हम जैसे सभ्य जाति के लोगों को शोभा नहीं देता।

—नोट्स आन इण्डिया : भाग—१२ में भाषा-सम्बन्धी लेख, पृ. ३४-३५.

२०. १८३७ का अधिनियम-२९, फोर्टविलियम कॉलेज, ४ सितम्बर, १८३७.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

की वह लोक-भाषा हिन्दी न होकर हिन्दुस्तानी[२१] हुई। [२२] भाषा के अर्थ में हिन्दुस्तानी का प्राचीन प्रयोग हिन्दी के अर्थ में हुआ है। बाद में १८ वीं सदी के अन्त में यह मुसलमानों की भाषा के अर्थ में प्रयुक्त होने लगी और 'उर्दू' की पर्याय बन गई। १९ वीं सदी में यह उर्दू के पर्याय बनी रही। २० वीं सदी में हिन्दू-मुस्लिम संघर्ष के परिणाम-स्वरूप उर्दू-हिन्दी के विवाद से बचने के लिए हिन्दुस्तानी को हिन्दी-उर्दू के बीच की भाषा माना गया। यह कार्य महात्मा-गांधी ने किया।[२३]

मैकॉले स्वयं बैरिस्टर था। उसका अटल विश्वास था कि अंग्रेजी साम्राज्य की नींव दृढ़ करने के लिए यह आवश्यक है कि अंग्रेजी-भाषा की जड़ें जमाई जाय। वह चाहता था कि शिक्षा और अदालतों की भाषा अंग्रेजी हो, जिसके द्वारा इंग्लैंड का 'कॉमन लॉ' भारत में प्रचलित हो और भारत के प्रशासन को सुचारू संचालन के लिए अंग्रेजी के बैरिस्टरों का आयात भारत में किया जाय, जिससे अंग्रेजी साम्राज्य दृढ़ता से फैलता जाय।

०१.०२ भारतीय पुनर्जागरण के नेताओं की भाषा-नीतिः—

(क) स्वामी दयानन्द सरस्वतीः—आर्य-भाषा के प्रबल प्रचारक—

१९ वीं सदी में सम्पूर्ण भारतवर्ष में राष्ट्रीय पुनर्जागरण की भावना फैल रही थी। उस समय देश में 'एक भाषा और एक लिपि' की घोषणा की गई। अंग्रेजों और राजा राममोहनराय के प्रयत्नों के कारण देश के विभिन्न भागों में अंग्रेजी के स्कूल और कॉलेज खोले गये, जिनमें प्रधानतः अंग्रेजी की शिक्षा दी जाती थी। देश में पहले से अरबी-फ़ारसी प्रचलित थीं। हिन्दी का स्वरूप भी व्यवस्थित नहीं था। ऐसे समय में स्वामी दयानन्द सरस्वती ने भारतीय संस्कृति और सभ्यता की रक्षा करने के उद्देश्य से सम्पूर्ण भारत का भ्रमण किया और स्थान-स्थान पर भाषण दिये। स्वामीजी संस्कृत के प्रचण्ड विद्वान थे इसलिए इन्होंने अपने भाषण संस्कृत में दिये। कहीं-कहीं इन्होंने अपने भाषण आर्य-भाषा में दिये—'नागरी के अक्षर थोड़े दिनों में सीखे जा

---

२१. हमारे यहाँ आम ख्याल यह है कि अंग्रेजों ने यह (हिन्दुस्तानी) नाम दिया है, लेकिन अमर वाकआ (वास्तविक बात) ये है कि हमारे असलाफ (पूर्वज) इसको ज़बान-हिन्दोस्तान या बोली हिन्दुस्तान कहते रहे। मौलाना वज़ही किताब 'सबरस' जिसका रचना काल सन् १०४० हिजरी के करीब बताया जाता है—में उर्दू को 'जबाने हिन्दोस्तान' कहते हैं। यथा—'आगाज दास्तान ज़बान हिन्दोस्तान'।

—'पंजाब में उर्दू'—प्रो. हाफिज महमूद खां साहब शेरानी, इस्लामिया कॉलेज, लाहौर, पृ. २२.

२२. आधुनिक हिन्दी-साहित्य की भूमिका—डॉ. लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय, १९५२, ई., पृ. ३०२

२३. भाषा-विज्ञान-कोश-भोलानाथ तिवारी, संवत् २०२०, पृ. ७४१.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy: Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

सकते हैं, आर्य-भाषा का सीखना भी कोई कठिन काम नहीं है। फ़ारसी और अरबी के शब्दों को छोड़कर ब्रम्हावर्त्त की सभ्य भाषा ही आर्य-भाषा है। यह अति कोमल और सुगम है जो इस देश में उत्पन्न होकर अपनी भाषा के सीखने में कुछ भी परिश्रम नहीं करता उससे और क्या आशा की जा सकती है ? उसमें धर्म के प्रति लगन है, इसका भी क्या प्रमाण है ? आप तो अनुवाद की सम्मति देते हैं; परन्तु दयानन्द के नेत्र तो वह दिन देखना चाहते हैं कि जब कश्मीर से कन्याकुमारी तक और अटक से कटक तक नागरी अक्षरों का ही प्रचार होगा। मैंने आर्यावर्त भर में भाषा का ऐक्य सम्पादन करने के लिये ही अपने सकल ग्रंथ आर्य-भाषा में लिखे और प्रकाशित किये हैं।[२४] इससे सिद्ध होता है कि स्वामीजी सम्पूर्ण भारत में एक ही भाषा और लिपि चाहते थे। उनका 'आर्य-भाषा' से आशय नागरी-हिन्दी से ही था। उन्हें हिन्दी (आर्य-भाषा) की प्रेरणा केशवचन्द्र सेन से प्रश्प्त हुई थी। इसका कारण यह था कि वे अपने भाषण संस्कृत में दिया करते थे जिसे जन-साधारण नहीं समझ पाते थे, बल्कि उनकी संस्कृत इतनी उच्चकोटि की होती थी कि कई बार विद्वान लोग भी भूल कर जाया करते थे। कुछ लोग जो उनके विचारों से सहमत नहीं थे वे लोग उनके भाषणों की व्याख्या अपने दृष्टिकोण से करके जनसाधारण को वास्तविकता से परे रखते थे। इसलिए केशवचन्द्र सेन ने परामर्श दिया-वे भाषा में ही व्याख्यान किया करें क्योंकि भाषान्तरकर्ता बहुधा उनके भावों को विकृत एवं परिवर्तित रूप में जनता के सामने प्रस्तुत करते हैं। इसे स्वामीजी ने स्वीकार किया,[२५] आरा जिले के तत्कालीन न्यायमूर्ति एच. डब्ल्यू. अलेक्जेंडर ने स्वामीजी से बातचीत की। बातचीत के समय रजनीबाबू अनुवादक थे। इस पर न्यायमूर्ति ने संस्कृत में बोलने का कारण पूछा। स्वामीजी ने बताया कि-'भारतवर्ष में द्राविड़ प्रभृति अनेक भाषाएँ बोली जाती हैं तब मैं किस भाषा में बोलूँ ? इसके अतिरिक्त संस्कृत सारे हिन्दुओं की भाषा है और समस्त भाषाओं का मूल है। अतः संस्कृत बोलना ही उचित है।[२६] स्वामी दयानन्द ने सर्वप्रथम अपना भाषण हिन्दी में मई सन् १८७४ में काशी में दिया।[२७] इस भाषण के पूर्व ही लोगों को जानकारी दे दी गई थी जिससे अधिक संख्या में लोग पधारे। जिस दिन महाराज ने पहला व्याख्यान दिया उस दिन पहले से ही लोगों को सूचना दे दी थी कि व्याख्यान भाषा में होगा। व्याख्यान भाषा में ही हुआ परन्तु संस्कृत बोलने के अभ्यास और भाषा बोलने के अभ्यास के कारण व्याख्यान में वाक्य-के-वाक्य संस्कृत में बोले गये।'[२८] इसके उपरान्त स्वामीजी ने अनेक स्थानों पर अपने व्याख्यान हिन्दी में

---

२४. श्री मद्दयानन्द प्रकाश-स्वामी सत्यानन्द, पृ ३८८.

२५. हिन्दी-भाषा और साहित्य को आर्य-समाज की देन-डॉ. लक्ष्मीनारायण गुप्त, सम्वत् २०१८ वि., पृ. ५१.

२६. महर्षि का जीवन-चरित-श्री बाबू देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय-अनुवादक-श्री पं. घासीराम सम्वत् १९९० वि., प्रथमावृत्ति, पृ. २१४.

२७. वीणा : अक्टूबर-नवम्बर सन् १९७५, वर्ष ४८, अंक १०-१०, पृ ६०.

२८. महर्षि का जीवन-चरित-श्री बाबू देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय, सं. १९९०, वि. प्रथमावृत्ति, पृ. २७०.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

ही दिये। धीरे-धीरे स्वामीजी हिन्दी भली-भाँति बोलने लगे। इसका परिणाम भी उनके लिये अच्छा नहीं रहा। लोगों ने उन पर आरोप लगाया कि स्वामीजी को संस्कृत नहीं आती है–'पूना में कुछ लोग कहने लगे कि स्वामीजी संस्कृत अच्छी नहीं जानते इसी से हिन्दी में वोलते हैं। इसकी भनक स्वामीजी के भी कानों में पड़ गई। अतः १७ जुलाई को उन्होंने अपना व्याख्यान पुनर्जन्म पर संस्कृत में किया।[२९]

स्वामी दयानन्द सरस्वती हिन्दी के प्रवल समर्थक थे यद्यपि संस्कृत की तुलना में उन्हें हिन्दी इतनी अच्छी नहीं आती थी। वे हिन्दी बोलते समय भी धाराप्रवाह संस्कृत बोल जाते थे। फिर भी उन्होंने आर्य-समाज में हिन्दी को प्रतिष्ठित किया। उन्होंने आर्य-समाज के लिये २८ नियम वनाये, उनमें हिन्दी (आर्य–भाषा) को स्थान दिया। उसका पाँचवा नियम हैं–'प्रधान समाज में वेदोक्तानुकूल संस्कृत और आर्यभाषा में नाना प्रकार के सदुपदेशों की पुस्तकें होगी और एक 'आर्य-प्रकाश' पत्र यथानुकूल आठ-आठ दिन में निकलेगा। यह सब समाजों में प्रवृत्त किया जाएगा।[२९अ] स्वामीजी ने हिन्दी को अलग-अलग समय और स्थानों पर विभिन्न नामों से सम्बोधित किया है। उन्होंने उसे आर्य-भाषा, भाषा, हिन्दी और नागरी कहा है, परन्तु उनका आशय केवल नागरी हिन्दी से ही था, जिसकी उत्पत्ति संस्कृत भाषा से हुई है और जो आर्यों की भाषा थी। इस प्रकार उन्होंने हिन्दी का व्यापक समर्थन और प्रचार-प्रसार किया है। स्वामीजी ने भारत–भ्रमण किया था तथा भारतीय संस्कृति के साथ-साथ हिन्दी का प्रचार भी उनके भाषणों से होता गया। इतना ही नहीं उन्होंने लोगों को हिन्दी के लिए प्रेरित भी किया–'मेवाड़ में राजकीय भाषा हिन्दी थी परन्तु उसमें फ़ारसी शब्दों का अधिक प्रयोग होता था। यह देख महर्षि ने महाराजा को राजकीय भाषा में शुद्ध नागरी को स्थान देने और साधारण लोगों को समझ में आ सके ऐसी भाषा को रखने का आग्रह किया। स्वामीजी का आदेश स्वीकार कर महाराजा ने नागरी-लिपि और सरल भाषा में कार्य होने की आज्ञा जारी की।[३०]

---

२९. वही वही पृ. ३४९.

२९ अ. महर्षि का जीवन चरित–श्री बाबू देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय, पृ. ३३३, हिन्दी-भाषा और साहित्य को आर्य-समाज की देन–डॉ. लक्ष्मीनारायण गुप्त, सं. २०१८ वि., पृ. २७ और वीणा : अक्टूबर-नवम्बर १९७५, वर्ष ४८, अंक १०-११, पृ. ५९। इसमें वताया गया है कि लाहौर में २४ जून, १८७७ को केवल १० प्रमुख नियम स्वीकृत किये गये। यद्यपि इन १२ नियमों में हिन्दी-भाषा के लिए कोई स्पष्ट निर्देश नहीं है परन्तु इनके साथ जो कुछ उपनियम वनाये गये, उनमें ३५ वां नियम स्पष्टतः घोषित करता है–सब आर्य और आर्य सभासदों को संस्कृत व आर्य भाषा जाननी चाहिये।

३०. दयानन्द : गौरीशंकर हीराचंद ओझा–लेख–महर्षि दयानन्द सरस्वती और महाराणा सज्जनसिंह, पृ. ३६८.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

इससे स्वामीजी के हिन्दी के प्रति क्या विचार थे, स्पष्ट रूप से ज्ञात होते हैं। इतना ही नहीं वे हिन्दी के स्वरूप के विषय में भी जागरूक थे। उस समय नागरी-हिन्दी में संस्कृत और अरबी-फ़ारसी के शब्दों से युक्त दो प्रकार की शैलियाँ प्रचलित थीं, जिनमें से वे अरबी-फ़ारसी से युक्त नागरी-हिन्दी के पक्ष में नहीं थे। इस प्रमाण से इस बात की की भी पुष्टि होती है कि वे हिन्दी को 'राजभाषा' के रूप में देखना चाहते थे। उनकी प्रेरणा से सम्पूर्ण देश की नहीं परन्तु एक राज्य विशेष या क्षेत्र विशेष की भाषा ही सही, राजभाषा बन सकी। वे ऐसी हिन्दी के पक्ष में थे जो सरल हो, जिसे जनसाधारण समझ सके परन्तु वह शुद्ध नागरी होनी चाहिए। स्वामीजी ने हिन्दी को 'राजभाषा' बनाने के लिये प्रयत्न किया। स्वामीजी हिन्दी के प्रबल समर्थक ही नहीं उसके स्वरूप निर्धारक भी थे। उनकी अपनी मातृभाषा गुजराती थी। वे हिन्दीतर भाषी होते हुए भी हिन्दी के प्रति उनका उत्कृष्ट अनुराग था। केवल हिन्दी राजभाषा ही नहीं लिपि की ओर भी उनका ध्यान था। उन्होंने नागरी-लिपि को ही स्वीकारा है, उनकी दृष्टि व्यापक थी। वे नागरी-हिन्दी और नागरी-लिपि के कट्टर समर्थक होते हुए भी अँग्रेजी-विरोधी नहीं थे—'वे स्वयं संस्कृत के विद्वान हैं इसलिये इस देश के हर एक रहने वाले को उक्त भाषा की शिक्षा प्राप्त करने का परामर्श देना उनके लिये स्वाभाविक ही है। वे कहते हैं कि हमें अँग्रेजी केवल एक घण्टा प्रतिदिन पढ़ना चाहिए। हम नहीं कह सकते कि हम में से कितने इस परामर्श को पसन्द करेंगे परन्तु हमें विश्वास है कि यदि कोई मनुष्य अँग्रेजी साहित्य को एक घण्टा प्रतिदिन से अधिक न पढ़ कर उस भाषा पर अधिकार प्राप्त कर सकेगा तो वह एक अलौकिक घटना होगी।'[३१] स्वामीजी ने हिन्दी-भाषा को अंग्रेजी और संस्कृत की तुलना में शीर्षस्थ स्थान दिया, इसका कारण क्या है? ज्ञात नहीं परन्तु इससे हिन्दी के प्रति उनकी विचारधारा अधिक स्पष्ट हो जाती है। वे अंग्रेजी या अन्य भाषाओं के विरोधी नहीं थे बल्कि उन भाषाओं के अध्ययन के लिए भी प्रेरणा देते थे। यह कार्य उन्होंने साधारण लोगों से ही प्रारम्भ नहीं किया बल्कि राजकुमारों से प्रारम्भ किया ताकि साधारण व्यक्ति अनुकरण के आधार पर हिन्दी सीखे और उसका प्रचार-प्रसार अधिक हो सके—'महाराज कुमार के सब संस्कार वेदोक्त कराइए, २५ वर्ष तक ब्रह्मचारी रखके प्रथम देवनागरी-भाषा और पुनः संस्कृत विद्या पढ़ाइए, जो कि सनातन आर्य-भाषा है, जिसके पढ़ने में परिश्रम और समय कम लगे और महालाभ प्राप्त हो। पश्चात् यदि समय हो तो अँग्रेजी के व्याकरण और दर्शन के ग्रंथ भी पढ़ने चाहिये।'[३२] स्वामीजी ने अँग्रेजी से हिन्दी और संस्कृत की तुलना करके यह बताया है कि इन दोनों ही भाषाओं को सीखने में कम समय लगेगा और लाभ अधिक होगा। वे अप्रत्यक्ष रूप से अँग्रेजी को अधिक महत्व नहीं देते हैं। जबकि उनके ही समकालीन राजा राममोहन राय ने देश के लिए अँग्रेजी का ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक समझा। इसलिये ही उन्होंने लॉर्ड मैकॉले को अंग्रेजी-शिक्षा के लिये

---

३१. महर्षि का जीवन-चरित : देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय, पृ. २९२.

३२. ऋषि दयानन्द के पत्र और विज्ञापन : सम्पादक पं. भगवद्दत्त, १९५५ ई. पृ. ४६४-४६५.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

प्रोत्साहित ही नहीं किया पूरी तरह से सहयोग भी दिया। इसका मुख्य कारण था दो संस्कारों का प्रभाव। राजा राममोहन राय लन्दन में पढ़ चुके थे। उनकी नस-नस में अँग्रेजी सभ्यता और संस्कृति ही थी जिसे वे श्रेष्ठ और भारतीयों के लिये आवश्यक समझते थे जबकि दयानन्द सरस्वती ने बचपन से भारतीय संस्कृति के अनुकूल संस्कृत का गहन अध्ययन किया था। वे कट्टर हिन्दू थे। उन्होंने अँग्रेजी शिक्षा-प्रणाली की आलोचना की— 'इस शिक्षा-प्रणाली का यह परिणाम है और हुआ है कि हम अँग्रेजी-साहित्य में तो व्युत्पन्न हो जाते हैं परन्तु अपने प्राचीन साहित्य, सभ्यता और गौरव से अनभिज्ञ रहते हैं।'[33] वे संस्कृत और हिन्दी के कट्टर समर्थक थे। उनकी शुद्धता की उन्हें चिन्ता थी परन्तु उनमें यह कमजोरी थी—'स्वामीजी ने महाराजा को राजनीति के कुछ सिद्धान्त लिख कर दिये थे। स्वामीजी की हिन्दी उस समय शुद्ध नहीं थी इसलिये उन्होंने अपना लेख रावजी बासुदेव टिल्लो अध्यक्ष, शिक्षा-विभाग, इन्दौर राज्य को शुद्ध कराने के लिये दे दिया था और उन्होंने उसे मास्टर शम्भूदयाल से शुद्ध कराया था।'[34] इतना होते हुए भी वे हिन्दी को प्रधानता देते थे।

स्वामी दयानन्द सरस्वती के विषय में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का कथन है कि— 'स्वामीजी ने अपना 'सत्यार्थ प्रकाश' तो हिन्दी या आर्यभाषा में प्रकाशित कराया, वेदों के भाष्य भी संस्कृत और हिन्दी दोनों में किये। स्वामीजी ने संवत् १९३२ में आर्य-समाज की स्थापना की और सब आर्य-समाजियों के लिये हिन्दी या आर्यभाषा का पढ़ना आवश्यक ठहराया।'[35]

'लाला लाजपतराय ने मत दिया कि स्वामीजी ने उत्तर भारत की लोकभाषा हिन्दी में वेदों का अनुवाद प्रस्तुत कर महान साहस का कार्य किया है। इससे उनके मंतव्यों की सचाई और स्पष्टता व्यक्त होती है।'[36]

वस्तुतः हिन्दी के विकास में स्वामी दयानन्द सरस्वती का महान योग है। इसे प्रवचनों को व्यवहार योग्य भाषा बनाने में उनकी अद्‌भुत देन है। हिन्दी-गद्य को बलवान् तथा हिन्दी-भाषा को जन-साधारण की भाषा बनाने में स्वामीजी आधार स्तम्भ ही हैं।'[37]

(ख) केशवचन्द्र सेन :-

राजा राममोहन राय के उपरान्त ब्रह्म-समाज के कार्यकर्ताओं में राजनारायण बोस, भूदेव मुखर्जी और नवीनचन्द्र राय के साथ केशवचन्द्र सेन का नाम लिया जाता है। १९वीं

---

३३. महर्षि दयानन्द का जीवन-चरित, पृ. २९२.

३४. वही, पृ. ३६९, यह घटना इन्दौर महाराजा के साथ की है जिसका उल्लेख लेख रामकृत 'जीवन-चरित' और स्वामी सत्यानन्दजी के 'दयानन्द प्रकाश' में नहीं है।

३५. हिन्दी-साहित्य का इतिहास : आचार्य रामचन्द्र शुक्ल; पृ. ४४५.

३६. दि आर्य समाज : लाला लाजपत राय, पृ. १०६.

३७. खड़ी-बोली : ओंकार राही : १९७५, पृ. १६५.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

शती में आपने 'एक-भाषा'-आन्दोलन को चलाया। इस समय सम्पूर्ण देश में राष्ट्रीयता की लहर बह रही थी। देश में राजनैतिक नेताओं के साथ मिलकर देश का हर व्यक्ति एक भाषा और देश की एकता के लिए कार्य कर रहा था। ऐसे समय में केशवचन्द्र सेन ने राष्ट्रीय एकता की दृष्टि से राष्ट्रभाषा का प्रश्न उठाया। हिन्दी-भाषा का सुझाव उन्होंने दयानन्द सरस्वती के समक्ष रखा—'आप हिन्दी-भाषा में प्रवचन दें ताकि सामान्यजन भी आपकी बात समझ सकें और लाभान्वित हो सकें।'[३८] ब्रह्म-समाज में उन्होंने हिन्दी का अधिक-से-अधिक प्रचार-प्रसार किया। वे देश की एकता के लिए एक भाषा का व्यवहार करने के पक्षपाती थे। 'उन्होंने ब्रह्म-समाज के प्रचारकों के लिये हिन्दी सीखना अनिवार्य कर दिया था। उन्हीं की प्रेरणा से कुछ ब्रह्म-समाजी प्रचारकों ने हिन्दी में भजन भी लिखे थे जिनकी संख्या दो सौ के लगभग है।'[३९] ये प्रथम राष्ट्रीय नेता थे जिन्होंने 'सर्व-प्रथम हिन्दी को राष्ट्रभाषा घोषित किया।'[४०] उनका विचार था कि देश में एकता तभी आ सकती है जब हम भाषाई एकता को साकार रूप दे सकने में समर्थ होवेंगे क्योंकि भाषा का सम्बन्ध संस्कृति से है। भाषा का सम्बन्ध राष्ट्रीयता से है। भाषा ही मानव-मानव के विचारों के आदान-प्रदान का माध्यम है। भाषा की एकता से मानव की एकता और उससे देश की एकता सम्भव है। अतः देश में एक भाषा का होना बहुत जरूरी है। 'भारतवर्ष के एक हुए बिना भारत में एकता नहीं हो सकती, तो उसका उपाय क्या है? उपाय है सारे भारत में एक ही भाषा का व्यवहार। अभी जितनी भाषाएँ भारत में प्रचलित हैं, उनमें हिन्दी-भाषा लगभग सभी जगह प्रचलित है। इस हिन्दी-भाषा को अगर भारतवर्ष की एकमात्र भाषा बनाया जाय तो यह काम सहज ही और शीघ्र सम्पन्न हो सकता है।'[४१]

०१.०३. भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस की भाषा-समस्या :-

सन् १८८३ ई. में अँग्रेजों की नीतियों से देश की जनता त्रस्त थी। यह देखकर सर ए. ओ. ह्यूम ने इस अशान्ति को प्रकट करने का एक सरल उपाय ढूँढ निकाला,[४२] उन्हें यह विचार आया कि हिन्दुस्तानियों की एक राष्ट्रीय-सभा कायम की जाय और उन्होंने १ मार्च, १८८३ ई. को कलकत्ते के स्नातकों के नाम पत्र लिखकर उन्हें राष्ट्रीयता के लिए प्रेरित किया। पादरी जान मुडाक साहब का मत है कि—'अखिल भारतीय काँग्रेस

---

३८. श्री मद्दयानन्द प्रकाश : स्वामी सत्यानन्दजी; पृ. २४० एवं 'हिन्दी-भाषा और साहित्य को आर्य-समाज की देन' : डॉ. लक्ष्मीनारायण गुप्त, सम्वत् २००८ वि., पृ., ५१.

३९. सन्मार्ग, दीपावली विशेषांक, १९६०, 'बंगाल के हिन्दी-सेवी'—लेख-विष्णुकान्त शास्त्री, पृ. ४०.

४०. हिन्दी-पत्रकारिता : डॉ. कृष्णबिहारी मिश्र, प्रथम संस्करण—१९६८, पृ. ६४.

४१. वही—वही, पृ. २८२.

४२. कांग्रेस का इतिहास : पट्टाभिसीतारामय्या, भाग-१, चौथीबार, १९४६, पृ. ०७.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

स्थापित करने की प्रेरणा कलकत्ते के अन्तर्राष्ट्रीय परिषद् के कारण हुई।[४३] यह तो अभी तक एक रहस्य ही है कि अखिल भारतीय काँग्रेस की कल्पना वास्तव में किसके मस्तिष्क से निकली। १८७७ ई. के दरबार या कलकत्ते की अन्तर्राष्ट्रीय प्रदर्शनी के अलावा थियासॉफिकल कन्वेन्शन का भी नाम इस विषय में लिया जाता है जो कि दिसम्बर, १८८४ ई. में मद्रास में हुआ था। मि. एलेन कॉक्टेवियन ह्यूम ने प्रशासनिक सेवा से अवकाश प्राप्त करने के उपरान्त जो इण्डियन यूनियन स्थापित की थी वह भी काँग्रेस के जन्म का निमित्त बतलाई जाती है।[४४] सन् १८८५ में काँग्रेस का जन्म हो चुका था।[४५] मि. ए. ओ. ह्यूम ने इसमें सबसे पहले कदम बढ़ाया और २३ मार्च, १८८५ में इसके सम्बन्ध में पहली सूचना प्रसारित की।

काँग्रेस का जन्म अँग्रेजों के अत्याचारों से त्रस्त लोगों को मुक्त कराने के लिए तथा उनकी समस्याओं का निराकरण करने के लिये एक संगठन की आवश्यकता के अनुभव के कारण हुआ। इसके जन्म का चाहे दिनाँक और व्यक्ति का नाम विवादास्पद ही क्यों न हो, इतना अवश्य है कि इसकी पहल सबसे पहले श्री ह्यूम ने की। उसके उपरान्त संगठन के लिए एक के उपरान्त एक कारण संयोग से उपस्थित होने लगे। इस प्रकार ह्यूम की पहल से काँग्रेस के विचारों का श्रीगणेश हुआ। यह संस्था धीरे-धीरे देश के लिये कार्य करती रही और अखिल भारतीय संस्था के रूप में प्रतिष्ठित हो गई। इस संस्था का उद्देश्य था–'नवीन युग के राष्ट्र-धर्म से उसका मेल बैठ सके।'[४६] काँग्रेस का जन्म इसी महान उद्देश्य की पूर्ति के लिये हुआ। सन् १९२० में काँग्रेस ने अपनी राष्ट्रभाषा और राष्ट्रीय-साहित्य[४७] की आवश्यकता अनुभव की और उसके लिये प्रयत्नशील रही। काँग्रेस चाहती थी कि देश में राष्ट्रीयता और राष्ट्रीय–शिक्षा के माध्यम से लोगों में नव-चेतना और नव-जागरण उत्पन्न करके देश को स्वतन्त्र किया जाय। काँग्रेस का प्रमुख ध्येय था देश को स्वतन्त्रता के लिये प्रेरित करना। इस प्रत्यक्ष उद्देश्य की पूर्ति के लिये शिक्षा को प्रोत्साहन दिया गया। विभिन्न संस्थाओं ने और विभिन्न व्यक्तियो ने सम्पूर्ण देश में घूम-घूम कर राष्ट्रीय-शिक्षा का प्रचार-प्रसार किया। देश की एकता के लिए उन्होंने एक भाषा की आवश्यकता प्रतिपादित की क्योंकि जब तक सम्पूर्ण देशवासियों से विचार-विमर्श करके उन्हें समझाया नहीं जावेगा तब तक देश में नव-चेतना, स्वतन्त्रता, संगठन आदि की बातें बेकार होंगी। जब तक हम अपने देशवासियों को इनकी आवश्यकता और महत्व को समझावेंगे नहीं तब तक हमारा लक्ष्य पूरा नहीं होगा, इसके लिये एक भाषाई माध्यम होना जरूरी है। जब सम्पूर्ण देश में काँग्रेस राष्ट्रीयता के लिये कार्य कर रही थी उस समय उसके समक्ष केवल एक

---

४३. काँग्रेस का इतिहास : पट्टाभिसीतारामय्या, भाग–१, चौथीबार, १९४६, पृ. ९

४४. वही—वही, पृ. १९

४५. राष्ट्रभाषा का इतिहास : किशोरीदास वाजपेयी, प्रथम संस्करण; संवत् २००७, पृ. १६

४६. काँग्रेस का इतिहास : पट्टाभिसीतारामय्या, भाग–१; पृ. १३

४७. वही, पृ. १३

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

ही प्रश्न था कि देश को एक सूत्र में कैसे बाँधा जावे। देश की एकता को बनाये रखने के लिये एक सामान्य-भाषा के रूप में किसी देशी भाषा की प्रतिष्ठा और आवश्यकता का प्रश्न स्वाधीनता संग्राम से पूर्व ही अनुभव किया गया था। यह आवश्यकता स्वाधीनता संग्राम में एक प्रतीक के रूप में हल की गई। वह प्रतीक था 'रोटी और लाल कमल का फूल।' राष्ट्र के कर्णधारों ने सांस्कृतिक प्रचार और सामाजिक सुधार के लिये मूक और प्रतीकों का मार्ग छोड़कर भारत के विभिन्न क्षेत्रों में हिन्दी को अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया। कुछ संस्थाओं ने नागरी-हिन्दी, कुछ ने संस्कृत आदि भाषाओं को माध्यम बनाकर भाषा के पक्ष का समर्थन किया था। इसके साथ ही राष्ट्रीयता और राष्ट्रभाषा का प्रश्न राजनीति के साथ सम्पृक्त हो जाने के परिणाम-स्वरूप प्रत्येक राजनीतिक उपक्रम के साथ इस ओर ध्यान दिया जाता रहा है क्योंकि यही एक ऐसा सबल मार्ग था जिसके कारण ऐक्य आसानी से स्थापित किया जा सकता है और अपने लक्ष्य को पूरा किया जा सकता है। इसका कारण यह था कि किसी भी देश का व्यक्तित्व उसकी भाषा में ही, उस भाषा में जिसमें सदियों से उसका चिन्तन, मनन और साहित्य-सर्जन होता आया है, जो उसके शरीर में स्वाभाविक रूप से रच-पच गई है, मुखरित हो सकता है। महात्मा गांधी ने जन-जन तक पहुँचने के लिये हिन्दी भाषा का मार्ग चुना और हिन्दी राष्ट्रीय ऐक्य और सम्पर्क-भाषा के माध्यम के रूप में इतनी पल्लवित हुई कि सारा देश गांधीजी के विचारों का वाहक बन गया। उनका दृष्टिकोण व्यापक था। वे हिन्दी को कई अर्थों में प्रयुक्त करते रहे। खिलाफ़त आंदोलन से पूर्व वे हिन्दी शब्द का प्रयोग करते थे–'हिन्दी से उनका तात्पर्य सदैव सरल भाषा से होता था।'[४८] उन्होंने हिन्दुस्तानी का प्रयोग १९२०-२२ के खिलाफ़त ज़माने से आरम्भ किया। अन्तःप्रान्तीय भाषा के लिये उन्होंने प्रमुख रूप से हिन्दुस्तानी-हिन्दी और हिन्दी-हिन्दुस्तानी का प्रयोग किया।[४९] उस समय उनके साथ जितने भी नेता कांग्रेस में कार्य करते थे सभी उनके इन विचारों का समर्थन करते थे। केवल कांग्रेस के वे नेता जिन्हें हिन्दी वालों के नाम से सम्बोधित किया जाता था; गांधी की इस नीति का विरोध करते थे। उन्होने हिन्दी के लिये अलग से हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन नामक संस्था स्थापित की लेकिन इससे कांग्रेस की नीति में कोई अन्तर नहीं आया। प्रत्येक दल में विभिन्न विचारधारा के सदस्य होते हैं। कांग्रेस में भी थे परन्तु उससे कांग्रेस की नीति अडिग रही। कांग्रेस ने अपने जन्म से लेकर संविधान निर्माण तक एक भाषा की आवश्यकता पर

---

४८. स्वतन्त्रता–पूर्व हिन्दी के संघर्ष का इतिहास : रामगोपाल, शक १८८६, प्रथम संस्करण, पृ. ७१.

४९. गांधीजी ने हिन्दुस्तानी, हिन्दी और हिन्दी-हिन्दुस्तानी के लिये–२ फरवरी, १९२१ के 'यंग इण्डिया', गुजरात विद्यापीठ के उद्देश्यों के उपबन्धों में 'हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के इन्दौर' अधिवेशन में, कांग्रेस के विभिन्न अधिवेशनों में उन्होंने इस सम्बन्ध में वक्तव्य दिये, लेख लिखे–

गांधीजी का भाषण : हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन अधिवेशन, इन्दौर : १९३५

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

बल दिया। इसका कारण यह था कि हमारा देश विशाल था, यहाँ पर विभिन्न जाति, धर्म और संस्कृतियाँ थीं। अँग्रेज लोग शासन करने के लिये 'लड़ाओ और राज्य करो' की नीति को अपना रहे थे। ऐसी अवस्था में भाषाई माध्यम से उनकी इस नीति को विफल करके देश के लिये स्वतन्त्रता प्राप्त की जा सकती है। उस समय देश में राजनीतिक क्षेत्र में पहले काँग्रेस अस्तित्व में आई फिर मुस्लिम लीग तथा इसके साथ ही विभिन्न पत्र-पत्रिकाएँ प्रकाशित हुईं। ये सब एक भाषा की आवश्यकता का प्रतिपादन करते रहे।

ब्रह्म-समाज के केशवचन्द्र सेन हिन्दी के प्रबल समर्थक थे। उन्होंने लिखा–'यदि एक भाषा के न होने से भारत में एकता नहीं होती है तो इसका उपाय क्या है? तब सम्पूर्ण भारतवर्ष में एक भाषा का व्यवहार करना ही एकमात्र उपाय है। आज कितनी ही भाषाएँ भारत में प्रचलित हैं। इसी हिन्दी को अगर भारतवर्ष की एकमात्र भाषा स्वीकार कर लिया जाए तो सहज में ही एकता सम्पन्न हो सकती है।'[५०] इसी प्रकार बंगाल के न्यायमूर्ति शारदाचरण मित्र ने 'देवनागर' में, डॉ. सुनीतिकुमार चटर्जी ने 'भारतीय' आर्य भाषाओं पर अपने व्याख्यानों में और महात्मा गांधी ने 'नवजीवन' में एक भाषा की आवश्यकता पर बल दिया।

स्वतन्त्रता के पूर्व एक भाषा के रूप में काँग्रेस दल हिन्दुस्तानी भाषा का समर्थन करता रहा। स्वतन्त्रता के उपरान्त जब संविधान का निर्माण किया जाने लगा और राष्ट्रभाषा का प्रश्न सामने आया तब इसी दल के कुछ नेता अँग्रेजी का समर्थन करने लगे और कुछ हिन्दी का। यह संघर्ष एक लम्बे समय तक चलता रहा। अन्ततोगत्वा हिन्दी को राजभाषा के रूप में और अँग्रेजी को सहभाषा के रूप में संविधान में स्वीकार किया गया।[५१] इसके उपरान्त हिन्दी का विकास बहुत शीघ्रता से होने लगा जिसमें काँग्रेस दल ने अपना सम्पूर्ण योग दिया। वर्तमान समय में भारत के राष्ट्रपति श्री वी. वी. गिरि ने 'गाँधी हिन्दी-दर्शन' के विमोचन के अवसर पर कहा कि–'हिन्दी देश के जन-साधारण की भाषा बनकर रहेगी।'[५२] देश की भूतपूर्व प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने कहा है–'मनुष्य किसी दूसरी भाषा से सीख सकता है और विदेशी भाषा बोल सकता है किन्तु नये विचार केवल मातृभाषा में अधिक सुचारू रूप से प्रकट किये जा सकते हैं, किसी दूसरी भाषा में नहीं। उन्होंने कहा कि हिन्दी को देश की एकता की कड़ी के रूप में आगे बढ़ाना होगा। भारतीय भाषाओं के विकास की चर्चा करते हुए उन्होंने आगे कहा कि....देश को एकता की शृंखला में बाँधने के लिए हिन्दी को बढ़ाना हम सबका

---

५०. सुलभ समाचार : चैत्र ५, बंगला संवत् १२८० : १८७५ ई. के पत्र में टिप्पणी.

५१. भारतीय संविधान–धारा ३४३ से ३५१ तक.

५२. राष्ट्रभाषा सन्देश, सन् १९७०, भाग-५, अंक १३, पृ. ३

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy: Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

कर्त्तव्य है,[५३] इस प्रकार कांग्रेस दल आज भी देश की एकता के लिये एक भाषा की आवश्यकता अनुभव करता है। वह भाषा है हिन्दी। अतः वर्तमान में सरकार अपने विभिन्न मन्त्रालयों में हिन्दी के विकास के लिये कार्य कर रही है।'

११.०४ विभिन्न संस्थाओं की भाषा-नीति :-

(क) नागरी-प्रचारिणी-सभा, काशी :-

सन् १८८५ में कांग्रेस की स्थापना के साथ ही राष्ट्रीयता की भावना प्रबल हो गई। देश में विभिन्न व्यक्ति, नेतागण, विभिन्न संस्थाओं और पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से देश में राष्ट्रीय जागरण और एकता के कार्य में संलग्न थे। १९ वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में हमारे देश में अँग्रेजी, फ़ारसी और उर्दू भाषाओं का विशेष प्रचार था। हिन्दी-भाषा को प्रयोग करने वाले व्यक्तियों को हेय दृष्टि से देखा जाता था। अत: हिन्दी के उपासक सर्वश्री श्यामसुन्दरदास, रामनारायण मिश्र तथा ठाकुर शिवकुमारसिंह ने १६ जुलाई, १८९३ ई. को काशी में 'नागरी-प्रचारिणी-सभा' की स्थापना की। सभा की स्थापना के दो उद्देश्य थे—(१) देश की स्वतन्त्रता के लिए लोगों में राष्ट्रीयता की भावना को जाग्रत करना। (२) नागरी के माध्यम से लोगों को संगठित करके 'स्वदेशी' भाषा का प्रचलन।

इस सभा के कार्यकर्ताओं में राधाकृष्णदास, महामहोपाध्याय सुधाकर द्विवेदी, रायबहादुर लक्ष्मीशंकर मिश्र, डॉ. छन्नूलाल आदि ने नागरी-लिपि और हिन्दी-भाषा की सार्वदेशिकता की ओर साधारण लोगों का ध्यान आकृष्ट किया। इस सभा ने पं. मदनमोहन मालवीय, राजा रामपालसिंह, राजा शशिशेखर राय, जार्ज अब्राहम, ग्रियर्सन जैसे विद्वानों को भी नागरी-लिपि और हिन्दी के प्रचार-प्रसार के लिये प्रेरित किया। उसी वर्ष रोमन-लिपि को भारतीय भाषाओं के लिये अपनाने का प्रस्ताव पुनः उठाया गया। दो-तीन वर्ष तक उस प्रस्ताव की चर्चा-मात्र होती रही परन्तु १८९६ में यह बात दृढ़ता के साथ फैलने लगी कि पश्चिमोत्तर प्रदेश की सरकार अदालतों तथा अन्य दफ्तरों में फ़ारसी अक्षरों के स्थान पर रोमन-लिपि को प्रचलित करना चाहती है।[५४] नागरी-प्रचारिणी-सभा ने इस प्रस्ताव के विरुद्ध आवाज़ उठाने का निश्चय किया। उसने कुछ धन एकत्र किया और 'नागरी कैरेक्टर' शीर्षक से एक पुस्तक १८९६ ई. में प्रकाशित की, जिसमें नागरी-लिपि की उपयुक्तता और रोमन की अनुपयुक्तता पर तर्क प्रस्तुत किये गये तथा यह कहा गया कि

---

५३. दिल्ली के मावलंकर सभा में विश्वकोश के १२ वें व अंतिम खण्ड के विमोचन के अवसर पर दिये गये भाषण से—राष्ट्रभाषा सन्देश, १ जून, १९७०, पृ. ८, ५ फरवरी को दिल्ली में अपने निवास स्थान पर अध्यापिकाओं को सम्बोधित करते हुए—राष्ट्रभाषा सन्देश, १६ फरवरी, १९७६, पृ. १ एवं विश्व हिन्दी सम्मेलन, नागपुर में—भाषा, मार्च-जून, १९७५, पृ. १४१ से १६१ तक.

५४. स्वतन्त्रतापूर्व हिन्दी के संघर्ष का इतिहास : रामगोपाल, प्रथम संस्करण, पृ. ४६.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

रोमन-लिपि को इस देश की भाषाओं पर लादना घोर अन्याय होगा। सरकार ने एक समिति नियुक्त की जिसने रोमन के पक्ष में सम्मति दी परन्तु सार्वजनिक भावना को दृष्टिगत रखते हुए सरकार ने—'२७ जुलाई, १८९६ को अपने निर्णय की घोषणा करते हुए कहा कि रोमन के प्रचार से सरकारी अफसर देश की भाषा के प्रति उदासीन हो जायेंगे।'[५५] सरकार से हिन्दी-समर्थक लोगों का संघर्ष चला, जिसका नेतृत्व पं. मदनमोहन मालवीय कर रहे थे। मालवीयजी के समर्थकों में अधिकतर व्यक्ति बंगाली थे। उनमें वेणीमाधव भट्टाचार्य, शारदाप्रसाद सान्याल, प्रमदादास मित्र, प्यारीमोहन बन्दोपाध्याय और नीलकमल मित्र प्रमुख हैं। मालवीयजी राजनीति के दावपेंचों को जानते थे। अतः उन्होंने बड़ी सावधानीपूर्वक कार्य किया। उन्होंने तत्कालीन अँग्रेजी सरकार के लेफ्टिनेन्ट गवर्नर के सम्मान में एक पार्टी का आयोजन किया। मालवीयजी के कथनानुसार—'यह पार्टी नागरी-लिपि के लिए सर एंटोनी की सहानुभूति प्राप्त करने की आन्तरिक इच्छा से मैंने दी थी। पार्टी की सफलता का गवर्नर पर अच्छा प्रभाव पड़ा। उसके बाद जब मैं देवनागरी के लिए उनसे मिला तब उन्होंने कहा जरा ठहरकर आइए।'[५६] मालवीयजी ने हिन्दी-भाषा तथा नागरी लिपि के लिये एक पुस्तिका अँग्रेजी में तैयार की 'कोर्ट कैरेक्टर एण्ड प्राइमरी एज्युकेशन इन नार्थ वेस्टर्न प्राविन्सेज'[५७] इस पुस्तिका का तर्कसिद्ध सार यह था कि हिन्दी को उसके पद से अलग रखकर सरकार अन्याय कर रही है। पुस्तिका तैयार हो जाने के उपरान्त लेफ्टिनेन्ट गवर्नर के पास एक प्रतिनिधि-मण्डल ले जाने की तैयारी की। एक अभ्यर्थना-पत्र लिखा गया। उसे सार्वजनिक स्वरूप देने के लिये उस पर विभिन्न जिलों के हिन्दी-समर्थकों के हस्ताक्षर करवाये—'अगभग ६० हजार हस्ताक्षर, १६ जिल्दों में बाँधकर दिये गये थे।'[५८] इन कार्यों का परिणाम बड़ा सुखद रहा। सरकार ने एक लम्बे विवाद के बाद नागरी और फ़ारसी-लिपि को स्वीकार कर लिया। अदालतों में दोनों लिपियों को ही समान रूप से और आंशिक रूप से मान्यता मिली। नागरी और फ़ारसी पढ़े-लिखे लोगों को नौकरियाँ भी दी जाने लगीं। सरकार का निर्णय—

(१) 'सब लोग, अपनी इच्छानुसार अपनी याचिकाएँ या शिकायतें नागरी या फ़ारसी लिपि में प्रेषित कर सकते हैं।

(२) सब सम्मन, घोषणाएँ तथा इस प्रकार के अन्य पत्र, जो अदालतों तथा राजस्व के दफ्तरों से देशी भाषा में जारी किये जाते हैं अब फ़ारसी तथा नागरी लिपियों में होंगे और कागज़ों में छुटी हुई जगह को दोनों लिपियों के अक्षरों में भरा जायेगा।

(३) भविष्य में (उन दफ्तरों को छोड़कर जिनमें सब काम केवल अँग्रेजी में होता है) क्लर्की या अफसरी के स्थान पर केवल ऐसे व्यक्तियों की नियुक्ति की जायेगी जो

---

५५. मेरी आत्म-कहानी : श्यामसुन्दर दास, पृ. २९-३०.

५६. तीस दिन-मालवीयजी के साथ : रामनरेश त्रिपाठी, पृ. १३२.

५७. स्वतन्त्रता-पूर्व हिन्दी के संघर्ष का इतिहास : रामगोपाल, पृ. ४८,

५८. मेरी आत्म-कहानी-श्यामसुन्दर दास, पृ. ३८,

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

नागरी तथा फ़ारसी–लिपि दोनों भलीभाँति लिख-पढ़ सकते हैं।'[५९] उस समय की भाषा उर्दू–मिश्रित थी। हिन्दी केवल व्यक्ति-विशेष की या जाति विशेष की भाषा ही नहीं बल्कि भारत में रहने वाले सभी लोगों की भाषा है। इससे हिन्दी-भाषा को विभिन्न जातियों और प्रदेशों में रहने वाले लोगों ने अपनाया। इस सभा के प्रयत्न से सन् १९०० ई० से संयुक्त प्रान्त में नागरी के प्रयोग की अनुमति मिली। सरकारी कर्मचारियों के लिये हिन्दी और उर्दू दोनों भाषाओं का ज्ञान अनिवार्य कर दिया गया। जन्म से लेकर आज तक इस संस्था ने हिन्दी-ग्रन्थों के प्रकाशन, हिन्दी-भाषा के प्रचार तथा देवनागरी-लिपि के सुधार के कारण हिन्दी-भाषा और लिपि को समृद्ध बनाया है।

(ख) हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग :—

हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन का गठन और सर्वप्रथम आयोजन नागरी-प्रचारिणी-सभा में कार्य करने वाले लोगों ने विचार किया कि 'वंगीय साहित्य परिषद्', 'गुजराती साहित्य परिषद्' आदि के समान हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में भी कोई एक संगठन होना चाहिये जहाँ पर एकत्र होकर साहित्य सम्बन्धी विषयों पर विचार-विमर्श हो सके। इस समय पण्डित मदनमोहन मालवीय हिन्दी का एक साप्ताहिक-पत्र 'अभ्युदय' निकाला करते थे तथा हिन्दी के प्रथम दैनिक 'हिन्दुस्तान' के आप सम्पादक थे। 'अभ्युदय' में आगरे के पण्डित केदारनाथ भट्ट का एक सुझाव प्रकाशित हुआ कि हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन कहीं होना चाहिए। सम्मेलन की स्थापना १ मई, १९१० को काशी में हुई। काशी-नागरी-प्रचारिणी-सभा के तत्वावधान में काशी में कतिपय हिन्दी-भक्त और प्रेमी आचार्यों ने यह निश्चित किया कि पूरे देश में हिन्दी-भाषा और उसकी नागरी-लिपि के प्रचार के लिए योजनाबद्ध कार्य आरम्भ किया जाय, जिससे देश में एक सर्वसम्मत राष्ट्रभाषा की प्रतिष्ठा हो सके। इस मंगलमय निश्चय का सारे देश में स्वागत किया गया और १० अक्टूबर, १९१० को काशी में भारतीय साहित्यकारों का एक सम्मेलन उस समय के सर्वमान्य लोकप्रिय नेता मदनमोहन मालवीयजी की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ।[६०]

मालवीयजी अनेक पत्रों के सम्पादक थे तथा राजनेता भी थे। अतः उनके अनुयायी बाबू पुरुषोत्तमदास टण्डन ने सम्मेलन की सम्प्रतिष्ठा के लिए जीवनदान दिया जिससे स्थापना-काल से ही सम्मेलन प्रगति के पथ पर अग्रसर हो गया। 'एक पैसा एक नागरी अक्षर' के आन्दोलन ने नागरी-लिपि को पर्याप्त लोकप्रिय बना दिया जिससे आकृष्ट होकर बंगाली विद्वान पण्डित शारदाचरण मित्र ने हिन्दी को समस्त आर्यावर्त्त की भाषा उद्घोषित किया और 'नागरी-लिपि-विस्तार-परिषद्' की स्थापना की जिससे हिन्दी-भाषा और नागरी-लिपि के प्रचार-प्रसार में पर्याप्त सहायता प्राप्त हुई।'[६१]

---

५९. स्वतन्त्रतापूर्व हिन्दी संघर्ष का इतिहास : रामगोपाल; पृ. ५२

६०. हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग, स्मारिका, विशेष अधिवेशन, १९७५, ई., प्रयाग, पृ. १

६१ राष्ट्रभाषा का इतिहास : किशोरीदास वाजपेयी, प्रथम संस्करण, २००७ वि., पृ. २६.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

(ग) हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की भाषा-नीतिः–

(१) टण्डनजी की भाषा-नीति-हिन्दीः–

हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के जन्म के समय से ही बाबू पुरुषोत्तमदास टण्डन इससे सम्बद्ध रहे हैं। जब हिन्दी और हिन्दुस्तानी शब्दों के प्रयोग के विषय में हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन और उसकी समितियों में कुछ भ्रम उपस्थित हुआ,[६२] तब उन्होंने स्पष्ट किया कि :–

(१) सम्मेलन की भाषा का नाम हिन्दी है, चाहे साहित्यिक अथवा प्रचार की दृष्टि से और स्थानों की विभिन्नता के कारण, उसके रूपों में शब्दावली का कुछ अन्तर क्यों न हो ?

(२) उर्दू, हिन्दी से उत्पन्न अरबी-फ़ारसी मिश्रित भाषा का रूप है। हिन्दी शब्द के अन्दर ऐतिहासिक दृष्टि से उर्दू का समावेश है किन्तु उर्दू की साहित्यिक शैली हिन्दी से इस समय इतनी भिन्न हो गई है कि उसकी पृथक स्थिति सम्मेलन स्वीकार करता है और हिन्दी की शैली से उसे भिन्न मानता है।

(३) 'हिन्दुस्थानी' या 'हिन्दुस्तानी' शब्द का प्रयोग मुख्यतः इसलिए हुआ करता है कि वह देशी शब्द व्यवहार से प्रभावित हिन्दी-शैली तथा अरबी-फ़ारसी शब्द व्यवहार से प्रभावित उर्दू-शैली दोनों का एक शब्द से; एक समय में निर्देश करती है। कांग्रेस, हिन्दुस्तानी ऐकेडमी और कुछ सरकारी विभागों में इसी अर्थ में इसका प्रयोग उस प्रकार की भाषा के लिये है जिसमें हिन्दी और उर्दू शैलियों का मिश्रण हो। इस प्रकार निश्चित अर्थों में उर्दू और हिन्दुस्तानी शब्दों का प्रचलन है। इस विषय में सम्मेलन का कोई विरोध नहीं है, किन्तु सम्मेलन साहित्यिक और राष्ट्रीय दृष्टियों से अपने और अपनी समितियों के कार्य में हिन्दी–शैली का और उसके लिए हिन्दी शब्द का ही व्यवहार और प्रचार करता है।

(४) राष्ट्रीय सजगता के विस्तार और राष्ट्रीय भावना के उत्थान के साथ-साथ हिन्दी का राष्ट्रीय रूप दिन-प्रतिदिन विकसित हो रहा है। भिन्न-भिन्न प्रभावों से उत्पादित नये शब्दों का भी उसमें धीरे-धीरे स्वभावतः समावेश होगा। जीवित, क्रियाशील तथा हिन्दी की सार्वभौमिक प्रतिनिधि संस्था के कर्तव्य पालन में सम्मेलन इस विकास का आव्हान और स्वागत करता है।

(५) राष्ट्रभाषा होने के कारण प्राचीन समय से हिन्दी सब प्रान्तीय भाषाओं की बड़ी बहन है, उसके और उसकी छोटी बहनों के स्वरूपों में माता का अमर सौन्दर्य झलकता है। बहनें एक-दूसरे के रूप में अपना रूप भी देखती हैं। उनका आपस का प्रेम स्वाभाविक है। बड़ी बहन छोटी बहनों के अधिकार सुरक्षित रखती है। उसका अपना घर सब बहनों के लिए खुला है और उसके घर में इन सब बहनों को आपस में मिलने और मिलकर राष्ट्रोपासना की सुविधा है।

---

६२. वीणा, मार्च १९४२, फाल्गुन, पृ. ४९९.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

राष्ट्रीय भावनाओं से प्रेरित सभी देशभक्तों से सम्मेलन अनुरोध करता है कि राष्ट्रीय उत्थान, संगठन और एकीकरण में भाषा की शक्ति का अनुभव कर वे राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रयोग और प्रचार में निष्ठा और दृढ़ता से संलग्न हों।

अतः सम्मेलन की भाषा-नीति स्पष्ट है। वह हिन्दी को भारत की राष्ट्रभाषा और विधान-परिषद् की राजभाषा बनाने के लिए सहमत है। उर्दू का समावेश भी वह हिन्दी में मानता है और हिन्दुस्तानी-भाषा से उसका अपना कोई विरोध नहीं है।

(२) गांधीजी की भाषा-नीति : हिन्दुस्तानी

जब हमारा देश स्वतन्त्र नहीं था, उस समय शासन-व्यवस्था अँग्रेजों द्वारा चलाई जाती थी। अतः देश के नागरिकों ने एकता के लिए एक राष्ट्रभाषा के प्रश्न पर विचार किया। देश के नागरिकों पर देश के लोगों का शासन चल सके इसलिए स्वतन्त्रता के पूर्व राष्ट्रभाषा का प्रश्न हल किया गया। जैसे-जैसे प्रान्तीय शासन-व्यवस्था कांग्रेस के हाथों में आती गई वैसे-वैसे राजभाषाएँ बनने लगीं। इस तरह से स्वतन्त्रता के पूर्व राष्ट्रभाषा की जो कल्पना थी वही बाद में राजभाषा की कल्पना हो गई। समय और परिस्थिति के कारण इनके अर्थों में अन्तर हो गया था। इनकी भावना एक ही थी। विधान-परिषद् में हिन्दी वालों ने राजभाषा के प्रश्न पर विचार किया है।

दिनांक ८ फरवरी, १९४२ ई. के 'हरिजन' में गांधी ने विभिन्न लोगों के प्रश्नों के उत्तर दिये।[६३] लोगों ने पत्रों के माध्यम से उनसे प्रश्न पूछे थे। गांधीजी ने 'हिन्दी-हिन्दुस्तानी' तथा हिन्दी-साहित्य सम्मेलन में भाषा के विषय में उनकी नीति का स्पष्टीकरण किया है। उन्होंने कहा— 'मैं यह मानने को तैयार नहीं हूँ कि उर्दू ज्यादा विकसित, ज्यादा खूबसूरत, ज्यादा लुभावनी, ज्यादा मुख्तसर और ज्यादा अर्थसूचक ज़बान है। भाषा तो जैसी हम उसे बनाना चाहें बन जाती है।' मुल्क में हिन्दुस्तानी उस अँग्रेजी की जगह ले लें जो आज पढ़े-लिखे लोगों के बीच व्यवहार का एक माध्यम बन गयी है। वास्तव में झगड़ा उर्दू-हिन्दी का नहीं बल्कि हिन्दी और उर्दू दोनों का अँग्रेजी से है। 'हिन्दी' शब्द से हिन्दू-मुसलमान दोनों का समान रूप से बोध होता था। दोनों ने हिन्दी में लिखकर उसके भण्डार को समृद्ध बनाया है। सम्मेलन ने मेरी प्रेरणा से न सिर्फ अपनी बुद्धिमानी का बल्कि देश-भक्ति और उदारता का परिचय देते हुए, हिन्दी की उस परिभाषा को अपनाया जिसमें उर्दू भी शामिल है। हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के अबोहर वाले हिन्दुस्तानी-विरोधी प्रस्ताव से क्षुब्ध होकर-'मैं चाहता हूँ कि किसी ऐसी संस्था का संगठन हो, जो हिन्दी और उर्दू की दोनों लिपियों का साथ-साथ अध्ययन करने की हिमायत करे।[६४]' आशा है कि अंततः किसी दिन ये दोनों कुदरतीतौर पर मिलकर एक सर्व-साधारण अंतर्प्रान्तीय भाषा का चोला

---

६३. वीणा, मार्च १९४२, फाल्गुन, पृ. ४९९ से ५००.

६४. सरस्वती, फरवरी १९४२, भाग-४३, खण्ड-१, संख्या २, पूर्ण संख्या ५०६, माघ १९९८, पृ. २०३ से २०७.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

पहन लेंगी और हिन्दुस्तानी कहलाने लग जायंगी। उस समय इनका समीकरण हिन्दी + उर्दू = हिन्दुस्तानी न होकर हिन्दुस्तानी + हिन्दी = उर्दू होगा।' उर्दू भाषा या साहित्य का गांधीजी ने कभी विरोध नहीं किया। उन्होंने संकेत किया कि उर्दू वाले देवनागरी-लिपि में लिखी भाषा को उर्दू मानें।

(३) गांधी और सम्मेलन की राजभाषा-नीति :-

गांधीजी अँग्रेजी के स्थान पर हिन्दुस्तानी की स्थापना करना चाहते थे जबकि सम्मेलन वाले चाहते थे कि इसका स्थान हिन्दी ग्रहण करे। इसी प्रकार सम्मेलन वाले केवल हिन्दी का पक्ष लेते हैं जिसमें उर्दू भी शामिल है। इस प्रकार गांधीजी का सम्मेलन से भाषाओं की प्रधानता के विषय में मतभेद था। उन्होंने कहा है-'राष्ट्रभाषा की मेरी व्याख्या में हिन्दी और उर्दू-लिपि और दोनों शैली का ज्ञान आता है। ऐसा होने से ही दोनों का समन्वय होने का है तो हो जायगा। मुझे डर है कि मेरी बात सम्मेलन को चुभेगी। इसलिए मेरा त्याग-पत्र स्वीकार किया जाय।[६५] वर्धा कान्फरेन्स के निर्णयों के सम्बन्ध में टंडनजी ने कहा है कि-'जहाँ तक पहले फैसले का सवाल है मैं गांधीजी से इस बात में पूरी तरह सहमत हूँ कि हिन्दी और उर्दू दोनों को मिलाकर एक आम ज़बान बनानी चाहिये....लेकिन मैं उस कॉफ्रेंस के उस फैसले से सहमत नहीं हूँ कि हमारे देश के हर आदमी को हिन्दी और उर्दू दोनों ज़बानें और दोनों अलग-अलग लिपियाँ सीखनी चाहिये....मेरा दिमाग नहीं मानता कि यह एक अमली सुझाव है....। कॉफ्रेंस में अपना प्रस्ताव पेश करते हुए मैंने 'हिन्दुस्तानी' शब्द का जो उपयोग किया था, वह हिन्दी और उर्दू दोनों शैलियों के लिए था। हिन्दुस्तानी का मतलब था हिन्दी और (या) उर्दू, मेरे दिल की यह आन्तरिक इच्छा है कि हम में इतनी बुद्धि हो कि हम अपनी साम्प्रदायिकता से ऊपर उठ सकें और नेकनियती के साथ हिन्दी और उर्दू को मिलाकर एक ज़बान बनाने के सवाल को हल कर सकें और उसके लिए हम एक ही लिपि का उपयोग करें।[६६]

(घ) दक्षिण-भारत-हिन्दी-प्रचार सभा, मद्रास :-

राष्ट्रभाषा-हिन्दी के प्रचार के लिए सन् १९१८ ई. में कर्मवीर गांधी ने अखिल भारतीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के इन्दौर अधिवेशन में अहिन्दी-भाषी प्रान्तों में हिन्दी-प्रचार का प्रस्ताव स्वीकार कराया। इसके लिए सर सेठ हुकमचन्द और इन्दौर नरेश यशवंतराव होलकर ने गांधीजी को २० हजार की धनराशि दी। गांधीजी ने अपने छोटे पुत्र देवदास गांधी को प्रचारक बनाकर मद्रास भेजा। वहाँ १९१८ ई. के मई माह के प्रारम्भ में श्री सी. पी. रामस्वामी की अध्यक्षता में श्रीमती एनी बेसेन्ट के हाथों हिन्दी

---

६५. गांधीजी का पत्र दिनांक २५-७-४५, सेवाग्राम : सम्बोधित टण्डनजी को : राजर्षि अभिनन्दन ग्रंथ : पृष्ठ ९४.

६६. २५ मई के लीडर में छपा-विश्ववाणी, जून १९४५, वर्ष ५, भाग-९, पृ. १७-१८.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC-0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

कक्षाओं का उद्घाटन हुआ। पं. हरिशंकर शर्मा तथा अमेरिका से लौटे स्वामी सत्यदेव परिव्राजक ने मद्रास नगर में हिन्दी का प्रचार किया। इसी बीच पं. हृषीकेश शर्मा, मद्रास आये और मसूलीपट्टम नगर में हिन्दी पढ़ाने लगे। प्रचार-कार्य के लिए 'हिन्दी स्वबोधिनी' पुस्तकें लिखी और प्रकाशित कराई गई। इसके साथ ही हिन्दी विद्यालय, धवलेश्वर, इरोड तथा मद्रास में खोले गये। पं. हृषीकेश शर्मा, टी. कृष्णास्वामी और श्री शिवराम शर्मा यहाँ अध्यापन व व्यवस्थापन करते रहे। गांधीजी इस सभा के आजीवन अध्यक्ष रहे। बाद में राजेन्द्रप्रसाद और फिर लालबहादुर शास्त्री अध्यक्ष बने।

जब श्री देवदास गांधी गुजरात लौटे तब मद्रास स्थित हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के कार्यालय का भार उन्होंने श्री हरिहर शर्मा को सौंप दिया। सन् १९३७ तक मद्रास स्थित हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन प्रचार–कार्यालय के नाम से ही हिन्दी के प्रचार-प्रसार का काम किया जाता रहा, पुनः महात्मा गांधी की सलाह से इस प्रचार-कार्यालय का नाम दक्षिण भारत-हिन्दी-प्रचार–सभा, मद्रास कर दिया गया।[६७] वर्तमान समय में श्रीमती इंदिरा गांधी ने सभा के अध्यक्ष और कुलाधिपति के पद को स्वीकार किया है। इस सभा की चार प्रान्तीय शाखाएँ-हैदराबाद, धारवाड़, तिरुचिरापल्ली और एरणाकुलम् में है जो आन्ध्रप्रदेश, मैसूर, तमिलनाडु एवं केरल राज्यों में हिन्दी-प्रचार का कार्य करती हैं। इन शाखाओं के अपने निजी-भवन, प्रेस, विद्यालय और मासिक पत्रिकाएँ हैं। इनके अपने संविधान के अनुसार शिक्षा-परिषद् का गठन किया गया जो शिक्षा, परीक्षा और प्रकाशन संबंधी कार्यों के मार्गदर्शन देने का कार्य करती है। 'हिन्दी-समाचार' नाम की मासिक पत्रिका सभा का मुख-पत्र है। इसमें प्रान्तीय शाखाओं में होने वाले हिन्दी-प्रचार सम्बन्धी कार्य, उत्सव, परीक्षा के प्रकाशन आदि के समाचार विशेष रूप से छापे जाते हैं। इस सभा के द्वारा हिन्दी प्रचार-विद्यालय नामक 'प्रवीण' विद्यालय चलाए जाते हैं, जो हिन्दी अध्यापकों और प्रचारकों को प्रशिक्षण देते हैं। यह सभा हिन्दी की परीक्षाएँ भी संचालित करती है। इसका अपना एक 'स्नातकोत्तर' अध्ययन एवं अनुसंधान विभाग भी है।

मद्रास शहर में सभा की ओर से शिक्षण केन्द्रों में निःशुल्क हिन्दी वर्ग, संगोष्ठी, प्रचारक सम्मेलन, हिन्दी नाटक, मुद्रालेखन वर्ग; आशु-लिपि शिक्षण वर्ग, कवि-सम्मेलन आदि कई कार्यक्रम सम्पन्न होते हैं। इस प्रकार सभा के शिक्षा-विभाग, परीक्षा-विभाग, अनुसंधान-विभाग तथा साहित्य-विभाग द्वारा हिन्दी का प्रचार-कार्य ठोस तथा सुसम्बद्ध रूप से चलाया जा रहा है। योजना है कि अहिन्दी प्रान्तों में हिन्दी-प्रचार का कार्य अहिन्दी भाषियों द्वारा चलाया जाय। यदि हिन्दी के विद्वान आडम्बरविहीन होकर अहिन्दी प्रान्तों के गाँवों में जाएँ, वहाँ की भाषा सीखें और सेवाभाव से कार्य करें तो हिन्दी-विरोध अपने आप शमन हो जायगा तथा हिन्दी का प्रचार शीघ्र होगा।[६८]

---

६७. स्मारिका-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन; प्रयाग, विशेष अधिवेशन–१९७५; पृ. ४.

६८. राजर्षि अभिनन्दन ग्रंथ : विजयेन्द्र स्नातक व गोपाल व्यास, संस्करण–१९६०; पृ. ६९२.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

(ड.) राष्ट्रभाषा-प्रचार-समिति, वर्धा :–

हिन्दी-साहित्य और हिन्दी-भाषा का प्रचार-प्रसार-संवर्धन और विकास करने हेतु हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग (इलाहाबाद)कार्य कर रहा है। राष्ट्रीय आन्दोलनों और देश के स्वतन्त्रता संग्राम में देश को एक सूत्र में बाँधने की दृष्टि से भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस समस्त देश में तीव्रता से कार्य कर रही थी। महात्मा-गांधी के काँग्रेस में प्रवेश के साथ ही राष्ट्रीय जीवन में नया मोड़ आ गया था। गांधीजी ने देश को एकता के सूत्र में बाँधने के लिए भाषा की शक्ति को पहचाना था और वे यह विश्वास करने लगे थे कि भाषा एक ऐसी शक्ति है जो सभ्यता के विकास को उद्दीप्त करती है तथा मानवीय सभ्यता की भव्यता और प्रगति का एक साथ चित्र उपस्थित करती है। गांधीजी के इन विचारों से हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के कर्णधार अवगत थे। पुरुषोत्तमदास टण्डन हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के कर्णधार थे तथा गांधीजी के बहुत निकट भी थे। उन्होंने गांधीजी की भावनाओं को समझा और अवसर के अनुसार गाँधीजी से हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के इन्दौर अधिवेशन का अध्यक्ष बनने का निवेदन किया।

गांधीजी ने राष्ट्रीय-जागरण के उन दिनों में हिन्दी-भाषा को राष्ट्रीय–जागरण का एक सबल साधन मानकर सम्पूर्ण भारत में उसका व्यापक प्रचार अपने अध्यक्षीय भाषण में अनिवार्य माना और इन्दौर के सन् १९३५ ई. के अधिवेशन में इस ध्येय से कि हिन्दीतर प्रदेशों में हिन्दी-प्रचार को आगे बढ़ाने के लिए एक समिति का गठन किया गया जिसे पूर्व में भारतीय साहित्य परिषद् का नाम दिया गया जिसका मुख्य उद्देश्य— 'देश को प्रान्तीय भाषाओं के साहित्यिकों के साथ सम्बन्ध स्थापित करने तथा हिन्दी-भाषा की वृद्धि में उनका सहयोग प्राप्त करने के अभिप्राय से सम्मेलन ने एक समिति गठित करने का प्रस्ताव स्वीकृत किया।[६९]

इस परिषद् के माध्यम से दक्षिण भारत में १८ वर्षों तक हिन्दी-प्रचार का कार्य चलता रहा किन्तु दक्षिण के अलावा भारत के अन्य हिन्दीतर–भाषी प्रदेशों में भी हिन्दी-प्रचार के कार्य को आगे बढ़ाना अनिवार्य हो गया जिसकी की भूमिका इन १८ वर्षों के प्रचार कार्यों ने सुदृढ़ता से तैयार कर दी थी। इस समिति के कार्यों की समीक्षात्मक विवेचना नागपुर अधिवेशन में की गई। अतः हिन्दी-प्रचार के उद्देश्य से महात्मा-गांधी की प्रेरणा से सन् १९३६ में हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के नागपुर अधिवेशन के एक प्रस्ताव के अनुसार राष्ट्रभाषा-प्रचार-समिति, वर्धा का निर्माण हुआ और इस हेतु देशरत्न डॉ. राजेन्द्र-प्रसाद की अध्यक्षता में निम्नलिखित सदस्यों की एक समिति गठित की गई-सर्वश्री महात्मा गांधी, जवाहरलाल नेहरू, आचार्य नरेन्द्रदेव, काका साहेब कालेलकर, बाबा राघवदास, शंकरराव देव, माखनलाल चतुर्वेदी, वियोगी हरि, पं. हरिहर शर्मा; ब्रजलाल बियाणी, मो. सत्यनारायण, नर्मदासिंह, श्री नाथसिंह और लोक सुन्दरी रमन।[७०] यही राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा का विधिवत निर्माण है।

---

६९. वीणा, वैशाख सम्वत्, १९९३; मई सन् १९३६, वर्ष ९, अंक ७, पृ. ५८१.

७०. हिन्दी स्मारिका, हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग, शकाब्द १८८९, सन् १९६७, पृ. २४ और वीणा, सन् १९३६, पृ. ५८० से ५८६।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

हिन्दीतर-भाषी प्रदेशों में हिन्दी-प्रचार को आगे बढ़ाने के लिये इस समिति का गठन किया गया और उसे प्रचार सम्बन्धी विविध योजनाएँ बनाकर स्वतन्त्र रूप से काम करने का अपना बजट बनाने का तथा अपना मन्त्री स्वयं चुनने का अधिकार दिया गया। प्रचार के आर्थिक भार को वहन करने का दायित्व भी इसी समिति को सौंपा गया। इस तरह इस संस्था ने हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन से सम्बद्ध रहकर स्वतन्त्र रूप से काम करना प्रारम्भ किया। समिति का केन्द्रीय कार्यालय वर्धा में रखा गया। सन् १९३८ में इसका नाम राष्ट्रभाषा-प्रचार-समिति, वर्धा कर दिया गया।

राजभाषा का स्वरूप विवेचन :-

इस समिति का प्रमुख उद्देश्य है राजभाषा-हिन्दी का प्रचार-प्रसार करना। इस समिति की स्थापना के समय हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार करने पर विचार-विमर्श चल रहा था। उस समय देश के सभी व्यक्ति हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने का प्रयत्न कर रहे थे इसलिए इस समिति का नामकरण भी राष्ट्रभाषा-प्रचार-समिति रखा गया परन्तु अब हमारे देश के संविधान के अनुसार हिन्दी को राजभाषा स्वीकार कर लिया गया है। प्रारम्भ में यह समिति 'हिन्दुस्तानी' भाषा को राष्ट्रभाषा (राजभाषा) बनाना चाहती थी। उस समय इस समिति में देश के प्रतिष्ठित नेता तथा साहित्यकार इसके सदस्य थे। वर्धा के हिन्दुस्तानी-सम्मेलन में वर्धा की राजभाषा-नीति का स्वरूप स्पष्ट होता है। उस पर काफी लम्बा विचारविमर्श किया गया। वर्धा के हिन्दुस्तानी-सम्मेलन[७१] के अनुसार विभिन्न व्यक्तियों के विचार इस प्रकार हैं—

(१) आजमगढ़ के विद्वान मौलाना सुलेमान नदवी—'हिन्दुस्तान एक देश है जिसमें आप अपनी-अपनी बोलियाँ रखिये पर इसके साथ—ही—साथ हमें एक बोली भी जरूरी है।'

(२) जैनेन्द्रकुमार—'वह चीज जिसमें देश का प्राण बहता रहा है जिसे अँग्रेजी भाषा का राज्य छू नहीं सकते, वह हिन्दी या उर्दू या हिन्दुस्तानी है और जिसे उत्तर भारत के हिन्दु—मुसलमान बोलते हैं।'

(३) इलाहाबाद के लेखक एवं सम्पादक ठाकुर श्री नाथसिंह—'मेरा कहना है कि हिन्दी वाले हिन्दी का वह स्वरूप निर्माण करें जो बापू के मन में है। उस रूप की तरफ अगर हम बढ़ने लगें तो वही हिन्दुस्तान है।' इत्यादि.

स्वतन्त्रता के पूर्व राष्ट्रभाषा-प्रचार-समिति, वर्धा का नेतृत्व महात्मा-गांधी कर रहे थे उस समय सभी लोग हिन्दुस्तानी को चाहते थे परन्तु स्वतन्त्रता प्राप्ति के उपरान्त जब हिन्दी को राजभाषा मान लिया गया तब वर्धा समिति भी राजभाषा-हिन्दी का ही प्रचार-प्रसार करती है।[७२] इस प्रकार राजभाषा का स्वरूप अब स्पष्ट है और वह हिन्दी के पक्ष

---

७१. विश्ववाणी, अप्रैल १९४५, वर्ष ५, भाग—९, अंक ४, पृ. २२६-२३६.
७२. हिन्दी स्मारिका-हिन्दी-साहित्य-समिति, प्रयाग, सन् १९६७, पृ. २३—२७ तक

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

में है। यह समिति आज पुनः घोषणा करती है कि राष्ट्रभाषा-हिन्दी के रूप के बारे में उसकी एक ही नीति आरम्भकाल से चली आ रही है। इस भाषा की लिपि नागरी है।[७३] वर्धा की नीति का अधिक स्पष्टीकरण इस प्रकार है—यह सभा मानती है कि पिछले १३ वर्षों से राष्ट्रभाषा-हिन्दी और देवनागरी—लिपि के प्रचार में लगी, इस समिति की जिम्मेदारी, विधान-परिषद् द्वारा राष्ट्रभाषा-हिन्दी की स्वीकृति के बाद अब विशेष रूप से बढ़ गई है। इसलिये यह सभा अपनी सभी प्रान्तीय समितियों और उनके अन्तर्गत काम करने वाली सभी राष्ट्रकर्मियों से विशेष आग्रह करती है कि राष्ट्रभाषा-शिक्षण के सामान्य कार्य के साथ-साथ वे अब साहित्य-निर्माण के ठोस कार्य में उत्साह के साथ लग जायें। साहित्य-निर्माण के कार्य में प्रान्तीय साहित्यिकों तथा साहित्यिक संस्थानों की मदद अवश्य ली जाय।[७४] इस समिति की धारणा है कि भारतीय संविधान ने भी नागरी-लिपि में लिखित हिन्दी के इसी रूप की कल्पना की थी और वह मानती है कि राष्ट्रभाषा-हिन्दी का जो रूप आगे विकसित होगा उसके निर्माण में देश की समस्त भाषाओं का सहयोग होगा।[७५] वर्तमान में यह समिति राजभाषा-हिन्दी तथा लिपि नागरी का प्रचार-प्रसार ही करती है। इसका कार्यक्षेत्र अहिन्दीभाषी प्रान्त हैं।

०१.०४ (च) दिल्ली प्रादेशिक हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन :—

अखिल-भारतीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के सन् १९४४ के जयपुर अधिवेशन में दिल्ली प्रान्तीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की स्थापना का प्रस्ताव स्वीकार हुआ। तदनुसार ३ दिसम्बर, सन् १९४४ को प्रान्तीय सम्मेलन की स्थापना हुई। तब से इस सम्मेलन ने राजभाषा-हिन्दी के उन्नयन, प्रचार और प्रसार के लिए स्थायी महत्व के कार्य किये। योजनाएँ बनाकर इसने दिल्ली महानगर परिषद् में हिन्दी को स्थान दिलाया, आकाशवाणी की हिन्दी-विरोधी-नीति का उन्मूलन किया, राष्ट्रभाषा व्यवस्था-परिषद् की बैठकों को आयोजित कर ६ व ७ अगस्त, १९४९ को भारत-भर के विद्वानों का अभिमत हिन्दी के पक्ष में स्थिर कराया, हिन्दी से प्राचीन और प्रान्तीय भाषाओं का सम्बन्ध निर्धारित कराया, हिन्दी-प्रचार के लिए विविध सम्मेलन-समारोह-परीक्षाओं और आन्दोलनों के आयोजन किये, शिक्षा-संस्थाओं और न्यायालयों में हिन्दी और नागरी के प्रयोग को वैध कराया, स्थायी महत्व के ग्रंथों के प्रकाशन किये तथा दिसम्बर सन् १९६७ के भाषा-संशोधन-विधेयक का घोर विरोध किया। देश की राजधानी में नागरिकों, औद्योगिक संस्थानों,

---

७३. राष्ट्रभाषा-प्रचार-समिति, वर्धा की वार्षिक बैठक, ३० दिसम्बर १९५१ की बैठक से, पृ. १०.

७४. राष्ट्रभाषा-प्रचार-समिति, वर्धा की वार्षिक बैठक, दिनांक ४, ५ दिसम्बर, १९४९ की रिपोर्ट, पृ. ३.

७५. वही, १५ जून, १९५२, पृ. ८.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

सरकारी कार्यालयों तथा समय-समय पर पत्र-पत्रिकाओं को हिन्दी-सम्बन्धी सूचनाओं को देने का कार्य भी सम्मेलन करता है।[७५अ]

०१.०४ (इ) प्रान्तों में राष्ट्रभाषा-प्रचार का कार्य :–

गुजरात में हिन्दी का प्रचार गुजरात-विद्यापीठ, अहमदाबाद, दक्षिणामूर्ति, विद्या मन्दिर, भावनगर, राजकोट सेवा–संघ तथा बड़ौदा–राज्य की सरकार द्वारा किया जाता था किन्तु सन् १९३६ से वर्धा–समिति के निर्णयानुसार गुजरात राष्ट्रभाषा-प्रचार-समिति, अहमदाबाद के तत्वावधान में यह कार्य समन्वित रूप से किया जा रहा है।

महाराष्ट्र में हिन्दी-प्रचार का कार्य वर्धा-समिति की स्थापना के पूर्व से ही चल रहा था किन्तु महाराष्ट्र राष्ट्रभाषा-प्रचार-समिति, पूना के संगठन के बाद जिला-समितियों की स्थापना, हिन्दी महाविद्यालयों के संगठन और सामयिक प्रकाशनों के द्वारा यह कार्य किया जा रहा है। बम्बई राष्ट्रभाषा प्रचार सभा, विदर्भ; नागपुर राष्ट्रभाषा समिति, नागपुर तथा मराठवाड़ा राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, औरंगाबाद के द्वारा भी हिन्दी-प्रचार और प्रसार का कार्य हो रहा है।

असम राज्य राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, शिलांग, पश्चिम बंग राष्ट्रभाषा प्रचार-समिति, कलकत्ता, सिन्ध-राजस्थान-प्रचार-समिति, जयपुर, मणिपुर राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, इम्फाल, हैदराबाद-राज्य-हिन्दी-प्रचार-सभा, हैदराबाद, कर्नाटक प्रान्तीय राष्ट्रभाषा-प्रचार समिति, मैसूर, पंजाब प्रान्तीय राष्ट्रभाषा-प्रचार समिति, अबोहर, काश्मीर राष्ट्रभाषा-प्रचार-समिति, श्रीनगर, मध्य प्रान्त राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, भोपाल, अफ्रीका हिन्दी-शिक्षा संघ, नेपाल तथा अन्डमान–निकोबार राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, पोर्टब्लेअर द्वारा हिन्दी और देवनागरी का प्रचार और प्रसार किया गया है।[७५ ब]

इसी प्रकार गुजरात विद्यापीठ, वल्लभ नगर, अखिल भारतीय-हिन्दी-परिषद, प्रयाग; हिन्दुस्तानी अकादमी, प्रयाग, हिन्दी विद्यापीठ देवघर, नागरी प्रचारिणी-सभा, आरा; नागरी-प्रचारिणी-सभा, आगरा, विभिन्न प्रान्तीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन तथा श्री मध्यभारत हिन्दी-साहित्य-समिति, इन्दौर आदि संस्थाएँ हिन्दी और देवनागरी के विकास तथा प्रगति में योग दे रही हैं।[७५स]

---

७५ अ. दिल्ली प्रादेशिक हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन : हिन्दी के २५ वर्ष : अभिनंदन ग्रंथ, पृ. ७५७-८००

७५ ब. संस्कृति के परिव्राजक : काका साहब कालेलकर ! समर्पण ग्रंथ : स. सा. मं. दिल्ली, १९६५, पृ. १७९–१९१

७५ स. राजर्षि अभिनन्दन ग्रंथ : दिल्ली प्रादेशिक हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन १९६० : पृ. ६६७–७१६

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

०१.०५. हिन्दी और हिन्दुस्तानी का विवाद और गाँधीजी:-

हिन्दी और हिन्दुस्तानी का विवाद नया नहीं है। इस विवाद की जड़ें अंग्रेज़ों के साम्राज्य में थी और बीज मुगलों के शासन के समय से विद्यमान थे। मुगलों ने विजेताओं के रूप में इस देश में फ़ारसी-भाषा को राजकाज की भाषा बनाया था। हिन्दी, उर्दू और हिन्दुस्तानी का संघर्ष भ्रम, प्रमाद, धार्मिक और साँस्कृतिक उत्साह के कारण उत्पन्न हुआ था लेकिन इसके नाम पर राष्ट्रीय चेतना और बुद्धि का बड़ा अपव्यय हुआ, समय की बर्बादी तो हुई है। हिन्दी-हिन्दुस्तानी का नामकरण कोई नवीन नहीं था फिर भी उसके प्रयोग में आ जाने पर सम्प्रदाय-विशेष में बड़ी हलचल मची और इस बात की भरपूर चेष्टा की गई कि हिन्दी-हिन्दुस्तानी को मात्र एक सम्प्रदाय विशेष की भाषा मान ली जाय।

आज से लगभग १७० वर्ष पूर्व १८०२ ई. में फोर्ट विलियम कॉलेज में राष्ट्रभाषा के प्रश्न पर हुई एक परिचर्चा के अन्त में गवर्नर जनरल लॉर्ड वेलेजली ने निर्णय देते हुए यह मत व्यक्त किया-'भारत की राष्ट्रभाषा-हिन्दी अथवा हिन्दुस्तानी होनी चाहिए।'[७६] इस परिचर्चा में भाग लेने वाले एक प्रमुख विद्वान डब्ल्यू. वी. वेले ने अपने निबन्ध में यह मत व्यक्त किया कि 'भारत की एकता के लिए राष्ट्रभाषा-हिन्दी अथवा हिन्दुस्तानी होनी चाहिए।'[७७] इस प्रकार हिन्दुस्तानी के बीज का प्रथम अंकुर अंग्रेज़ी शासनकाल में लॉर्ड वेलेजली के समय देखा गया। उसी तरह उस समय के भाषावैज्ञानिक गिलक्राइस्ट महोदय का भी विचार वैसा ही था-'जिस फ़ारसीमय हिन्दुस्तानी का बीज गिलक्राइस्ट की अध्यक्षता में फोर्ट विलियम कॉलेज में बोया गया था, वह केवल धार्मिक और सामाजिक उत्साह के कारण हुवा था। यह संघर्ष भाषाई संघर्ष कम था इसलिए यह संघर्ष अपने जन्म, विकास और असामयिक अंत के लिए अदूरदर्शी राजनीतिज्ञों की महत्वाकांक्षा का परिणाम था'[७८]

हिन्दुस्तानी अंग्रेज़ों के जमाने में एक महत्वपूर्ण सम्पर्क भाषा का कार्य करती रही। इसके साथ ही हिन्दी-भाषा न केवल अंग्रेज़ों के शासन में बल्कि इंगलैण्ड से कानूनों के अनुवाद और कई देशी फरमानों के रूप में चलती रही जिसका क्रमानुसार संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है-[७९]

---

७६. राष्ट्रभाषा सन्देश : जगतपतिशरण निगम, १५ फरवरी, १९७३, गुरुवार माघ, १२, सं. १८९४, भाग-८, अंक १५, पृ. ३

७७. वही वही वही

७८. राष्ट्रभाषा हिन्दी का स्वरूप विधान : डॉ. रामेश्वर मिश्र; प्र. संस्करण १९७५, पृ. ३४०

७९. राष्ट्रभाषा सन्देश : लेख जगपतिशरण निगम, १ फरवरी, १९७३, गुरुवार, माघ १२ सं. १८९४, भाग-८, अंक-१५, पृ. ३.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

१७९७ ई. में इंग्लैण्ड की संसद ने एक अधिनियम बनाकर यह व्यवस्था की कि भारत सम्बन्धी विधि के भारतीय भाषाओं में अनुवाद सरकारी तौर पर प्रकाशित किए जाएँ। १८०३ ई. में गवर्नर जनरल ने एक कानून बनाकर यह आवश्यक कर दिया था कि हिन्दी-भाषी क्षेत्रों को लागू होने वाले कानूनों के हिन्दी अनुवाद सरकारी तौर पर उपलब्ध किए जाएँ। काज़ियों तक से सम्बन्ध रखने वाले कानून के लिए १८०३ ई. में यह व्यवस्था थी कि उसके हिन्दी अनुवाद काज़ियों को दिए जाएँ। ३ जुलाई, १८०५ ई. को लॉर्ड लेक ने मथुरा और व्रज क्षेत्र में गौ-वध-निषेध का ऐतिहासिक फर्मान हिन्दी में जारी किया था। २ सितम्बर, १८१२ ई. को दास-प्रथा के विरुद्ध जारी किया गया सरकारी आदेश ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने हिन्दी में भी प्रकाशित किया था। १८४३ ई. में एक अधिनियम ने तो यह आवश्यक कर दिया था कि भारतीय न्यायाधीश[८०] अपने निर्णय अपनी मातृभाषा में लिखें। १८५२ ई. से आगरा प्रान्त का सरकारी गजट हिन्दी में प्रकाशित होने लगा था। १८६१ ई. में इण्डियन पीनल कोड का हिन्दी अनुवाद अंग्रेज़ी पाठ लागू होने के साथ ही प्रकाशित कर दिया गया था।

इस तरह से हिन्दी और हिन्दुस्तानी दोनों ही भाषाएँ अंग्रेज़ी राज्य में समानान्तर चलती रहीं। एक कानूनों और अदालतों में प्रवेश पा गई और दूसरी जनभाषा या लोक-भाषा बनी रही।

विवाद के कारण :-

अँग्रेज़ों को भी इस बात का भ्रम था कि हिन्दी-हिन्दुओं की भाषा है। उनका ध्यान इसके नाम पर गया जैसे कि भौगोलिक दृष्टिकोण से सिन्ध के आसपास रहने वालों को मुगलों ने हिन्दू समझा और सम्पूर्ण देश का नाम हिन्दुस्तान कर दिया किन्तु सर जार्ज ग्रियर्सन ने अध्ययन एवं व्यवहार के आधार पर यह सिद्ध किया कि खड़ीबोली (हिन्दी) ही हिन्दुस्तानी है और उर्दू भी खड़ी-बोली का सामान्य बोलचाल का रूप यानी खड़ी-बोली है। इस प्रकार अंग्रेज़ों का भ्रम दूर हुआ और उन्होने हिन्दुस्तानी या हिन्दोस्तानी का प्रयोग हिन्दी तथा उर्दू दोनों के लिए निश्चित किया।[८१]

---

८०. भारतीय न्यायाधीशों को 'नेटिव कमिश्नर' कहा जाता था।

८१. (अ) भाषायी संरचना को देखने से यह स्पष्ट हो जाता है कि उर्दू, हिन्दी से भिन्न भाषा नहीं है। इस दृष्टि से वह साधु हिन्दी का ऐसा उपरूप अथवा शैली है जिसमें अरबी–फ़ारसी के शब्दों की संख्या पर्याप्त मात्रा में है तथा जिसके कुछ व्याकरणात्मक रूप (एवं कुछ स्थितियों में कुछ ध्वन्यात्मक रूप) भिन्न हैं एवं जो अरबी–भाषा पर आधारित लिपि में लिखी जाती है—भाषा एवं हिन्दी–भाषा : डॉ. सतीशकुमार रोहरा, प्रथम संस्करण, १९७२, पृ. १५८.

(ब) उर्दू के लिए विभिन्न कालों में 'हिन्दुस्तानी', 'हिन्दी', 'रेख्ता', हिन्दी तथा 'हिन्दवी–उर्दू' आदि नामों का प्रयोग हुआ है। हिन्दुस्तानी नाम फोर्ट विलियम कॉलेज के रिकार्डों में ही उर्दू के लिए प्रयुक्त हुआ। वस्तुतः खड़ी–बोली या

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

हिन्दुस्तानी शब्द स्वयं ही विवाद का कारण बन गया क्योंकि उर्दू के लोग इसे एक अलग दृष्टिकोण से देखते थे तथा हिन्दी वाले दूसरे दृष्टिकोण से; परिणामतः विवाद का जन्म हुआ। इस विवाद का एक और भी कारण है कि उर्दू वाले फ़ारसी शैली और उसके प्रचलित शब्दों को उसमें जान-बूझकर हिन्दी और उर्दू में अन्तर को पैदा करने के उद्देश्य से बहुतायत से प्रयोग करने लगे। सन् १९३७ में जब प्रथम बार प्रान्तों में काँग्रेसी शासन आया तो हिन्दी की जगह हिन्दुस्तानी चली और हिन्दी-भाषी प्रान्तों में भी प्रारम्भिक शिक्षा का माध्यम हिन्दुस्तानी बनी। काँग्रेस श्रेष्ठि-वर्ग की आशा से युक्तप्रान्त में हिन्दुस्तानी रीडरें चलीं। इस रीडरों की भाषा का नमूना है।[८२] डॉ. राजेन्द्रप्रसाद ने इन रीडरों को नष्ट करवा दिया। इस घटना से हिन्दी-हिन्दुस्तानी संघर्ष और भी तेज हो गया। हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन ने अबोहर अधिवेशन में 'सम्मेलन का उद्देश्य (ख) जो सन् १९११ ई. के द्वितीय अधिवेशन में निश्चय किया गया था, यह है—'देवनागरी लिपि का देश-भर में प्रचार करना और देश-व्यापी व्यवहारों और कार्यों को सुलभ करने के लिए हिन्दी-भाषा को राष्ट्रभाषा बनाने का प्रयत्न करना' बाद में इसका संशोधन हुआ और अब तक यह इसी रूप में है—'देशव्यापी व्यवहारों और कार्यों को सुलभ करने के लिए राष्ट्र-लिपि देवनागरी और राष्ट्र-भाषा हिन्दी का प्रचार बढ़ाने का प्रयत्न करना।[८३] इससे हिन्दी और हिन्दुस्तानी का विवाद और अधिक उग्र हो गया। महात्मा गांधी के अनुयायियों में कन्हैयालाल मणिकलाल मुन्शी, वियोगी हरि

आधुनिक परिनिष्ठित हिन्दी की तरह ही उर्दू भी मूलतः दिल्ली के आसपास खड़ी–बोली पर आधारित है जिसमें कुछ रूप (मूल या विकसित रूप में) पूर्वी पंजाबी, बांगरू तथा व्रज के भी हैं। पुरानी हिन्दी की तरह, पुरानी उर्दू में भी कुछ रूप अवधी के भी मिलते हैं। इस प्रकार व्याकरणिक दृष्टि से हिन्दी–उर्दू, कुछ अपवादों को छोड़कर प्रायः पूर्णतः एक है। मूल अन्तर केवल शब्दावली का है। साहित्यिक उर्दू में अरबी-फ़ारसी शब्द अधिक होते हैं किन्तु यह अन्तर साहित्य के स्तर पर ही अधिक है। सामान्य, व्यावहारिक या बोलचाल के स्तर पर हिन्दी–उर्द दोनों ही अपने कठिन संस्कृत या अरबी-फ़ारसी शब्दों को छोड़कर प्रायः एक हो जाती है जिसे गांधीजी हिन्दुस्तानी कहा करते थे। हिन्दी–भाषा : डॉ. भोलानाथ तिवारी, १९६६, पृ., २२६ एवं २२७.

८२. राष्ट्रभाषा का इतिहास : किशोरीदास बाजपेयी–प्रथम संस्करण, पृ. २००.

गाँव के मजे

मेरे प्यारे दोस्त सोहनलालजी;

बन्दगी।

मैंने तुम्हें कई खत लिखे। तुमने एक का भी जवाब न दिया। इस खत को देखते ही बड़े दिन की छुट्टियों में यहाँ चले आओ। खूब बहारें आयेंगी। हम-तुम मिलकर सैर करने चलेंगे, साथ खाना खायेंगे।

तुम्हारा दोस्त
मोहनसिंह

८३. सरस्वती : फरवरी १९४२, भाग–४३, खण्ड १, पृ. २०५.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

तथा बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' [८४] ने स्पष्ट रूप से यह वक्तव्य दिया कि हिन्दी के नाम पर हिन्दुस्तानी नहीं चलेगी।

इस विवाद के कारण हिन्दी वाले तथा कुछ गाँधी के अनुयायियों के द्वारा स्पष्ट रूप से हिन्दुस्तानी के विरोध में वक्तव्य देना तथा विरोधी कार्य करने से देश के कई भागों में दंगे होने की सम्भावना हुई। सम्मेलन वालों ने स्पष्ट रूप से गाँधी का विरोध किया परिणाम-स्वरूप गांधी ने सम्मेलन से अपना त्याग-पत्र दे दिया। [८५] गाँधी ने 'दक्षिण-भारत-प्रचार-सभा' की रजत–जयन्ती के अवसर पर उसका नाम बदलकर 'दक्षिण-भारत-हिन्दुस्तानी-प्रचार सभा रखा।' 'इस प्रकार हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन जिसका नेतृत्व पुरुषोत्तमदास टण्डन कर रहे थे और दक्षिण-भारत-हिन्दुस्तानी-प्रचार सभा, मद्रास जिसका नेतृत्व महात्मा-गाँधी कर रहे थे, दो अलग-अलग बातों पर दृढ़ हो गए।

गांधी की मध्यममार्गी-नीति :-

हिन्दी और हिन्दुस्तानी के विषय में गाँधी की यह कल्पना भारत की सांस्कृतिक एकता को दृष्टिगत रखकर की गई थी। महात्मा-गाँधी का यह विचार था कि संस्कृतनिष्ठ-हिन्दी राष्ट्रभाषा हुई तो मुसलमान, ईसाई, पारसी और सिक्ख उस भाषा को हिन्दुत्व की भाषा समझकर उससे इन्कार कर जाएँगे और यदि अरबी-फ़ारसी से युक्त शब्दावली की भाषा को राष्ट्रभाषा बनाया गया तो उसे हिन्दू नहीं स्वीकारेंगे इसलिए उन्होंने भारत जैसे मिश्रित संस्कृति वाले देश के लिए उसकी राष्ट्रभाषा भी हिन्दी और उर्दू का मिश्रित रूप होगा, ऐसा विचार किया। इस दृष्टिकोण को सामने रखते हुए गाँधीजी ने इसी मार्ग को अपनाने का निश्चय किया। यह मार्ग विशुद्ध रूप से न तो हिन्दुओं का समर्थन करता है और न ही मुसलमानों का। इस तरह दोनों जातियों को सन्तुष्ट करके और देश की एकता के लिए यह मध्यवर्ती मार्ग उचित था। गाँधीजी ने लिखा कि—'यह हिन्दुस्तानी न ही संस्कृत-निष्ठ-हिन्दी है, न ही अरबी-मिश्रित-उर्दू परन्तु उन दोनों का सुखद मिश्रण है। इसमें सभी शब्द स्वतन्त्र है, यदि आवश्यक हो तो अन्य प्रचलित, जीवित भाषाओं से भी शब्द लिये जा सकते हैं और विदेशी भाषाओं से भी। शर्त यह है कि वे बड़ी ही सुगमता के साथ पूरी तरह से आत्मसात कर लिये गये हों। वह हमारी राष्ट्रभाषा होगी। इस प्रकार हमारी जो राष्ट्रभाषा होगी, समृद्ध होगी और इतनी शक्तिशाली होगी कि वह सभी व्यक्तियों के विचारों और भावनाओं को व्यक्त करने का उपकरण होगी। [८६] इन्दौर अधिवेशन में उन्होंने मत दिया कि—'मैंने हिन्दी-भाषी जनता को सुझाया था कि वह हिन्दी की अपनी व्याख्या को इतना प्रशस्त बना ले कि उसमें उर्दू का भी समावेश हो जाय। सन् १९३५ ई. में जब मैं दोबारा सम्मेलन का सभापति बना तो

---

८४. बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' का भाषण: वीणा, नवम्बर कार्तिक सं. २००४, वर्ष २१, अंक १, पृ. १७–२२

८५. गांधी–टण्डन पत्र–व्यवहार : वीणा १९४५, पृ. ४०९–४१३

८६. १२ अक्टूबर, १९४७ के 'हरिजन-सेवक', गांधी के विचार, पृ. १७४.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

कहा— 'मैं कई बार व्याख्या कर चुका हूँ कि हिन्दी वह भाषा है जिसको उत्तर में हिन्दू व मुसलमान बोलते हैं और जो नागरी अथवा अरबी-लिपि में लिखी जाती है।'[८७] इसी प्रकार २० अप्रैल, १९३५ को गाँधी ने इन्दौर अधिवेशन में दूसरी बार सभापति पद से बोलते हुए कहा—'मैं एक प्रस्ताव आपके सामने पढ़ देता हूं। सेठ जमनालाल बजाज इसे पेश करेंगे। वह इस रूप में है—राष्ट्रभाषा-सम्मेलन की यह सभा निश्चय करती है कि, बंगाल में हिन्दी अर्थात् हिन्दुस्तानी का प्रचार किया जाय और इस कार्य की आजमाइश के लिये एक वर्ष के वास्ते प्रचार कार्यालय खोल दिया जाय।'[८८] बम्बई के प्रधानमन्त्री[८९] श्री बी. जी. खैर ने काका कालेलकर की अध्यक्षता में 'हिन्दुस्तानी-शिक्षा-समिति' का गठन कर देवनागरी और फ़ारसी दोनों लिपियों के प्रयोग पर बल दिया। इसी प्रकार गाँधी ने अपनी हिन्दुस्तानी को और अधिक लोकप्रिय बनाने के उद्देश्य से, 'हिन्दुस्तानी संघ' बनाने का विचार किया—'महात्मा-गाँधी एक नये संघ की स्थापना करने की तैयारी कर रहे हैं। इसका नामकरण कदाचित् 'हिन्दुस्तानी संघ' होगा। चर्खा संघ, सेवा संघ आदि-आदि.......।'[९०] इसके उपरान्त सन् १९४६ और ४७ ई. में भारत में साम्प्रदायिक द्वेष और घृणा के भयानक विस्फोट हुए और १५ अगस्त, १९४७ को भारत को आज़ादी तो मिली लेकिन उर्दू-भाषा को पाकिस्तान मिला और हिन्दी को हिन्दुस्तान। इस प्रकार जिस एकता, भाईचारे और स्वतन्त्र भारत की कल्पना की नीति के सहारे गांधीजी जिस हिन्दुस्तानी भाषा का समर्थन कर रहे थे, वह महान् उद्देश्य ही नष्ट हो गया, छिन्न-भिन्न हो गया। जिसके लिए गाँधीजी ने सम्मेलन से त्याग-पत्र दिया, 'दक्षिण-भारत-हिन्दी-प्रचार-सभा' का नाम बदलकर 'दक्षिण-भारत-हिन्दुस्तानी-सभा' नाम किया वह सब कार्य पूर्ण होने के पूर्व ही बीच में टूट गया। इससे गाँधी ने अपना मत दृढ़ कर लिया। उन्होंने हरिजन में लिखा कि[९१]-'कांग्रेस ने सदा उदार दृष्टिकोण अपनाया है। आज यह विपरीत दिशा में जा रही है। यह राष्ट्रभाषा के प्रश्न पर पराजित नहीं की जा सकती। राष्ट्रभाषा न तो फ़ारसीय उर्दू होगी और न संस्कृतमय हिन्दी। यह तो दोनों लिपियों में लिखित उनके सरल रूपों का सुन्दर मिश्रण होगी।'

---

८७ अ. अखिल भारतीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, इन्दौर २८ मार्च, १९१८, गाँधीजी इन्दौर में, पृ. १७.

ब. राष्ट्रभाषा वही हो सकती है जो सबको मान्य हो, चालू हो, सरल हो और उतनी हस्ती रखती हो। सिर्फ हिन्दी या सिर्फ उर्दू में न्यूनाधिक खामियाँ हैं मगर दोनों की पुरानी एकता अर्थात् सरल हिन्दुस्तानी पर्याप्त क्षमता रखती है—'भाषा के झगड़े' : जीवन एवं वीणा, सितम्बर-अक्टोबर, १९४५, भादों, आश्विन संवत् २००२, वर्ष १८, अंक ११-१२, पृ. ४९८.

८८. वीणा : सभापति महात्मा-गांधी का संक्षिप्त भाषण, पौष, संवत् १९८५ वर्ष-२, अंक ४, पृ. २४३.

८९. उस समय मुख्य-मन्त्री को 'प्रधान-मन्त्री' कहा जाता था।

९०. सरस्वती : जून १९४२, भाग-४३, खण्ड-१, संख्या ६, पृ. ५६६.

९१. हरिजन: १० अगस्त, १९४७ : गांधी-विचार : पृ. १७० (अंग्रेजी में)

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन का जयपुर अधिवेशन और महात्मा-गांधीः-

यह अधिवेशन सन् १९४४ ई. में हुआ। इस सम्मेलन के पूर्व महात्मा गाँधी अपना त्याग-पत्र दे चुके थे। त्याग-पत्र देने का कारण सम्मेलन से गाँधीजी का मतभेद होना था परन्तु उन्होंने कहा कि मैं हिन्दी के लिये कार्य करता रहूँगा। सम्मेलन से गाँधी के मतभेद के प्रमुख दो कारण थे :—

(१) गाँधी नागरी के साथ फ़ारसी-लिपि को भी राष्ट्रीय दृष्टिकोण से अनिवार्य समझते थे। वे दोनों लिपियों का समान प्रचार चाहते थे।[९२]

(२) भाषा के स्वरूप के विषय में गाँधी राष्ट्रभाषा को हिन्दुस्तानी नाम देना चाहते थे।[९३]

सम्मेलन केवल नागरी-लिपि और उसका प्रचार-प्रसार ही करना चाहता था। इसके अतिरिक्त वह हिन्दी को राष्ट्रभाषा घोषित करना चाहता था। सम्मेलन हिन्दी में प्रयुक्त फ़ारसी, अंग्रेज़ी आदि शब्दों का बहिष्कार करता था। सम्मेलन के कर्णधारों ने गाँधी को त्याग-पत्र न देने के लिए भरसक प्रयत्न किये। गाँधी अपनी नीति से हटना नहीं चाहते थे और न ही सम्मेलन वाले अपने सिद्धान्तों को शिथिल करना चाहते थे। परिणाम यह हुआ कि गांधी के त्याग-पत्र पर जयपुर-अधिवेशन में निर्णय लेने का विचार किया गया। इसके पूर्व गाँधीजी को पत्र लिखा गया परन्तु उन्होंने उत्तर लिख भेजा—'लिपि तथा भाषा के सम्बन्ध में मेरा जो मौलिक मतभेद है, उसके कारण मैं सम्मेलन में नहीं रह सकता। मेरा त्याग-पत्र स्वीकार कर लिया जाय।[९४]

अंततोगत्वा सम्मेलन में गाँधीजी के कार्यों की प्रशंसा करते हुए दुःख के साथ उनका त्याग-पत्र स्वीकार कर लिया गया। त्याग-पत्र स्वीकार करते समय संध्या से विचार-विमर्श प्रारम्भ हुआ और रात्रि के २ बजे तक चलता रहा। इससे अंतःसंघर्ष बढ़ गया। टंडनजी को बुरा-भला कहा तथा उनकी तुलना जिन्ना साहब से की। इस सम्मेलन में 'ऑल इण्डिया' रेडियो के बहिष्कार का भी प्रस्ताव स्वीकार किया गया क्योंकि स्टेशन से फ़ारसीयुक्त हिन्दी का प्रसारण किया जाता था। रेडियो स्टेशन के संचालक महोदय का ध्यान इस ओर आकर्षित किया गया परन्तु परिणाम कुछ नहीं निकला। अन्त में सभी साहित्यकारों ने बहिष्कार किया।

०१.०६. निष्कर्ष :—

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पूर्व भारत के राष्ट्रनेताओं और भारतीय महाद्वीप की अखण्डता की समर्थक संस्थाओं ने इस प्रकार हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने में सफलता प्राप्त की। उसका स्वरूप निखर चुका था और वह भारत की बोलचाल की सहज भाषा बन चुकी थी। उसमें एक ओर यदि भारतीय आर्य-भाषाओं के संस्कार थे, तो दूसरी ओर अरबी-फ़ारसी-तुर्की-पश्तो, आदि सेमेटिक वर्ग की भाषाओं की शब्दावली भी थी। उसने इनके साथ ही साथ पश्चिमी देशों की भाषाएँ फ्रांसीसी-डच-पुर्तगाली और अंग्रेज़ी शब्दों को उच्चारणानुकूल बनाकर आत्मसात् कर लिये थे। अतः हिन्दी इस युग में जन-सम्पर्क का सशक्त माध्यम और राष्ट्रीय एकता की प्रतीक बन गई थी। सम्पर्क-भाषा के रूप में उसके परिनिष्ठित रूप की प्रतिष्ठा हो चुकी थी।

---

९२. वीणा : अगस्त १९४५ ई., श्रावण, संवत् २००२, पृ. ४०९-४१३.

९३. राष्ट्रभाषा का इतिहास : किशोरीदास वाजपेयी, संवत् २००७, वि., पृ. ८५-८६,

९४. वही वही— पृ. ८७,

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

अध्याय-२

हिन्दी की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

(२) स्वातन्त्र्योत्तर

०२.०१, स्वातन्त्र्योत्तर राजभाषा : हिन्दी :-

राजनीतिक स्वतन्त्रता प्राप्त करते ही भारत को एक ऐसी भाषा की आवश्यकता प्रतीत हुई जो सरकारी कामकाज के साथ-साथ भारतीय जनता के मध्य विचार-विनिमय की सशक्त माध्यम बन सके। इसके लिए भारतीय विद्वानों और राजनेताओं ने जो प्रयत्न किये उनका पूर्ण विवरण प्रस्तुत अध्याय में दिया जा रहा है।

०२.०२, उत्तर-प्रदेश की राजभाषा : हिन्दी :-

युक्तप्रान्त में टण्डनजी, सम्पूर्णानन्द और अन्य व्यक्ति हिन्दी को राजभाषा बनाने के पक्ष में थे परन्तु वहाँ के गवर्नर महोदया श्रीमती सरोजनी नायडू हिन्दुस्तानी के पक्ष में थी। उन्होंने इसका विरोध किया। अन्त में वे सहमह हुईं।

सन् १९४७ ई. में देश में सबसे पहले युक्तप्रान्त को यह सौभाग्य प्राप्त हुआ कि प्रान्तीय सरकार ने हिन्दी को राजभाषा तथा नागरी को राज्य की अधिकृत लिपि घोषित किया।[1]

इस निर्णय का मुस्लिम लीग के नेताओं ने घोर विरोध किया। उन्होंने केन्द्रीय सरकार से शिकायत की। उनका तर्क था कि अभी तक भारतीय विधान-परिषद् ने भी राष्ट्रभाषा का निर्णय नहीं लिया है। इस पर सम्पूर्णानन्दजी ने कहा कि इस विषय में प्रान्त सरकार निर्णय लेने में स्वतन्त्र है।

०२.०३, हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन का बम्बई अधिवेशन :-

इसके उपरान्त हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन का अधिवेशन बम्वई में हुआ। इस अधिवेशन की अध्यक्षता करते हुए महापंडित राहुल सांकृत्यायन ने हिन्दी-भाषा और देवनागरी-लिपि का समर्थन किया। उन्होंने प्रान्तीय काम-काज में हिन्दी के प्रचार और उपयोग पर वल दिया तथा स्वीकृत प्रस्तावों के माध्यम से देवनागरी-लिपि में लिखित हिन्दी को भारत की राजभाषा वनाने का अनुरोध किया।[2]

उन्होंने कहा कि हिन्दी के राष्ट्रभाषा होने के लिए जव कहा जाता है तो कहीं-कहीं से आवाज़ आती है—हिन्दी वाले सारे भारत पर हिन्दी का साम्राज्य स्थापित करना चाहते

---

१. राष्ट्रभाषा का इतिहास : किशोरीदास वाजपेयी-प्रथम संस्करण, संवत् २००७ वि. पृष्ठ ९७

२. वीणा : जून १९४८ ई., पृ. १४२-१४४

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

हैं। यह उनका झूठा प्रचार है और वह हिन्दीतर भाषा-भाषियों के मन में यह भय पैदा करना चाहते हैं कि हिन्दी के संघ-भाषा बनने पर उनकी भाषा का साहित्य और अस्तित्व ही मिट जाएगा। यह विचार सर्वथा निर्मूल है। अपने क्षेत्र में वहाँ की भाषा ही सर्वे-सर्वा होगी। बंगाल में प्रारम्भिक पाठशालाओं से विश्वविद्यालयों तक, गाँव की पंचायतों से प्रान्त की विधान-सभाओं और उच्च-न्यायालयों तक, सभी जगह बंगला का अक्षुण्ण राज्य रहेगा। इसी तरह उड़ीसा, आन्ध्र, तमिलनाडु, केरल, कर्नाटक, महाराष्ट्र, गुजरात, पंजाब और आसाम में भी वहाँ की भाषाओं का साहित्यिक और राजनीतिक क्षेत्रों में निर्बाध राज्य रहेगा। हिन्दी का काम तो वहाँ ही पड़ेगा जहाँ एक प्रान्त का दूसरे प्रान्त से सम्बन्ध होगा। इसको कौन नहीं स्वीकार करेगा कि बंगाली, उड़िया, मराठी, गुजराती, तिलंगे और कर्नाटकी जब एक जगह अधिकाधिक मिलेंगे तो उनके आपसी व्यवहार के लिए कोई एक भाषा होनी चाहिये।

इतिहास हमें बतलाया है कि ऐसी भाषा भारत में जब-जब राजनीतिक एकता या अनेकता की रही, तब-तब मानी गई। अशोक के शिलालेखों की भाषा मैसूर, गिरनार, जोगढ़ (उड़ीसा) और कालपी (देहरादून) इसका प्रथम प्रमाण है। फिर संस्कृत ने माध्यम का स्थान लिया, यद्यपि इसमें सन्देह है कि वह कचहरियों और दरबारों की बहुप्रचलित भाषा भी थी। अपभ्रंशकाल (७-१२ वीं सदी) में हम आसाम से मुल्तान, गुजरात-महाराष्ट्र से उड़ीसा तक अपभ्रंश-भाषा में कवियों को कविता करते पाते हैं, उनमें कितने ही दरबारी कवि हैं। इस अपभ्रंश में यद्यपि इन सारे प्रदेशों की भाषाओं के बीज मौजूद हैं परन्तु उसकी शिष्ट भाषा अवध और ब्रज के बीच की भूमि पाँचाल की भाषा थी जिसका मुख्य नगर कन्नौज मौखरियों के समय से गहड़वारों के समय (६-१२वीं सदी) तक उत्तरी भारत का सबसे बड़ा राजनीतिक और सांस्कृतिक केन्द्र रहा। इस तरह अपभ्रंश उस समय समस्त भारत में वही काम कर रही थी जो गैर-सरकारी-तौर से आज तक और सरकारी-तौर से आगे हिन्दी को समस्त भारत में करना है।

हिन्दी को सम्पूर्ण हिन्द-संघ के ऊपर राष्ट्रभाषा के तौर पर लादने का प्रश्न नहीं है। यह तो एक सीधी व्यवहार की बात है। मुसलमानी शासनकाल में भी कितनी ही हमारी अन्तर्प्रांतीय साधु-सँस्थाएँ रहीं और वह आज तक चली जा रही हैं। उन्हीं को देखिए, किस भाषा को उन्होंने सुव्यवहार्य समझकर अपने भाषण और लिखा-पढ़ी के लिए स्वीकार किया। संन्यासियों के अखाड़ों और स्थानों को जाकर देखिये या बैरागी अखाड़ों या स्थानों को देखिये—वह समुद्र की तरह है जहाँ सचमुच ही सैकड़ों नदियाँ जाकर मिलती हैं और नामरूप विहाय समुद्र बन जाती है। इन अखाड़ों की बड़ी-बड़ी जमातें चलती हैं और कुम्भ के मेलों के समय तो उनकी संख्या लाखों तक पहुँच जाती है। वहाँ जाकर पता लगाइये कि मलाबारी, तेलुगु, नेपाली, बंगाली, पंजाबी और सिन्धी साधु-संन्यासी किस भाषा में आपस में बातचीत करते हैं? हिन्दी में और सिर्फ हिन्दी में। इसका गांधीजी के दक्षिण-हिन्दी-भाषा-प्रचार से कोई सम्बन्ध नहीं है। हमारी आज की हिन्दी-संस्थाओं से सदियों पहले से यह काम हो रहा है। अखाड़ों में रखी अब भी आपको दो-दो सौ वर्ष की और कुछ पुरानी

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

भी बहियाँ और चिट्ठियाँ इस बात का सबूत देंगी। इन्हीं अखाड़ों के एक प्रतिनिधि अतिकंचनगिरि ने (१८०९ ई.) सोवियत के बाकू नगर के पास ज्वालाजी के मन्दिर पर शिलालेख खुदवाकर लगाया।

स्मरण रखना चाहिए कि सदियों से जब भारत में एकाधिपत्य और निरंकुश शासन का ही चारों तरफ बोलवाला था, साधुओं के यही अखाड़े थे जिन्होंने जनतन्त्र का अच्छा आदर्श सामने रखा तथा प्रान्तीयता और अखिल भारतीयता की समस्या को हल किया। बहुत हद तक उन्होंने जाति-भेद के बन्धन को भी शिथिल किया था।

इससे यह तो साफ है कि जब-जब व्यवहार की बात आई तब-तब हिन्दी ही समस्त भारत की अन्तर्प्रान्तीय भाषा स्वीकार की गई। यदि इस पुराने तजुर्बे को नहीं मानते हैं, तो चाहें तो फिर तजुर्बा कर लें। हिन्दी-भाषा-भाषियों को अलग रखकर पंजाबी, असमी, बंगाली, उड़िया, आन्ध्र, तमिल, केरली, कर्नाटकी, मराठी, गुजराती लोगों को ही व्यवहार से इसके बारे में फैसला करने के लिए छोड़ दें। मैं समझता हूँ यदि वे सारे भारत की एकता के पक्षपाती हैं तो उनका तजुर्बा भी हिन्दी ही के पक्ष का समर्थन करेगा।[3]

अखिल भारतीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, बम्बई में स्वीकृत प्रस्ताव हिन्दी भाषा और देवनागरी-लिपि के स्वरूप को समझने के लिए उपयोगी है :—

(१) यह सम्मेलन सब प्रान्तीय भाषाओं के साहित्यकारों से अनुरोध करता है कि अत्यन्त उदारता के साथ अपने-अपने साहित्य की उन्नति करते हुए उसका श्रेष्ठ अंश हिन्दी को भी प्रदान करते रहें और हिन्दी-साहित्य से इस प्रकार सम्बन्ध स्थापित करें कि राष्ट्रभाषा-हिन्दी तथा अन्य प्रान्तीय भाषाओं का सुन्दर रूप से संस्कार और विकास हो सके।

(२) यह सम्मेलन युक्तप्रान्तीय सरकार को प्रान्त की राजभाषा-हिन्दी और लिपि देवनागरी घोषित करने के निश्चय पर बधाई देता है और बिहार, मध्यप्रान्त, दिल्ली, अजमेर-मेवाड़, पूर्वी-पंजाब की सरकारों तथा संघ की हिन्दी-भाषी रियासतों से अनुरोध करता है कि वे भी अपने क्षेत्रों में राजभाषा-हिन्दी और राजलिपि देवनागरी घोषित करें।

(३) यह सम्मेलन प्रयाग और लखनऊ विश्वविद्यालयों को उनके हिन्दी माध्यम द्वारा परीक्षा लिये जाने के निश्चय पर बधाई देता है तथा हिन्दी-भाषी क्षेत्र के अन्य सभी विश्वविद्यालयों से अनुरोध करता है कि वे भी शीघ्र ही अपने यहाँ शिक्षा के माध्यम के लिए हिन्दी को अपनावें।

(४) भारतवर्ष से इंगलैण्ड—सरकार के हटने और देश में स्वशासन स्थापित होने का हार्दिक स्वागत करते हुए हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन भारतवर्ष के विभाजन और तद्जनित नृशंस कार्यों और जन-संकटों पर अपना महान दुःख और दुखियों के साथ अपनी हार्दिक सहानुभूति प्रकट करता है। इस विभाजन और पाकिस्तान की

---

३. वीणा : जनवरी; १९४८ ई.; वर्ष २१, अंक—३, पृ. १४२—१४४

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

उत्पत्ति में सांस्कृतिक परम्पराओं को पृथक्ता मुख्य कारण है और इन परम्पराओं को रूप देने में भाषा का बहुत बड़ा प्रभाव रहा है। देश पर जो आपदा आई है; वह सब हमारे देशवासियों की भूलों का परिणाम है। उससे शिक्षा लेकर धार्मिक भेद के रहते भी सांस्कृतिक एकता के आधार पर ही हमें भविष्य का संघटित राष्ट्र बनाने के लिए यत्न करना है और इस सांस्कृतिक एकता की मूल प्रकृति हिन्दी-भाषा और देवनागरी-लिपि है।

अतः यह सम्मेलन देश की विधान-परिषद् तथा देश के सांस्कृतिक विचारकों का ध्यान इस ओर खींचता है कि प्रान्तीय भाषाओं की रक्षा और उन्नति करते हुए भी हिन्दी भारत की राष्ट्रभाषा और देवनागरी राष्ट्रलिपि स्वीकार की जाय और सब केन्द्रीय, प्रान्तीय ऐसे काम जिनका भारत की एकता से सम्बन्ध है, हिन्दी-भाषा और देवनागरी-लिपि में किए जाएँ।

०२.०४. भारतीय विधान-परिषद् की काँग्रेस पार्टी और राजभाषा का प्रश्न :-

संविधान-सभा ने २६ नवम्बर, १९४९ ई. को भारतीय संविधान को स्वीकृत किया और २६ जनवरी, १९५० ई. को वह देश में लागू हुआ। संविधान के सत्रहवें भाग के प्रथम अध्याय के ३४३ वें अनुच्छेद के प्रथम खण्ड में देवनागरी-लिपि में लिखित हिन्दी को भारतीय संघ की राजभाषा के रूप में स्वीकार किया। साथ ही उसी अनुच्छेद के द्वितीय खण्ड में यह व्यवस्था भी दी गई कि संविधान लागू होने के १५ वर्ष बाद तक सभी राजकीय कार्यों के लिये अंग्रेजी भाषा का व्यवहार होता रहेगा। यद्यपि संविधान ने देवनागरी लिपि में लिखित हिन्दी को राजभाषा पद के लिए स्वीकारा है परन्तु पन्द्रह वर्षों की लम्बी अवधि देकर।

हिन्दी-भाषा इस स्थिति तक कैसे पहुंची? इसका भी एक इतिहास है। प्रारम्भ से ही हमारे देश में भाषा को लेकर विभिन्न राजनीतिक नेताओं के मध्य मतवैभिन्य रहा, तथापि अन्त में हिन्दी को राजभाषा स्वीकार किया गया। देश के स्वतन्त्र होने के पूर्व ही स्वतन्त्रता के लिये काँग्रेस की स्थापना की। इस संस्था ने देश की स्वतन्त्रता में अपना योगदान देकर अन्त में देश की सत्ता की बागडोर सँभाली। सर्व-प्रथम इस संस्था ने स्वतन्त्र भारत के लिये एक संविधान बनाने का कार्य प्रारम्भ किया। उस कार्य में भाषा को लेकर एक लम्बे समय तक तथा विधान-परिषद् की बैठकों में कई प्रस्ताव आये, उनके कई संशोधन आये और उन पर लम्बी-लम्बी बहसें हुईं। इस विधान-परिषद् में राजभाषा के प्रश्न को लेकर कांग्रेस दल जो सत्ता में प्रमुख और प्रभावशाली था उसकी भूमिका महत्वपूर्ण थी।

राष्ट्रभाषा के लिए देशवासियों के द्वारा भावनात्मक अपील की जाने लगी। इस पर कांग्रेस ने विचार किया, यह मात्र अपील ही नहीं है। देशवासी चाहते हैं कि वे एक-दूसरे के समक्ष अपने विचारों का आदान-प्रदान करें। प्रत्येक प्रादेशिक भाषाओं के बोलने वाले अपनी-अपनी भाषाओं का महत्व और महत्ता को स्वीकार करते हैं।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

इस स्थिति का सामना करते हुए संविधान-सभा के सदन के सदस्यों ने क्या किया? परिषद् ने किस भाषा को साधारणतः भारतीय लोगों के विचारों के आदान-प्रदान के लिये चुना, राज्य-सरकारों, प्रान्त और संघ के मध्य और संघ शासन के स्वरूप के अनुरूप किस भाषा को चुना? क्या कोई भी भारतीय भाषा को दूसरी भाषा के समक्ष ऐसा अधिकार या सम्मान दिया गया? यदि ऐसा है तो अन्य भाषाओं की तुलना में उसका क्या स्थान है? यदि किसी एक भारतीय भाषा को यह अधिकार दिया जाय तो अंग्रेज़ी की क्या स्थिति होगी? संविधान निर्माण समिति के समक्ष ये प्रश्न असम्भव नहीं थे। इन्होंने किसी भी एक भाषा को सम्पूर्ण देश के लिए नहीं चुना जो कि सम्पूर्ण देश में बोली जाती हो। ये किसी भी एक प्रान्तीय भाषा की उपेक्षा करके, किसी भी एक भाषा को यह सम्मान नहीं दे सके क्योंकि देश में कोई राष्ट्रभाषा नहीं थी। सभा के सदस्यों ने हिन्दी को संघ की राजभाषा बनाया।[४]

इस तरह काँग्रेस दल ने देश में हिन्दी को राजभाषा बनाकर अपना कार्य प्रारम्भ किया। देखना है कि हिन्दी के राजभाषा बनने के पूर्व काँग्रेस दल की स्थिति और नीति क्या रही? भारतीय विधान-परिषद् में हिन्दी बोलने वाले लोगों का एक समुदाय विधान-परिषद् के सदस्यों का था। इन्होंने भाषा-वैज्ञानिक आधार की सुदृढ़ता को आधार माना। इनको हिन्दी वाले कहते हैं, ये लोग संविधान को एक दृष्टिकोण से देखते थे। ये हिन्दी वाले अलग से नहीं बल्कि काँग्रेस दल के ही थे। केवल एक विशेषता थी कि ये केवल हिन्दी को ही सम्पूर्ण देश में चाहते थे। विरोधियों में से भी जो हिन्दी को चाहने वाले थे वे हिन्दी के स्वरूप के विषय में अधिक विचार करते थे। वे चाहते थे कि हिन्दी संघ की सरकारी भाषा रहे क्योंकि यह देश के अधिक व्यक्तियों के द्वारा बोली जाती है, सरल है और अन्य भारतीय भाषाओं की अपेक्षा अधिक राष्ट्रीय है। नेहरूजी व अन्य परिषद्-सदस्यों के साथ थे और इस बात का नेतृत्व कर रहे थे कि अंग्रेज़ी वस्तुतः राष्ट्रीय भाषा है उसे धीरे-धीरे और सावधानीपूर्वक बदल देना चाहिए। इस प्रकार काँग्रेस दल में स्पष्टतः दो विचारधाराएँ थीं—एक राष्ट्रीय भाषा अँग्रेजी को धीरे-धीरे बदलना चाहते थे और दूसरा दल हिन्दी वालों का था जो देश में राष्ट्रभाषा और सरकारी भाषा के रूप में एकमात्र हिन्दी के पक्ष में थे। सम्पूर्ण विधान-परिषद् में इन दो विचारधाराओं के मध्य संघर्ष चलता रहा। बीच-बीच में एक विचारधारा और उठी थी जो हिन्दुस्तानी की थी परन्तु देश के विभाजन के साथ ही वह समाप्त भी हो गई। देश से आये अन्य सदस्य कभी एक ओर कभी दूसरी ओर तथा कभी इससे भिन्न मार्ग ही अपनाते थे। अन्त में जो संविधान स्वीकार किया गया उसमें एक ही दल की इन विचारधाराओं का प्रतिनिधित्व है।

विधान-परिषद् में साधारणतः भावना इस पक्ष में थी कि कोई भी भारतीय भाषा राष्ट्रभाषा के पद पर आरूढ़ हो परन्तु जो सदस्यगण भाषा-समस्या पर विचार कर रहे थे, उन्हें कई कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। वे आपस में एक-दूसरे के विचारों से सहमत नहीं हुए। धीरे-धीरे अन्तर्विरोध की भावना के कारण फूट पड़ने लगी। हिन्दी वाले लोग

---

४. संविधान की भाषा व्यवस्था (निवेश), धारा ३४३–३५१

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

लगातार तर्कों के द्वारा अपनी माँग पर डटे रहे। इस वातावरण के कारण परिषद् के सदस्यों ने अंग्रेज़ी के प्रयोग को एक अधिनियम के माध्यम से बढ़ा दिया और यह प्रावधान रखा कि यदि यह असफल रहा तो सन् १९६५ ई. में अंग्रेज़ी अपने आप हट जावेगी, विधान-परिषद् में हिन्दी वालों ने घोषणा की कि देश में यदि एक मत की भी अधिकता उनके पक्ष में है तो देश में हिन्दी को राजभाषा के रूप में कार्यान्वित की जाना चाहिये। इसको रोकने के लिये विधान-परिषद् की प्रारूप-समिति ने एक लम्बा समझौता तैयार किया। उन्होंने अन्ततः भाषा-व्यवस्था के मामले में अपनी मौन स्वीकृति दी। वे इससे प्रसन्न नहीं थे परन्तु उन्हें विश्वास था कि वे किसी योग्य हल पर पहुँचकर समझौता करने में समर्थ हो सकेंगे। विधान-परिषद् की प्रारूप-समिति के सदस्य इस बात से डरते थे कि अधिकांश सदस्य इसे स्वीकार नहीं करेंगे। हिन्दी वाले अंग्रेज़ी के उपयोग के सम्बन्ध में प्रतिस्पर्धात्मक दृष्टिकोण के पक्ष में नहीं थे। वे चाहते थे कि स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् हिन्दी राष्ट्रभाषा एवं राजभाषा बन जाय और मध्यम-वर्ग के माध्यम से बिना प्रतिस्पर्धा के भारत की एकता के लिए हिन्दी को अपनाया जाना चाहिए लेकिन प्रारूप-समिति के अधिकाँश सदस्य चाहते थे कि हिन्दी या अंग्रेज़ी में से किसी एक को चुना जावे। काँग्रेस दल के अधिकाँश सदस्य गाँधीजी की नीति से सहमत थे। ये हिन्दुस्तानी[५] को देश की राष्ट्रभाषा और राजभाषा बनाना चाहते थे।

---

५ 'हिन्दुस्तानी' नाम की व्युत्पत्ति स्पष्ट है। 'हिन्दु' (दे. हिन्दी)+फ़ारसी+'स्तान' (सं. स्थान)+ई (—की, वाली, संबद्ध)। किन्तु, यह प्रश्न विवादास्पद है कि इसका प्रयोग कब हुआ। कुछ लोगों का विचार है कि यह नाम यूरोपवालों, विशेषतः अंग्रेज़ों का दिया है किन्तु वस्तुतः यह नाम और भी पुराना है और 'हिन्दी' की तरह ही इसका भी सम्बन्ध मुसलमानों से है। मुझे लगता है कि बाबर के पहले से यह नाम चला आ रहा है। आगे चलकर फ़रिश्ता (१७वीं सदी), टेरी (१६१६), वजही (१६३५), अमादुज्जी (१७०४) तथा कैटलियर (१७१५) आदि अनेक लेखकों ने इस नाम का प्रयोग किया। 'हिन्दुस्तानी' नाम आज की तरह, पहले भी विशेषण (हिन्दुस्तान का) एवं संज्ञा (निवासी, भाषा) दोनों आर्थों में प्रयुक्त होता था। यों, अपने मूल में यह शब्द विशेषण है। भाषा के अर्थ में 'हिन्दुस्तानी'—का प्राचीन प्रयोग 'हिन्दी' के अर्थ में हुआ है। बाद में १८वीं सदी के अन्त में यह मुसलमानों (केवल दक्षिण के) या (उत्तर-दक्षिण दोनों के)—की भाषा के अर्थ में प्रयुक्त होने लगा। इस रूप में यह 'उर्दू' का पर्याय बन गया। १९वीं सदी में यह बात स्पष्टता से दिखाई पड़ती है। 'गार्सां द तासी' के इतिहास में भी इसका यही अर्थ है। २०वीं सदी के तीसरे दशक में हिन्दू-मुस्लिम संघर्ष के परिणामस्वरूप, उर्दू-हिन्दी के विवाद से बचने के लिये 'हिन्दुस्तानी'—को एक नये अर्थ से गर्भित किया गया। गांधीजी का इसमें प्रमुख हाथ था। इस प्रकार हिन्दुस्तानी, हिन्दी-उर्दू के बीच की भाषा बन गयी जिसमें दोनों भाषाओं की सामान्य शब्दावली थी और कठिन फ़ारसी एवं संस्कृत शब्दों के लिए जिसमें कोई स्थान नहीं था। समय-समय पर हिन्दुस्तानी नाम का प्रयोग 'दक्खिनी' या 'कौरवी' के लिए हुआ है। आज सरल कथा-साहित्य की हिन्दी या उर्दू वस्तुतः हिन्दुस्तानी के बहुत निकट है—भाषाविज्ञान कोश : डॉ. भोलानाथ तिवारी, प्रथम संस्करण, माघ संवत् २०२०; पृ. ७४१

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

०२.०५ राष्ट्रभाषा-व्यवस्था-परिषद् के निर्णय का प्रभाव :—

नियमों को वनाने वाली समिति ने व्यवस्था-परिषद् में भाषा का प्रश्न रखा। इस पर १४ दिसम्बर, १९४६ ई. को डॉ. राजेन्दप्रसाद के संयोजकत्व में बहुमत से निर्णय लिया गया कि—सदन का कार्य हिन्दुस्तानी (हिन्दी या उर्दू) या अँग्रेज़ी में होगा अथवा राष्ट्रपति की अनुमति से सदस्य अपनी मातृभाषा में सदन में बोल सकते हैं परन्तु सदन का विवरण हिन्दुस्तानी (हिन्दी या उर्दू) या अँग्रेज़ी में रखा जावेगा।[६] काकेनाडा कांग्रेस कमेटी ने सन् १९२३ में दल के संविधान में एक संशोधन किया था उसके कार्यविधि के वार्षिक विवरण के अनुसार अधिक-से-अधिक हिन्दुस्तानी भाषा का प्रयोग प्रारम्भ किया गया। इससे यह सिद्ध हुआ कि अंग्रेज़ी के प्रयोग को हटाना कठिन है। दल के संविधान ने प्रान्तीय भाषा के साथ अँग्रेज़ी के प्रयोग को भी बनाये रखा।[७] संविधान के नियमों के संशोधन में व्यवस्था थी कि विधान-सभा में सब संशोधन एवं प्रार्थनाएँ अँग्रेज़ी में प्रस्तुत की जावें तथा सदन में अँग्रेज़ी में वोला जावे, चाहे सदस्य अँग्रेज़ी जानता हो या नहीं। अपने संशोधन का बचाव करते हुए और गोविन्ददास के भाषण का जवाब देते हुए संथानम ने निरूपित किया कि कालान्तर में समस्त भारत हिन्दुस्तानी सीख लेगा लेकिन इसको पारिभाषिक शब्दों में प्रयोग करने की क्षमता पर शंका प्रकट की। संथानम के आशय को मानों प्रबल करते हुए यह प्रार्थना की कि गोविन्ददास का जो भाषण हिन्दी में दिया गया था उनके लिये अँग्रेज़ी में अनुवादित किया जाय। डॉ. राजेन्द्रप्रसाद इससे सहमत हो गये कि भाषण के सारांश का अनुवाद किया जाय क्योंकि आयंगर इतने बूढ़े थे कि वे हिन्दुस्तानी नहीं सीख सकते थे। अंतिम प्रस्ताव के अन्त में श्री मुन्शी ने कहा कि किसी को शंका नहीं है कि अँग्रेज़ी को पूर्णरूपेण निरस्त नहीं किया जा सकता। भाषा से सम्बन्धित नियम को वगैर संशोधन के प्रचण्ड वहुमत से पारित कर दिया। इस प्रकार व्यवस्था-परिषद् के निर्णयों को दो भागों में विभक्त किया जा सकता है—(१) हिन्दुस्तानी से सम्बन्धित निर्णय और (२) हिन्दी-अँग्रेज़ी भाषाओं से सम्बन्धित निर्णय।

तीन माह के पश्चात् भाषा के प्रश्न पर पुनः वहस हुई। इस बार मूलभूत-अधिकार उपसमिति में अधिकार के अन्तर्गत एक धारा भाषा में जोड़ने के लिये मार्च १९४७ ई. के अन्तिम सप्ताह में दो बैठकों में सदस्यों ने बहस की, देश की विचित्र परिस्थिति अर्थात् प्रमुख रूप से हिन्दू-मुस्लिम झगड़े के कारण उन्होंने भाषा की धारा के पक्ष में निर्णय लिया। धारा इस प्रकार है—'हिन्दुस्तानी जो कि नागरिकों की स्वेच्छा से लिखी जायगी (देवनागरी, संस्कृत या फ़ारसी-लिपि) राष्ट्रभाषा के रूप में संघ की प्रथम सरकारी कार्य की भाषा होगी। अँग्रेज़ी उस समय तक द्वितीय भाषा होगी जब तक के लिये संघ कानून से तय करें।[८]

---

६. दि इण्डियन कांस्टिट्यूशन : आस्टिन—पृ. २७४

७. वही वही —पृ. २७१

८. वही वही —पृ. २७७

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

देश पर प्रभाव :-

व्यवस्था-परिषद् के इन सभी निर्णयों में किसी-न-किसी रूप में 'हिन्दुस्तानी' भाषा का पक्ष लिया गया। हमारे देश में राजभाषा के साथ हिन्दुस्तानी की वकालात करना एक दुर्भाग्य था। इसका हमारे देश पर अधिक प्रभाव पड़ा। सेठ गोविन्ददास ने सदन में बोलते हुए कहा कि सदन की भाषा हिन्दुस्तानी है परन्तु जो कोई भी इस भाषा में बोलने और उपयोग करने में समर्थ नहीं है वह अपनी स्वयं की मातृभाषा या अँग्रेज़ी में बोले। इस निर्णय से स्पष्ट था कि परिषद् का कोई भी सदस्य हिन्दुस्तानी में नहीं बोलेगा। इससे स्पष्ट था कि सदस्य अँग्रेज़ी में बोलेंगे। जिससे अँग्रेज़ी समर्थकों का प्रभाव और संख्या बढ़ जावेगी। यह अनुमान भी था कि सदस्य अपनी मातृभाषा में नहीं बोलेगा क्योंकि यदि बोलता तो अन्य सदस्य समझ नहीं पाते या फिर दुभाषिये कि आवश्यकता होती जो सम्भव नहीं था। अतः निष्कर्ष रूप से सदस्य अँग्रेज़ी की शरण में जाएँगे ही। हिन्दी बोलना और समझना प्रत्येक सदस्य को आता हो यह आवश्यक नहीं है क्योंकि व्यवस्था-परिषद् में देश के विभिन्न प्रान्तों के और विभिन्न भाषा-भाषी सदस्य थे। इस प्रकार हिन्दुस्तानी भाषा को परिषद् में बोलने या विवरण रखने से कोई महत्व नहीं निकलेगा। इसके साथ अँग्रेज़ी के होने से अँग्रेज़ी का महत्व, प्रचार व प्रसार बढ़ेगा। इससे यह सिद्ध होता है कि परिषद् के सदस्य हिन्दुस्तानी के पक्ष में नहीं हैं। फिर भी देश की विभिन्न परिषद्, जैसे प्रान्तीय और कांग्रेस कमेटी इत्यादि में जबरन इस भाषा को महत्व दिया गया और लादा गया।

आर. बी. धुलेकर का संशोधन :-

१४ जुलाई, १९४७ ई. के चौथे परिषद् सत्र के प्रारम्भ में एक नया पहलू भाषा के विरोध में उभरा। बैठक विभाजन की छाया में हुई, (तात्पर्य यह कि देश का विभाजन हो चुका था) परिषद् के हिन्दी वाले सदस्यों ने हिन्दुस्तानी पर, अँग्रेज़ी पर और प्रान्तीय भाषाओं पर कठोर तर्क किए। सत्र के प्रथम दिल अधिकार-पत्र पर पाँच संशोधन आये कि हिन्दी को हिन्दुस्तानी से एक वैकल्पिक भाषा के रूप में प्रान्तीय विधान-मण्डलों से बदला जाये।[९] इसी दिन आर. वी. धुलेकर ने अपना संशोधन रखा जिसमें उन्होंने पूर्णतः हिन्दी का समर्थन किया। श्री आर. वी. धुलेकर केबिनेट-मिशन-योजना के साधारण सदस्य थे। ये कांग्रेस के युक्तप्रान्त के सदस्य थे।[१०] उनका संशोधन इस प्रकार था—

---

९. संशोधन ९२–९५ और ९८, १५ जुलाई, १९४७ : ये संशोधन रखे—बालकृष्ण शर्मा, पुरुषोत्तमदास टण्डन, एच. वी. पाटस्कर, डी. वी. खटान जो कि बाद में प्रारूप-समिति के सदस्य बन गये थे और एच. जे. खाण्डेकर। दूसरों ने शक्तिशाली प्रस्ताव रखे जो कि उप-हिन्दी संशोधन थे, इस समय गुप्तनाथसिंग, आर. वी. धुलेकर और एस. एल. सक्सेना प्रस्ताव रखने वालों में से थे—दि इण्डियन कांस्टिट्यूशन—आस्टिन, पृ. २७७ (अँग्रेज़ी)।

१०. दि इण्डियन कांस्टिट्यूशन—आस्टिन, एपेन्डिक्स—२, पृ. ३४८

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

'यह बात संसद पर ही छोड़ दी जाय कि देवनागरी-हिन्दी को राजकाज की भाषा के रूप में कब से प्रयुक्त किया जाय। उन्होंने कहा कि श्री गोपालस्वामी आयंगर ने इसके लिये १५ वर्ष की जो अवधि सुझाई हैं, वह बहुत लम्बी है। मैं देवनागराक्षरों और देवनागरांकों सहित हिन्दी को अविशोषित और अविकल रूप से स्वीकार करने का पक्षपाती हूँ। मैं एक क्षण के लिए भी किसी अन्य भाषा को देश की सरकारी भाषा नहीं मान सकता।'[11] श्री धुलेकर ने कहा कि हिन्दी तो देश की राष्ट्रभाषा है ही। जब कुछ सदस्यों ने इसका विरोध किया तो उन्होंने कहा कि हिन्दी राष्ट्रभाषा है और संस्कृत अन्तर्राष्ट्रीय भाषा है। हिन्दी देश पर लादी नहीं जा रही है। उसे राजभाषा स्वीकृत करना सदियों से चल रही एक ऐतिहासिक प्रक्रिया की परिणति मात्र है। जो अब भी अँग्रेज़ी से चिपटे रहना चाहते हैं, उन पर लॉर्ड मैकॉले का प्रेत हँसेगा। इस देश की आज़ादी अँग्रेज़ी के आधार पर नहीं प्राप्त हुई बल्कि इसलिए मिली कि देश में ऐसे लोग भी थे जो अँग्रेज़ी से विष की तरह घृणा करते थे। मेरा ही उदाहरण लीजिए। यदि मैं अँग्रेज़ी में वकालात करने को तैयार होता तो आज मेरी वकालात धड़ल्ले से चल रही होती, आज भी मैं चाहूँ तो फेडरल कोर्ट में अँग्रेज़ी में वकालात कर सकता हूँ किन्तु मैं अँग्रेज़ी में वकालात करने के बजाय गरीब रहना पसन्द करता हूँ।

श्री धुलेकर ने मौलाना हिफ़ाज़ुर्रहमान की 'हिन्दुस्तानी' को राष्ट्रभाषा बनाने की माँग का विरोध किया था।

कांग्रेस कमेटी ने अपनी कार्यवाहियों के लिए हिन्दुस्तानी को सरकारी भाषा (राजभाषा) बनाया। लगता है यह काँग्रेस दल का एक छोटे रूप में मात्र प्रयोग था परन्तु क्या यह प्रयोग सफल नहीं रहा क्योंकि यदि काँग्रेस दल ने हिन्दुस्तानी को राजभाषा माना था तो उसे इसके परिणाम-स्वरूप कार्यरूप में भी परिणित करना था परन्तु यह कार्यरूप में राजभाषा के रूप में काँग्रेस दल में नहीं देखी गई। इससे स्पष्ट हो जाता है कि जनता हिन्दुस्तानी को नहीं चाहती थी। इसके दूसरे पक्ष पर जब हम विचार करते हैं तो पाते हैं कि काँग्रेस दल के कार्यकर्त्ताओं ने इसे राजभाषा के रूप में मान्यता देकर महत्व नहीं दिया। इससे परिणाम निकला कि जनता पर इस भाषा का प्रभाव नहीं है। इसका प्रभाव तो काँग्रेस के बड़े-बड़े नेताओं तक ही सीमित है।

इस तरह काँग्रेस दल ने हिन्दुस्तानी और अँग्रेज़ी भाषा को विभिन्न प्रयोगों की अवस्थाओं से गुज़ारा। उन्होंने हिन्दुस्तानी को परिषदों में बोलने, विवरण रखने, काँग्रेस के संविधान की राजभाषा के रूप में अधिक-से-अधिक प्रयोग करने और राष्ट्रभाषा के रूप में अँग्रेज़ी के साथ रखकर देश की जनता पर उसके प्रभाव को देखा परन्तु प्रत्येक प्रयोग में काँग्रेस दल असफल रहा। सन् १९३७ में राजगोपालाचारी ने जब वे मद्रास के प्रधानमन्त्री थे और पी. सुब्बारायन उनके शिक्षा-मन्त्री थे; उन्होंने हिन्दुस्तानी को एक अनिवार्य विषय के रूप में हाईस्कूल के प्रथम तीन हिस्सों में चलाया। उसकी तीव्र प्रतिक्रिया हुई। कई सप्ताहों के उपरान्त सुब्बारायन ने सदन छोड़ दिया यह चिल्लाते हुए कि 'हिन्दी

---

११. राष्ट्रभाषा का इतिहास : किशोरीदास वाजपेयी, पृ. १६०-१६१

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

मर गई और तमिल जियेगा' या सुब्बारायन मरेगा और राजगोपालाचारी मरेगा।[१२] इससे मद्रास में 'हिन्दुस्तानी' के प्रति जनता का नकारात्मक उत्तर मिल गया। उसकी असफलताओं को एक वड़ा धक्का उस समय लगा जब देश का विभाजन हुआ, मुस्लिम अलग हुए। उन्होंने उर्दू को पाकिस्तान की राजभाषा बनाया। उसी समय गाँधी ने भी इससे असहमति व्यक्त की।[१३]

इसी समय ६ व ७ अगस्त, १९४९ ई. को राष्ट्रभाषा-व्यवस्था-परिषद् का महत्वपूर्ण अधिवेशन दिल्ली में हुआ, जिसमें असमी, वंगाली, उड़िया, तमिल, तेलुगु, मलयालम्, कन्नड़, मराठी, गुजराती, पंजावी, कश्मीरी, संस्कृत, उर्दू आदि प्रमुख भारतीय भाषाओं के मान्य विद्वानों ने भाग लिया। सम्मेलन में निर्णय लिया गया कि राष्ट्रभाषा पद के लिए हिन्दी का और राष्ट्रलिपि पद के लिए नागरी का समर्थन किया जाय।[१४]

इससे प्रभावित होकर मौलाना आज़ाद ने भी १० अगस्त, १९४९ को राष्ट्रलिपि के लिए एकमात्र नागरी को मान्य घोषित कर दिया। १५ अगस्त के स्वातन्त्र्य समारोह पर प्रधानमन्त्री पं. जवाहरलाल नेहरू और राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्रप्रसाद ने भी नागरी का समर्थन किया। मौलाना आज़ाद ने स्पष्ट कह दिया कि देश के वटवारे के साथ उर्दू का दावा समाप्त हो चुका है किन्तु हिन्दी का समर्थन न तो मौलाना आज़ाद ने किया, न नेहरूजी ने और न डॉ. राजेन्द्रप्रसाद ने किन्तु इन लोगों ने हिन्दुस्तानी भाषा का नाम लेना वन्द कर दिया। इससे संविधान निर्माण करने वाली प्रारूप समिति में हिन्दुस्तानी भाषा और उर्दू-लिपि को लेकर जो बहस और गत्यावरोध उत्पन्न हो गये थे, वे कुछ अंशों में समाप्त हो गये। काँग्रेस दल धीरे-धीरे हिन्दी का समर्थन करने लगा।

संविधान निर्माण में प्रभाव :—

संविधान निर्माण के समय प्रारूप समिति के समक्ष 'हिन्दुस्तानी' देश विभाजन के पूर्व देश की एकता के लिए आवश्यक भाषा के रूप में अपना अस्तित्व बनाये रही। इसे काँग्रेस दल के वरिष्ठ नेताओं का सम्बल विशेष रूप से प्राप्त था। उन्होंने इस भाषा के महत्व को आवश्यक ही नहीं अनिवार्य बताया परन्तु इस भाषा के दुर्भाग्य से देश का विभाजन हो गया और इस भाषा की आवश्यकता के लिये दिये गये सभी तर्क बेकार हो गये। इससे काँग्रेस दल को झटका लगा। गाँधी ने तो विभाजन के उपरान्त स्पष्ट रूप से इस भाषा से अपना सम्बन्ध तोड़ लिया परन्तु काँग्रेस दल के अन्य नेता अभी भी इसके मोह से विमुक्त नहीं हो पाये। उसी समय देश में अफगान शिक्षा–विदों का एक दल भारत भ्रमण के लिये आया। उसने संस्कृत भाषा के महत्व को समझाया तथा अपने देश के लिये संस्कृत

---

१२. दि इण्डियन कॉंस्टिट्यूशन : आस्टिम–पृ. २७४.

१३. हरिजन, १० अगस्त, १९४७ ई., ३१ जुलाई के गाँधी के विचार, पृ. १७०.

१४. राष्ट्रभाषा का इतिहास : किशोरीदास वाजपेई : पृ. १२२.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

की उपयोगिता को समझाया।[१५] जिसके फलस्वरूप कांग्रेस दल के वरिष्ठ नेता नेहरू और आज़ाद की आँखें खुलीं परन्तु फिर भी गाँधी के समान वे अपने आपको स्पष्ट रूप से हिन्दुस्तानी से मुक्त न करा सके। इस प्रकार संविधान में हिन्दुस्तानी का प्रभाव प्रारूप समिति और व्यवस्था-परिषद् से समाप्त हो गया।

व्यवस्था-परिषद् में मुख्य रूप से हिन्दुस्तानी-हिन्दी और अँग्रेज़ी भाषा के त्रिकोण के मध्य राष्ट्रभाषा और राजभाषा के लिए लम्बी-लम्बी बहसें हुई तथा राजभाषा का प्रश्न एक लम्बे समय तक इन भाषाओं में से किसे चुने के लिये उलझा रहा। अंत में भाषा-विवाद व्यवस्था-परिषद् में हिन्दी और अँग्रेज़ी को स्वीकार करके समाप्त समझा गया। यदि व्यवस्था-परिषद् में हिन्दुस्तानी भाषा का विवाद नहीं होता तो शायद समय के और भी पूर्व स्पष्ट रूप से हिन्दी या अँग्रेज़ी के मध्य राष्ट्रभाषा और राजभाषा का चुनाव हो जाता।

व्यवस्था-परिषद का निर्णय-हिन्दी और अँगेज़ी के मध्य :-

१२ सितम्बर, १९४९ ई. को 'मुंशी-आयँगार-मसौदा' विचार-विमर्श के लिये व्यवस्था-परिषद् में रखा गया। अन्त में इस मसौदे को व्यवस्था-परिषद् ने स्वीकार कर लिया तथा इसके अनुसार २६ नवम्बर, १९४९ ई. को संविधान में भाषा के प्रश्न को स्वीकार किया गया।[१६]

देश पर प्रभाव :-

इस निर्णय के पूर्व व्यवस्था-परिषद् में लम्बी बहस हुई। इसमें २६ अगस्त की बैठक में संख्या के मामले को लेकर तीव्र वाद-विवाद हुआ, जो तीन घण्टे तक चलता रहा। इसमें रोमन-अँक और नागरी को लेकर विवाद हुआ। अन्त में नागरी-अँकों पर समझौता हुआ। इसके अनुसार यदि राष्ट्रपति चाहेंगे और हिन्दी समर्थं हुई तो १५ वर्ष के उपरान्त अँग्रेज़ी को हटाकर हिन्दी को एक मात्र राजभाषा बना दिया जावेगा। इस पर देशव्यापी प्रतिक्रिया हुई। हिन्दी के सभी विद्वान् इस अवधि को कम करना चाहते थे। कुछ इसे बिलकुल हटा देना चाहते थे। दिल्ली की एक महिला सन्यासी ने आमरण अनशन किया। उसका मत था कि हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार कर लेना चाहिए और उसका नामकरण भारतीय कर देना चाहिए। अन्य लोगों के साथ नेहरू उससे मिले और उसने १२ अगस्त को अपना अनशन यह कहते हुए तोड़ा कि नेहरू तथा अन्य लोगों ने उसे आश्वासन दिया है कि हिन्दी को स्वीकार कर लिया जावेगा। गृहमन्त्री गोविन्दवल्लभ पंत ने सुझाया—'यह बात अहिन्दी लोगों पर छोड़ देनी चाहिए कि वे संघ के कार्य के लिए हिन्दी के द्वारा अँग्रेज़ी को बदलने के लिए कारण बताते हुए समय सीमा निर्धारित करें।'[१७]

---

१५. वही, वही, पृ. १०७-१०८.

१६. संविधान की धारा ३५१.

१७. हिन्दू : ११ अगस्त; १९४९ ई.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

संविधान निर्माण पर प्रभाव :-

इसका प्रभाव संविधान निर्माण करने वाली प्रारूप समिति पर हुआ। हिन्दी वाले कुछ सदस्यों ने तो काँग्रेस दल से अपने-अपने त्याग-पत्र भी दे दिये थे, वाद में वापस लिये। अन्ततः इसका परिणाम यह निकला कि देश के संविधान में अँग्रेज़ी को सहभाषा के रूप में तथा हिन्दी को सशर्त राजभाषा स्वीकार कर लिया गया।

०२.०६.२६ अगस्त, १९४९ की विधान-परिषद् की काँग्रेस पार्टी में राजभाषा का प्रश्न :—

१६ अगस्त की बैठक में अँकों का मामला अनिर्णित ही रहा। इसके पूर्व दल के सदस्यों को नेहरूजी रोमन-अँकों के विषय में कई वार समझा चुके थे। दल में टण्डनजी ने तथा अन्य राष्ट्रवादियों ने रोमन-अँकों का प्रबल विरोध किया। २५ अगस्त, १९४९ की बैठक में विस्तृत चर्चा हो चुकी थी और काँग्रेस के नेहरू-दल को आशा थी कि रोमन-अँक ग्रहण करने वालों का बहुमत होगा।' विधान-परिषद् के उद्‌घाटन के उपरान्त एक भाषा-आयोग की नियुक्ति की जो कि इस प्रकार के मामलों की ओर हिन्दी के उपयोग की प्रगति का अध्ययन करेगा और संख्याओं का चुनाव भी करेगा इत्यादि।[१८] सेठ गोविन्ददास ने कहा कि इस विषय में दल जो भी निर्णय करे उससे हमें बँधना नहीं चाहिए और सदस्यों को यह अधिकार रहना चाहिए की विधान-परिषद् में वे खुलकर अपनी अन्तरात्मा के अनुसार मत दे सकें।

२६ अगस्त को विधान-परिषद् की बैठक का विवाद संख्या के मामले को लेकर कुछ समय के लिये प्रचण्ड हो गया और यह प्रचण्डता तीन घण्टे तक चलती रही। उस दिन सीतारामैय्या अध्यक्ष थे और बैठक का संचालन कर रहे थे। अँततः मामला मत पर आ गया। मतदान इस बात के लिये हुआ कि मसौदे से अँक वाली धारा निकाल दी जाय जिसमें रोमन अँक ग्रहण करने को कहा गया है। मतदान हाथ उठाकर किया गया जिसमें ७३ मत रोमन अँक (अन्तर्राष्ट्रीय अँक) के पक्ष में और ७४ मत नागरी-अँकों के पक्ष में आये। टण्डन इस मतदान से सन्तुष्ट नहीं हुए। उन्होंने विभाजन की माँग की। हिन्दी वालों को विभाजन के लिये आमँत्रित किया गया। मतों को गिनने पर ७४-७४ मत बराबर रहे। इस समय हिन्दी वालों ने यह आरोप लगाया कि पहले जब मतों को गिना गया था उस समय मत ७५ थे परन्तु उसका एक सदस्य हाथ उठाकर मत देने के उपरान्त संसद भवन छोड़कर चला गया।[१९] इस प्रकार ७५ मत हिन्दी पक्ष को मिले और ७४ रोमन पक्ष को। इस पर नेहरू नाराज़ हुए तथा विधान-परिषद् में अपना पक्ष खुलकर रखने को कहा। अँकों के विषय में हिन्दू पत्र के सम्पादकीय में-'यह मत व्यक्त किया गया जिसके द्वारा संख्याओं के विषय में व्यर्थ के विवाद की निन्दा की गई और वहुधा प्रयुक्त दलील

१८. हिन्दू : २३ अगस्त, १९४९,

१९. हिन्दू और हिन्दुस्तान टाइम्स : २७ अगस्त, १९४९ में छपा समाचार

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

उद्धृत की गई कि अन्तर्राष्ट्रीय अँकों का उद्गम भारतीय ही हैं और उन्हें संघीय सांख्यिकीय, वाणिज्य, व्यापार और विज्ञान की दक्षता बनाये रखने के लिये स्वीकार करना चाहिये'।[२०]

इस बैठक का विवरण 'दैनिक भारत' में छपा है कि 'अपना पूरा ज़ोर लगाने पर भी प्रधानमंत्री पं. जवाहरलाल नेहरू विधान-परिषद् के कांग्रेस दल से नागरी अँकों के मुकाबले अरबी-अँक जिन्हें पहिले मसौदे में अरबी, दूसरे में अन्तर्राष्ट्रीय और तीसरे मसौदे में भारतीय अँकों का अन्तर्राष्ट्रीय रूप बताया गया था—मनवाने में सफल न हो सके। पिछले कई दिनों से अरबी-अँकों की विशेषता पर कांग्रेस दल की बैठकों में प्रधानमंत्री, उनके समर्थक तथा मद्रासी बन्धु तीव्रतम भाषण दे रहे थे। इसके साथ वे यह भी भविष्यवाणी कर रहे थे कि अँकों का यूरोप और अमेरिका में प्रचलित यह अन्तर्राष्ट्रीय स्वरूप अपने देश में स्वीकार न किये जाने से भारत का औद्योगिकरण बन्द हो जायेगा और जल, थल तथा नभ सेनाओं का काम ठप्प हो जायेगा।[२१]

नेहरू एवं आज़ाद ने संशोधन रखने वाले सदस्यों का खुले रूप से नेतृत्व किया। सरदार पटेल यद्यपि भाषा-विवाद में दिलचस्पी नहीं रखते थे तब भी अपनी बीमारी की स्थिति में बम्बई से इस विवाद के समझौते के लिये अपने प्रभाव का उपयोग करके प्रयत्न करते रहे। उन्होंने पं. नेहरू को पत्र लिखा जिसे उन्होंने दल की बैठक में पढ़कर सुनाया—'१५ वर्ष का समय हिन्दी के परिवर्तन के लिये पर्याप्त है जबकि हिन्दी, अँग्रेज़ी के अतिरिक्त भाषा के रूप में अधिकृत हो जावेगी। प्रशासनिक कार्य में गड़बड़ी न हो इसकी सावधानी रखी जावे। पटेल सामान्य रूप से टण्डनजी की स्थिति से सहानुभूति रखते थे, दक्षिण के हिन्दी-विरोध पर परेशान थे परन्तु वे हमारे लिये गाँधीवादी थे। इस कारण कि वे संस्कृत प्रधान हिन्दी के विरोधी थे। व्यावहारिक मानव के नाते वे केवल इस विवाद का हल चाहते थे इसलिए उन्होंने 'मुंशी-आयँगार मसौदे' पर अपनी स्वीकृति प्रदान की'।[२२]

टण्डनजी के नेतृत्व में हिन्दी वाले अन्तर्राष्ट्रीय अँकों को स्वीकारने को मना करते रहे और अँग्रेज़ी के १५ वर्ष से अधिक समय के उपयोग करने को भी मना करते रहे। हिन्दी समर्थक अन्य सदस्य इस बात के लिये भी दबाव डालते रहे कि मध्यावधि कम की जाय और हिन्दी की प्रगतिशीलता की वैकल्पिकता के साथ—ही—साथ हिन्दी का उपयोग प्रशासन में भी हो। कई गुजराती, मराठी, बंगाली और बिहारी सदस्य हिन्दी वालों की ओर से अँकों के प्रश्न पर उग्रता के साथ दबाव डालते रहे, इनके साथ दक्षिण भारत के सदस्य भी आ गये थे।

---

२०. दि हिन्दू : ३१ अगस्त, १९४९ : सम्पादकीय में छपा समाचार।

२१. राष्ट्रभाषा का इतिहास : किशोरीदास वाजपेयी, पृ. १३५

२२. दि इण्डियन कॉन्स्टिट्यूशन : आस्टिन—पृ. २९५।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

२६ अगस्त, १९४९ ई. की विधान-परिषद् की कांग्रेस दल की बैठक में मुंशी आयंगार मसौदे की प्रत्येक धारा पर वाद-विवाद होता रहा। पहले हिन्दी और अँग्रेज़ी को साथ-साथ रखने के लिये, फिर १५ वर्ष की समयावधि और इस समय हिन्दी की प्रगतिशीलता तथा उसके लिए आयोग की नियुक्ति पर विचार हुआ। साथ ही नागरी अँक, रोमन-अँक, प्रशासन और न्यायालयों में हिन्दी पर विचार हुआ। इसके परिणाम-स्वरूप इन सबका राजभाषा के सन्दर्भ में प्रभाव पड़ा। इसका विवेचन विधान-परिषद् की आगे होने वाली बैठकों में हुआ। अगली सब बैठकों में इन सबके प्रभाव की सम्भावनाओं पर विधान परिषद् में खुली बहस हुई। २ अक्टूबर को अम्बेडकर ने एक संशोधन रखा। यह समझौता हिन्दी उग्रवादियों को छोड़कर सभी को मान्य था। हिन्दी उग्रवादियों ने २ सप्ताह के उपरान्त इसका विरोध किया। कुछ परिवर्तनों को छोड़कर यह मसौदा संविधान के १७ वें भाग से मेल खाता था। मसौदे में यह व्यवस्था थी कि संघ की सरकारी कामकाज की भाषा नागरी लिपि और हिन्दी में होगी परन्तु अन्तर्राष्ट्रीय अँकों का उपयोग किया जावेगा। इसके अतिरिक्त अँग्रेज़ी का उपयोग १५ वर्षों तक संघ के कार्यों के लिये किया जावेगा तथा संसद इस अवधि को बढ़ा सकती है। राष्ट्रपति अँग्रेज़ी और अन्तर्राष्ट्रीय अंकों के अतिरिक्त हिन्दी एवं नागरी-अँकों के उपयोग के आदेश दे सकता है। इसमें प्रावधान ह कि उच्च न्यायालय, उच्चतम-न्यायालय, प्रस्तावों के अधिकृत मसौदे, कानून, अध्यादेशों की भाषा अँग्रेज़ी होगी तथा इस प्रावधान में परिवर्तन करने सम्बन्धी कोई भी बिल संसद में बगैर राष्ट्रपति की अनुमति के न रखा जावेगा। संघ का यह कर्त्तव्य होगा कि वह हिन्दी प्रचार-प्रसार को प्रोत्साहित करे जिससे वह 'भारत की एकीकृत संस्कृति' की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके तथा हिन्दुस्तानी एवं भारत की अन्य भाषाओं के स्वरूप, शैली और भावों को आत्मसात करके समृद्ध बने। प्रमुख रूप से संस्कृत एवं अन्य भाषाओं को सम्मिलित किया गया पर अँग्रेज़ी को नहीं। मसौदे में कहा गया कि राज्य में किसी भी भाषा या हिन्दी को अपना सकते हैं। यदि और कोई प्रावधान न किया जावे तो अँग्रेज़ी प्रयुक्त की जावेगी। संघ के उपयोग में संघ राज्य-अन्तर्राज्यीय पत्र-व्यवहार की भाषा अँग्रेज़ी होगी परन्तु हिन्दी-भाषी प्रान्त हिन्दी का उपयोग कर सकते हैं। मसौदे में यह व्यवस्था है कि सन् १९५५ और १९६० में एक भाषा-आयोग की नियुक्ति की अपेक्षा करता है जो हिन्दी की प्रगति की जाँच करेगा। अन्य बातों के अलावा राज्य-सेवा में अहिन्दी-भाषी क्षेत्रों के उचित दावों और हितों को ध्यान में रखते हुए अपनी संस्तुतियाँ प्रस्तुत करेगा। मुंशी-आयँगर मसौदे की मूलभूत बातें पूर्व के सप्ताहों और और वर्षों के विचार-विमर्श से स्पष्ट है। समझौते के प्रमुख दो मुद्दे हैं जो कि क्षेत्रीयभाषियों के हित में सम्मिलित किये गये हैं। विशेष रूप से टिप्पणी योग्य हैं-वे हैं-संविधान में क्षेत्रीय भाषाओं का सूचीबद्ध करना तथा लोक सेवा आयोग में अहिन्दी-भाषियों के हितों का उल्लेख है। सेवाएँ भारत के मध्यम एवं उच्च वर्ग के लिये सम्माननीय सेवा का सर्वाधिक माध्यम जुटाती हैं। वे देश के शिक्षित युवकों पर 'एक आनुपातिक खिंचाव' डालती है। ऐसा कोई कार्य जो कि बंगाली या तमिल भाषियों के भविष्य को विपरीत रूप से प्रभावित करने वाला होगा, विरोध किया जावेगा। हिन्दी वाले शीघ्रता से सेवाओं के लिये अँग्रेज़ी को हिन्दी से पुर्नस्थापित करने

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

का बार-बार दावा किया करते हैं। यद्यपि हिन्दी-भाषियों को अनिवार्य रूप से एक क्षेत्रीय भाषा सीखना चाहिये, जिससे हिन्दी समर्थक सहमत थे। जब तक विश्वविद्यालयों में अँग्रेज़ी-शिक्षा का माध्यम रहेगी तब तक यह अपेक्षा करना कि अहिन्दी स्नातक हिन्दी पर हिन्दी-भाषी के समान सक्षम हो जावें अवास्तविक है। तदनुसार अहिन्दीभाषियों के स्वत्वों को सुरक्षित रखने का संविधान में प्रावधान रखा गया।

२ सितम्बर, १९४९ को पट्टाभिसीतारमैय्या विधान-परिषद् की बैठक के संयोजक थे। मुन्शी-आयँगर मसौदे पर बहस होने वाली थी; तब उन्होंने सभा में उपस्थित लोगों से निवेदन किया कि मसौदे को पूरा समझकर व्यवहार किया जावे; जिससे समझौते पर हस्ताक्षर हों। संवैधानिक आधार पर मसौदे का सारांश और मसौदा कैसा उत्तरदायित्व निभाता है, इन बातों पर विवाद होने लगा। प्रारूप संविधान के संशोधन का स्वरूप लिये हुए है—जिसमें नीति का एक महत्वपूर्ण भाग संलग्न है। यदि दल की बैठक में मत द्वारा मसौदा समर्थित है और यदि वह संविधान में रखा जाता है, तो वह एक शासकीय संशोधन होगा। उसे कांग्रेस-नीति की अभिव्यक्ति जैसा समझा जावेगा और काँग्रेस के सदस्य उसके प्रति उत्तरदायी होंगे। यदि यह बगैर संसद-समिति की अनुमति के अपने स्वयं के उत्तरदायित्व और आधार पर रखा जाता है तो इसे सिर्फ सदस्य के द्वारा रखा गया निजी संशोधन का दर्जा प्राप्त होगा।[२३] अन्त में प्रावधान विभाजित होने की स्थिति में आया। संचालक नियामकों की ओर से वह प्रस्तुत किया गया। बम्बई के सदस्यों ने मत दिया बंगाली, असमी, मद्रासी, दक्षिणी और नेहरू संघ सरकार के कई मन्त्रियों ने तथा संसद की प्रारूप समिति के सदस्यों ने भाग लिया। संयुक्त-प्रान्त, मध्यप्रान्त, पूर्वी पंजाब, बिहार और राजस्थान के संसद सदस्यों ने दल की स्वीकारोक्ति जो कि संशोधन पर थी उसका विरोध किया। परिणाम-स्वरूप मतदान की स्थिति निर्मित हुई। मतदान में ७४-७४ मत आये। सीतारामैय्या ने घोषणा की कि मेरा मत निर्णायक होगा और गतिरोध अनिर्णित रहा। हिन्दी वालों ने मसौदे को स्वीकार करने का विरोध किया क्योंकि यह अन्तर्राष्ट्रीय अँकों का समर्थन करता है।[२४] हमें इन छोटे-छोटे विवादों को विराम लगाकर दफना देना चाहिए। दल की बैठक में भाषा के प्रश्न को लेकर मतदान से हिन्दी भारत की सरकारी कामकाज की भाषा बन गई सिर्फ एक मत के बहुमत से।[२५]

०२.०७ सेठ गोविन्ददास एवं नागप्पा के संशोधन:-

२ सितम्बर, ४९ ई. को काँग्रेस दल में भाषा-सम्बन्धी शक्ति दोनों ओर बराबर-बराबर रहने पर यह घोषित किया गया था कि अब दल के लोग विधान-परिषद् में निजी रूप से स्वतन्त्रतापूर्वक भाषा-सम्बन्धी प्रस्ताव के संशोधन रखेंगे। यह भी ज्ञात हुआ था कि मुँशी-आयँगर मसौदा डॉ. अम्बेडकर, श्री मुँशी तथा मि. गोपालस्वामी आयँगर व्यक्तिगत

२३. हिन्दू और हिन्दुस्तान, टाईम्स, ४-९-४९ ई. का समाचार

२४. हिन्दू, १९५८ ई., हैरिसन के एक आलोचनात्मक लेख से 'खतरनाक दहाई', पृ. ९

२५. दि इण्डियन काँस्टिट्यूशन : आस्टिन, पृ. ३००.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

रूप से रखेंगे। ३ सितम्बर, ४९ ई. को सेठ गोविन्ददास ने भाषा सम्बन्धी नो संशोधन उपस्थित करने की सूचना दी। उनके संशोधन इस प्रकार हैं:—

(१) भारतीय संघ की राजभाषा-हिन्दी होगी और लिपि नागरी। विधान लागू होने के दस वर्ष तक अँग्रेज़ी भारतीय संघ की सरकारी भाषा रहे, (यह उल्लेखनीय है कि 'राष्ट्रभाषा-व्यवस्था-परिषद' ने अपने प्रस्ताव में यही कहा था कि १० वर्ष तक अँग्रेज़ी भारतीय संघ की सरकारी भाषा रहे) १० वर्ष तक अँग्रेज़ी को सरकारी भाषा बनाये रखने का प्रस्ताव अस्वीकार हो जाने पर, वह समय १५ वर्ष का रख दिया जाय। यह उल्लेखनीय है कि काँग्रेस कार्य-समिति ने अपने प्रस्ताव में यह अवधि स्वीकार की है।

(२) भारतीय लोकसभा का चुनाव होने के पश्चात शीघ्र ही लोकसभा के १० और राज्य परिषद् के १० निर्वाचित सदस्यों की एक समिति बनायी जाय, जो अँकों के प्रश्न पर राष्ट्रपति को अपनी संस्तुति दें। यही समिति राष्ट्रपति से संस्तुति करेगी, राष्ट्रपति को सुझाव देगी कि हिन्दी धीरे-धीरे अँग्रेज़ी का स्थान किस तरह से ले। ऐसा न हो कि इस दिशा में १० या १५ वर्ष तक हिन्दी की प्रगति एकदम ठप्प पड़ी रहे।

(३) १० या १५ वर्ष के पश्चात लोकसभा की कार्यवाही हिन्दी में होगी पर जो सदस्य हिन्दी में अपने विचार न प्रकट कर सकेंगे, लोकसभा के अध्यक्ष उन्हें अपनी मातृ-भाषा में बोलने की अनुमति दे सकेंगे।

(४) विभिन्न प्रांत अपने प्रांत की भाषा या राष्ट्रभाषा (हिन्दी) को अपनी राजभाषा बना सकते हैं।

(५) राष्ट्रपति के आदेश के बगैर अभी एक-दूसरे प्रांत के मध्य पत्र-व्यवहार की भाषा अँग्रेज़ी रहेगी परन्तु यदि दो या दो से अधिक प्रांत स्थायी रूप से भारतीय संघ की भाषा को (हिन्दी को) अपनी सरकारी भाषा घोषित कर चुके हों या घोषित कर दें, तो वे उस भाषा (हिन्दी) में पत्र-व्यवहार कर सकते हैं।

(६) प्रान्तीय धारा-सभाएँ अपने प्रान्त की भाषा या हिन्दी या (१०-१५ वर्ष) तक अँग्रेज़ी में ही अपना कामकाज चलाएँगी।

(७) सर्वोच्च-न्यायालय तथा सभी न्यायालयों में, १० या १५ वर्ष तक कार्यवाही अँग्रेज़ी में होगी परन्तु जिन उच्च-न्यायालयों ने हिन्दी को स्वीकार कर लिया है, वहाँ अँग्रेज़ी जबर्दस्ती न लादी जाये।

(८) विधान लागू होने के १० या १५ वर्ष की अवधि के अन्दर विधान की राष्ट्रभाषा सम्बन्धी धाराओं में राष्ट्रपति को अनुमति के बिना, कोई संशोधन या बिल प्रस्तुत न किया जाएगा। साथ ही लोकसभा और राज्य-परिषद् की निर्वाचित संयुक्त-

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

समिति की सिफारिशों पर विचार किये बगैर राष्ट्रपति वैसे किसी संशोधन या बिल को पेश करने की अनुमति न देंगे।

(९) जब राष्ट्रपति को यह विश्वास हो जाय कि किसी प्रान्त में २० प्रतिशत जनता उस प्रान्त की किसी 'प्रादेशिक भाषा को भी प्रान्त के सरकारी कार्यों में, उपयोग में लाने की माँग कर रही है, तो वे समूचे प्रांत या प्रान्त के किसी हिस्से में उस प्रादेशिक भाषा को भी सरकारी कार्यों में उपयोग करने की घोषणा कर सकते हैं। विधान के मूल मसौदे के निर्देशक–सिद्धान्त में 'हिन्दुस्तानी शैली' स्वीकार करने की जो चर्चा है, उसे निकाल देना चाहिए।

श्री नागप्पा के प्रयत्नः–

सेठ गोविन्ददास के उपरान्त व रविशंकर शुक्ल आदि बहुत से सदस्यों ने भाषा सम्बन्धी अपने-अपने संशोधन उपस्थित करने की सूचना दी परन्तु सबसे बड़ी हिम्मत का कार्य मद्रासी सदस्य श्री एस. नागप्पा महोदय का रहा। आपने भाषा संबंधी जो संशोधन रखने की सूचना दी है उसकी चर्चा ७ सितम्बर, १९४९ के समाचार-पत्रों में बड़े कुतूहल से प्रकाशित की है। आपका कहना है कि–

'५० वर्ष तक भारतीय संघ सरकार की भाषा अँग्रेज़ी ही रहे और इस अवधि के बाद संघ सरकार की भाषा रोमन-लिपि में लिखी हिन्दुस्तानी हो।'[२६] नागप्पा के इस संशोधन से लगता है कि जहाँ पर अँग्रेज़ी समर्थक हैं वहीं पर घोर हिन्दी विरोधी ही नहीं हैं बल्कि वे हिन्दी को देश में किसी भी रूप में देखना नहीं चाहते हैं। चाहे रोमन में लिखी जाने वाली ही हिन्दुस्तानी भाषा क्यों न प्रयोग की जावे? इससे एक बात और स्पष्ट होती है कि उनका मत किसी एक भाषा के लिये स्पष्ट नहीं है बल्कि वे मिश्रित-भाषा को चाहते हैं। वे एक लम्बे समय तक अँग्रेज़ी भाषा चाहते हैं। पचास वर्ष की समयावधि का तात्पर्य है देश में केवल संघ सरकार की भाषा अँग्रेज़ी स्वीकार कर ली जावे। इससे हमारे देश की भाषा हमेशा के लिये अँग्रेज़ी ही हो जावेगी। श्री नागप्पा ने अपना इस प्रकार का मत किन आधारों पर दिया इसका उल्लेख उन्होंने नहीं किया है। लगता है उन्होंने अपना मत बगैर किसी आधार के दिया है जो मात्र भावनात्मक लगता है जब कि अँग्रेज़ों ने भी अँग्रेज़ी को कभी राजभाषा बनाने का इतना स्पष्ट उल्लेख नहीं किया। उन्होंने भी उर्दू या उर्दू-मिश्रित हिन्दुस्तानी को ही राजकाज की भाषा घोषित किया था। इससे नागप्पा का हिन्दी-द्वेष ही स्पष्ट झलकता है और कुछ नहीं।

०२.०८. टण्डनजी एवं काँग्रेस दल में मतभेदः–

संविधान की प्रारूप समिति में जब से राष्ट्रभाषा का प्रश्न आया तब से प्रारूप समिति के विभिन्न सदस्यों ने उसकी बहस में भाग लिया। बहस के समय एक दल का नेतृत्व

---

२६. राष्ट्रभाषा का इतिहास—किशोरीदास वाजपेयी, पृ. १५०.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

हिन्दी वाले कर रहे थे जिसमें पुरुषोत्तमदास टण्डन भी थे। हिन्दी-भाषा के लिये इन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन समर्पित किया था। प्रारम्भ में ये मदनमोहन मालवीय के साथ कार्य करते रहे और इसके साथ ही हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के माध्यम से ये हिन्दी की सेवा करते रहे। इन्होंने गाँधी के साथ भी कार्य किया। प्रारूप समिति में इन्होंने काँग्रेस दल के साथ मिलकर कार्य किया।

सन् १९२३ ई. में काँग्रेस दल के संविधान में एक संशोधन किया जिसके अनुसार अधिक-से-अधिक हिन्दुस्तानी भाषा का प्रयोग किया गया। दल के संविधान ने प्रान्तीय भाषा के साथ अँग्रेज़ी के प्रयोग को भी चालू रखा।[२७] नेहरूजी ने अपने प्रतिवेदन में कहा कि इस नीति को जारी रखा जावे। वे इस बात के प्रबल समर्थक थे कि हिन्दुस्तानी को सम्पूर्ण भारत की सम्पर्क-भाषा बनाने का हर सम्भव प्रयत्न किया जावे जैसा कि अभी इसका आधा है।[२८] इस बात को लेकर पुरुषोत्तमदास टण्डन ने लिखा कि वास्तव में भारत अपनी स्वयं की भाषा से ही खड़ा हो सकेगा।[२९] परन्तु नेहरू इस मत से सहमत नहीं थे क्योंकि पुरुषोत्तमदास टण्डन का आशय हिन्दी से था; क्योंकि 'हिन्दुस्तानी' मिश्रित भाषा है और अपने देश की भी नहीं है। उसे भारत की एकता के लिये कृत्रिम रूप से बनाया गया है। 'हिन्दुस्तानी' नाम की कोई भी भाषा इसके पूर्व और इस समय तक भी देश की अन्य भाषाओं के समान नहीं थी। इसके साथ ही टण्डन का नेहरू से मतैक्य इसलिए भी नहीं था क्योंकि नेहरू भारत में अँग्रेज़ी भाषा को भी चाहते थे जबकि टण्डन न तो हिन्दुस्तानी को और न ही अँग्रेज़ी को चाहते थे। नेहरू का मत था कि बहुसंख्यक लोग शैक्षणिक और साँस्कृतिक दृष्टिकोण से उन्नति अपनी स्वयं की भाषा के माध्मम से कर सकते हैं; परन्तु अन्य भाषा की तुलना में वे लोग उचित स्तर पर अँग्रेज़ी के द्वारा अधिक वास्तविक और सावधानीपूर्वक पहुँच सकते हैं। उन्होंने १९२८ ई. में लिखा कि—अँग्रेज़ी हमारे लिए हमेशा एक महत्व की भाषा रहेगी क्योंकि संसार में हमारे वर्तमान महत्व को देखते हुए यह नितान्त भ्रामक सम्भावना होगी कि अँग्रेज़ी हमारे देश की साधारण भाषा बनेगी।

गाँधी और नेहरू ने समय-समय पर यह स्वीकार किया है कि, केवल 'हिन्दुस्तानी' ही जातियों को जोड़ सकती है। सन् १९४५ ई. का उदाहरण देते हुए गाँधी ने पुरुषोत्तमदास टण्डन को लिखा कि मेरा हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन से त्याग-पत्र देने का उद्देश्य है कि केवल हिन्दी जो कि नागरी-लिपि में लिखी जाती है राष्ट्रभाषा बनना चाहती है। इसका उत्तर देते हुए टण्डन ने लिखा कि मैं नहीं चाहता कि सारे भारतीय लोग उर्दू और हिन्दी सीखें और मैं विश्वास करता हूँ कि इसके बजाय यह अधिक महत्व का है कि हम अँग्रेज़ी को इसके स्थान से हटाएँ और उसके बोलने वालों को भी हम हिन्दी में परिवर्तित करें।[३०] यहाँ पर

---

२७. दि इण्डियन काँस्टिट्यूशन—आस्टिन : पृ. २७१.

२८. नेहरू प्रतिवेदन—पृ. ६२.

२९. भारत के लिए राष्ट्रभाषा—लेख, ज़ेड. एहमद, पृ. ९३.

३०. वीणा—१९४५ ई. : जून और ११ जुलाई, १९४५ : गाँधी-टण्डन का पत्र-व्यवहार :

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

टण्डन का विरोध या मत वैभिन्न अँग्रेज़ी के कारण है। टण्डन अँग्रेज़ी को अपने देश से हटाना चाहते हैं। इस विषय में गाँधी ने कुछ भी नहीं कहा क्योंकि नेहरू किसी भी शर्त पर देश से किसी भी रूप में अँग्रेज़ी को हटाना नहीं चाहते हैं। इसके कई दिनों के उपरान्त गाँधी ने सम्मेलन से अपना त्याग-पत्र दे दिया यह कहते हुए कि—मेरी परिभाषा के अनुसार राष्ट्रभाषा वही होगी जिसमें हिन्दी और उर्दू दोनों का ज्ञान होगा और वह नागरी तथा उर्दू लिपि में लिखी जायेगी। यह एक अच्छा समन्वय होगा हिन्दी और उर्दू का जो इनका स्थान लेगा।[31] ६ और ७ अगस्त को नई दिल्ली की जनता के समक्ष एक सम्मेलन हुआ जिसके अध्यक्ष सेठ गोविन्ददास थे। ७ अगस्त, १९४९ ई. के सम्मेलन में पुरुषोत्तमदास टण्डन ने दिल्ली की जनता को हिन्दी वालों की स्थिति स्पष्ट करते हुए समझाया। उन्होंने अपने भाषण में कहा कि लोग हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में और नागरी-लिपि का विरोध करते हैं। उन्होंने कहा --क्या अभी भी देश-विरोधी नीतियाँ अपनाने से सन्तुष्टि नहीं हुई जो खान–पान और साम्प्रदायिकता की भावनाओं को प्रेरित कर रहे हैं।[32] जब हिन्दी समर्थक काँग्रेस विधान-परिषद् में भाषाई मामले को लेकर विभिन्न संशोधनों और बहसों में भाग ले रहे थे उस समय इन्होंने एक बार अपना मत जनता के समक्ष स्पष्ट कर देना उचित समझा क्योंकि काँग्रेस दल की नीतियों के कारण जनमानस का जनमत अपनी ओर करके विधान-परिषद् और काँग्रेस दल का प्रभाव डालकर प्रभावित करने का प्रयत्न किया गया परन्तु यह प्रयास भी अन्ततः सफल नहीं हो सका और ये लोग काँग्रेस दल को प्रभावित करके अपने अनुकूल करने में असमर्थ रहे। इस प्रकार काँग्रेस दल से (पुरुषोत्तमदास और उनके दल का) विरोध बढ़ता ही गया। ८ अगस्त, १९४९ ई. की परिषद् बैठक में एक संशोधन रखा गया जिसमें यह भी अंश जुड़ा हुआ था कि १० वर्ष की मध्यावधि में संसद यह निर्णय करेगी की संघ के उद्देश्य के लिये हिन्दी और अँग्रेज़ी या दोनों ही का प्रयोग किया जाय या नहीं। इन शब्दों का विरोध किया गया। ऐसा समझा गया कि यह धोखा है जो अँग्रेज़ी को शीघ्र ही एक धारा में परिवर्तित कर देगा।

'मुन्शी आयँगर मसौदे' को लेकर काँग्रेस दल और टण्डनजी में एक लम्बी प्रतिस्पर्धा चली क्योंकि काँग्रेस दल के सभी सदस्य 'येन-केन प्रकारेण' इस मसौदे पर सहमत हो गये। इस मसौदे में नेहरू का मत था कि परिस्थितियों के कारण मुन्शी आयँगर मसौदा एक बढ़िया हल है परन्तु टण्डन ने इस मसौदे के प्रत्येक अंश पर आपत्ति की। उन्होंने आशा व्यक्त की कि विकल्प में अँग्रेज़ी को रखना शीघ्रता होगी। इतना ही नहीं नागरी-अँकों के साथ रोमन अँकों का भी विरोध किया। काँग्रेस दल ने इस मसौदे पर सहमति व्यक्त करने का दल को निर्देश दिया कि करीब ४०० संशोधन जो भाषाओं के मामले में रखे गये हैं जो अन्ततः मसौदे का समर्थन करते हैं अपने संशोधन वापस ले लें। इस पर टण्डन ने दल से त्याग-पत्र दे दिया।[33] टण्डन के संशोधन में ये बातें मुख्य थीं :—

---

३१. वीणा–१९४५ ई., जून और ११ जुलाई, १९४५ : गाँधी-टण्डन पत्र-व्यवहार.

३२. हिन्दुस्तान टाईम्स–८ अगस्त, १९४९ ई.

३३. १४ सितम्बर, १९४९ की बैठक में 'आज्ञा-पत्र' का विरोध करने के लिये टण्डन ने परिषद में दल से अपना त्याग-पत्र दे दिया–हिन्द : १६-१७ सितम्बर, १९४९.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy: Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

(१) १५ वर्षों तक अँग्रेज़ी अँकों के साथ-साथ हिन्दी अँक भी चलते रहें।

(२) विधान बनने से पूर्व जिन परिषद्ों में और जिन उच्च न्यायालयों में हिन्दी कार्य में लायी जा रही है, वहाँ जबर्दस्ती अँग्रेज़ी न चलायी जाये।

(३) राष्ट्रपति को यह अधिकार दिया जाय कि वे अपने विवेक के अनुसार विशेष-विशेष जगह केवल हिन्दी अँक या केवल अँग्रेज़ी अँक प्रयुक्त करने का आदेश जारी कर सकें।

(४) संसद को यह अधिकार दिया जाय कि वह पन्द्रह वर्ष के बाद भी किन्हीं कार्यों में अँग्रेज़ी का प्रयोग जारी रख सकें। (ध्यान रखने की बात है कि 'मुन्शी आयँगर मसौदे' में यह अधिकार राष्ट्रपति को दिया है)। ये ही टण्डनजी के संशोधन थे जो काँग्रेस दल को मान्य नहीं हुए।[३४]

त्याग-पत्र के उपरान्त टण्डन के ये संशोधन जो विधान-परिषद् की बैठक में नहीं रख पाये या रखने की अनुमति नहीं मिली। ये संशोधन व्यक्तिगत रूप से अखबारों में छपवाने के लिए स्वतन्त्र थे परन्तु काँग्रेस दल ने उनका त्याग-पत्र वापस करवा दिया; जिससे वे अपने संशोधन अखबारों में न छपवा सकें।

०२.०९ परिषद् अध्यक्षों की बैठक में राजभाषा का प्रश्न:-

२ सितम्बर, १९४९ ई. को दिल्ली में, प्रान्तीय-परिषदों के अध्यक्षों की एक बैठक केन्द्रीय-परिषद् के अध्यक्ष श्री मावलंकर की अध्यक्षता में हुई। इसमें अन्य सभी बातों के अतिरिक्त परिषद् सदस्यों की भाषा सम्बन्धी चर्चा भी हुई और सुविधा का प्रश्न उठाया गया। इससे पहले अनेक बार युक्तप्रान्तीय परिषद् के मुसलमान सदस्य यह आपत्ति उठा चुके थे कि परिषद् में जो हिन्दी प्रयोग की जाती है वह हमारी समझ में नहीं आती है। इधर मध्यप्रान्तीय-परिषद् ने भी अँग्रेज़ी का पूर्ण बहिष्कार करके केवल हिन्दी-मराठी में काम करने का निश्चय किया। बहुत से ऐसे सदस्य परिषद् में पहुँचते रहे हैं और अब भी हैं जो अच्छी अँग्रेज़ी नहीं जानते। बहुत से योग्यतम व्यक्ति परिषद् में पहुँच भी नहीं पाते, चुने ही नहीं जाते या चुनाव में खड़ा होना उनके लिए एक स्वप्न है; क्योंकि वे अँग्रेज़ी नहीं पढ़े हैं।

अखिल भारतीय 'राष्ट्रभाषा-व्यवस्था-परिषद्' ने जब सर्व-सम्मति से यह निर्णय दे दिया कि इस देश की राजभाषा नागरी में लिखी हिन्दी होनी चाहिये तब लोगों ने समझा था कि अब कभी कोई यह न कहेगा कि अहिन्दीभाषी प्रान्तों पर हिन्दी थोपी जा रही है। पण्डित नेहरू ने ३ सितम्बर, १९४९ ई. को प्रयाग में विद्यार्थियों की एक सभा में विविध समस्याओं पर बोलते हुए राष्ट्रभाषा के सम्बन्ध में कहा—'हिन्दी किसी दूसरे प्रान्त पर लादी नहीं जा सकती। दक्षिण भारत के लिए यह एक महत्वपूर्ण प्रश्न है। यह एक बड़ी बात है कि हमने हिन्दी मान ली है परन्तु सब पर संस्कृत लादना उचित नहीं है।[३५] नेहरू के इस भाषण से

---

३४. राष्ट्रभाषा का इतिहास–किशोरीदास वाजपेयी, पृ. १५८-१५९.

३५. वही–पृ. १४४.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

आभास मिल गया कि १०, १२ और १३ सितम्बर को जब विधान-परिषद् में राजभाषा सम्बन्धी प्रश्न सामने आएगा तो सरकार का दृष्टिकोण क्या होगा ? समझौते में विशेष बातों को उचित रूपों में रखने के लिये प्रादेशिक भाषाओं के बोलने वालों के हितों को भी जोड़ा गया। संविधान में प्रादेशिक भाषाओं की सूची में अहिन्दीभाषी लोगों की रुचि और लोक-सेवा-आयोग की रक्षा का उल्लेख है; इसने देश का बग़ैर अनुपात के पढ़े-लिखे लोगों को अपनी ओर आकर्षित किया।[३६]

१० सितम्बर का एक प्रस्ताव ४५ पृष्ठों के उभरे हुए संशोधन से युक्त था। इसमें अधिकतर संशोधन हिन्दी वालों के द्वारा रखे गये थे, वे या तो नष्ट कर दिये गए या अमान्य कर दिये गए। सेठ गोविन्ददास के द्वारा रखे गये संशोधन की ध्वनि उग्रवादी भावों को ढोने वाली थी। उनमें से एक मसौदे पर विकल्प के लिये विचार किया उनमें से पूर्णतया नयी भाषा की धारा थी। जिन राज्यों ने अँग्रेज़ी के बदले हिन्दी को अपनाया उनकी भाषा, अधिनियम और न्यायालय के निर्णय भी हिन्दी में और उच्च-न्यायालय की कार्यवाहियाँ भी हिन्दी के उपयोग में होने लगी। इस संशोधन ने अन्तर्राष्ट्रीय अँकों को प्रदर्शित करने से छोड़ दिया। कहा गया कि १० वर्षों के उपरान्त सरकारी भाषा (राजभाषा) के रूप में अँग्रेज़ी का विकल्प कर देगी या १५ वर्ष के उपरान्त हिन्दी का प्रयोग अँग्रेज़ी की सहभाषा के रूप में सभी उद्देश्यों की पूर्ति के लिये आन्तरिक रूप से की जाय। एक संशोधन गोविन्ददास ने रखा जो कि मसौदे को प्रादेशिक भाषाओं की अनुसूची से अलग करता है। 'संस्कृत को सरकारी भाषा (राजभाषा) बनाने के लिये अम्बेडकर और टी. टी. कृष्णामाचारी ने संशोधन रखे थे, एल. के. मिश्रा ने परिषद् में कहा कि संस्कृत को चुनने का तात्पर्य सभी प्रादेशिक भाषाओं को समान महत्व प्रदान करना है और एक हद तक हिन्दी के चुनाव के कारण जो जलन उत्पन्न हो गई है उसे कम करना है।'[३७]

१२ सितम्बर को भाषा पर अन्तिम बहस प्रारम्भ हुई। बैठक में सेठ गोविन्ददास और श्री गोपालास्वामी आयँगर ने सभी सदस्यों से शांतिपूर्वक, बहुमत के निर्णय को बिना कटुता के स्वीकार करने को कहा। इन्होंने प्रजाताँत्रिक पद्धति से कार्य करने की अपील की। एन. जी. आयँगर ने मुन्शी-आयँगर-मसौदे को रखा और उसकी व्याख्या की। मसौदे के दो आधारभूत सिद्धान्त हैं। एक अँकों के विषय में और दूसरा सहभाषा के लिए। सेठ गोविन्ददास ने कहा कि जब मैंने भाषा और लिपि का प्रश्न उठाया था तब अन्य सदस्यों ने अंकों का प्रश्न नहीं उठाया था। आज अँकों का यह प्रश्न दक्षिण-भारत के सदस्यों को महत्व का दीखता है। उस समय उन्होंने इसे उस दृष्टि से नहीं देखा था। जिस मसौदे पर सदस्यों ने बड़ी संख्या में हस्ताक्षर किये हैं; वह इस प्रकार है—' हम लोग इस बात के पक्ष में हैं कि भारत के विधान में यह रखा जाये कि राष्ट्रभाषा हिन्दी और राष्ट्रलिपि देवनागरी होगी। राष्ट्रसंघ और संसद में सब काम हिन्दी और देवनागरी अक्षरों के द्वारा अथवा उस समय तक के लिये

---

३६. सरकारी-भाषा-आयोग का प्रतिवेदन, पृ. १८६.

३७. दी इण्डियन कांस्टिट्यून—आस्टिन—पृ. ३०१.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

जो संसद निश्चित करें, अँग्रेज़ी में होगी। इस पर मद्रास के गोपालस्वामी आयँगार, डाक्टर पट्टाभिसीतारमैय्या, प्रो. रंगा, अलगेसन, थिरूमलराव, अनन्तशयनम आयँगर, काला वेंकटराव इत्यादि के हस्ताक्षर हैं। [३८] उस समय आपने देवनागरी के अँकों को भी उसके साथ स्वीकार किया था। इस पर हिन्दी-भाषा-भाषी सदस्यों के हस्ताक्षर के अतिरिक्त श्री निजलिंगप्पा; जैथे, पाटस्कर, गुप्ते, मैत्र, मजूमदार, गुहा, सुरेश मोहन घोष, इत्यादि के भी हस्ताक्षर हैं। [३९] गोविन्ददास का मत था कि १५ वर्षों के उपरान्त देश में अंग्रेज़ी नहीं रहना चाहिए। सभी सदस्यों ने बहस में भाग लिया। भाषा के १५ वर्ष की समयावधि पर लम्बा विवाद चला। अन्त में सदस्यों ने प्रयत्न किया कि संघ की सरकारी भाषा हिन्दी ही हो सकती है जो नागरी-लिपि में हो।

०२.१०. मुन्शी-आयँगर मसौदा :-

भाषा को गाँधीजी ने स्वतन्त्रता के आन्दोलन के साथ जोड़कर देश की एकता, राष्ट्रीयता इत्यादि की भावनाओं को उभारा। जब देश के संविधान बनाने का कार्य देश के समक्ष आया, उस समय प्रारूप समिति और देश के चुने हुए सदस्यों का जो देश के विभिन्न प्रान्तों और भाषाओं का प्रतिनिधित्व करते थे विचार-विमर्श होता रहा। विधान-मण्डल के समक्ष भाषा का प्रश्न एक लम्बे समय से वाद-विवाद के रूप में चलता रहा। इसको लेकर लगभग ४०० संशोधन रखे और विचार-विमर्श चलता रहा। अन्त में प्रारूप समिति ने संविधान सभा के सदस्यों की एक समिति बनाई जिसमें बी. आर. अम्बेडकर (संयोजक), एन. गोपालस्वामी आयँगर, कृष्णास्वामी अय्यर, के एम. मुन्शी, सैय्यद मोहम्मद सादुल्ला, एन. एम. राव और संथानम् थे। इन लोगों ने २१ फरवरी, १९४८ ई. को अपना प्रतिवेदन प्रारूप समिति को भेजा जिसमें धारा ९९ और धारा १८४ के विषय में कहा गया। 'मुन्शी आयँगर मसौदे' के विषय में डॉ. मुन्शी का कहना है—

'सर्वश्री पट्टाभिसीतारामैय्या (आंध्र), कृपलानी (सिन्ध), श्यामाप्रसाद मुकर्जी (बंगाल), बक्षी टेकचन्द (पंजाब), काका साहेब गाडगिल (महाराष्ट्र), कृष्णास्वामी अय्यर (मद्रास), इनके सहयोग और भिन्न–भिन्न प्रान्तों के अन्य नेताओं की सहायता एवं सहयोग तथा सरदार पटेल और पण्डित जवाहरलाल नेहरू का मार्गदर्शन प्राप्त था।' [४०]

इस मसौदे को संविधान-सभा में एन. गोपालास्वामी आयँगर ने [४१] सितम्बर, १९४९ को रखा। इस पर विचार-विमर्श १२ सितम्बर से प्रारम्भ होकर १४ सितम्बर की सन्ध्या

---

३८. हिन्दी–भाषा आन्दोलन–संकलनकर्त्ता-लक्ष्मीचन्द, प्रथम संस्करण, पृ. २३

३९. राजभाषा-हिन्दी-डॉ. से. गोविन्ददास, प्रथम संस्करण; सन् १९६५ ई., पृ. २०.

४०. भाषा-समस्या पर बम्बई रोटरी क्लब में दिये गये भाषण से डॉ. के. एम. मुन्शी, १६ मार्च, ४५, पृ. ३–४

४१. संविधान-सभा की डिबेट, खण्ड ९, पृ. १३१२–१४८९.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

तक चलता रहा। इसकी कार्यवाही १७७ पृष्ठों की है। इस मसौदे को 'मुन्शी आयँगर' फार्मूले के नाम से जाना जाता है—[४२]

(१) नागरी-लिपि में राष्ट्रभाषा हो और अन्तर्राष्ट्रीय भारतीय (रोमन) अँक राष्ट्रभाषा में गृहीत हों।

(२) पन्द्रह वर्ष तक अँग्रेज़ी ही केन्द्रीय सरकार की भाषा रहे।

(३) नया विधान लागू होने के पाँच वर्ष बाद एक आयोग नियुक्त किया जाय जो हिन्दी की गतिविधियों के बारे में अपनी संस्तुति दे। इस संस्तुतियों की जाँच करने के लिये संसद एक समिति नियुक्त करे और तब उचित संस्तुतियों पर सरकार ध्यान दें, उन्हें कार्यान्वित करें। इसके दस वर्ष उपरान्त अर्थात् विधान लागू होने के पन्द्रह वर्ष बाद फिर एक आयोग तथा समिति नियुक्त की जाय और उनकी संस्तुतियाँ ली जायँ।

(४) पन्द्रह वर्ष उपरान्त भी अँग्रेज़ी भाषा ही उन विभागों में चलती रहे, जिनमें उसका चलते रहना संसद को जरूरी लगे। राष्ट्रपति को यह अधिकार रहे कि वे पन्द्रह वर्ष की अवधि के अन्दर भी कहीं हिन्दी में काम होने की आज्ञा दे सकें।

(५) पन्द्रह वर्ष तक देश-भर की परिषदों में सब काम अँग्रेज़ी भाषा में ही किया जाय। इस अवधि में सभी न्यायालयों का तथा उच्च-न्यायालयों का काम अँग्रेज़ी भाषा में ही हो (अर्थात् युक्तप्रान्त, मध्यप्रान्त तथा राजस्थान आदि को पीछे लौटना होगा)।

(६) राष्ट्रपति को यह अधिकार होगा कि वे किसी भी प्रान्त में कोई ऐसी प्रादेशिक भाषा भी उस प्रान्त में राजभाषा के रूप में ज़ारी करा सकेंगे जिसके बोलने-समझने वाले उस प्रान्त में पर्याप्त व्यक्ति हों।

(प्रादेशिक भाषाओं में अँग्रेज़ी और उर्दू भी रखी गयी पर यह नहीं बताया गया कि ये किस प्रदेश की भाषाएँ हैं। यानी युक्तप्रान्त, राजस्थान आदि हिन्दी-प्रान्तों में राष्ट्रपति अपने अधिकार से उर्दू चला सकेंगे और किसी प्रान्त में अँग्रेज़ी भी। यही नहीं, आगे ऐसा कर दिया गया कि पाँडुचेरी आदि में फ्रेन्च भाषा तथा गोवा में पुर्तगाली भाषा भी, उन प्रदेशों की अपनी-अपनी भाषाओं के साथ राष्ट्रपति चला सकेंगे।

(७) प्रन्तीय सरकारें केन्द्रीय सरकार से तथा प्रान्तीय सरकारों से अपना समस्त पत्र-व्यवहार केवल अँग्रेज़ी भाषा में ही पन्द्रह वर्षों तक करें।

---

४२. वास्तव में 'मुन्शी-आयँगर-मसौदा' तकनीकी दृष्टि से प्रारूप संविधान की धारा ९९ और १८४ तथा संशोधन ६५ का निरूपित रूप था—कांस्टिट्येएण्ट असेम्बली डिबेट, ; बी. एन. गुप्ता, खण्ड ९, पृ. १४०६.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

'मुंशी-आयँगर-मसौदे' पर प्रत्येक दृष्टिकोण से पर्याप्त वाद-विवाद चलता रहा। अन्त में समझौता हुआ। समझौते में पाँच संशोधन थे जो कि 'मुंशी आयँगर मसौदे' के लिये थे। उनमें से प्रत्येक संशोधन में कहा गया था कि १५ वर्षों के उपरान्त, संसद, विधान-मण्डलों के द्वारा नागरी-अँकों के उपयोग के साथ-ही-साथ अँग्रेज़ी और हिन्दी का उपयोग भी राष्ट्रपति की अनुमति से उच्च-न्यायालय की कार्यवाहियों में होता रहेगा। नियमों, अधिनियमों, आज्ञा-पत्रों के, आदि के लिए राज्य की सरकारी भाषा का निर्गमन किया जा सकेगा।[४३]

अंतिम समझौता इस बात पर हुआ कि जो सदस्य मसौदे का समर्थन करते हैं और जो इस मसौदे पर अन्तिम निर्णय चाहते हैं वे भाषाओं के लिये रखे गये ४०० संशोधनों में से अपने संशोधन वापस ले-लें। मुंशी ने सहमति वाला संशोधन पढ़ा। सभी सदस्यों में से पाँच सदस्यों ने अपने संशोधनों को वापस ले लिया। उनमें से तीन काँग्रेस के थे—ब्रजेश्वरप्रसाद; एस. एल. सक्सेना और टण्डनजी और दो मुस्लिम लीगी नजीरुद्दीन एहमद और जेड. एच. लारी।[४४] परिषद् ने अन्य संशोधनों को अत्यधिक बहुमत के द्वारा अस्वीकार कर दिया। अन्त में 'मुंशी-आयँगर-मसौदा' जो स्वीकार किया गया इस प्रकार है—

अध्याय—१

(१) भारतीय संघ की राजभाषा देवनागरी-लिपि में लिखित हिन्दी होगी। संघ के राजकीय कार्य में भारतीय अँकों का अन्तर्राष्ट्रीय स्वरूप काम में लाया जाएगा।

(२) पहली उपधारा के बावजूद विधान के आरम्भ से १५ वर्ष तक संघ में उन सब राजकीय कार्यों में अँग्रेज़ी काम में आती रहेगी जिनमें वह विधान के आरम्भ के समय आती थी। इसी बीच में राष्ट्रपति किसी राजकीय कार्य के लिये अँग्रेज़ी के अतिरिक्त हिन्दी और अन्तर्राष्ट्रीय अँकों के अतिरिक्त देवनागरी अँकों के प्रयोग की आज्ञा दे सकते हैं।

(३) लोकसभा १५ वर्ष के बाद कानून बनाकर किसी कार्य के लिए—

(अ) अँग्रेज़ी भाषा

---

४३. संशोधन के अन्तिम रूप के लिये, जैसा कि मसौदा संशोधित हुआ—प्रारूप समिति और उसके स्वयं के उपक्रमण पत्रों के परिवर्तन, मसौदे की अन्तिम धारा, हिन्दी के उद्गम के लिये, भारत की अन्य भाषाएँ जो कि ८वीं अनुसूची में दर्शायी गई हैं।

४४. हिन्दू : १६ और १७ सितम्बर, १९४६। टण्डन ने परिषद् दल से अपना त्याग-पत्र दे दिया। आज्ञा-पत्र का विरोध करने के लिए—२ दिन के उपरान्त काँग्रेस दल ने उनसे प्रार्थना कि और उन्होंने अपना त्याग-पत्र वापस ले लिया। झेड. एच. लारी ने सदन में त्याग-पत्र दिया क्योंकि हिन्दुस्तानी और उर्दू लिपि भाषाई प्रावधान में नहीं दर्शाई गई थी—हिन्दू : १७ सितम्बर, १९४९।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

(ब) देवनागरी-अँकों के प्रयोग की व्यवस्था कर सकती है ।

भाषा-आयोग और समिति :—

३०१ (ख)

(१) राष्ट्रपति विधान के आरम्भ के ५ वर्ष बाद और १० वर्ष बाद एक आयोग नियुक्त करेंगे और उसकी कार्यविधि निर्धारित करेंगे,

(२) यह आयोग राष्ट्रपति को—

(अ) कामकाज में हिन्दी के क्रमिक प्रयोग;

(ब) संघ के सब कार्य या कुछ कार्यों में अँग्रेज़ी का प्रयोग बन्द करने,

(स) ३०१ (ङ) में दिये गये कार्यों में प्रयोग की जाने वाली भाषा के बारे में,

(द) अँकों के बारे में और

(इ) संघ के राजकीय भाषा सम्बन्धी अन्य मामलों में सुझाव देगा ।

(ई) इन संस्तुतियों में आयोग भारत की औद्योगिक, सांस्कृतिक और वैज्ञानिक उन्नति का और सरकारी नौकरियों में अहिन्दी-भाषी क्षेत्रों के हितों का ध्यान रखेगा ।

(५) यह समिति आयोग की सिफारिशों पर अपना प्रतिवेदन राष्ट्रपति को देगी ।

(६) राष्ट्रपति इस धारा में दी गई बातों के बावजूद इस प्रतिवेदन के अनुसार हिदायतें जारी करेंगे ।

अध्याय—२

प्रादेशिक भाषाएँ—

३०१ (ग)

धारा ३०१ द और ३०१ य के अधीन कोई भी राज्य अपने क्षेत्र की किसी भी भाषा को या हिन्दी को राज्य-भाषा बना सकता है ।

जब तक राज्य की धारा-सभा दूसरा कानून न बना दे तब तक अँग्रेज़ी राजकाज में काम आती रहेगी ।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC 0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

अन्तर्प्रान्तीय भाषा–

३०१ (घ)

उस समय संघ में राजकीय कार्यों में जो भाषा होगी, वही दो राज्यों के बीच और राज्य और केन्द्र के बीच पत्र-व्यवहार की भाषा होगी किन्तु यदि राज्य सहमत हों, तो वे हिन्दी में आपसी पत्र-व्यवहार कर सकेंगे।

वर्ग-विशेष की भाषा–

३०१ (घ)

राष्ट्रपति जनता के किसी बड़े वर्ग की माँग पर उसकी भाषा को किसी कार्य विशेष के लिये राज्य में या राज्य के किसी भाग में मान्य कर सकते हैं।

अध्याय–३

सर्वोच्च-न्यायालय की भाषा–

३०१ (ङ)

(१) जब तक लोकसभा कानून द्वारा अन्यथा परिवर्तन न करें तब तक सर्वोच्च-न्यायालय और उच्च-न्यायालयों की कार्यवाही की तथा संसद और धारा-सभाओं में प्रस्तुत बिलों या संशोधनों के, संसद या धारा-सभाओं के स्वीकृत कानूनों के और विधान के अन्तर्गत निकाले गए आदेशों और नियमों के अधिकृत मूल मसौदों की भाषा अँग्रेज़ी होगी।

(२) कोई भी राज्य राष्ट्रपति की अनुमति से राज्य के उच्च-न्यायालय की कार्यवाही में, निर्णयों, डिग्रियों और आज्ञाओं के अतिरिक्त अन्य कार्यों में हिन्दी या राज्य की अन्य स्वीकृत भाषा का व्यवहार कर सकता है।

(३) राज्य में उक्त कार्यों में अँग्रेज़ी से भिन्न भाषा का व्यवहार होने पर बिलों, विशेष अध्यादेशों और कानूनन के रूप में आज्ञाओं का अँग्रेज़ी अनुवाद भी प्रकाशित करना होगा।

३०१ (च)

१५ वर्ष के समय में भाषा के सम्बन्ध में कोई बिल या संशोधन राष्ट्रपति की पूर्वानुमति के बिना राज्यसभा के दोनों में से किसी भी भवन में प्रस्तुत न किया जायगा और राष्ट्रपति उसको प्रस्तुत करने की अनुमति न देंगे, जब तक वह भाषा आयोग की संस्तुतियों और समिति के प्रतिवेदनों पर विचार न कर लेंगे।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

अध्याय–४

विशेष-हिदायत–

३०१ (छ)

शिकायत सम्बन्धी आवेदन। प्रत्येक व्यक्ति अपनी शिकायत दूर कराने के लिए संघ या राज्य के किसी भी अधिकारी को संघ या राज्य में व्यवहृत किसी भी भाषा में आवेदन-पत्र दे सकता है।

हिन्दी का विकास–

३०१ (ड.)

संघ का कर्त्तव्य होगा कि वह हिन्दी का प्रचार करें और उसे विकसित करें, जिससे वह भारत की मिश्रित संस्कृति के सब वर्गों के विचार प्रकाशन का साधन बन सके। वह हिन्दुस्तानी और भारत की अन्य भाषाओं में व्यवहृत रूपों, शैलियों और अभिव्यक्तियों को हिन्दी में उसके सौष्ठव को बिगाड़े बिना समाविष्ट करावें और जहाँ आवश्यक और वाँछनीय हो वहाँ नये शब्द मुख्यतः संस्कृत से लें और गौणतः दूसरी भाषाओं से लें।

अनुसूची सात : प्रादेशिक भाषाएँ :–

असमी, बंगला, कन्नड़, गुजराती, हिन्दी, काश्मीरी, मलयालम, मराठी, संस्कृत, उड़िया, पंजाबी, तमिल, तेलुगू, उर्दू।

('निर्णय की अनुसूची में अन्य भाषाओं के साथ उर्दू भी प्रादेशिक भाषाओं में रखी गयी है)

०२. ११. भारतीय संघ की राजभाषा का निर्णय :–

भारत की संविधान-सभा ने २६ नवम्बर, १९४९ ई. को भारतीय संविधान को अपनाकर स्वीकार किया और वह २६ जनवरी, १९५० ई. से देश में प्रभावशील हुआ। संविधान के सत्रहवें भाग के, प्रथम अध्याय के, ३४२ वें अनुच्छेद के, प्रथम-खण्ड में देवनागरी-लिपि में हिन्दी को भारतीय संघ की राजभाषा के रूप में स्वीकार किया गया। इसके साथ ही उसी अनुच्छेद के द्वितीय खण्ड में यह व्यवस्था भी दी गई की संविधान लागू होने के १५ वर्ष बाद तक सभी राजकीय कार्यों के लिए अंग्रेज़ी-भाषा का व्यवहार होता रहेगा। विभिन्न राज्यों की विधानसभाओं ने भी हिन्दी को राजभाषा स्वीकार कर लिया है।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

०२. १२. राज्यों द्वारा राजभाषा हिन्दी का अधिग्रहण :—

बिहार, मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश, राजस्थान, हिमाचल प्रदेश और अजमेर, मेरवाड़ा, राज्यों की विधान-सभाओं ने हिन्दी को सरकारी कामकाज की भाषा घोषित की।

बिहार :—

(१) बिहार राजभाषा अधिनियम १९५० ई. के अन्तर्गत हिन्दी राजभाषा के रूप में अँगीकार कर ली गई है। यह उपबन्ध अंशतः कार्यान्वित हो चुका है।

(२) बिहारी विधि-भाषा अधिनियम १९५५ ई. व्यवस्था करता है कि सभी पुनः स्थापित विधेयक और विधान-सभा द्वारा पारित अधिनियम राज्यपाल द्वारा प्रचलित अध्यादेश, राज्य द्वारा जारी किये गये आदेश, नियम, विनिमय या उपनियम हिन्दी में होंगे परन्तु यह उपबन्ध अभी तक कार्यान्वित नहीं किया गया।

(३) मध्यभारत, मध्यप्रदेश और उत्तरप्रदेश की सरकारों के साथ अन्तर्राज्यीय संचार के लिए हिन्दी का प्रयोग करने के लिए समझौते हुए हैं।

(४) बिहार विधि-भाषा-अधिनियम १९५५ ई. के अन्तर्गत राज्य-विधान-सभा के लिए हिन्दी देवनागरी-लिपि में राजभाषा के रूप में वाद-विवादों एवं सभी पुरः स्थापित विधेयकों तथा पारित अधिनियमों के लिए अँगीकार की गई है।

मध्यप्रदेश :—

(१) मध्यप्रदेश राजभाषा अधिनियम १९५० ई. के अन्तर्गत हिन्दी और मराठी राजभाषाओं के रूप में अँगीकार कर ली गई हैं। यह उपबन्ध अंशतः कार्यान्वित हुआ है।

(२) यही अधिनियम व्यवस्था करता है कि सभी पुरः स्थापित विधेयक और विधानसभा द्वारा पारित, अधिनियम राज्यपाल द्वारा जारी किये गये अध्यादेश और राज्य द्वारा प्रचलित आदेश, नियम, विनिमय या उपनियम हिन्दी और मराठी में होंगे परन्तु यह उपबन्ध अभी तक कार्यान्वित नहीं किया गया है।

(३) उत्तरप्रदेश, बिहार, मध्यभारत, राजस्थान, भोपाल और विन्ध्यप्रदेश की सरकारों के साथ अन्तर्राज्यीय संचार के लिए हिन्दी का प्रयोग करने के लिए समझौते हुए हैं।

(४) मध्यप्रदेश राजभाषा अधिनियम १९५० ई. के अन्तर्गत देवनागरी-लिपि में हिन्दी और बाल-बोध-लिपि में मराठी, विधान-सभा की राजभाषाएँ अँगीकार की गई हैं किन्तु विधानसभा में पुरः स्थापित विधेयक और विधान-सभा द्वारा पारित अधिनियम तथा प्रवर समितियों, वित्तीय समितियों और प्रदत्त विधान समितियों के प्रतिवेदन अँग्रेज़ी में होते हैं।

उत्तरप्रदेश :—

(१) उत्तरप्रदेश राजभाषा अधिनियम १९५१ ई. के अन्तर्गत हिन्दी राजभाषा के रूप में अँगीकार कर ली गई है। यह उपबन्ध कार्यान्वित किया जा चुका है।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

(२) उत्तरप्रदेश भाषा (विधेयक और अधिनियम) अधिनियम १९५० ई. व्यवस्था करता है कि सभी पुरःस्थापित विधेयक और विधान-सभा द्वारा पारित अधिनियम राज्यपाल द्वारा प्रचलित अध्यादेश और राज्य द्वारा जारी किये गए आदेश, नियम, विनिमय या उपनियम हिन्दी में होंगे। यह उपबन्ध कार्यान्वित किया जा चुका है।

(३) बिहार, मध्यप्रदेश और मध्यभारत की सरकारों के साथ अन्तर्राज्यीय संचार में हिन्दी का प्रयोग करने के लिए समझौते हुए हैं।

(४) उत्तरप्रदेश भाषा (विधेयक और अधिनियम) अधिनियम १९५० के अन्तर्गत हिन्दी देवनागरी-लिपि में राज्य-विधानसभा की राजभाषा के रूप में वाद-विवादों के साथ-साथ पुरःस्थापित विधेयक तथा इसके द्वारा पारित अधिनियमों के लिये अँगीकार की गई है।

राजस्थान :—

राजस्थान राजभाषा अधिनियम १९५२ ई. के अन्तर्गत हिन्दी राजभाषा के रूप में अँगीकार की गई है। यह उपबन्ध कार्यान्वित हो चुका है।

अजमेर, मध्यप्रदेश और मध्यभारत की सरकारों के साथ अन्तर्राज्यीय संचार के लिए हिन्दी के प्रयोग के लिए समझौते किए गए हैं। राज प्रमुख ने उच्च-न्यायालय की कार्यवाही के लिए हिन्दी का प्रयोग प्राधिकृत किया है।

०२. १२. इस प्रकार हिन्दी-भाषी राज्यों में उत्तरप्रदेश हिन्दी को राजभाषा घोषित करने में अग्रणी रहा। उसने अक्टूबर १९४७ में हिन्दी को राजभाषा घोषित किया और २६ जनवरी, १९६८ से समस्त सरकारी कार्यों में हिन्दी का प्रयोग विधितः अनिवार्य कर दिया। उसने मई १९७१ से अँग्रेज़ी के उपयोग को बन्द कर दिया है। [४५] उसके बाद बिहार ने १९४८ में देवनागरी-लिपि में लिखित हिन्दी को राजभाषा घोषित किया और आदेश दिया कि सरकारी सेवाओं में उन्हीं लोगों को स्थान दिया जाय, जो हिन्दी की जानकारी रखते हों। अब उच्चतम-न्यायालयों, अहिन्दी-भाषी राज्यों व विदेशों से पत्र-व्यवहारों में ही अँग्रेज़ी के प्रयोग की अनुमति है। [४६] राजस्थान तीसरा राज्य था, जिसमें सन् १९४९ से ही हिन्दी को राजभाषा माना तथा यह ऐसा प्रथम राज्य है जिसने उच्च-न्यायालय में १४ फरवरी, १९५० से हिन्दी के प्रयोग को प्राधिकृत कर दिया है। प्रशासन, व्यवसाय, न्यायालय और शिक्षा के क्षेत्रों में राजस्थान हिन्दी के प्रसार में चतुर्मुखी विकास कर रहा

---

४५. स्वतन्त्रता रजत जयन्ती अभिनन्दन ग्रंथ : हिन्दी के २५ वर्ष : गोपाल व्यास : १९७३, पृ. १८८।

४६. वही वही वही पृ. १९९

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

है।[४७] राज्य संगठन के तत्काल बाद मध्यप्रदेश ने ७ फरवरी, १९५८ से मध्यप्रदेश राजभाषा अधिनियम १९५७ के अनुसार शासकीय कार्यों में हिन्दी के उपयोग को अनिवार्य कर दिया है।[४८] हरियाणा की विधान-सभा ने राजकीय भाषा अधिनियम १९६९ स्वीकृत किया, तदनुसार २६ जनवरी, १९६९ से हरियाणा ने हिन्दी के उन्नयन, प्रचार और प्रसार में महत्वपूर्ण प्रगति की है।[४९] हिमाचल प्रदेश में २६ जनवरी, १९७१ से विधान सभा, प्रशासन, न्यायपालिका तथा शिक्षा के क्षेत्र में हिन्दी को बढ़ावा दिया है।[५०] दिल्ली प्रशासन ने ३ जून, १९५६ से भारत सरकार की अनुमति से हिन्दी को राजभाषा मान लिया और १५ अगस्त, १९६८ से महानगर परिषद् की सरकारी कामकाज की भाषा भी हिन्दी हो गई है।[५१] इस प्रकार हिन्दी-भाषी प्रदेशों की हिन्दी, भारत की ४२ प्रतिशत जनता की वैचारिक आवश्यकताओं की पूर्ति कर रही है।[५२]

हिमाचल प्रदेश :—

हिमाचल-प्रदेश भाषा विधेयक और अधिनियम १९५२ ई. व्यवस्था करता है कि सभी पुरःस्थापित विधेयक और विधान-सभा द्वारा पारित अधिनियम हिन्दी में होंगे। यह उपबन्ध कार्यान्वित किया जा चुका है।

०२. १३. राजभाषा-हिन्दी की स्वरूप प्रतिष्ठा व विकास :—

राजभाषा विषयक अनुच्छेद संख्या ३४४ के प्रथम खण्ड में यह व्यवस्था है कि राष्ट्रपति संविधान लागू होने के पाँचवें और दसवें वर्ष में राजभाषा-आयोग नियुक्त करेंगे। जो राजभाषा के प्रयोग, प्रगति और संवर्धन पर अपनी अनुशंसात्मक टिप्पणियाँ प्रस्तुत करेगा। इस विवरण पर संसद की एक उप-समिति विचार करेगी और यह उपसमिति राष्ट्रपति को अपनी राय के सम्बन्ध में एक प्रतिवेदन प्रस्तुत करेगी। राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्रप्रसाद ने इसके अनुसार ७ जून, १९५५ ई. को राजभाषा आयोग की नियुक्ति की

---

४७. स्वतंत्रता रजत जयन्ती अभिनंदन ग्रंथ : हिन्दी के २५ वर्ष : गोपाल व्यास, १९७३, पृ. २०८

४८. वही वही वही पृ २१०

४९. वही वही वही पृ. २१६

५०. वही वही वही पृ. २१९

५१. वही वही वही पृ. २२५

५२. हमारे हिन्दीभाषी प्रदेश : (भारत का नक्शा) —संलग्न पृ. २६८ पर।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

जिससे विचार माँगे गये। [५३] इस आयोग में २० सदस्य थे जो देश के विभिन्न प्रान्तों का प्रतिनिधित्व करते थे। इसके अध्यक्ष थे – श्री बी. पी. खेर। [५४] इस आयोग ने ४९५ पृष्ठों का अपना लिखित प्रतिवेदन दिया। [५५] जो बाद में प्रकाशित किया गया। इस आयोग की सिफारिशों पर डॉ. सुनीतिकुमार चटर्जी और सुब्बारायन ने आरोप लगाये—

(अ) हिन्दी को अहिन्दी-भाषी क्षेत्रों पर थोपने से अराजकता आ जायेगी एवं अहिन्दीभाषी लोग श्रेणियों में बट जावेंगे।

(ब) हिन्दी की साम्राज्यवादी नीति का प्रसार करने से देश विभक्त हो जाएगा।

(स) अँग्रेज़ी का समर्थन किया एवं विश्वज्ञान और विश्वसभ्यता का कोष वताया।

आयोग के प्रतिवेदन के प्रकाशन के बाद वंगाली, मद्रासी और एंग्लोइण्डियन क्षेत्रों में भयंकर विद्रोह उठ खड़ा हुआ। परिणामस्वरूप मद्रास और बंगाल में भाषाई दंगे हुए। [५६] सन् १९५७ में दिसम्बर में बंगाली लेखकों का एक सम्मेलन हुआ। [५७] जिसमें यह प्रस्ताव पारित किया कि राजभाषा-आयोग की सिफारिश हिन्दी को छोड़कर अन्य सभी भारतीय

---

५३. भारत सरकार के गृहमन्त्रालय द्वारा ७ जून, १९५५ को प्रकाशित विज्ञप्ति संख्या—४३।९।५५। पब्लिक—१, को राष्ट्रपति इस विज्ञप्ति द्वारा निम्न संशोधन करते हैं। उपयुक्त विज्ञप्ति के परिच्छेद ४ में '३० अप्रैल, १९५६ की जगह' ३१ जुलाई १९५६' कर दिया जाय : राजभाषा-आयोग का प्रतिवेदन १९५६, पृ. ३६६।

५४. डॉ. विरंचीकुमार बरुआ (असमी), डॉ. सुनीतिकुमार चटर्जी (बंगाल), मगनभाई देसाई (गुजरात), डी. सी. पावटे (कर्नाटक), प्रो पृथ्वीनाथ पुष्प (श्री नगर), एम. के. राजा (एर्नाकुलम), डॉ. पी. सुब्बारायन (मद्रास), जे. पी. नेने (पूना), डॉ. पी. के. पारीजा (उत्कल वि. वि.), सरदार तेजसिंह (पंजाब), एम. सत्यनारायणन् (मद्रास), डॉ. बाबूराम सक्सेना (इलाहाबाद), डॉ. आबिद हुसैन (दिल्ली), डॉ. अमरनाथ झा (पटना) की जगह प्रो. रामधारीसिंह 'दिनकर' को राज्य-भाषा-आयोग का सदस्य नियुक्त किया, डॉ. आर. पी. त्रिपाठी (सागर), बालकृष्ण शर्मा, लोकसभा सदस्य, मौलीचन्द्र शर्मा (दिल्ली), डॉ हजारीप्रसाद द्विवेदी (काशी), जयनारायण व्यास (जयपुर), अनन्तसयनम् आयँगार-राजभाषा-आयोग का प्रतिवेदन १९५६, परिशिष्ट—२, पृ. ३६४—३६५।

५५. १५ और १६ जुलाई, १९५५ ई. को बम्बई में इसकी प्रथम बैठक हुई जिसमें इसने एक प्रश्नावली तैयार करके सारे देश में भेजी : राजभाषा-आयोग का प्रतिवेदन १९५६, पृष्ठ ३६७—३८२।

५६. राजभाषा-आयोग का प्रतिवेदन १९५६, पृष्ठ क से ज तक।

५७. श्री ताराशंकर वन्दोपाध्याय, डॉ. विधानचन्द्रराय, विमलचन्द्र सिन्हा, इनके अतिरिक्त साहित्यकार एवं पत्रकार।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

 CC-0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

भाषाओं के लिए अनिष्टकारी है। अतः इन्हें स्वीकार नहीं किया जाय तथा अँग्रेज़ी को भी भारत की एक राजभाषा घोषित किया जाय। 'राजभाषा' का प्रश्न न केवल बंगला के लिए अपितु सम्पूर्ण देश के लिए जीवन-मरण की समस्या है। राजगोपालाचारी ने अपने एक निबन्ध में हिन्दी को अशक्त, अयोग्य और प्रशासनिक कार्यों के लिए सर्वथा प्रतिकूल बताते हुए तमिलभाषी मद्रास के लिये राजभाषा के रूप में हिन्दी की प्रतिष्ठा को दुर्भाग्यपूर्ण कहा।[५८] मद्रास में सन् १९५७ के दिसम्बर माह में एक अधिवेशन हुआ जिसमें अँग्रेज़ी को राजभाषा के पद पर कायम रखने का प्रस्ताव एकमत से पारित हुआ।[५९] ११ एवं १२ अगस्त, १९६२ ई० को दिल्ली में एक सम्मेलन हुआ इसमें सभी ने एक होकर अँग्रेज़ी को अधिक दिनों तक भारत की राजभाषा बनाये रखने के सरकारी प्रयत्न के विरुद्ध आवाज़ उठाई।[६०] सम्मेलन के अध्यक्ष पद से बोलते हुए मामा वरेरकर ने कहा—अँग्रेज़ी का महत्व चाहे कितना भी हो परन्तु अपने राज में यदि प्रजा का तनिक भी महत्व है तो राजकाज का सारा काम प्रजा की भाषा में चलना चाहिए।[६१] तत्कालीन प्रधानमन्त्री पं० जवाहरलाल नेहरू ने अहिन्दी-भाषियों को दिए गए अपने मौलिक आश्वासनों को एक विधेयक का रूप दिया और वह लोकसभा में विधिवत् पारित हो गया। सन् १९६३ में स्वर्गीय श्री लालबहादुर शास्त्री भारत सरकार के गृहमन्त्री थे और उन्होंने लोकसभा में एक प्रस्तावित विधेयक को पेश किया। इस विधेयक पर २३ अप्रैल, १९६३ ई० को डॉ. सेठ गोविन्ददास ने बहस में भाग लेते हुए विरोध किया। विरोध में उन्होंने कहा कि यह मैं नहीं कर रहा हूँ बल्कि १९१८ ई. में गाँधी की बात को मैं रख रहा हूँ। इस प्रकार सेठ गोविन्ददास ने भूतपूर्व प्रधानमन्त्री पं. जवाहरलाल नेहरू, साहित्यकार बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय, न्यायमूर्ति शारदाचरण मित्र, नेताजी सुभाषचन्द्र बोस, श्री सन्थानम् इत्यादि के विचारों को उदधृत करते हुए एक लम्बा भाषण देकर इस विधेयक का विरोध किया।[६२] विधेयक के अनुसार अँग्रेज़ी तब तक भारत की राजभाषा के रूप में हिन्दी की एक सखी भाषा, सहभाषा के रूप में इसके साथ कायम रहेगी जब तक अहिन्दीभाषी एक भी राज्य वैसा चाहता रहेगा अर्थात् हिन्दी का राजभाषत्व अहिन्दी-भाषियों की कृपा पर आश्रित रहेगा और वह प्रस्ताविक विधेयक

---

५८. हिन्दुस्तान टाइम्स, ३ जनवरी; १९५८, दिल्ली।

५९. यह सम्मेलन डॉ. सी. पी. रामास्वामी अय्यर की अध्यक्षता में 'यूनियन लैंग्वेज कन्वेन्शन आफ एस इण्डिया' का एक अधिवेशन हुआ। जिसमें यह प्रस्ताव पारित हुआ।

६०. इस सम्मेलन में मामा वरेरकर, काका कालेलकर, माधवहरिवणे, महादेवन (तमिल), लक्ष्मीनारायण (सम्पादन, तेलुगु), इत्यादि थे।

६१. हिन्दी की समस्या : प्रो, कामेश्वर शर्मा, पृ. १०५–१०६।

६२ राजभाषा-हिन्दी : डॉ. सेठ गोविन्ददास, राजभाषा विधेयक पर, पृ. २७ से ४० तक।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

विधिवत् भाषा संशोधन विधेयक सन् १९६३ के रूप में पारित हो गया। सेठ गोविन्ददास तथा हिन्दी के कवि श्री मैथिलीशरण गुप्त ने इसके विरोध में अपने मत दिये। राजभाषा सम्मेलन नई दिल्ली के मनोनीत अध्यक्ष ने सम्मेलन में कहा कि राजभाषा अधिनियम में संशोधन करना श्री नेहरू का अपमान करना है।[६३] इस विधेयक का सम्पूर्ण देश में विरोध किया गया। १ अगस्त को अनेक स्थानों में सार्वजनिक सभाएँ हुई और प्रस्ताव पारित हुए।[६४] मराठवाड़ा राष्ट्रभाषा-प्रचार-समिति, औरंगाबाद ने एक सम्मेलन में प्रस्ताव पास किया—'भारत सरकार स्व. पंडित जवाहरलालजी द्वारा दक्षिण-भारत के कुछ निवासियों को दिये गये वचन को कानून का रूप देना चाहती है किन्तु देश के स्वतन्त्रता-सँग्राम के दिनों में महात्मा-गाँधी ने सम्पूर्ण भारत के लिये जिस स्वराज्य की कल्पना की थी और उसमें भाषा की जो स्थिति स्पष्ट की थी उसे मूर्त्त रूप देने के लिए भारत सरकार क्यों कमजोर सिद्ध हो रही है?[६५] संसद के अगले अधिवेशन में एक विधेयक आ रहा है जिसके अनुसार १९६३ के भाषा अधिनियम में संशोधन करके अँग्रेज़ी अनन्तकाल तक बनाये रखने की कोशिश की जाएगी।[६६] इस विधेयक के पूर्व सारे देश में प्रतिक्रियाएँ होने लगी। संसद के अगले अधिवेशन में उक्त विधेयक पेश किया जाने वाला है। केन्द्रीय मंत्रिमण्डल ने अपनी बैठक में इसके प्रारूप को स्वीकार कर लिया है और अब उसे मुख्यमंत्रियों की राय जानने के लिये भेजा जा रहा है। सरकारी सूत्रों का कहना है कि इस विधेयक को स्वीकृत होने के बाद अँग्रेज़ी निश्चित समय तक राजकाज की भाषा रह सकेगी और इस प्रकार अहिन्दीभाषी लोगों को नेहरूजी द्वारा दिये गये आश्वासन की पूर्ति हो जाएगी।[६७] राजभाषा विधेयक कुछ परिवर्तनों के साथ पारित हो गया।[६८]

---

६३. राष्ट्रभाषा सन्देश, प्रयाग, ५,१२ अगस्त, १९६५, पृ. ६।

६४. वर्धा, हिसार, जालंधर, बीकानेर, सिन्धुनगर, दुर्ग, हिंगनघाट, कटिहार (बिहार), आजमगढ़, बरहज, कोरखपुर, बिसौली (बदायूँ), नगीना (बिजनौर), बीसलपुर (पीलीभीत)—राष्ट्रभाषा सन्देश, गुरुवार, २ सितम्बर, १९६५, भाग-१, अंक १०; पृष्ठ १।

६५ राष्ट्रभाषा सन्देश, ५,१२ अगस्त, १९६५. पृ ६।

६६ राष्ट्रभाषा सन्देश, मंगलवार, १६ मई, १९६७, पृ. ६—महावीरप्रसाद अग्रवाल की चेतावनी।

६७. राष्ट्रभाषा सन्देश, मंगलवार, १६ मई, १९६७, पृ. ६।

६८. सात दिन के निरन्तर संघर्ष के बाद अत्यधिक विवादग्रस्त राजभाषा (संशोधन) विधेयक संशोधित रूप में ४१ के विरुद्ध २०५ मतों से लोकसभा ने पारित कर दिया। विधेयक से सम्बद्ध सरकारी संकल्प कुछ शाब्दिक परिवर्तनों के साथ ध्वनि-मतों के द्वारा सदन ने स्वीकृत कर दिया। विधेयक पारित होने के पूर्व १० बार मत विभाजन हुआ। इसमें यह उल्लेख नहीं है कि यह विधेयक कौनसा है परन्तु यह राजभाषा विधेयक (संशोधन) १९६७ है—राष्ट्रभाषा सन्देश, शनिवार, १६ दिसम्बर, १९६७, भाग-३, अंक १२१, पृ. १।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

इसमें दो परिवर्तन किये गए—'ऐसा राज्य जिसकी राजभाषा-हिन्दी है; किसी ऐसे राज्य को पत्र लिखेगा जिसकी राजभाषा-हिन्दी नहीं है तो उसे हिन्दी के साथ अँग्रेज़ी अनुवाद भी भेजना होगा और अँग्रेज़ी अनुवाद को प्रामाणिक भी माना जा सकता है। परन्तु अहिन्दी-भाषी राज्यों पर यह बन्धन नहीं होगा कि हिन्दी-राज्यों को लिखे गए अँग्रेज़ी पत्रों का हिन्दी अनुवाद भी भेजे। इस विधेयक का विरोध करते हुए उत्तर-प्रदेश के २ मन्त्री गिरफ्तार किये गए।[६९] छात्रों ने भी अपने विस्तृत विचार व्यक्त करते हुए इसका विरोध किया।[७०] इस संशोधन के विरुद्ध सेठ गोविन्ददास ने प्रादेशिक याचिका सर्वोच्च-न्यायालय में दायर की। इसमें राजभाषा संशोधन अधिनियम की वैधानिकता को चुनौती दी गई। याचिका में न्यायालय से प्रार्थना की गई है कि उक्त अधिनियम को संविधान के प्रतिकूल होने के कारण निरस्त घोषित कर भारत सरकार को अविलम्ब हिन्दी में कार्य प्रारम्भ करने का निर्देश जारी किया जाय।[७१] गृहमन्त्रालय ने अपने कार्यालय ज्ञापन संख्या २।२९।ग ६ ओ. एल., दिनाँक ६ जुलाई, १९६८ द्वारा राजभाषा अधिनियम १९६७ के उपबन्धों को क्रियान्वित करने के लिए अनुदेश जारी किया है।[७२] सेठ गोविन्ददास द्वारा सर्वोच्च न्यायालय में राजभाषा संशोधन अधिनियम १९६७ को चुनौती दी थी जिसकी सुनवाई ३ अगस्त, १९७० को न्यायमूर्त्ति श्री हिदायतउल्ला के न्यायालय में हुई।[७३] सुनवाई और बहस के उपरान्त मामला समाप्त घोषित किया गया। इस अधिनियम को ८ जनवरी, १९६८ को राष्ट्रपति की अनुमति प्राप्त हुई।[७४]

यह अधिनियम लोकसभा द्वारा पारित रूप में इस प्रकार है :—

(१) यह अधिनियम राजभाषा (संशोधन) अधिनियम, १९६७ कहा जा सकेगा।

(२) राजभाषा अधिनियम, १९६३ (जिसे इसके बाद मूल अधिनियम कहा गया है) की धारा ३ के लिए निम्नलिखित धारा रखी जाएगी, अर्थात् ३ (१) संविधान के प्रारम्भ से पन्द्रह वर्ष की कालावधि के समाप्त हो जाने पर भी हिन्दी के अतिरिक्त अँग्रेज़ी भाषा, नियत तारीख को, और से (क) संघ के उन सभी सरकारी प्रयोजनों के लिए, जिनके लिए वह उस दिन से पूर्व प्रयोग में लाई जाती थी, तथा (ख) संसद में कामकाज के व्यवहार के लिए प्रयोग में बनी रह सकेगी, राजभाषा (संशोधन) अधिनियम, १९६७ केन्द्रीय सरकार की भाषा–नीति के एक प्रस्ताव पर आधारित है। इसकी मुख्य बातें इस प्रकार हैं—

---

६९. राष्ट्रभाषा सन्देश, शनिवार, १६ दिसम्बर, १९६७, भाग–३, अंक १२, पृ. १
७०. वही वही वही पृ. ८
७१. राष्ट्रभाषा सन्देश, १६ मार्च तथा १ अप्रैल, १९६८, भाग–३, अंक–१८, १९, पृ. १
७२. वही मंगलवार, १६ दिसम्बर, १९६९, भाग–५, अंक–१२, पृ. ८
७३. वही रविवार, १६ अगस्त, १९७०, भाग–६, अंक–४, पृ. १
७४. हिन्दी का राष्ट्रभाषा के रूप में विकास : डॉ. शिवराज शर्मा–१९७० ई., पृ. २३२

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

(क) हिन्दी के विकास व प्रसार तथा केन्द्र के विभिन्न कामकाज में उसके उत्तरोत्तर बढ़ते हुए प्रयोग में तेज़ी लाने के लिये केन्द्रीय सरकार अधिक गहन और व्यापक कार्यक्रम तैयार करे और उसे लागू करे।

(ख) संसद के दोनों सदनों में किये गए उपायों और उनके परिणामस्वरूप प्राप्त प्रगति से सम्बन्धित लेखे-जोखे की रिपोर्ट सरकार हर वर्ष प्रस्तुत करे।

(ग) राज्य सरकारों के सहयोग से भारत की प्रमुख १५ भाषाओं से समन्वित विकास के लिये सरकार एक कार्यक्रम बनाये और उसे लागू करें ताकि उन भाषाओं का शीघ्रता से विकास हो सके और वे आधुनिक शिक्षा प्राप्त करने का प्रभावशाली माध्यम वन सकें।

(घ) राज्य सरकारों के परामर्श से भारत सरकार त्रिभाषा फार्मूले को लागू करने के लिये समुचित व्यवस्था करें।

(ङ) केन्द्रीय सेवाओं में ऐसी सेवाओं तथा ऐसे पदों को छोड़कर जिनके लिये केवल हिन्दी अथवा अँग्रेज़ी या दोनों का ही उच्चस्तरीय ज्ञान अनिवार्य है, अन्य ऐसी नियुक्तियों या पदों के लिये ऐसे उम्मीदवारों का चुनाव करे जिन्हें हिन्दी या अँग्रेज़ी का अनिवार्य ज्ञान हो।

(च) केन्द्रीय लोक-सेवा-आयोग से कार्य-प्रणाली पर विचारविमर्श करने के बाद सरकार आयोग की परीक्षाओं तथा उच्च केन्द्रीय सेवाओं के लिये अखिल-भारतीय स्तर पर परीक्षाएँ अँग्रेज़ी तथा संविधान के आठवें अनुच्छेद में उल्लिखित सभी भारतीय भाषाओं में आयोजित करने की व्यवस्था करें। राजभाषा (संशोधन) अधिनियम १९६७ के विभिन्न उपबन्धों के कार्यान्वयन के लिए विस्तृत प्रशासनिक अनुदेश ६ जुलाई, १९६८ को गृहमन्त्रालय द्वारा जारी किये गये थे। इन अनुदेशों में निम्नलिखित व्यवस्थाएँ की गयीं हैं :—

(१) जिन राज्यों ने केन्द्रीय सरकार के साथ पत्र-व्यवहार के लिये हिन्दी को अपना लिया है उनके साथ सभी प्रकार के पत्र-व्यवहार के लिए यथासम्भव हिन्दी का अधिकतम प्रयोग करने के लिये प्रयत्न किये जायें और

(२) कर्मचारियों को टिप्पण और आलेखन के लिए हिन्दी अथवा अँग्रेज़ी के प्रयोग करने की स्वतन्त्रता है और दूसरी भाषा में उसका अनुवाद उस कर्मचारी को नहीं करना होता है।

अनुच्छेद संख्या ३४५ एवं ३४६ में स्पष्ट रूप से यह निर्देशित किया गया था कि यदि दो या दो से अधिक राज्य आपस में हिन्दी के पारस्परिक विनिमय के लिए सहमत हों तो उन राज्यों के बीच में व्यवहार-विनिमय की भाषा '१५ वर्षों की अवधि के भीतर भी' हिन्दी हो सकती है। इसके अनुसार भी हिन्दी की अहिन्दी-राज्यों पर थोपने की बात नहीं

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

कही गई। इसके साथ ही संविधान के ३४७ वें अनुच्छेद में राष्ट्रपति को यह अधिकार दिया गया कि यदि वह इस बात से सहमत हैं कि किसी राज्य विशेष की अधिकतर जनता अपनी मातृभाषा को ही राजभाषा के रूप में व्यवहृत करना चाहती है तो वह 'राष्ट्रपति' उस राज्य अथवा उस राज्य के भाग विशेष में बोली जाने वाली प्रचलित भाषा के लिए जनता की माँग पर उसके राजकीय प्रयोग के लिए आदेश दे सकते हैं। इस अनुच्छेद में भी क्षेत्रीय भाषाओं की प्रतिष्ठा का ध्यान रखा गया है।

संविधान के ३४८ वें अनुच्छेद में स्पष्ट व्याख्या की गई है कि राज्यपाल, राष्ट्रपति की सहमति से उस राज्य विशेष की प्रधान भाषा को उच्च-न्यायालय के अभिलेखों एवं विवरणी की भाषा अधिकृत कर सकते हैं। यहाँ भी राज्य विशेष की प्रथम भाषा को अर्थात् बहुसंख्यक की भाषा को ही प्रधानता दी गई है। संविधान के अनुच्छेद ३४९ वें के अनुसार सन् १९५० से ईसवी सन् १९६५ तक के १५ वर्षों के भीतर सर्वोच्च-न्यायालय, उच्च-न्यायालय तथा कानून एवं बिल के लिए प्रयुक्त होने वाली भाषा के सम्बन्ध में संसद में किसी भी प्रकार का संशोधन विधेयक राष्ट्रपति की अनुमति के बिना उपस्थित नहीं करने का स्पष्ट प्रावधान है। संविधान ने अपने ३५० वें अनुच्छेद के द्वारा क्षेत्रीय भाषाओं के महत्व को अक्षुण्य रखा है और साथ-ही साथ अल्पसंख्यकों को भी उनकी अपनी मातृभाषा में शिक्षित करने का अधिकार देकर भारत की किसी भी भाषा के साथ पक्षपात नहीं किया हैं। राष्ट्रपति अल्पसंख्यकों की भाषा-विषयक शिकायत को सुनने अथवा दूर करने के लिए एक ऐसे पदाधिकारी को नियुक्त कर सकते हैं जिसका कार्य अल्पसंख्यकों को उनकी भाषा की सुरक्षा की ग्यारन्टी देना होगा तथा यह देखना होगा कि संविधान में निहित भाषा सम्बन्धी उद्देश्यों का पालन होता है अथवा नहीं। अपने इस कार्य का लेखा-जोखा वह अल्पसंख्यक के लिए नियुक्त पदाधिकारी, राष्ट्रपति के यहाँ समय-समय पर प्रस्तुत करेगा और राष्ट्रपति उसे संसद के दोनों सदनों में विचारार्थ भेजेंगे और संसद की अपेक्षित टिप्पणी और मंतव्य के बाद उस प्रतिवेदन को सम्बद्ध राज्यों के सरकारों के पास अमल में लाने के लिये भेजा जाएगा। संविधान के ३५१ वें अनुच्छेद के आधार पर हिन्दी-भाषा के प्रसार और विकास के लिए अपने कर्त्तव्य का अवश्य निर्वाह करेगी। वह 'केन्द्र सरकार' हिन्दी के प्रसार और विकास में इस बात का ध्यान रखेगी कि भारत जैसे मिश्रित संस्कृति वाले देश की अभिव्यक्ति का हिन्दी एक सही माध्यम हो तथा हिन्दुस्तानी-भाषा में व्यक्त उनके स्वरूप, शैली, अभिव्यक्ति और संस्कार में किसी प्रकार का व्यावधान उपस्थित नहीं हो। केन्द्र सरकार संविधान की अष्टम अनुसूची में उल्लिखित पन्द्रहों भाषाओं में स्वीकृत हिन्दी, हिन्दुस्तानी के स्वरूप, शैली और उसकी आत्मा को अक्षुण्य रखने का संकल्प लेगी तथा हिन्दी की शब्दावली को यह प्रधानतः संस्कृत वाङ्मय से आकलित करेगी और आवश्यकता पड़ने पर अन्य भारतीय भाषाओं से भी ग्रहण कर हिन्दी के शब्द-भण्डार को सम्पन्न बनाएगी।

१९६२ के संशोधित राजभाषा विधेयक को जिसमें हिन्दी के साथ अंग्रेज़ी को भी एक सह-भाषा के रूप में रखा गया। पुनः संशोधन कर केवल हिन्दी को ही राजभाषा का पद देना पड़े और इस प्रकार भारतीय संविधान के अनुच्छेद राजभाषा विषयक की प्रतिष्ठा कायम हो सके।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

संविधान की अष्टम अनुसूची में भारत की पन्द्रहों भाषाओं की वर्णक्रम अंग्रेज़ी वर्णमाला के क्रम से स्थान दिया गया किन्तु राजभाषा वाले अध्याय में अनुच्छेद संख्या ३४३ से अनुच्छेद संख्या ३५१ तक के नौ अनुच्छेदों में हिन्दी को ही राजभाषा मानकर उसके प्रयोग; प्रगति, संरक्षण और संवर्द्धन आदि की व्यवस्था की गई।

०२.१४. स्वरूप-निर्धारण : समन्वित भाषा :–

हिन्दी को देश की प्रतिनिधि भाषा बनाने का संकल्प लिया गया है। इसका स्वरूप स्वदेशी है तो लेकिन फिर भी अरबी, तुर्की, फ़ारसी और अँग्रेज़ी आदि विदेशी भाषाओं के शब्दों को इसने कुशलता के साथ आत्मसात कर लिया है। आज अपने दूतावासों तथा विदेशी दूतावासों के माध्यम से वह विश्व के विविध देशों में फैल गई है तथा प्रवासी भारतवासियों की सहायता से राष्ट्रसंघ में प्रतिष्ठा पाने की अधिकारिणी बन गई है। इसने विश्व की प्रतिनिधि भाषाओं से यदि कुछ ग्रहण किया है तो उन्हें अपनी सांस्कृतिक धरोहर दी भी है। अपनी पाचनशक्ति से इसने विश्वभाषाओं की अच्छाइयों को अपना भी लिया है। हिन्दी-भाषा स्वदेशी एवं विदेशी तत्वों से निर्मित होकर भारत की भाषाई अनेकता के प्रतिनिधित्व में अप्रतिम है। अपने स्वरूप निर्माण में हिन्दी ने संस्कृत के रिक्थ के बाद सबसे अधिक दाय उर्दू, फ़ारसी और अँग्रेज़ी भाषाओं से ग्रहण किया। इसका प्रधान कारण राजनीतिक एवं प्रशासनिक था। यदि संस्कृतनिष्ठ हिन्दी राजभाषा हुई तो मुसलमान, ईसाई, सिख तथा पारसी उस भाषा को हिन्दुत्व की भाषा समझकर उससे घबरायेंगे और उसी तरह यदि अरबी, फ़ारसी से भरी उर्दू भाषा राजभाषा बनाई गई तो उसे हिन्दू स्वीकार नहीं करेंगे क्योंकि हिन्दू केवल हिन्दी प्रान्तों में ही नहीं बसते वे अहिन्दी-भाषी प्रान्तों में भी बसते हैं। अतएव वे इस निष्कर्ष पर आ गये कि जैसे भारत मिश्रित संस्कृतियों का देश है, उसी प्रकार उसकी राज्यभाषा भी उर्दू का मिश्रित रूप तो होगा ही साथ-ही-साथ इसमें अन्य विदेशी व भारतीय भाषाओं का भी योगदान रहेगा और आवश्यकता पड़ने पर हिन्दी भारत में प्रचलित बोलियों एवं प्रादेशिक भाषाओं से भी शब्दों को ग्रहण करेंगी।[७५]

०२.१५. उपसंहार :–

संविधान के निर्माताओं के मन में निस्सन्देह राजभाषा-हिन्दी के उस स्वरूप की कल्पना थी, जिस स्वरूप का प्रयोग विद्वानों तथा राष्ट्र-नेताओं ने जनभाषा के सबल माध्यम के रूप में किया है। यह किसी बोली या भाषा की विरोधिनी न होकर अविरोध रूप से जन-सम्पर्क का कार्य करेगी। सर्व-जनग्राह्य और सर्व-सुलभ रूप में यह प्रशासन की भावनाओं की सहज वाहिका बनी रहेगी। हिन्दी के द्वारा हम सारे देश को एकता के सूत्र में पिरोना चाहते हैं। हम उसे औरों पर थोपना नहीं चाहते। यदि कहीं भी यह भ्रम हो कि हिन्दी के विकास से लोगों को धक्का लगेगा या उन्हें हानि पहुँचेगी, तो हमें इसके निराकरण के उपाय सोचने चाहिए।[७६]

---

७५. दि कांस्टिट्यूशन आफ इण्डिया, पार्ट १७, आफिसियल लेंग्वेज, आर्टिकल ३५१; पृ. १८९।

७६. भाषा त्रैमासिक : अगस्त १९६४, पृ. २३९–२४०।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

:

अध्याय--३

राजभाषा के रूप में हिन्दी का अधिग्रहण

०३.००. हिन्दी ही राजभाषा क्यों ?

भारत के संविधान के अनुच्छेद ३४३ के अनुसार २६ जनवरी, १९६५ से देवनागरी-लिपि में लिखित हिन्दी भारत संघ की राजभाषा हो गई है; किन्तु राजभाषा अधिनियम १९६३ ने हिन्दी के साथ-साथ अनिश्चितकाल तक के लिए अँग्रेज़ी का प्रयोग करने की छूट दे दी है। परिणाम-स्वरूप कुछ कर्मचारी और अधिकारी सरकारी कार्यों में अंग्रेज़ी का ही प्रयोग करते हैं तथा स्वार्थ-साधना के लिए हिन्दी की उपेक्षा करते हैं। देश की हर क्षेत्र में प्रगति करने और संसार में अपनी प्रतिष्ठा बढ़ाने के लिए हमें हिन्दी को जल्द-से-जल्द सम्पूर्ण देश की राजभाषा बनाना होगा क्योंकि देश का राजकाज यदि अपनी भाषा में नहीं चलेगा तो हम यह नहीं कह सकते कि देश में स्वराज्य है।[१] हिन्दी को देश के अधिकाधिक निवासी बोलते, समझते और प्रयोग करते हैं। उसमें भारत की सभी प्रान्तीय भाषाओं को समन्वित करने की क्षमता है। वह प्रशासन, व्यवसाय, शिक्षा तथा विधि की भाषा बनने के योग्य है। अतः उसे आधुनिक राजभाषा के पद पर प्रतिष्ठित करना सर्वथा समीचीन है। हिन्दी ही राजभाषा क्यों रहे ? इसके कारणों का अनुसन्धान प्रस्तुत अध्याय का प्रतिपाद्य है।

०३.०१ प्रशासन में एक भाषा की अनिवार्य आवश्यकता :—

यह सभी जानते हैं कि भगवान बुद्ध ने संस्कृत को छोड़कर तत्कालीन बोलचाल की भाषा में अपने धर्म का प्रचार किया था। यही महावीर स्वामी ने किया था और यही समाज-सुधारक और धर्म-प्रचारक हमेशा से करते आये हैं। जनता को सम्बोधित करने के लिए जनता की भाषा में ही बोलना चाहिए।[२] इसीलिए भारत की एकता को बनाये रखने के लिए स्वामी दयानन्द और महात्मा-गाँधी ने राष्ट्रभाषा-हिन्दी में अपने विचार जनता के समक्ष रखे थे। अँग्रेज़ों की तो यह दृढ़ मान्यता थी कि प्रशासन चलाने के लिए भाषा का एक होना अनिवार्य है। यदि विधायिका, न्यायपालिका और कार्यपालिका की भाषा एक नहीं हुई तो अराजकता फैलने की आशंका बनी रहती है। विधायिका ने हिन्दी को राजभाषा घोषित कर दिया है किन्तु न्यायपालिका और कार्यपालिका ने निष्ठा के साथ उसका कार्यान्वयन नहीं किया है। परिणामतः निर्धारित अवधि के बाद भी पूरे प्रशासन में भाषाई अस्थिरता बनी हुई है।

---

१. हिन्दी के २५ वर्ष : स्वतन्त्रता रजत जयन्ती अभिनन्दन ग्रन्थ, : सम्पादक गोपाल व्यास, लेख--मोरारजी देसाई, पृ १६३–१६५

२. राष्ट्रभाषा पालि : बाबूराम सक्सेना : भारतवाणी : १९७५, जिल्द तीन : पृ. ३०१

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

न्याय-प्रशासन में तो न्यायाधीश अँग्रेज़ी के पक्षधर हैं किन्तु पक्षकार, वकील तथा जनता, हिन्दी के समर्थक हैं। अतः जनता न्यायालयों के दाव-पेंचों से अनभिज्ञ बनी हुई है। इंगलैण्ड में नार्मन विजय के वाद विधि-भाषा लैटिन और फ्रांसीसी थी जबकि राजभाषा अँग्रेज़ी थी। ऐसे समय में अँग्रेज़ों ने शीघ्र ही प्रशासन में अँग्रेज़ी को प्रतिष्ठित किया।[३] यही आवश्यकता आज भारत में है। देश के पूरे प्रशासन में हिन्दी को प्रतिष्ठित किया जाना ही आज की माँग है।

भारतीय जनता दो वर्गों में बटी हुई है—शिक्षित और अशिक्षित। शिक्षितों के समक्ष कोई विशेष समस्या नहीं है किन्तु अशिक्षितों की रुचियों, कठिनाइयों और आवश्यकताओं को समझाने के लिए दुभाषियों की आवश्यकता है। ये दुभाषिये नियमानुसार बातों को समझाने के लिए अपनी ओर से नई व्याख्याएँ भी प्रस्तुत कर देते हैं जिससे अशिक्षितों के सामने समस्याएँ खड़ी हो जाती हैं। हमारे देश के संविधान में १५ भाषाओं को मान्यता प्राप्त है। सम्पूर्ण देश २२ राज्यों और ९ केन्द्र शासित राज्यों में विभक्त है।[४] प्रत्येक राज्य अपने यहाँ का प्रशासन अलग-अलग भाषा में करे तो सम्पूर्ण देश में जितने राज्य होंगे उतनी ही भाषाएँ प्रचलित होंगी। यदि राज्यों को आपस में पत्र-व्यवहार करना होगा तो प्रत्येक राज्य अपने यहाँ अधिक नहीं तो कम-से-कम भाषाओं के दुभाषिये या विद्वानों को अनुवाद करने के लिये रखेगा ही। यदि प्रत्येक राज्य ऐसा ही करे तो प्रत्येक राज्य में विद्वानों का एक मण्डल स्थापित करना होगा। उसके उपरान्त भी इस प्रक्रिया में पर्याप्त समय और धन लगेगा। परिणाम-स्वरूप प्रत्येक राज्य एक-दूसरे से सम्पर्क कर कार्य करने में असमर्थ रहेंगे। केन्द्र की स्थिति तो और भी कठिन होगी। उसे अपने प्रशासनिक कार्यों को क्रियान्वित करने के लिये जितने राज्य होंगे उतने ही विद्वानों को रखना होगा।

इससे सिद्ध होता है कि प्रशासन के लिये एक भाषा का होना आवश्यक ही नहीं अपितु अनिवार्य है। कम-से-कम उस संघ राज्य में तो और भी अधिक जो विशाल हो, जहाँ विभिन्न संस्कृतियाँ, आचार-विचार, खान-पान, वेश-भूषा सभी में विभिन्नता हो, अन्यथा संघ अपना कार्य कर ही नहीं सकेगा। हमारे देश के संविधान में भाषा-समस्या पर विचार किया गया है। संविधान के अनुच्छेद ३४३ के उपबन्धों के अनुसार सन् १९६५ तक अँग्रेज़ी का व्यवहार होता रहेगा। इस अनुच्छेद में कहा गया है कि संघ की राजभाषा-हिन्दी होगी लेकिन सन् १९६५ तक सब राजकीय प्रयोजनों के लिये अँग्रेज़ी भाषा पूर्ववत् प्रयुक्त होती रहेगी। साथ ही संविधान में यह व्यवस्था भी है कि १५ वर्ष की निर्दिष्ट कालावधि में संघ के राजकीय प्रयोजनों में से राष्ट्रपति, आदेश द्वारा अँग्रेज़ी के साथ हिन्दी-भाषा के प्रयोग को प्राधिकृत कर सकता है।[५] इस धारा को अधिक स्पष्ट रूप से राजभाषा (संशोधन)

---

३. न्यायालय के क्षेत्र में स्वभाषा कहाँ तक ? : डा. मोती बाबू : स्वतन्त्रता रजत जयन्ती अभिनन्दन ग्रंथ —सम्पादक गोपालदास व्यास, दिल्ली प्रादेशिक हिन्दी-साहित्य, १९७३, पृ. १२१

४. इण्डिया, १९७६, पृष्ठ ७

५. राजभाषा [illegible]

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

विधेयक १९६७ में प्रशासन के लिए हिन्दी-भाषा के प्रयोग के विषय में कहा गया है—'राजभाषा अधिनियम की धारा ३ में संशोधन के लिए राजभाषा अधिनियम १९६७ की धारा ३ (क) में स्पष्ट कहा है'—(क) संघ के उन सब शासकीय प्रयोजनों के लिए जिनके लिए वह उस दिन से अव्यवहितपूर्व प्रयोग में लाई जाती थी तथा (ख) संसद में कामकाज के संव्यवहार के लिये, प्रयोग में बनी रह सकेगी।[६] हमारे यहाँ अभी तक अँग्रेज़ी भाषा का प्रशासन में प्रयोग अधिकता से होता है इसलिए हिन्दी बोलने वालों को उपेक्षा की दृष्टि से देखा जाता है। उन्हें प्रशासनिक कार्यों में कम स्थान प्राप्त होते हैं। हमारे देश में अभी भी दो भाषाएँ हैं जबकि होना एक चाहिए। इस सम्बन्ध में श्री एम. सी. सीतलवाड़ की अध्यक्षता में विधि-आयोग ने न्याय-प्रशासन की भाषा के विषय में अपने प्रतिवेदन में कहा है—'सर्वोच्च-न्यायालय तथा उच्च-न्यायालयों में प्रयोग की भाषा हिन्दी होनी चाहिए और अँग्रेज़ी अनिश्चित काल तक नहीं चल सकती। अतः इस शुभ प्रारम्भ में अब विलम्ब उचित न होगा।'[७] राजस्थान सरकार ने भी इस दिशा में पहल की है और उच्च-न्यायालयों के भी निर्णय में हिन्दी के प्रयोग की सिफारिश की है, वह अनुकरणीय है।[८] २० जनवरी, १९७७ को इलाहाबाद उच्च-न्यायालय ने पहली बार एक प्रार्थना-पत्र हिन्दी-भाषा में स्वीकार किया। सितम्बर १९७७ ई. में राज्य सरकार ने एक अधिसूचना जारी कर कहा कि उच्च-न्यायालय में किसी वाद के सम्बन्ध में पंजीयित किए जाने वाले कथन और दस्तावेज़ों में हिन्दी-भाषा का ही प्रयोग किया जाना चाहिए। न्यायालय ने यह निर्णय दिया कि गाजियाबाद के जल-विद्युत-विभाग के कर्मचारी श्री केदारदत्त जोशी द्वारा प्रस्तुत वर्तमान प्रार्थना-पत्र जिसमें लघुन्यायालय में उनके विरुद्ध विचाराधीन एक वाद को स्थानान्तरित करने की माँग की गई है, एक ऐसा लेख-पत्र है जो राज्य सरकार की अधिसूचना की परिधि में आता है। इसके अतिरिक्त इस प्रार्थना-पत्र के साथ एक शपथ-पत्र भी संलग्न है। इस प्रश्न पर कोई विवाद नहीं है कि शपथ-पत्र हिन्दी में नहीं होना चाहिए। माननीय न्यायाधीश ने कहा कि 'यह प्रार्थना-पत्र उन लेखपत्रों की श्रेणी में आता है जो इस न्यायालय में हिन्दी में पंजीयित किये जा सकते हैं।'[९] सेठ गोविन्ददास ने सन् १९६३ के राजभाषा कानून की जो सन् १९६७ में संशोधित किया गया था की वैधता को चुनौती दी थी। उन्होंने अपना बयान हिन्दी में दिया। मुख्य न्यायाधीश श्री हिदायतउल्लाह ने प्रश्न-उत्तर भी हिन्दी में ही किये।[१०] शासन की सफलता के लिए तथा सरकार और जनता में सहयोग उत्पन्न करने के

---

६. साहित्य-परिचय : भाषा-समस्या विशेषांक : जनवरी-फरवरी, १९६८, पृ. २३३

७. राष्ट्रभाषा सन्देश : शुक्रवार, १६ जनवरी, १९७०, पृ. ५

८. राष्ट्रभाषा सन्देश : शुक्रवार, १६ जनवरी, १९७०, पृ. ५, 'उच्चन्यायालय और हिन्दी' केन्द्रीय सचिवालय, हिन्दी-परिषद्

९. वही पृ. ५

१०. राष्ट्रभाषा सन्देश : बुधवार; १६ सितम्बर, १९७०, पृ. ३

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

लिए यह आवश्यक है कि प्रशासन की भाषा वही हो, जो जनता की भाषा है।'[११] इस सम्बन्ध में पंडित जवाहरलाल नेहरू का मत है—'प्रजातन्त्रात्मक शासन प्रजा द्वारा और प्रजा के लिए होता है। ऐसे शासन का उद्देश्य–सर्वसाधारण का विकास करना है। मेरा दृढ़ विचार है कि--भारतीय जनता की वास्तविक प्रगति केवल अपनी भाषा की सहायता से सम्भव होगी, न कि किसी विदेशी भाषा की सहायता से। उन्होंने यह भी कहा था कि शैक्षिक और प्रशासनात्मक कार्यों में हिन्दी के प्रयोग को हर सम्भव सहायता देनी चाहिए'।[१२] इन विचारों का अनुमोदन श्रीमती इन्दिरा गाँधी ने भी किया है कि भारत की सम्पर्क-भाषा केवल हिन्दी ही हो सकती है।[१३]

प्रशासन के क्षेत्र में हिन्दी का प्रयोग कोई नवीन कल्पना नहीं है। राष्ट्रीय अभिलेखागार, नई दिल्ली में सुरक्षित पुराने आलेख इस बात के स्पष्ट प्रमाण हैं कि राजपूतों, मुगलों तथा ईस्टइण्डिया कम्पनी के शासनकाल में पर्याप्त प्रशासनिक पत्राचार हिन्दी में होता था, कानूनी दस्तावेज़ हिन्दी में तैयार होते थे तथा सरकारी आज्ञाएँ हिन्दी में निकलती थीं।

स्वाधीनता प्राप्ति के पूर्व अनेक देशी रियासतों का सरकारी कामकाज तथा न्यायालयों की कार्रवाई हिन्दी में होती थी। होलकर तथा बड़ौदा राज्यों का सम्पूर्ण राजकार्य हिन्दी में ही होता था।

स्वाधीनता प्राप्ति के बाद उत्तर-प्रदेश, राजस्थान, मध्यप्रदेश, बिहार तथा गुजरात राज्यों के प्रारम्भ से ही हिन्दी को प्रशासनिक भाषा माना गया तथा हिमाचल-प्रदेश, हरियाणा और दिल्ली प्रशासन ने भी हिन्दी में सफलतापूर्वक कार्य किया है। इसके लिए तकनीकी शब्दावली का प्रयोग भी किया जा रहा है।

इन अनुभवों से यह स्पष्ट हो जाता है कि प्रशासन के कार्य-संचालन की क्षमता हिन्दी में पूर्णरूप से विद्यमान है।

०३.०२. हिन्दी भारत-भर की व्यावसायिक भाषा के रूप में पूर्व से प्रचलित है–

किसी भी भाषा को व्यापक बनाने में व्यावसायी वर्ग अपना योग देता है। यह वर्ग अप्रत्यक्ष रूप से भाषा को व्यापक बनाने का कार्य करता है। प्रत्येक मनुष्य की अपनी

---

११. हिन्दी-साहित्य-परिचय : भाषा-समस्या विशेषांक : जनवरी-फरवरी, १९६८, पृष्ठ १३४

१२. वही पृष्ठ १३५

१३. भारतवाणी : इन्दिरा गांधी, जिल्द तीन : १९७५, पृष्ठ ३७०

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC 0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

कुछ-न-कुछ अनिवार्य आवश्यकताएँ होती हैं, जिनकी पूर्ति वह बाजार से करता है। जहाँ पर व्यापारी लोग व्यापार करते हैं वहाँ पर सभी प्रकार के भाषा-भाषी लोग होते हैं। बाजार में क्रेताओं और विक्रेताओं का सम्मिलन होता है। वे अपनी-अपनी सुविधा, उपयुक्तता और जानकारी के आधार पर भाषाओं का प्रयोग करते हैं। इस तरह भाषा का प्रचार और प्रसार सुविधा से होता रहता है।

हिन्दी-भाषा को दीर्घकाल से व्यावसायियों का संरक्षण प्राप्त है। हिन्दी के विविध रूप अलग-अलग समय में प्रचलित रहे। मुगलों ने इसे 'भाखा' के नाम से जाना, मुसलमानों ने इसे 'खड़ी-बोली' कहा और अँग्रेज़ों ने हिन्दुस्तानी नाम दिया। मुगलों के शासनकाल में हमारे देश ने व्यापार, शिक्षा, साहित्य और कला के क्षेत्र में बहुत उन्नति की। प्रारम्भ में मुगल सेनाओं के सेनाधिकारियों और सैनिकों का सम्बन्ध हमारे देश के व्यापारियों से अपनी आवश्यकता पूर्ति के लिये दिल्ली और उसके आसपास के बाजारों से रहा। वहाँ पर उनकी अपनी अरबी-फ़ारसी-भाषा का सम्पर्क देश की तथाकथित हिन्दी-भाषा से हुआ। उन दिनों आगरा, बनारस, जौनपुर, फ़ैज़ाबाद, पटना, लखनऊ, खैराबाद आदि कपड़ा उद्योग के प्रसिद्ध केन्द्र थे। ये नगर मुख्यतः हिन्दी-प्रदेश थे। यहाँ की प्रमुख भाषा हिन्दी थी जिसका प्रचार-प्रसार और अधिकाधिक मात्रा में प्रचलन व्यापारियों के द्वारा हुआ।

हमारे देश का व्यापारिक सम्बन्ध एशिया और यूरोप से भी रहा है। देश का व्यापार समुद्र और थल मार्गों द्वारा होता था। देश के प्रमुख बन्दरगाह पश्चिम और दक्षिण भाग में थे एवं थलमार्ग-लाहौर, मुल्तान, पटना और आगरा प्रमुख थे। इन नगरों का व्यापारिक महत्व था। बाहर से आने वाले व्यापारी, व्यापार और लेन-देन के लिए खड़ी-बोली का प्रयोग करते थे। अनेक मुगल सम्राटों ने लाहौर, आगरा और फतहपुर में उत्पादन केन्द्र स्थापित किए। मुगल-काल में व्यापार की उन्नति के लिये दिल्ली के पास कई व्यापारिक नगरों, जैसे जौनपुर, हिसार, फतेहाबाद आदि की स्थापना हुई।[१४] इन नगरों के कारण वहाँ की बोली को पनपने का अवसर मिला क्योंकि यहाँ का मजदूर-वर्ग वहाँ की बोली का प्रयोग करता था। इस प्रकार हिन्दी का फैलाव होता रहा। हिन्दी-भाषा प्रदेश के व्यापारिक नगरों, ग्रामों, कस्बों में मजदूर एवं जुलाहों का बहुत बड़ा वर्ग रहता था। ये लोग काम की तलाश में भिन्न-भिन्न बोलियों के नगरों, ग्रामों और कस्बों में आया-जाया करते थे। इनकी आवश्यकता पूर्ति के लिये सामान्य बोली की आवश्यकता पड़ती थी। इसकी पूर्ति खड़ी-बोली से होती थी। दिल्ली दीर्घकाल से विभिन्न सम्राटों की राजधानी रहा है। यह देश का प्रमुख केन्द्र स्थल था जिससे प्रायः सभी का सम्बन्ध किसी-न-किसी रूप में होता था। खड़ी-बोली यहीं की व्यापारिक भाषा थी।

---

१४. इन स्थलों को डॉ. उदयनारायण तिवारी, डॉ. धीरेन्द्र वर्मा और डॉ. ग्रियर्सन : हिन्दी भाषा का उद्गम और विकास : पृ. २२९–२३०, हिन्दी-भाषा का इतिहास : पृ. ६४ और लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ इण्डिया, खण्ड ९, भाग–१, पृ. ६३ में खड़ी-बोली का प्रदेश माना है।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

जहाँगीर के दरबार में अँग्रेज़ों ने भी व्यापार करने की अनुमति प्राप्त की थी और वे देश में व्यापार करने लगे। व्यापार के लिये उन्हें भी अपनी भाषा के स्थान पर यहाँ की भाषा की आवश्यकता प्रतीत हुई क्योंकि उन्हें जिन लोगों के साथ व्यापार करना था, बाजार में प्रतिदिन का लेनदेन करना था, वह वर्ग उनकी भाषा से अनभिज्ञ था। इस सम्बन्ध में २९ अगस्त, सन् १८०६ को दिल्ली के असिस्टेन्ट रेजिडेन्ड सी. टी. मेटकॉफ ने जान गिलक्राईस्ट को लिखा था कि–'भारत के जिस भाग में मुझे काम करना पड़ा है, मुझे हर जगह ऐसे लोग मिले हैं जो हिन्दुस्तानी बोल सकते हैं। हिन्दुस्तानी एक ऐसी ज़बान है जो आमतौर से उपयोगी साबित हुई है और मेरी समझ में संसार की किसी भी भाषा से उसका व्यवहार बहुत बड़े पैमाने पर होता है।'[१५] इसी प्रकार का मत लेफ्टिनेन्ट टॉमस रोवक का है–'जिसने हिन्दुस्तानी को सामान्य जनता की बोलचाल की भाषा तथा भारत की महान लोकप्रिय भाषा बताया है।'[१६] अँग्रेज़ों का सम्बन्ध भी दिल्ली और उसके आसपास के प्रदेशों से रहा है। अँग्रेज़ों ने कलकत्ता में सन् १८०० में फोर्ट विलियम कॉलेज की स्थापना की। तब तक अँग्रेज़ शासक नहीं बने थे। तब और जब शासक बन गये तब भी अँग्रेज़ों का व्यापार से घना सम्बन्ध रहा है क्योंकि व्यापार के माध्यम से उन्होंने सोने की चिड़िया कहलाने वाले भारत को खोखला बना दिया। इस प्रकार उनका सम्पर्क दीर्घकाल तक व्यापार के माध्यम से लोगों से रहा। उनकी भी राजधानी दिल्ली थी। अतः दिल्ली उनके लिए केन्द्र प्रदेश था।' 'केन्द्रीय प्रदेश में व्यापार की भाषा होने के कारण अन्तर्प्रान्तीय व्यवहार के लिए भी उसका उपयोग होता था। यह आश्चर्य की बात होती कि अँग्रेज़ व्यापारी खड़ी-बोली सीखते और भारत के लोग अन्तर्प्रान्तीय व्यवहार के लिये खड़ीबोली को न अपनाते।'[१७]

अँग्रेज़ों का शासन हमारे देश में पूरी तरह से फैला था। उनका आधिपत्य सम्पूर्ण देश पर था। अतः उनका सम्बन्ध सभी लोगों से था। उनके व्यापारिक केन्द्रों का जाल सम्पूर्ण देश में फैला था। इस प्रकार हिन्दी का किसी–न–किसी रूप में व्यावसायिक उद्देश्य की पूर्ति के लिए प्रचलन था। यह प्रचलन अँग्रेज़ों के पूर्व मुगल सम्राटों के कारण था। उनका दृष्टिकोण व्यावसायिक कम साहित्यिक अधिक था। इसके लिए उन्होंने हिन्दी सीखी तथा हिन्दी के साहित्य-निर्माण में अपना योगदान बड़ी तन्मयता के साथ किया। अँग्रेज़ों के इस देश से चले जाने के उपरान्त भी 'हिन्दी–हिन्दुस्तानी' का आन्दोलन देश में ही नहीं अपितु संविधान निर्माण के समय तक भी रहा। इसने संविधान–निर्माण समिति, देश के राजनीतिक नेताओं और कांग्रेस दल को अपने आकर्षण में लपेटे रखा। हिन्दी का हमारे देश में व्यावसायिक भाषा के रूप में पूर्व प्रचलन रहा है। इसका अपना इतिहास और महत्व भी है। वर्तमान समय में भी बाजारों में इसका प्रयोग देश की अन्य भाषाओं की तुलना में अधिक होता है। अतः इसे आधुनिक समय की व्यावसायिक भाषा कहा जाता है। सम–सामयिक पत्र–पत्रिकाओं तथा विज्ञापनों में हिन्दी का प्रसार सर्वाधिक है। अब राष्ट्रीयकृत बैंकों ने अपने–अपने प्रकाशनों में

१५,१६. ए वोकेबुलरी, हिन्दुस्तानी एण्ड इंगलिश, इंगलिश एण्ड हिन्दुस्तानी

१७. भाषा और समाज : डॉ. रामविलास शर्मा, पृ. २८१.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

हिन्दी को भी स्थान दिया है जिससे उनके आर्थिक विवेचन सामान्य जनता तक पहुँचने लगे हैं। सरकारी कम्पनियों, निगमों और विभागों के विवरण अब हिन्दी में प्रकाशित होने लगे हैं तथा अन्तर्राष्ट्रीय संधियों और करारों में हिन्दी का प्रयोग हो रहा है। इससे हिन्दी की सक्षम व्यावसायिक भाषा होने की सामर्थ्य का निर्विवाद प्रमाण मिल गया है।

०३.०३. हिन्दी और अन्य प्रान्तीय भाषाएँ :–

हिन्दी को भारतीय संघ की राजभाषा के रूप में मान्यता उसकी विशेष स्थिति के कारण मिली है। संविधान में १५ भाषाएँ मान्य हैं। इनमें से संस्कृत, असमी, बंगाली, गुजराती, मराठी, पंजाबी और हिन्दी, भारत–आर्यकुल की भाषाएँ हैं। इनमें संस्कृत सबसे प्राचीन है। हिन्दी तथा अन्य आर्यकुल की भाषाओं का विकास संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश और देश–भाषाओं के रूप में एक समान हुआ है। अतः इनमें पारिवारिक सम्बन्ध और सहज एकता है। कश्मीरी और उर्दू को छोड़कर शेष पर संस्कृत का प्रभाव अधिक है। इनके साहित्यिक आदर्श और प्रेरणा का उद्गम संस्कृत में है तथा इनके भावात्मक और बौद्धिक अनुभव समान हैं। उर्दू वास्तव में हिन्दी की एक शैली है जिसमें फ़ारसी और अरबी का शब्द बाहुल्य है। कश्मीरी दरदी समूह की ईरानी भाषा है जो फ़ारसी-अरबी से प्रभावित है। उर्दू-कश्मीरी की लिपि भी अरबी-फ़ारसी है किन्तु इनके साहित्यिक आदर्श और प्रेरणा के स्रोत एक ही हैं। संस्कृत, हिन्दी, मराठी, और नेपाली की लिपि देवनागरी है। गुजराती की नागरी-लिपि में शिरोरेखा नहीं होती। गुरुमुखी, असमी, बंगला, और उड़िया वर्णों का विकास भी ब्राह्मी से हुआ है। अतः इन भाषाओं के ध्वनि-रूपों और दृश्य-रूपों में साहजिक एकता है।

दक्षिण भारत की तमिल, तेलुगु, कन्नड़ और मलयालम चारों भाषाएं द्राविड़ परिवार की हैं। इनकी संरचना हिन्दी से भिन्न है किन्तु इनके विकास के मानसिक वातावरण, संस्कृति और साहित्यिक आदर्श समान हैं। इन सभी की वर्णमाला और ध्वनि–पद्धति देवनागरी के समान है। केवल तमिल में थोड़ा भेद है क्योंकि उसमें महाप्राण वर्ण नहीं होते। संस्कृत का द्राविड़ भाषाओं पर और द्राविड़ भाषाओं का संस्कृत पर प्रभाव पड़ा जिससे समन्वय की प्रक्रिया का उदय हुआ। इसका प्रभाव हिन्दी पर पड़ा और उसने द्राविड़ भाषाओं की शब्द-सम्पदा और ध्वनि-पद्धति के कतिपय वर्ण लेकर अपने स्वरूप को गढ़ लिया।

हिन्दी ने अपने विकासकाल में जहाँ एक ओर संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश और देश-भाषाओं से शब्द ग्रहण किये, वहीं दूसरी ओर द्राविड़-भाषाओं से भी शब्द-सम्पदा प्राप्त की। इसके साथ ही मुस्लिम विजेताओं की अरबी, फ़ारसी, तुर्की, पश्तो और बलूची भाषाओं के प्रभावों को भी स्वीकार किया। पाश्चात्य देशों की पुर्तगाली, फ्रेंच, डच, अंग्रेज़ी और रूसी भाषाओं के शब्दों को भी उसने अपना लिया। अपने सहज लचीलेपन के कारण हिन्दी बहते हुए जल के समान सभी प्रभावों को परिष्कृत करती रही और अपनी मौलिक प्रकृति को अक्षुण्ण रखकर वह सब प्रभावों को पचाती रही जिससे वह भारत के एक कोने से लेकर दूसरे कोने तक बोली और समझी जाने लगी। परिणामतः वह देश की अखण्डता और एकता की प्रतीक भाषा बन गई।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

संविधान में वर्णित १५ भाषाओं की समन्वयकारिणी सम्पर्क-भाषा बनकर। इस प्रकार हिन्दी भारत की भाषाई एकता को जोड़ने वाली कड़ी है। इस दृष्टि से वह प्रादेशिक भाषाओं में सर्वाधिक विकसित भाषा है।

०३. ०४. हिन्दी भारत की केन्द्रीय भाषा है –

भारत की राजनीति में दिल्ली का विशेष स्थान है। वह चिरकाल से भारत की राजधानी रही है। हिन्दी, दिल्ली, मेरठ और बिजनौर जिलों में खड़ी-बोली या कौरवी बोली के नाम से पहचानी जाती है। आज की हिन्दी इसी खड़ीबोली का साहित्यिक रूप है। यह पश्चिमी हिन्दी वर्ग की आकार-बहुला भाषा है।[१८]

आधुनिक हिन्दी को ५ वर्गों में विभक्त किया जाता है जिसमें राजस्थानी, पश्चिमी हिन्दी, पूर्वी हिन्दी, बिहारी और पहाड़ी वर्गों की बोलियों का समष्टिगत रूप साहित्यिक दृष्टि से हिन्दी के नाम से पुकारा जाता है किन्तु भाषा-विज्ञान की दृष्टि से केवल पश्चिमी हिन्दी को ही हिन्दी–भाषा माना गया है।[१९] इसमें भी पश्चिमी हिन्दी की खड़ीबोली, बाँगरू, ब्रज, कन्नौजी और बुन्देलखण्डी बोलियों में से खड़ी-बोली के व्याकरण की दृष्टि से साधु-रूप को ही हिन्दी की संज्ञा दी गई है। भौगोलिक दृष्टि से पाँच उपभाषाओं और २२ बोलियों को एक सूत्र में गुम्फित करने वाली भाषा हिन्दी है।[२०]

पश्चिमी हिन्दी केन्द्रीय हिन्दी है। उसके उत्तर में पहाड़ी, पूर्व में पूर्वी हिन्दी और बिहारी, दक्षिण-पश्चिम में राजस्थानी हिन्दी है। भारत की राजधानी की भाषा होने के कारण वह परिवर्तनशील है। इसमें भाषाई प्रभाव ग्रहण करने और उसे आत्मसात् करने की अद्भुत क्षमता है इसीलिए यदि यह भारत और विदेशों की भाषाओं के सम्पर्क से प्रभावित होती है तो अपनी मौलिक संरचना-पद्धति से आन्तरिक एवं बाह्य भाषाओं को प्रभावित भी करती है। साहित्यिक समृद्धि एवं विचार-अभिव्यक्ति की क्षमता के कारण यह संसार की श्रेष्ठ भाषा बन गई है।

ऐतिहासिक दृष्टि से भी हिन्दी मध्यदेश की भाषाओं—संस्कृत, पालि, प्राकृत, अपभ्रंश की उत्तराधिकारिणी है। यदि इस मध्यदेश में से उठकर कोई बोली भाषा की पदवी प्राप्त करती है तो वह हिन्दी ही कहलायेगी। इस प्रकार राजपूतकाल की

---

१८. ग्रामीण हिन्दी-बोलियाँ : डॉ. हरदेव बाहरी : १९६६, पृ. ४०

१९. भाषा एवं हिन्दी-भाषा : डॉ. सतीश कुमार रोहरा : १९७२, पृ. १५७

२०. राजस्थानी हिन्दी की ५ बोलियाँ : मारवाड़ी, जयपुरी, मेवाती, मालवी, निमाड़ी,
— बिहारी हिन्दी की ३ बोलियाँ : मैथिली, मगही, भोजपुरी
— पश्चिमी हिन्दी की ५ बोलियाँ : खड़ीबोली, बाँगरू, ब्रज, बुन्देली, कन्नौजी
— पूर्वी हिन्दी की ३ बोलियाँ : अवधी, बघेली, छत्तीसगढ़ी
— पहाड़ी हिन्दी की ६ बोलियाँ : कुमायुँनी, गढ़वाली, गोरखाली, कुल्लुई, सिरमौरी, नेवारी

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

डिंगल, सल्तनतकाल की पिंगल, मुगलकाल की ब्रज या अवधी, ब्रिटिशकाल की हिन्दुस्तानी और स्वातन्त्र्यकाल की खड़ी-बोली हिन्दी-भाषा ही कहलाती है।[२१] इस दृष्टि से भी हिन्दी भारतीय भाषाओं की सम्प्रेरिका और राष्ट्रीय एकता की माध्यम बनी रही है।

०३. ०५. हिन्दी बहुसंख्यक जनता की भाषा है –

भारत में हिन्दी-भाषा-भाषियों की संख्या विशाल है। इस बात को प्रमाणित करने के लिए देश की जनगणना में मातृभाषा सम्बन्धी आंकड़ों के आधार पर अध्ययन किया गया। देश में स्वाधीनता प्राप्ति के बाद तीन बार जनगणनाएँ हुई—सन् १९५१ में, सन् १९६१ में और सन् १९७१ में। इनके आधार पर हिन्दी-भाषा-भाषियों की संख्या और प्रतिशत देश की अन्य भाषाओं की तुलना में अधिक बैठता है।

दूसरा आधार देश की विभिन्न भाषाओं में निकलने वाले दैनिक, साप्ताहिक और मासिक पत्र-पत्रिकाओं की संख्या और प्रतिशत का है क्योंकि जिस भाषा के बोलने, समझने और पढ़ने वाले अधिक होंगे उस भाषा के पत्र-पत्रिकाओं की मांग अधिक होगी, उनका प्रसार अधिक होगा। इस प्रकार उनकी संख्या उस भाषा विशेष की विशाल संख्या को सिद्ध करती है।

तीसरा प्रमुख आधार है शिक्षा के माध्यम का। प्रारम्भिक से लेकर माध्यमिक स्तर तक हिन्दी-भाषा माध्यम के रूप में सम्पूर्ण देश में अन्य भाषाओं की तुलना में अधिक पढ़ाई जाती है। मैंने विश्वविद्यालय स्तर को ही अध्ययन के लिये चुना है। हमारे देश में ८३ विश्वविद्यालय हैं। उनमें से ३९ ने अपने विभिन्न पाठ्यक्रमों एवं परीक्षाओं के लिये हिन्दी को माध्यम के रूप में स्वीकार किया है।[२२] इस प्रकार कुछ विश्वविद्यालयों का ४०.६९ प्रतिशत हिन्दी माध्यम को स्वीकार करने वाले विश्वविद्यालय हैं।

इस प्रकार इन तीन मुख्य आधारों पर कहा जा सकता है कि देश में हिन्दी-भाषा-भाषियों की संख्या अपेक्षाकृत अधिक है। यह भारत की २३ करोड़ जनता की मातृभाषा है तथा शेष ४ करोड़ जनता की द्वितीय भाषा है। साथ ही ६० लाख प्रवासी भारतवासियों की यह मातृभाषा है।[२३]

---

२१. ग्रामीण हिन्दी बोलियाँ : डॉ. हरदेव बाहरी : १९६६, पृ. २६

२२. हिन्दी वार्षिकी : १९७०, पृष्ठ २३४–२९७ एवं गृह-मन्त्रालय की वार्षिक रिपोर्ट १९७०, पृष्ठ १४–१५

२३. हिन्दी-साहित्य का इतिहास : डॉ. नगेन्द्र : १९७३; पृष्ठ ७७

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

सन् १९५१ की जनगणना के अनुसार भारत की प्रमुख भाषाओं की स्थिति।[२४]

मातृभाषा	संख्या	प्रतिशत
असमी	४६,८८,२२६	१.३९
बंगाली	२,५१,२१,६७४	७.०३
गुजराती	१,६३,१०,७७१	४.५७
हिन्दी, उर्दू, हिन्दुस्तानी	१४,९८,४४,३११	४२.१९
पंजाबी	१०,९०,०००	३.०८
कन्नड़	१,४४,७१,७६४	४.०५
मलयालम	१,३३,८०,१०९	३.६९
मराठी	२,७०,४९,५२२	७.५७
उड़िया	१,३१,५३,९०९	३.६८
तमिल	२,६५,४६,७६५	७.४३
तेलुगु	३,२९,०६,७८४	९.२२
	योग —	९०.८२

इस तालिका में कश्मीरी एवं संस्कृत का उल्लेख नहीं है। संस्कृत सामान्य रूप से मातृभाषा नहीं के समान है और सन् १९५२ में कश्मीरी भाषा के बारे में जानकारी प्राप्त नहीं हो सकी थी। बाकी प्रायः १० प्रतिशत में अन्य सैकड़ों भाषाएँ सम्मिलित थीं।

देखिये—दण्ड चित्र क्रमाँक-१

भारतीय भाषाओं की जनगणना[२५] —

सन् १९६१ में जनगणना के साथ-साथ भाषा-भाषियों की भी गणना की गई। तब भारत की कुल संख्या ४४ करोड़ थी। इसमें हिन्दी बोलने वालों की संख्या १३ करोड़, ३४ लाख अर्थात् ३० प्रतिशत गिनी गई। बिहार और बंगाल मिलाने पर हिन्दी-भाषियों की कुल संख्या १६ करोड़, ५१ लाख होती है। इसके अतिरिक्त ९५ लाख लोगों ने हिन्दी को अपनाया है यद्यपि उनकी बोली यह नहीं है। इस प्रकार हिन्दी-भाषियों की कुल संख्या १७ करोड़, ४६ लाख होती है।

---

२४. राष्ट्रभाषा सन्देश : गुरुवार : १६ अक्टूबर : १९६९, पृष्ठ ८

२५. हिन्दुस्तान वार्षिक : हिन्दुस्तान समाचार, नई दिल्ली, १९६९–७०; पृ. १५६–१५०

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

जनगणना १९५१ के अनुसार

स्केल — १ सेन्टीमीटर = १ करोड़

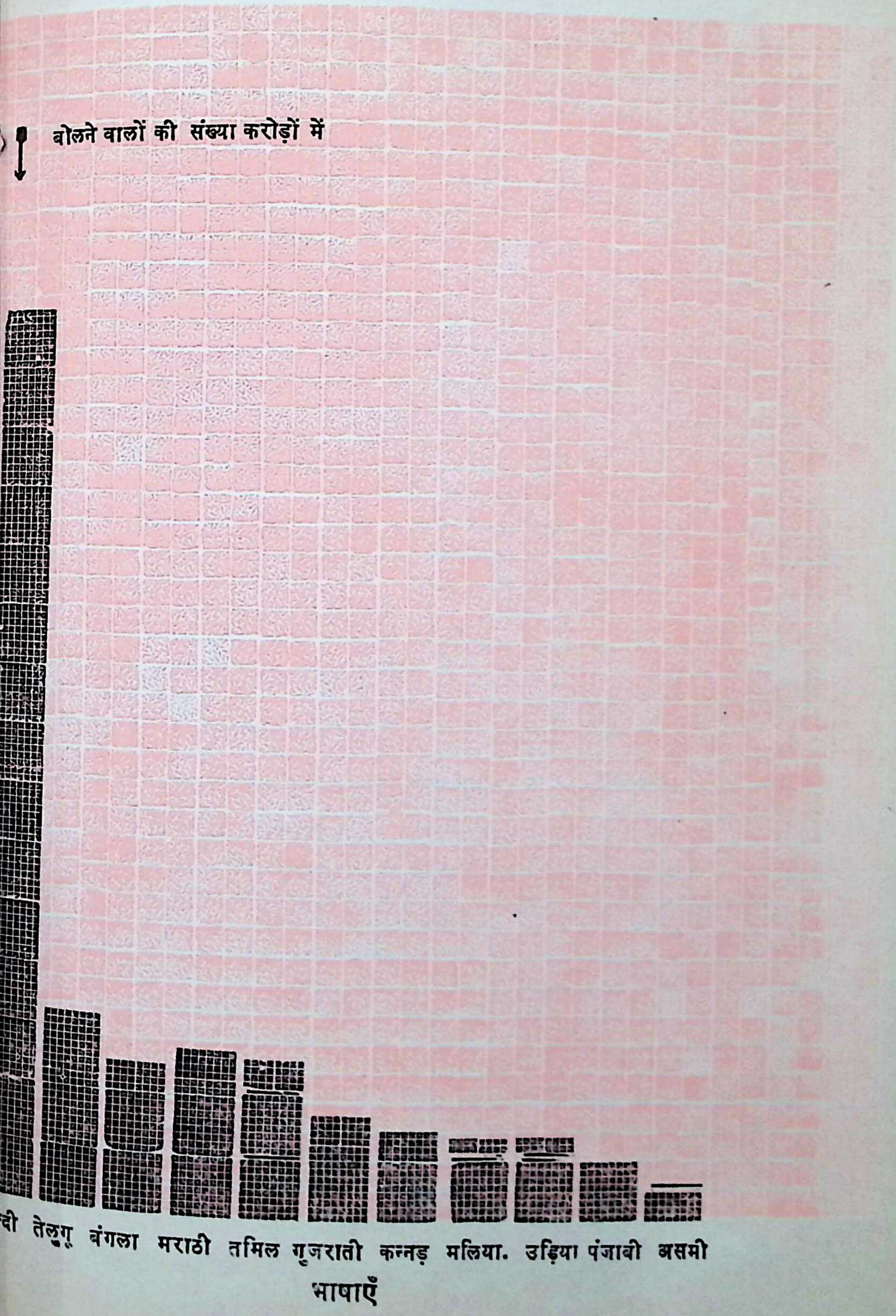

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC-0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

संविधान में उल्लिखित भाषा-भाषियों की संख्या[२६] —

		कुल जनसंख्या का प्रतिशत[२७]
हिन्दी	१७ करोड़, ४६ लाख	३७.४
तेलुगु	३ करोड़, ७६ लाख	८.६
बंगला	३ करोड़, ३९ लाख	७.७
मराठी	३ करोड़, ३३ लाख	७.६
तमिल	३ करोड़, ३६ लाख	७.०
उर्दू	१ करोड़, ७० लाख	३.४
गुजराती	२ करोड़, ३ लाख	४.६
कन्नड़	१ करोड़, ७४ लाख	४.०
मलयालम	१ करोड़, ७० लाख	३.४
उड़िया	१ करोड़, ५७ लाख	३.६
पंजाबी	१ करोड़, ९ लाख	२.५
असमिया	६८ लाख	१.५
कश्मीरी	१९ लाख	०.४
संस्कृत	२,५४४	०.०००३
सिंधी	१३ लाख, ७१ हजार	०.३

देखिये—दण्ड-चित्र क्रमाँक—२ तथा ३

राज्यों में प्रचलित भाषाएँ[२८]—

भारत के राज्यों की तीन-तीन मुख्य भाषाएँ-बोलियाँ नीचे दी जा रही हैं—

१. आन्ध्र-प्रदेश : तेलुगु-८०.६३ प्रतिशत; उर्दू-७.७५ प्रतिशत, राज. ०-१.६२ प्रतिशत।

२. बिहार : बिहारी-३५.३९ प्रतिशत, उर्दू-८.९ प्रतिशत, हिन्दी-४४.३ प्रतिशत।

३. असम : असमिया ५७.१४ प्रतिशत, बंगला-१७.६० प्रतिशत, हिन्दी ४.४१।

४. गुजरात : गुजराती-९०.५० प्रतिशत; उर्दू-२.८८ प्रतिशत, सिंधी-२.४२ प्रतिशत।

५. जम्मू-कश्मीर : कश्मीरी-५४.४२ प्रतिशत, पंजाबी-२७.४८ प्रतिशत, पहाड़ी (डोगरी) ६.८४ प्रतिशत।

२६. सिन्धी भाषा को संविधान की आठवीं सूची में शामिल कर दिया गया। इक्कीसवाँ संशोधन (१९६६) ई. : हिन्दुस्थान वार्षिकी, १९६९—७०, पृष्ठ १०८

२७. S. A. H. Haggi—Language and National Unity : The Sprit of India. Vol. II : pp 481

२८. हिन्दुस्थान वार्षिकी; १९६९-७० : हिन्दुस्थान समाचार; नई दिल्ली, पृ. १५७।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

६. केरल : मलयालम-९५.४ प्रतिशत, तमिल-३.१२ प्रतिशत, कोंकणी-०.४६ प्र. श.।
७. मध्यप्रदेश : राजस्थानी-४ ९८ प्रतिशत, कन्नड़-२.८८ प्र. श., हिन्दी ७८.०७ प्र. श.।
८. महाराष्ट्र : मराठी-७६.७५ प्रतिशत, उर्दू-६ ८९ प्रतिशत, हिन्दी-३.११ प्रतिशत।
९. मैसूर : कन्नड़-६५.१७ प्रतिशत, तेलुगु-८.६८ प्रतिशत।
१०. उड़ीसा : उड़िया ८२.३१ प्रतिशत, कूई-२.९२ प्रतिशत, तेलुगु २.२४ प्रतिशत।
११. पंजाब : पंजाबी-४१.०९ प्रतिशत, उर्दू-१.२६ प्रतिशत, हिन्दी-५५.५४ प्रतिशत।
१२. राजस्थान : राजस्थानी-५६.४९ प्रतिशत, हिन्दी ३५.५२ प्रतिशत।
१३. उत्तरप्रदेश : उर्दू-१०.७० प्रतिशत, कुमायुँनी-१.३९ प्रतिशत, हिन्दी ८५.३९ प्रतिशत।
१४. प. बंगाल : बंगला-८४.२८ प्रतिशत, संथाली-५.२७ प्रतिशत, हिन्दी-५.४८ प्रतिशत।

सन् १९७० तक हमारे देश में कुल १४ प्रादेशिक राज्य थे जिनमें बोली जाने वाली प्रमुख बोलियाँ-भाषाएँ और उनका प्रतिशत यहाँ दिया है। उनमें से बिहार, असम, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, पंजाब, राजस्थान, उत्तरप्रदेश और पश्चिमी बंगाल में हिन्दी-भाषा का प्रयोग किया जाता है।

इन सभी राज्यों में से आठ राज्यों में हिन्दी बोली जाती है। जिनमें कुल ३११.५५ प्रतिशत हिन्दी-भाषा का प्रयोग करने वाले व्यक्ति हैं जिनका औसत ३८.९९ प्रतिशत है। भारत की कुल जनसंख्या का यह एक विशाल भाग है। सन् १९७१ की जनगणना के अनुसार [२९] भारत में हिन्दी बोलने वालों की संख्या कुल आबादी का ३८ प्र.श. है। देश की कुल ५४ करोड़ आबादी में २० करोड़, ५३ लाख लोग हिन्दी बोलते हैं।

मातृभाषा	संख्या
अँग्रेज़ी	१ लाख, ९१ हजार
उर्दू	२ करोड़, १९ लाख
संस्कृत	२२१२
हिन्दी	१७ करोड़, ४६ लाख
सिन्धी	१६ लाख
बंगाली	४ करोड़; ४७ लाख
तेलुगु	४ करोड़, ४७ लाख
मराठी	४ करोड़, २५ लाख
गुजराती	२ करोड़, ५८ लाख
मलयालम	२ करोड़, १ लाख
कन्नड़	२ करोड़; १७ लाख
तमिल	३ करोड़, ७६ लाख
उड़िया	१ करोड़; ५७ लाख

देखिये—दण्ड-चित्र क्रमाँक -४

२९ राष्ट्रभाषा सन्देश : १ व २६ जनवरी, १९७३, भाग-८, अंक १६-१४ : पृ. १

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

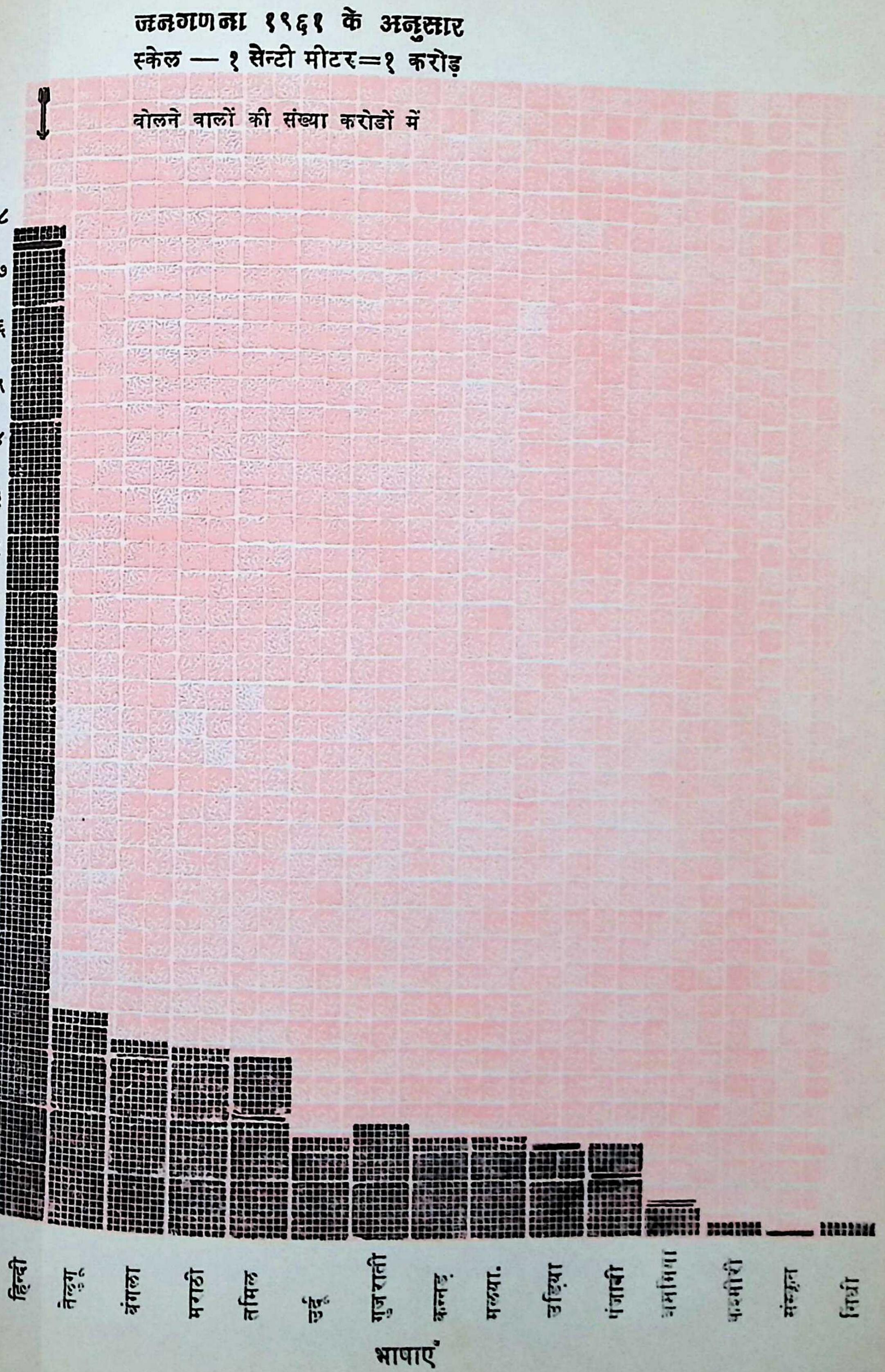

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

जनगणना १९७१ के अनुसार

स्केल — १ सेन्टीमीटर = १ करोड़

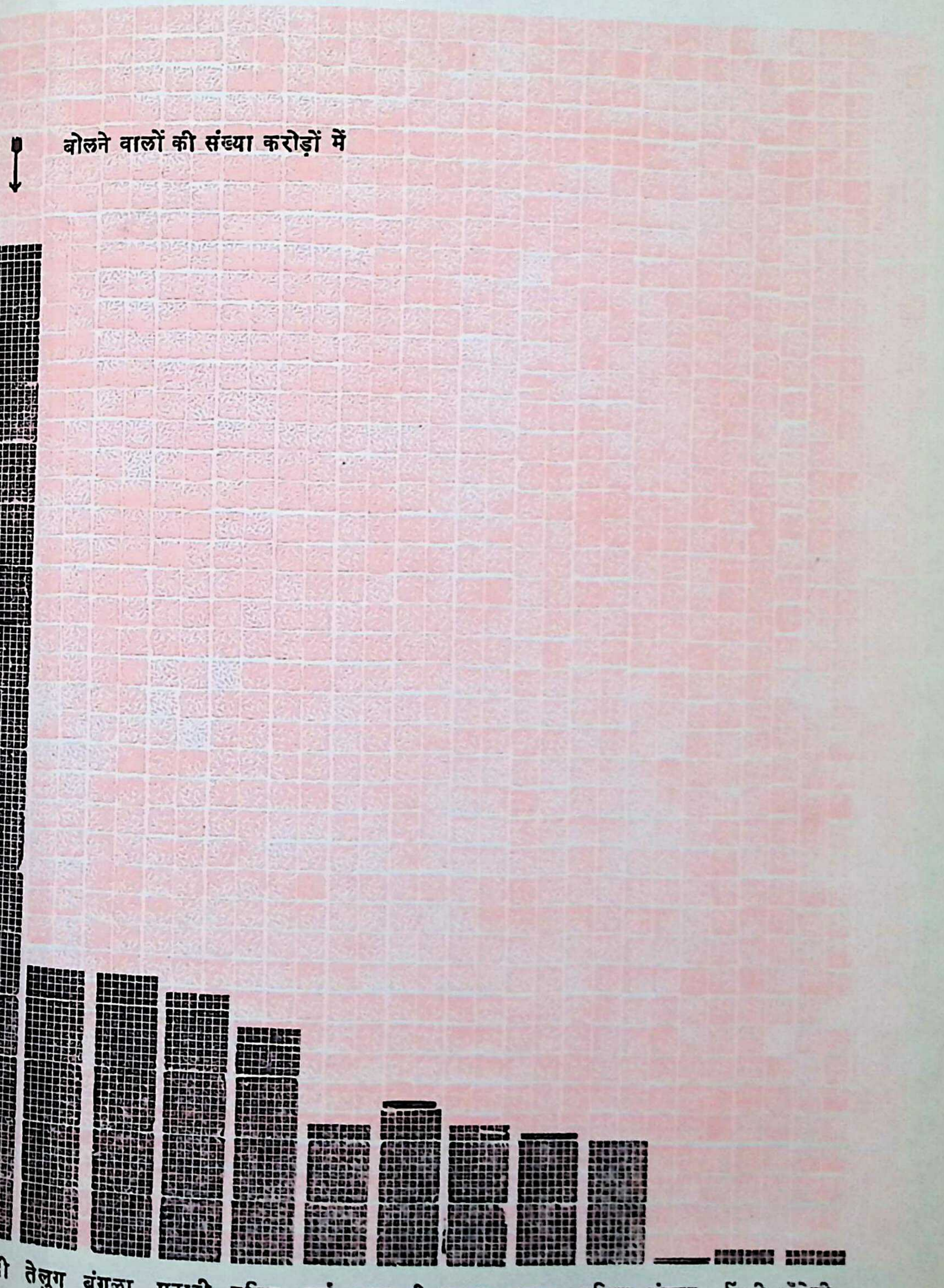

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC-0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

जनगणना के आधार पर हिन्दी बोलने वालों की संख्या देश की अन्य भाषाओं की तुलना में विशाल है। जनगणना सन् १९५१, १९६१ और १९७१ के दण्ड-चित्र दिये जा रहे हैं। इन सभी दण्ड-चित्रों में देखने से ज्ञात होता है कि हिन्दी-भाषा-भाषियों की संख्या तीनों जनगणनाओं में अन्यों की तुलना में अधिक है।

समाचार पत्रों की संख्या —

सम्पूर्ण देश में अन्य भाषाओं और हिन्दी में छपने वाले दैनिक, साप्ताहिक और अन्य पत्रों की संख्या यहाँ दी जा रही है। इनके तुलनात्मक अध्ययन से हम देखते हैं कि हिन्दी के दैनिक और साप्ताहिक पत्रों की संख्या सबसे अधिक है। इससे सिद्ध होता है कि हिन्दी के समाचार-पत्रों के पढ़ने वाले पाठकों की संख्या अन्य भाषा-भाषियों की तुलना में बहुत अधिक है। भाषा और अवधि के अनुसार समाचार-पत्रों की संख्या–[३०]

(३१ दिसम्बर १९६८)

भाषा	दैनिक	साप्ताहिक	अन्य	कुल सन् १९६७	कुल सन् १९६८
अँग्रेज़ी	७४	२५४	१७७६	१९५८	२०७४
हिन्दी	२०१	१०४२	११३८	२२०७	२३८१
असमी	३	८	२१	२३	३२
बंगला	१७	१५६	४६९	५८५	६४२
गुजराती	४३	१३४	३९६	५४६	५७३
कन्नड़	४१	६६	१२४	२२९	२३१
मलयालम	५२	६२	२६३	३१०	३३७
मराठी	५५	२०७	३१०	५५०	५७२
उड़िया	५	२५	७५	८६	१०५
पंजाबी	१५	९३	१०६	१८८	२१४
संस्कृत	–	२	२७	३१	२९
सिंधी	४	२[illegible]	३६	६३	६८
तमिल	३६	६७	३३६	४०३	४३९
तेलुगु	१२	८२	२३४	३१४	३२[illegible]
उर्दू	९४	३२७	४११	८६४	९०२
द्विभाषी	२३	२१४	५३५	६९१	७७२
बहुभाषी	२	३८	१२५	१६८	१६५
अन्य	१०	२०	८५	९९	११५
कुल १९६८	६८७	२८९२	६४४०	१००१९	९३१५
कुल १९६९	६४७	२६६७	५९७१	–	–

३०. हिन्दुस्थान वार्षिकी : हिन्दुस्थान समाचार (प्रकाशन विभाग), नई दिल्ली पृ. २२६

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

तालिका में हिन्दी के दैनिक पत्र २०१, साप्ताहिक १०४२, अन्य ११३८ और कुल २२०७ हैं जो इस तालिका में अन्य भाषाओं की तुलना में सबसे अधिक हैं। इससे हिन्दी पढ़ने वाले पाठकों की संख्या अधिक ज्ञात होती है।

विश्व की प्रमुख भाषाओं में हिन्दी का स्थान —

संसार की भाषाओं में बोलने वालों की संख्या के आधार पर हिन्दी का स्थान तीसरा है। चीनी ६५ करोड़, अँग्रेज़ी ४५ करोड़ और हिन्दी २७ करोड़ जनता की भाषा थी। चीनी केवल राष्ट्रीय दृष्टि से एक भाषा है, अन्यथा उत्तरी और दक्षिणी चीनी में उतना ही अन्तर है जितना हिन्दी और बंगाली में। हमारे यहाँ प्रादेशिकता की भावना प्रबल है। अतः बंगाली या मराठी को हिन्दी नहीं कह सकते। अँग्रेज़ी, इंग्लैंड, अमेरिका, आस्ट्रेलिया, कनाड़ा तथा ब्रिटिश उपनिवेशों के कारण महत्व पा रही है। हिन्दी भी अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में फैली है। यह भारत के अतिरिक्त ब्रह्मा, मलाया, सिंगापुर, लंका, अबू-ढाबी, मारिशस और पूर्वी अफ्रिका में बोली और समझी जाती है।

विश्व की प्रमुख भाषाओं में हिन्दी की स्थिति–[३१]

क्रमांक	भाषा	बोलने वालों की संख्या
१.	चीनी	६५ करोड़
२.	अँग्रेज़ी	४५ ,,
३.	हिन्दी	२७ ,,
४.	रूसी	२२ ,,
५.	स्पेनी	१४ ,,
६.	जर्मन	१२ ,,
७.	जापानी	१२ ,,
८.	फ्रांसीसी	१० ,,
९.	हिन्देशियाई	१० ,,
१०.	पुर्तगाली	८ ,,
११.	बंगला	८ ,,
१२.	इतावली	७ ,,
१३.	अरबी-फ़ारसी	५+७=७ करोड़[३२]

देखिये—दण्ड-चित्र क्रमाँक–५

३१. हिन्दी-भाषा सर्वेक्षण : डॉ. मुंशीराम शर्मा : चतुर्थ संस्करण : जुलाई, १९७२, पृ. ४१

३२ भारत : १९७६, पृ. ४०.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

विश्व की प्रमुख भाषाओं में हिन्दी

स्केल — १ सेन्टीमीटर = १ करोड़

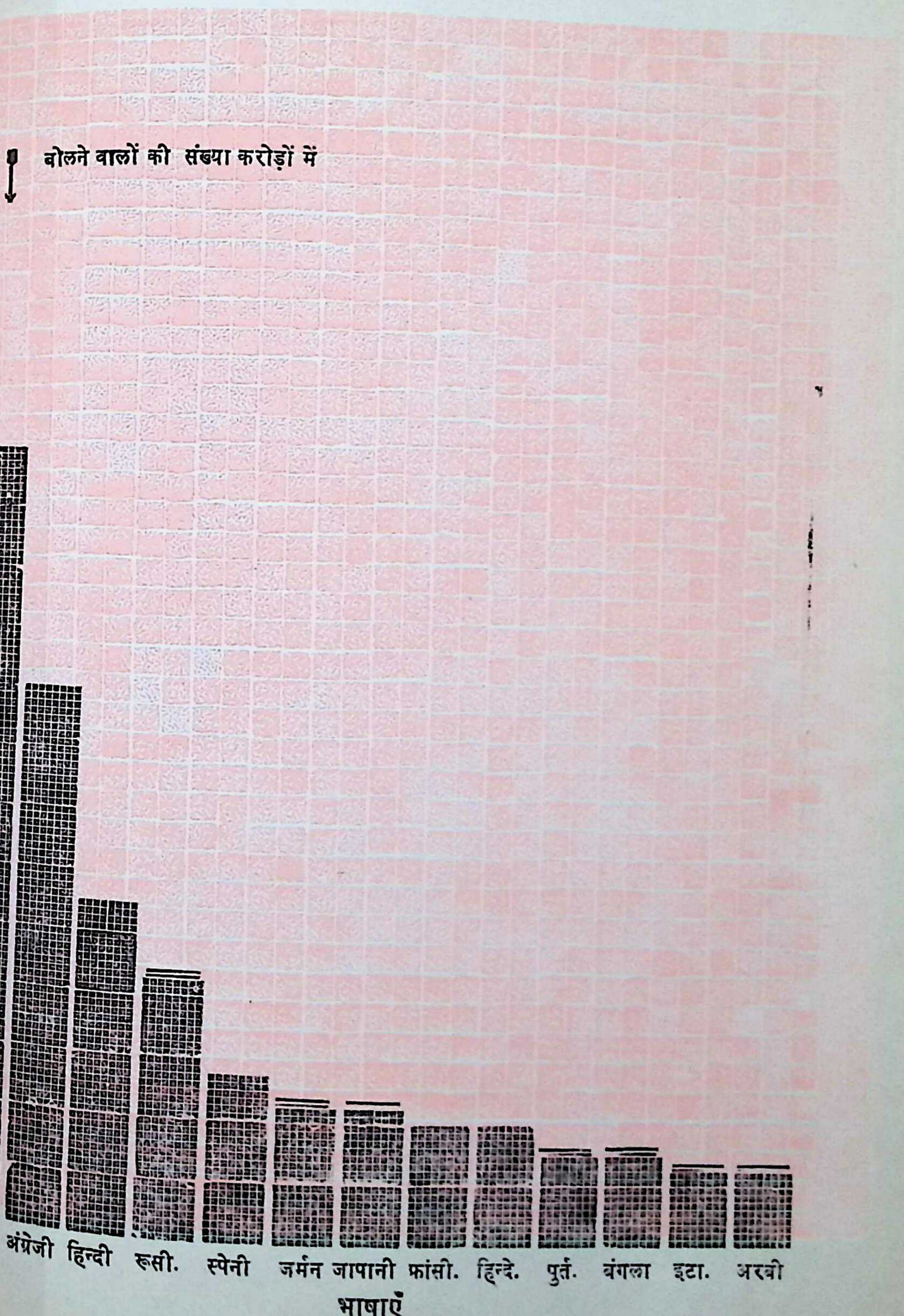

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC-0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

संघ-लोक-सेवा-आयोग की परीक्षाओं में हिन्दी की स्थिति:—

भारत के विश्वविद्यालयों में हिन्दी को शिक्षा तथा परीक्षा का माध्यम बनाने की माँग उठी इसी प्रकार भारत सरकार की भर्ती की परीक्षाओं में भी हिन्दी-माध्यम की माँग की गई। भारत सरकार ने इस माँग को देखते हुए हिन्दी के प्रयोग की सुविधा दे दी। संघ-लोक-सेवा-आयोग में शासन ने निवन्ध और सामान्य-ज्ञान के प्रश्न-पत्रों के उत्तर देने के लिये अँग्रेज़ी के अतिरिक्त हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाओं के वैकल्पिक प्रयोग की सुविधा दे दी गई। सन् १९७०-७१ में निवन्ध और सामान्य-ज्ञान के प्रश्न-पत्रों के उत्तर, भारतीय भाषाओं में देने वाले परीक्षार्थियों की संख्या निम्नलिखित प्रकार से हैं —[३३]

		निवन्ध		सामान्य-ज्ञान	
क्रमांक	माध्यम	सन् १९७०	सन् १९७१	सन् १९७०	सन् १९७१
१.	हिन्दी	७९१	९३२	४५८	५३९
२.	वंगाली	८४	९१	४६	५५
३.	पंजावी	४०	५७	२४	१०
४.	मराठी	२७	३०	१७	२१
५.	गुजराती	२३	२८	२०	२७
६.	तमिल	२९	२७	२४	१७
७.	उर्दू	१९	१९	०८	१२
८.	मलयालम	१७	१८	१२	१२
९.	उड़िया	१२	१५	०८	०६
१०.	कन्नड़	०३	१०	०२	०८
११.	तेलगु	१४	१०	०९	०६
१२.	असमिया	०६	०४	०३	०४
१३.	सिन्धी, (देवनागरी)	—	—	—	—
१४.	सिन्धी, (अरबिक)	०१	०२	०१	०२
१५.	सस्कृत	०१	—	०१	—
१६.	कश्मीरी	०१	—	—	—
	योग—	१०६८	१२४३	६३३	७३८
	हिन्दी	७९१	९३२	४५८	५३९
	अन्य भारतीय भाषाएँ	२७७	३११	१७५	१९९

३३. राष्ट्रभाषा सन्देश : १ अप्रैल, १९७५ : भाग १०, अंक १९, पृ. ३, केन्द्रीय सरकार की परीक्षाओं में हिन्दी।'

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

तालिका से सिद्ध होता है कि संघ-लोक-सेवा-आयोग की परीक्षाओं में हिन्दी माध्यम के रूप में निबन्ध और सामान्य-ज्ञान में परीक्षार्थियों की संख्या अन्य भाषा-भाषियों की तुलना में अधिक है।

सन् १९७० और १९७१ में परीक्षार्थियों की संख्या को देखने से ज्ञात होता है कि न केवल निबन्ध के प्रश्न-पत्र में बल्कि सामान्य-ज्ञान के प्रश्न-पत्र में भी सन् १९७० से परीक्षार्थियों की संख्याओं में वृद्धि हुई है। वर्तमान समय में प्रशासन में भी और राज्यों में भी अधिकाधिक हिन्दी का प्रयोग हो रहा । अतः हिन्दी माध्यम को लेकर लोक-सेवा-आयोगों की परीक्षाओं में बैठने वाले परीक्षार्थियों की संख्या अन्य भाषा-भाषियों की तुलना में अधिक है।

उपर्युक्त सभी आधारों पर अध्ययन करने, आँकड़ों को देखते हुए, यह स्वतः ही सिद्ध हो जाता है कि हमारे देश में अन्य भाषा-भाषियों की तुलना में हिन्दी-भाषियों की संख्या बहुत अधिक है। अतः यह भारत की बहुसंख्यक जनता की भाषा है।

०.३.०६ समृद्ध साहित्य की परम्परागत भाषा :–

भारत में साहित्यिक दृष्टि से समृद्ध तथा साँस्कृतिक विरासत में सम्पन्न अनेक साहित्यिक भाषाओं के होते हुए केवल हिन्दी को ही राजभाषा का पद कैसे प्राप्त हो सका—इसकी विलक्षण कहानी है। आधुनिक भारतीय आर्य-भाषाओं में बंगला और मराठी दो ऐसी भाषाएँ थीं जो साहित्य और साँस्कृतिक दृष्टिकोण से सम्पन्न और सक्षम भाषाओं के अन्तर्गत परिगणित की जाती हैं। हिन्दी के साहित्य में जो नई विचारधाराएं और नये आन्दोलन आधुनिक युग में समाविष्ट हुए वे सबसे पहले बंगला-साहित्य में अभिव्यक्त हुए थे। फलतः यह माना जा सकता है कि साहित्यिक चेतना की दृष्टि से बंगला हिन्दी की पूर्वज थी परन्तु इस क्षमता के बावजूद बंगला की सीमा बंगाल ही रहा और मराठी की सीमा महाराष्ट्र। ये दोनों भाषाएँ व्यापक न हो सकीं। जबकि हिन्दी देशी-भाषाओं-ब्रज, अवधी, राजस्थानी, मैथिली आदि के रूप में पहले से ही विशाल क्षेत्र पर अधिकार किए हुई थीं और आधुनिक हिन्दी जिसे खड़ी-बोली कहा जाता है, अपने उत्पत्ति क्षेत्र पजाब, हरियाणा और दिल्ली से निकल कर देश-विदेश में फैल गई। क्षेत्रीय व्यापकता के अतिरिक्त कई अन्य कारण भी थे जिनसे हिन्दी-राजभाषा के पद पर प्रतिष्ठित हो सकी। उनमे सबसे महत्वपूर्ण कारण था हिन्दी की समृद्ध, साहित्यिक और साँस्कृतिक पीठिका। सम्पूर्ण भारत में पूजे जाने वाले राम और कृष्ण का काव्य, वाल्मीकि की रामायण और व्यास के महाभारत से निकलकर तुलसी के रामचरितमानस और सूर के सूरसागर में अभिव्यक्त हुआ। भारत की किसी अन्य भाषा में इनकी समता करने वाले ग्रन्थ प्राप्त नहीं है। जो चरित्र सम्पूर्ण भारतीय-जन-जीवन, धर्म, मर्यादा और सामाजिक परम्परा के मूल आधार थे उनके उपदेशों और कर्म की अभिव्यक्ति संस्कृत के बाद यदि किसी साहित्य में हुई तो वह हिन्दी का ही साहित्य था। इतना ही नहीं संस्कृत की सम्पत्ति तथा प्राकृतों और अपभ्रन्शों से प्राप्त विरासत हिन्दी में ही सबसे अधिक प्रतिफलित हुई। संस्कृत, प्राकृत और अपभ्रन्श की विशाल परम्परा से हिन्दी ने न केवल वेदों, उपनिषदों, स्मृतियों, सूत्र ग्रंथों और पुराणों के विचारों का दोहन ही नहीं किया अपितु उन्हें

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

आधार बनाकर सक्षम और समृद्ध अपनी साहित्यिक परम्परा निर्मित की। निस्सन्देह इस परम्परा को समृद्ध बनाने और आगे बढ़ाने में हिन्दी-भाषा ने वर्ण-व्यवस्था, शब्दावली और व्याकरणिक प्रयोग अन्य भाषाओं से ग्रहण किये। भारत की सभी भाषाओं में संस्कृत से सबसे अधिक शब्द ग्रहण करने वाली हिन्दी ही है। इसका कारण यह है कि हिन्दी की रचना में ही संस्कृत की शब्दावली उपयुक्त बैठती है। अन्य भाषाओं में संस्कृत के शब्द या तो रूप बदलकर गये हैं या उन्हें वहाँ भिन्न अर्थों में ग्रहण किया गया है। प्राकृतों और अपभ्रन्शों के काव्य में प्रयोग से सिद्ध और जैन-साहित्य में भाषा का जो स्वरूप निर्मित हुआ उसे महापंडित राहुल सांकृत्यायन तथा चन्द्रधर शर्मा गुलेरी आदि विद्वानों ने पुरानी हिन्दी की संज्ञा दी है।

वस्तुतः पुरानी-हिन्दी ही आधुनिक-हिन्दी का मूल है। पुरानी-हिन्दी की रचना जन-सामान्य की बोलचाल की भाषा के व्याकरण में साहित्यिक शब्दों के प्रयोग से हुई थी और हिन्दी का विशाल आदिकालीन साहित्य विशेषकर सिद्ध-साहित्य, जैन-साहित्य और नाथ-साहित्य इसी भाषा में रचा गया था। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने भी इसे आधुनिक-खड़ी-बोली हिन्दी का मूल रूप स्वीकार किया है।[३४] जहाँ एक ओर पुरानी-हिन्दी की काव्य-धारा बह रही थी वहीं दूसरी ओर राजस्थान और बुन्देलखण्ड में वीरगाथा-काव्यों की रचना डिंगल और बुन्देली में हो रही थी। बहुत से विद्वानों की यह मान्यता है कि राजस्थानी या डिंगल हिन्दी नहीं है परन्तु आधुनिक युग में पर्याप्त अनुसन्धान के बाद अब यह स्वीकार किया जाने लगा है कि न केवल राजस्थानी और मैथिली अपितु हिन्दी क्षेत्र में बोली जाने वाली प्रायः सभी बोलियाँ हिन्दी की ही बोलियाँ हैं। इसी युग में विद्यापति की पदावली, मैथिली तो कीर्तिलता और कीर्तिपताका अवहट्ठ भाषा में रचे गये। अमीर खुसरो इस युग का ऐसा कवि था जिसने सरल बोलचाल की हिन्दी में पहेलियाँ, मुकरियों और ग़ज़लों की रचना की। अतः विक्रम की ८ वीं शताब्दी से ही संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रन्श, परम्परा से साहित्यिक और भाषिक तत्वों को खींचकर एक ऐसी भाषा ने अपनी साहित्यिक परम्परा बनाना आरम्भ कर दिया था जो आगे चलकर इन सबसे पृथक एक सम्पूर्ण भाषा के रूप में प्रतिष्ठित हो गई।

भक्तिकाल में कबीरादि सन्तों की वाणी की भाषा जन-साधारण की सामान्य-भाषा थी। सूफी कवियों ने मलिक मोहम्मद जायसी के पद्मावत की भाषा ठेठ अवधी को अपनाया। कृष्ण-भक्त कवियों के आदर्श सूरदास थे। सूरदास की भाषा ब्रज थी। राम-भक्तों ने महात्मा तुलसीदास के अमर ग्रँथ रामचरितमानस की साहित्यिक अवधी को अपनाया। केशव आदि दरबारी कवियों ने या तो परिष्कृत ब्रजभाषा या अवधी भाषा के बोलचाल के रूप को अपनाया।

रीतिकाल में व्यापकता तो नहीं थी किन्तु भाषा की समृद्धि की दृष्टि से नये-नये प्रयोग शृँगारी-काव्य में किये गये। इससे ब्रजभाषा और निखरती गई। रीतिबद्ध शृँगारी काव्य, गीति-मुक्त प्रेम-काव्य तथा भूषण के राष्ट्रीय-काव्य की भाषा में विमल और समृद्ध

---

३४. हिन्दी-साहित्य का इतिहास : रामचन्द्र शुक्ल : सं. १९९६ वि : पृ. ५३।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

वैचारिक सम्पदा थी जिसने हिन्दी को भारत की अन्य भाषाओं की तुलना में न केवल साहित्यिक और सांस्कृतिक दृष्टिकोण से सुदृढ़ बना दिया अपितु भाषाई क्षमताओं में भी अन्य भाषाओं की तुलना में उच्च स्थान दिलाया।[३५]

किसी भी भाषा की राजभाषा की स्वीकृति का कारण केवल उसके क्षेत्र की विशालता या बोलने वालों की सँख्या ही नहीं होता अपितु राष्ट्र की मूल सांस्कृतिक चेतना से उस भाषा का जुड़ा होना भी अनिवार्य होता है। यही कारण है कि स्वाभाविक भाषाएँ तो जन-जीवन में घुल-मिल जाती है किन्तु बाहर से लादी गई कृत्रिम भाषाएँ जीतोड़ प्रयत्नों के बावजूद स्वाभाविक भाषाओं का स्थान नहीं ले पाती। यही कारण है कि आधुनिक युग में जब अँग्रेज़ों ने भारत पर अँग्रेज़ी लादने अथवा 'फूट डालो और राज करो' की नीति से प्रेरित होकर पूरे भारतीय जन-जीवन में उर्दू को घोलने का प्रयत्न किया तो शासक, सत्ताधीश, शक्तिशाली होते हुए भी वे अपनी इस योजना में सफल नहीं हो सके। इस क्षेत्र में अँग्रेज़ों की मनोवृत्तियों की पराजय हिन्दी की सांस्कृतिक सम्पन्नता प्रमाणित करती है। लाख प्रयत्न करने पर भी राम, कृष्ण और गौतम को भारतीय संस्कृति से विलग नहीं किया जा सकता। जब ये महापुरुष भारतीय संस्कृति का अभिन्न अँग हैं तो इनसे सम्बद्ध समस्त साहित्य भी भारतीय संस्कृति का अभिन्न अँग है और वह साहित्य अँग्रेज़ी या उर्दू में नहीं हिन्दी में था। संस्कृति के इस प्रबल सूत्र से हिन्दी समस्त भारतीय जन-मानस के साथ जुड़ी हुई थी। अतः महान प्रयत्नों के बाद भी हिन्दी को अपदस्थ नहीं किया जा सका।

आधुनिक-युग के आरम्भ में साहित्यिक भाषा के रूप में हिन्दी को विभाजित करने के प्रयत्नों का इतिहास भारतेन्दु से पहले से प्रारम्भ होता है। जबकि फोर्ट विलियम कॉलेज में हिन्दुस्तानी भाषा-विभाग की स्थापना की गई और जान गिलक्राईस्ट के नेतृत्व में लल्लूलाल और सदल मिश्र ने खड़ी-बोली में ग्रंथ रचनाएँ प्रस्तुत कीं। वस्तुतः हिन्दी का अब तक का साहित्य-साँस्कृतिक विरासत में तो सम्पन्न था किन्तु पाश्चात्य साहित्य की तुलना में उसमें कई अभाव खटकते थे। उदाहरण के लिये आधुनिक युग के पूर्व तक का हिन्दी-साहित्य केवल कविताओं का साहित्य था। गद्य उसमें नाम मात्र को था और जितना था उसे भी साहित्य की कोटि में रखते हुए संकोच होता था। अत अँग्रेजों द्वारा इस दिशा में किये गये प्रयत्न हमारे लिए वरदान सिद्ध हुए और फोर्ट विलियम कॉलेज द्वारा गद्य-रचना के प्रारम्भ के बाद भारतेन्दु और उनके मण्डल द्वारा पत्रकारिता के क्षेत्र में किये गये प्रयत्नों ने तो हिन्दी-साहित्य में जैसे नये प्राण फूँक दिये। हिन्दी में पत्रकारिता का उदय भारतेन्दु से लगभग २५ वर्ष पूर्व हो चुका था।

राजा लक्ष्मणसिंह ने 'अभिज्ञान शाकुन्तल' का हिन्दी अनुवाद 'शकुन्तला नाटक' के नाम से प्रस्तुत किया था। स्वयं भारतेन्दु के पिता ने 'नहुष' नामक नाटक की रचना की थी। राजा शिवप्रसाद सितारेहिन्द ने 'राजा भोज का सपना' नामक कहानी लिखी और इंशा अल्लाह खां ने 'रानी केतकी की कहानी' प्रस्तुत की। इस प्रकार भारतेन्दु के पदार्पण के

---

३५. हिन्दी-भाषा का सामान्य ज्ञान : डॉ. पी. डी. शर्मा : खण्ड १ : २०३१, पृ. ९.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

पहले से ही गद्य साहित्य की रचना की। इस दिशा में काफी प्रयत्न हो चुके थे किन्तु ये प्रयत्न अव्यवस्थित, अनियोजित और असंगठित थे। इसी कारण इनमें उद्देश्यों की भिन्नता थी और भाषा के कई दोष विद्यमान थे, जिनका परिष्कार भारतेन्दु के पदार्पण के बाद भारतेन्दु-मण्डल के साहित्यकारों द्वारा व्यवस्थित, संगठित और नियोजित रूप से किया गया। फिर तो हिन्दी में उच्चकोटि के साहित्य का भण्डार भर गया। उपन्यास और निबन्ध जो अब तक नहीं लिखे गये थे वे भी लिखे जाने लगे और हिन्दी-भाषा और साहित्य की रही सही कमी को बीसवीं शताब्दी के आरम्भ में आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी ने आकर पूरा कर दिया। द्विवेदीजी युगप्रवर्तक साहित्यकार, पत्रकार एवं भाषा के आचार्य थे। हिन्दी-साहित्य का द्विवेदी-युग हिन्दी के व्याकरण का रचनाकाल था। आचार्य द्विवेदी ने स्वयं तो हिन्दी-भाषा के परिमार्जन का कार्य किया ही साथ ही अन्य साहित्यकारों और पत्रकारों को भी हिन्दी के स्वरूप-स्थिरीकरण के लिये प्रेरित किया। इस युग में हिन्दी व्याकरण, वर्तनी, शब्दानुशासन आदि विषयों पर तर्क-वितर्क हुए जो भाषा के हित में हुए तथा हिन्दी एक समृद्ध साहित्यिक और व्याकरण-सम्मत् भाषा के रूप में प्रतिष्ठित हुई। द्विवेदीजी ने विभक्ति-चिन्हों, अनुस्वार, शब्द-संयोजन, परसवर्ण आदि विषयों पर तर्कसम्मत् विचार व्यक्त किये तथा शुद्ध व्यावहारिक भाषा की प्रतिष्ठा की। उन्होंने हिन्दी में वाक्य-रचना और विराम-चिन्हों की स्थायी व्यवस्था की और शब्दाभाव की समस्या को हल करने के लिए संस्कृत, उर्दू, फ़ारसी आदि के सरल और व्यावहारिक शब्दों को उदारतापूर्वक स्वीकार किया। द्विवेदीजी ने खड़ीबोली हिन्दी को काव्यात्मक गरिमा देने के भगीरथ प्रयत्न किये तथा 'सरस्वती' पत्रिका के माध्यम से कवियों का एक ऐसा वर्ग खड़ा किया जो काव्य-भाषा विषयक द्विवेदीजी के निर्देशों को अत्यन्त आस्थापूर्वक व्यावहारिक रूप देने के लिए संकल्पित था। द्विवेदी-युग के अन्त तक भाषा स्थिर हो चुकी थी तथा खड़ी-बोली हिन्दी की काव्यात्मक गरिमा के सम्बन्ध में सन्देह समाप्त हो चुके थे। छायावाद के युग में हिन्दी के साहित्यकारों ने खड़ी-बोली-हिन्दी का संस्कार किया तथा अपनी भावाभिव्यक्ति के लिये नवीन शैली, अभिनव वाक्य-विन्यास, शब्दों की नवीन भंगिमा आदि की रचना की। छायावाद-काल में हिन्दी अपनी क्षमता का पर्याप्त विश्वस्त प्रमाण दे चुकी थी। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद तो हिन्दी की समृद्धि का अत्यन्त उत्कर्षमय युग है। इस युग में नये युग की आवश्यकताओं के अनुरूप हिन्दी को सजाया-सँवारा गया। विगत ३० वर्षों में हिन्दी की अभिव्यक्ति क्षमता पर्याप्त बढ़ चुकी है और पश्चिम से आई हुई अनेक साहित्यिक विधाओं में रचना की जा रही है। न केवल कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक, अपितु आत्मकथा, जीवनी, संस्मरण, डायरी, रेखाचित्र, रिपोर्ताज, काव्य-नाटक, गीति-नाट्य, रेडियो-रूपक, वृत्तलेख आदि विधाओं मे हिन्दी-भाषा का समृद्ध साहित्य अपितु ज्ञान-विज्ञान का साहित्य भी आज उपलब्ध है। सन् १९५० में राजभाषा के रूप में हिन्दी की स्वीकृति के पहले ही हिन्दी का विपुल समृद्ध साहित्य उपलब्ध था और न केवल हिन्दी-भाषा की साहित्यिक क्षमता प्रमाणित हो चुकी थी अपितु राजकाज की भाषा, वैज्ञानिक अनुसन्धानों की भाषा तथा शिक्षा के माध्यम की भाषा के रूप में हिन्दी की क्षमता सिद्ध हो चुकी थी। ऐसी क्षमता भारत की अन्य भाषाओं में कम थी। भारत के जन-मानस का सांस्कृतिक और साहित्यिक समृद्धि से सम्बन्ध था। अतः हिन्दी को भारतीय संघ की राजभाषा स्वीकार कर लिया गया।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

०३.०७. निर्भ्रान्त लिपि की भाषा है :—

हिन्दी देवनागरी-लिपि में लिखी जाती है। उसका नियम है – 'जैसा लिखो वैसा बोलो और जैसा बोलो वैसा लिखो।' इससे इस लिपि में 'एक ध्वनि के लिए एक वर्ण' निश्चित किया गया है। अन्तर्राष्ट्रीय वर्णमाला में इसी नियम का पालन होता है। अत: चीनी, अँग्रेज़ी, अरबी आदि विश्वभाषाएँ इस दृष्टि से संकट में फँसी हैं। हिन्दी ने अपनी ग्रहण-शीलता के कारण अपनी लिपि के प्रतीक-चिन्हों में यथावश्यक संशोधन स्वीकार कर लिये हैं। उसने संस्कृत की सभी ध्वनियों के वर्ण-प्रतीक अपना लिए हैं। प्राचीन भाषाओं और आधुनिक द्राविड़ भाषाओं की। ड, ढ़, ह्ल, ह्य, ह्म, ह्व। ध्वनियों को स्वतन्त्र वर्ण मान लिये हैं तथा अरबी-फ़ारसी की। क़, ख़ ग़, ज़, फ़ और अँग्रेज़ी के। ऑ। को स्वतन्त्र वर्ण स्वीकार किया है। इसी प्रकार विश्व की प्रतिनिधि भाषाओं में प्रयुक्त विराम-चिन्हों को संशोधित रूप में स्वीकार कर लिया है। इससे हिन्दी-भाषा की लिपि वैज्ञानिक हो गई है।[३६] निभ्रांत लिपि की भाषा होने के कारण हिन्दी के ध्वनि-समूह, शब्द-सम्पदा और अर्थ-सम्पन्नता में निश्चयात्मकता आ गई है। इससे वह भावाभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम हो गई है।

०३.०८. संविधान निर्माताओं का प्रजातांत्रिक दृष्टिकोण :—

उन्नीसवीं और बीसवीं सदी में हमारा देश अँग्रेज़ों के द्वारा शासित था। उन्होंने अपने शासन को भलीभाँति सँचालित करने के लिये सबसे पहले भाषा पर ध्यान दिया। उनमें से कुछ इस देश की भाषा के पक्ष में थे परन्तु लॉर्ड मैकॉले और कुछ भारतीय अँग्रेज़ी के पक्ष में थे। उन्होंने अँग्रेज़ी-भाषा को अपनाने तथा प्रचार-प्रसार करने का कार्य भी किया।

जब देश स्वतन्त्र हुआ तब उसे अपना शासन प्रजातांत्रिक दृष्टिकोण से सँचालित करने के लिये संविधान की आवश्यकता अनुभव की जाने लगी। देश के विभिन्न प्रान्त, विभिन्न भाषा-भाषी लोगों के प्रतिनिधियों को आमन्त्रित किया गया। उनकी एक समिति बनाई गई जिसे प्रारूप-समिति कहा गया। उस समिति ने कार्य की सुविधा के लिये कई छोटी-छोटी उप-समितियाँ बनाई। इस प्रारूप-समिति में अन्य बातों के अतिरिक्त भाषा-समस्या पर भी विचार किया गया। देश की अखण्डता और एकता के लिए एक भाषा की आवश्यकता थी। स्वतन्त्रता के पूर्व देश में कांग्रेस की स्थापना हो चुकी थी। इस संस्था का भारतीय राजनीति में प्रमुख हिस्सा रहा है। देश पर इस दल का और इसमें कार्य करने वाले नेताओं का प्रभाव था। उन्होंने अपने-अपने दृष्टिकोण से भाषा-समस्या के लिये अपने-अपने प्रभाव का प्रयोग किया। संविधान निर्माण करते समय संविधान निर्माण करने वाली समिति के समक्ष भाषा-समस्या को लेकर, विभिन्न सदस्यों के मध्य चार प्रकार के दृष्टिकोण रहे—एक दृष्टिकोण हिन्दुस्तानी भाषा का था जिसके प्रमुख समर्थक थे महात्मा गाँधी, पंडित जवाहरलाल नेहरू, मौलाना आज़ाद और मुस्लिम लीग के सदस्य। दूसरा दृष्टिकोण था 'हिन्दी' को लेकर जिसमें प्रमुख थे—पुरुषोत्तमदास टंडन, सेठ गोविन्ददास, बालकृष्ण शर्मा

---

३६. हिन्दी–अक्षर (लेख) : डॉ. कैलाशचन्द्र भाटिया : राजर्षि अभिनन्दन ग्रन्थ: पृ० ५४७-५७३।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

'नवीन', एच. वी. पाटस्कर, राजेन्द्र बाबू, सरदार पटेल इत्यादि। तीसरा दृष्टिकोण 'अँग्रेज़ी' भाषा का था जिसमें प्रमुख थे—पंडित जवाहरलाल नेहरू, राजगोपालाचारी, के. एम. मुंशी, गोपाल स्वामी आयँगर इत्यादि थे। इनके अतिरिक्त एक और विचारधारा थी जो कभी संस्कृत के लिए, तो कभी दक्षिण भारत की किसी एक भाषा के लिए अपना समर्थन देती थी। इस विचारधारा के समर्थक थे—डॉ. कैलाशनाथ काटजू और... । इन सभी विचार-धाराओं के पक्ष और विपक्ष में लम्बे समय तक वाद—विवाद चलता रहा। वाद-विवाद में तीव्रतम आरोप-प्रत्यारोप होते थे। इसी समय देश का विभाजन हुआ और हिन्दुस्तानी भाषा की विचारधारा के लोग शांत हो गये। इस प्रकार संविधान निर्माण करने वाली समिति के समक्ष, प्रमुख रूप से जो त्रिकोणात्मक संघर्ष था उसमें केवल दो भाषा ही प्रमुख रूप से विवाद का विषय रहीं। कुछ सदस्यों का ऐसा विचार था कि यदि इस समिति के समक्ष हिन्दी और अँग्रेज़ी का ही विवाद प्रमुख होता तो कोई भी एक भाषा के मध्य राजभाषा का चुनाव शीघ्रता के साथ हो जाता। उस समय पंडित जवाहरलाल नेहरू प्रधानमंत्री थे। उन्होंने तर्क के माध्यम से अपने प्रभाव का समुचित प्रयोग किया। वे अँग्रेज़ी के पक्ष के लिये दृढ़ रहे। अन्त में बहुत वाद-विवाद के उपराँत प्रजाताँत्रिक दृष्टिकोण से प्रारम्भ में मतों के द्वारा और अन्त में सर्वसम्मति का भाषा-समस्या का हल खोज लिया गया। हिन्दी को राजभाषा और अँग्रेज़ी को सहभाषा बनाया गया। तदुपराँत भी समस्या बनी रही परन्तु उसके हल के लिये १५ वर्ष की अवधि निश्चित की गई। उसमें कहा गया कि १५ वर्ष के उपरान्त हिन्दी के विकास का अध्ययन किया जावेगा और यदि वह सम्पूर्ण पाई गई तो अँग्रेज़ी को हटा दिया जावेगा, आखिर वे १५ वर्ष भी पूर्ण हुए परन्तु सन् १९६३ में लालबहादुर शास्त्री ने संसद में एक अधिनियम रखा और उसे सर्वसम्मति से पास किया। उसका विरोध सेठ गोविन्ददास, राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त आदि ने किया भी, न्यायालय में उसे चुनौती भी दी परन्तु अँग्रेज़ी भाषा सहभाषा के पद से अलग नहीं की जा सकी। उस विधेयक का सम्पूर्ण देश में विरोध भी हुआ परन्तु सन् १९६७ में उस विधेयक का संशोधन भी बहुमत प्राप्त करने में समर्थ हो गया। भारत के राजनेता प्रजाताँत्रिक पद्धति में विश्वास रखते हैं। अतः बहुमत के निर्णय को सभी ने स्वीकार लिया है।

हिन्दी को राजभाषा का पद दिया गया है, थोपा नहीं गया। यह निर्णय बहुमत का है जिसमें संविधान निर्माताओं का प्रजाताँत्रिक दृष्टिकोण परिलक्षित होता है।

०३.०९. सतत विकासशील भाषा है :—

हिन्दी के विकास का १००० वर्षों का इतिहास यह बतलाता है कि यह एक ऐसी परिवर्तनशील भाषा है जो युग की आवश्यकता के अनुरूप अपना रूप बदलती रहती है। अपने अभ्युदकाल में यह राजपूत राजाओं की ख्यातों और वातों को राजस्थानी गद्य में व्यक्त करती रही। मुसलमानी काल में यह हिन्दवी, हिन्दुई, रेख्ता, दखिनी और भाषा के रूपों में लोक-भावनाओं को प्रकट करती रही। यही भक्तिकाल में भक्तों की अवधी और ब्रज बनकर जन-भावनाओं को गुँजाती रही। अँग्रेज़ों के शासनकाल में यह राजनीतिक, धार्मिक और सांस्कृतिक आन्दोलनों की भाषा बनी। इसी समय भारतीय काँग्रेस ने

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

हिन्दी को अपनाया। साथ ही साहित्यिक सँस्थाओं और लब्धप्रतिष्ठित नेताओं ने इसका पक्ष लिया जिसमें यह शिक्षा, न्याय और प्रशासन की भाषा बन गई। ब्रम्ह-समाज के केशवचन्द्र सेन, आर्य-समाज के स्वामी दयानन्द सरस्वती, सनातन-धर्म-सभा के गोस्वामी गणेशदत्त, प्रार्थना-समाज के नवीन चन्द्र राय, थियासाफिकल-सोसायटी की श्रीमती एनी बेसेंट, रामकृष्ण मिशन के स्वामी विवेकानन्द तथा राधास्वामी सम्प्रदाय के स्वामी दिवाकर भट्ट ने हिन्दी-प्रसार में योग दिया और लाला लाजपतराय, पं. मदनमोहन मालवीय तथा महात्मा-गाँधी ने इसे राष्ट्रभाषा का पद दिलाया। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद पुरुषोत्तमदास टण्डन, डॉ. राजेन्द्रप्रसाद और सेठ गोविन्ददास ने इसे राजभाषा के पद पर प्रतिष्ठित किया। इससे हिन्दी की विकास-प्रवृत्ति का ज्ञान होता है कि वह यदि अपनी प्रकृति में परिवर्तनशील है, तो प्रवृत्ति में अभिग्रहण भी है। उसने अपना शब्द-भण्डार जहाँ परम्परागत आर्यभाषाओं से प्राप्त किया है, वहीं १० प्रतिशत शब्द उसने अरबी, फ़ारसी, तुर्की, पश्तो, बलूची और अफगानी भाषाओं से ग्रहण किये हैं। इसी प्रकार ६ प्रतिशत शब्द उसने आदिम जातियों, जनजातियों तथा द्राविड़-भाषाओं की बोलियों से ग्रहण किये हैं। आज की हिन्दी में ग्रीक, अँग्रेज़ी, फ्रांसीसी, डच, पुर्तगाली, रूसी, जर्मन और चेकोस्लावी भाषा के १० प्रतिशत से अधिक शब्द प्रयुक्त हो रहे हैं।[३७] हिन्दी ने इस मिश्रण से अपनी अभिव्यक्ति सामर्थ्य बढ़ाई है और इन शब्दों के अभिग्रहण से वह सार्वदेशिक विश्वभाषा बन गई है। इसीलिए हिन्दी विश्वसम्मेलन, नागपुर और मारिशस के विवरणों में हिन्दी को विश्वभाषा के रूप में मान्य करने के प्रस्ताव वर्तमान सदी के अष्टम दशक में पारित हुए हैं।[३८]

०३.१०. निष्कर्ष :–

हिन्दी ने प्राचीन आर्य-भाषाओं, अरबी, फ़ारसी, तुर्की-पश्तो आदि सभी भाषाओं; अँग्रेज़ी-फ्रांसीसी-डच, पुर्तगाली-रूसी-आदि विदेशी तथा बंगाली-मराठी-गुजराती-पंजाबी-तमिल-तेलुगु आदि देशी भाषाओं से ध्वनि, शब्द, मुहावरे और अभिव्यक्ति माध्यमों को ग्रहण किया है तथा अपनी पाचन शक्ति को बढ़ाकर लचीलेपन का प्रमाण दिया है। परस्पर आदान-प्रदान से वह आज शिक्षा, न्याय, विज्ञान, प्रशासन, व्यवसाय, जन-सम्पर्क और प्रसारण की समर्थ माध्यम बन गई है। अनेक स्रोतों से विविध तत्वों को ग्रहणकर हिन्दी ने अपनी अभिव्यक्ति-क्षमता को सहज, सरल, सुबोध और सुगम बनाया है। इसी प्रकार उसकी लिपि आज इतनी परिष्कृत हो गई है कि वह विश्व की किसी भी भाषा की ध्वनियों की सांकेतिक अभिव्यक्ति कर सकती है। उसने अपनी सजीवता में प्रगति का प्रशस्त मार्ग चुना है। वह समझौते के सिद्धान्त को अपनाकर विश्व की साझी भाषा बन गई है। उसकी इसी प्रगतिशीलता ने उसे भारतीय संघ की राजभाषा बनाया है। राजभाषा बनने के बाद उसकी प्रगति में जो समस्याएँ उठ खड़ी हुई हैं, उसे उन्हें सुलझाने के लिए अपने सामर्थ्य का परिचय देना होगा तभी वह यथार्थ-सजीव राजभाषा के रूप में अधिमान्य होगी।

---

३७. Hindi Loan Words–Language J. Burton Page Poona PP 176-177.

३८. भाषा विशेषांक : हिन्दी-साहित्य-परिचय (लेख) : मेहरोत्रा, जनवरी-फरवरी, १९६८।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy: Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

अध्याय-४

राजभाषा हिन्दी का विरोध और उसके कारण

०४.००. हिन्दी का सांवैधानिक स्वरूप :–

हिन्दी का सांवैधानिक अर्थ भारतीय संघ की राजभाषा है।[1] यह भारत की सामाजिक संस्कृति के सब तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम है।[2] यह आज उत्तरप्रदेश, बिहार, दिल्ली, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, राजस्थान तथा मध्यप्रदेश की बोलियों, साहित्य-रूपों एवं विधान-मण्डलों द्वारा स्वीकृत राजभाषा, भारत देश की प्रशासनिक भाषा तथा दिल्ली, मेरठ, बिजनौर और हरियाणा में बोली जाने वाली खड़ी-बोली का प्रचलित रूप है। इसके रूप निर्माण में भारत की प्राचीन भाषाओं, प्रान्तीय भाषाओं और विदेशी भाषाओं ने पर्याप्त योग दिया है। भारतीय संविधान और जनता ने इसी लोक-प्रचलित हिन्दी को राजभाषा स्वीकार किया है।

इसका बोलचाल का स्वरूप 'राष्ट्रभाषा' कहलाता है। यह रूप पूरे भारत में प्रचलित है। इस रूप में यह भारत की सभी प्रचलित भाषाओं और विश्व की समृद्ध भाषाओं से प्रभाव ग्रहण कर भारतीय जनता के विचारों की वाहिका बनी हुई है। राजनेताओं के भाषण, समाचार-पत्रों के समाचार तथा व्यावसायियों के व्यवहार इसी भाषा में किये जाते हैं। अन्तःप्रान्तीय व्यवहार में इस भाषा का महत्वपूर्ण योगदान है। राष्ट्रभाषा-प्रचार-समिति, वर्धा, दक्षिण-भारत-हिन्दी-प्रचार-सभा, मद्रास तथा श्री मध्यभारत हिन्दी-साहित्य-समिति, इन्दौर भाषा के इसी सर्वप्रचलित रूप की प्रचारक संस्थाएँ हैं।

हिन्दी का तीसरा स्वरूप साहित्यिक हिन्दी है। हिन्दी-साहित्य के इतिहास में 'हिन्दी' शब्द का अर्थ है–बिहार, उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश, राजस्थान, दिल्ली, हिमाचलप्रदेश तथा हरियाणा की भाषा। यही क्षेत्र हिन्दी-प्रदेश है। इस पूरे प्रदेश में उर्दू को छोड़कर सभी बोलियाँ हिन्दी में समाहित हैं। इस दृष्टि से मारवाड़ी, मेवाड़ी, मेवाती, जयपुरी-मालवी, निमाड़ी, बाँगरू, खड़ीबोली, ब्रज, कन्नौजी, बुन्देली, पश्चिमी पहाड़ी, मध्यवर्ती पहाड़ी, अवधी, बघेली, छत्तीसगढ़ी, भोजपुरी, मगही और मैथिली बोलियों में प्राप्त साहित्य हिन्दी-साहित्य कहलाता है। सांस्कृतिक तथा व्यावहारिक दृष्टि से यह हिन्दी का व्यापक अर्थ है।[3]

---

१. संघ की राजभाषा-हिन्दी और लिपि देवनागरी है। भारतीय संविधान धारा ३४३(१)

२. भारतीय संविधान : अनुच्छेद ३५१ : पृ. १५८.

३. भाषा-विज्ञान कोश : भोलानाथ तिवारी, पृष्ठ ७३६.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

हिन्दी के इन्हीं तीनों स्वरूपों को समन्वित कर इसका एक सर्वमान्य रूप वैय्याकरणों द्वारा स्वीकृत किया गया है। प्रारम्भ में कामताप्रसाद गुरू ने इसके इस स्वरूप को सुनियोजित किया था किन्तु आज इसका स्वरूप डॉ. भोलानाथ तिवारी के 'हिन्दी-भाषा का सरल व्याकरण' तथा डॉ. हरदेव बाहरी के 'हिन्दी-व्याकरण' में निर्धारित है। अँग्रेज़ी-भाषा में लिखित केलाग कृत 'ए ग्रामर ऑफ हिन्दी लेंग्वेज़' भी उपयोगी ग्रन्थ है। व्याकरण-सम्मत यही हिन्दी 'परिनिष्ठित-हिन्दी' कहलाती है और यही भारतीय संघ की राजभाषा है।

इस हिन्दी को संघ की राजभाषा इसलिए नहीं बनाया गया कि वह भारत की अन्य भाषाओं की अपेक्षा अधिक समर्थ और सशक्त है। भारत की सभी क्षेत्रीय भाषाओं का अपना-अपना अनूठा इतिहास है और उनमें साहित्य का अनुपम भण्डार भी है। यह कहना कठिन है कि कौन-सी भारतीय भाषा सर्वश्रेष्ठ है। संविधान-सभा ने राजभाषा सम्बन्धी निर्णय एक विशुद्ध व्यावहारिक दृष्टिकोण को ध्यान में रखकर लिया था। किसी भी स्वतन्त्र राष्ट्र के लिये यह सम्मानजनक बात नहीं होती कि उसकी राजभाषा एक विदेशी भाषा हो। इसलिए अँग्रेज़ी को तो जाना ही है। संविधान-सभा के सदस्यों ने इसीलिए अधिकाँश जनता द्वारा बोली और समझी जाने वाली हिन्दी को राजभाषा बनाया। भारतवर्ष के एक बड़े भू-भाग और जन-समुदाय की भाषा होने के कारण राजभाषा के रूप में इसका चयन स्वाभाविक था। परिनिष्ठित-भाषा के रूप में विश्व में इसके बोलने वालों की सँख्या ४५ करोड़ है। अतः अँग्रेज़ी और चीनी के बाद, बोलने वालों की सँख्या की दृष्टि से यह तीसरी विश्व-भाषा है।[४]

संघ की राजभाषा से तात्पर्य उस भाषा से है जो केन्द्रीय शासन से समस्त राजकीय कार्यों के लिये प्रयुक्त की जाय। इन कार्यों के अन्तर्गत संसद, कार्यपालिका और न्यायपालिका तीनों का कामकाज आ जाता है। इनमें से कार्यपालिका का सम्बन्ध प्रशासन की भाषा से होता है। प्रशासन की भाषा जनताभिमुखी होती है क्योंकि दैनिक कार्यों में जनता का प्रत्यक्ष सम्पर्क प्रशासन से होता रहता है।

भारतीय संविधान में हिन्दी के विषय में जो व्यवस्था की गई थी उसमें कालान्तर में पर्याप्त परिवर्तन किया गया है। संविधान के अनुसार सन् १९६५ के बाद सरकारी कामकाज में केवल हिन्दी का प्रयोग अपेक्षित था। संसद को यह अधिकार दिया गया था कि वह इस अवधि के बाद भी अँग्रेज़ी-भाषा के व्यवहार के लिए कानून बना सकेगी। सन् १९५५ के राजभाषा-आयोग और सन् १९५७ की संसदीय-समिति की राय से सरकारी कामकाज में हिन्दी के साथ-साथ सह-राजभाषा के रूप में अँग्रेज़ी के प्रयोग को भी चालू रखा गया। इसके लिये राजभाषा अधिनियम १९६३ को सन् १९६७ में संशोधित किया गया। इस संशोधित अधिनियम की धारा ३ (२) के अधीन अन्तर-मन्त्रालयीन,

४. विश्व में जनसंख्या की दृष्टि से हिन्दी का तृतीय स्थान है : धीरेन्द्र वर्मा–(हिन्दी-साहित्य कोश भाग–१), पृ. ९७२.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

अन्तर-कार्यालयीन कामकाज में हिन्दी के साथ अँग्रेज़ी का प्रयोग भी बनाये रखा गया।[५] साथ ही अहिन्दी-भाषी राज्यों को केन्द्र के साथ पत्र-व्यवहार में अँग्रेज़ी के प्रयोग की सुविधा दी गई। संघ के कामकाज में हिन्दी के अतिरिक्त अँग्रेज़ी का प्रयोग तब तक चलता रहेगा जब तक हिन्दी को राजभाषा के रूप में न अपनाने वाले सभी राज्यों के विधान-मण्डल अँग्रेज़ी का प्रयोग बन्द करने के लिये संकल्प पारित न करें और उनके संकल्पों के बाद संसद के दोनों सदन भी इसके लिये संकल्प पारित न करें। इस तरह आज भारत की प्रशासकीय-भाषा में द्वि-भाषिक स्थिति उत्पन्न हो गई है और इसलिये अब हिन्दी का विरोध होने लगा है।

०४.०१. विरोध की दिशाएँ –

हिन्दी का विरोध दो दिशाओं से हो रहा है—(१) स्वदेश में, (२) विदेशों में। (१) स्वदेश में—विरोध जो कर रहे हैं वे एक तो अँग्रेज़ी के पक्षधर हैं और दूसरे प्रादेशिक भाषावादी हैं। ये दोनों वर्ग सुविधाभोगी हैं और हिन्दी का विरोध स्वार्थ-साधना के लिये कर रहे हैं। अँग्रेज़ी के पक्षधरों में प्रशासकीय सेवा के सुविधा प्राप्त अधिकारी, हीनता की ग्रन्थि से पीड़ित हिन्दी-भाषी अधिकारी व कर्मचारी, धन के लोलुप पूँजीवादी प्रतिष्ठान, प्रतिष्ठा प्राप्त बुद्धिवादी तथा अधिकार-लोलुप नेतागण सम्मिलित हैं। अखिल भारतीय प्रशासनिक सेवा में लगे अधिकारी अपने प्रभाव को अक्षुण्ण बनाये रखने के लिये तथा अशिक्षित जनता के मध्य अपनी श्रेष्ठता प्रतिपादित करने के लिये जन-साधारण को लोक-भाषा हिन्दी में कामकाज नहीं करते। यही स्थिति न्यायपालिका के न्यायधीशों की है। दूसरे, हिन्दी-भाषी अधिकारी स्वाभिमान से रहित हैं। वे समाज में तथा प्रशासन में अँग्रेज़ी का प्रयोग करने में अपनी प्रतिष्ठा समझते हैं और इस झूठी प्रतिष्ठा के प्रदर्शन के लिये अपनी मातृभाषा हिन्दी का तिरस्कार करते हैं। तीसरे, गैर-सरकारी प्रतिष्ठानों में पूँजीपति अपने मजदूरों, कर्मचारियों व कार्यकर्ताओं को अपनी धन-संग्रह की नीति को रहस्यमय बनाये रखने के लिये अँग्रेज़ी का ही प्रयोग करते हैं। साथ ही छोटे व्यापारियों में धाक और साख बनाये रखने के लिये भी इन प्रतिष्ठानों की अँग्रेज़ी-भक्ति सहायक होती है। चौथे, शिक्षाशास्त्री, वकील, वैज्ञानिक, इन्जीनियर, डॉक्टर तथा कलाकार समाज में अपना गौरव अक्षुण्ण बनाये तथा निम्न-वर्ग से धन कमाने की लालसा से अँग्रेज़ी को अनन्तकाल तक बनाये रखना चाहते हैं। पाँचवें, ऐसे नेतागण, जो छल और पाखण्ड के द्वारा निर्वाचकों को चकमा देकर अपने बच्चों तथा कुटुम्बियों को तो पब्लिक स्कूलों में पढ़ने भेज देते हैं और स्वयं जनता पर प्रभाव डालने के लिये धारा-प्रवाह अँग्रेजी बोलते हैं। वे जनता और प्रशासन दोनों को धोखा देते हैं और कोरे विरोध के लिये विरोध करते हैं।

स्वदेश में हिन्दी को दूसरी दिशा से जो विरोध सहन करना पड़ रहा है वह है – अहिन्दीभाषी राज्यों का। भाषावार राज्य-निर्माण हो जाने से सन् १९५६ ई. से प्रादेशिक भाषाओं ने अपना महत्व प्रदर्शित करना प्रारम्भ कर दिया है। तमिलनाडु, बंगाल और पंजाब

५, प्रशासन की भाषा (लेख) : सुधाकर द्विवेदी । विश्व-हिन्दी-सम्मेलन : प्रतिवेदन : पृष्ठ ११५

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

में हिन्दी-विरोधी भाषाई आन्दोलन भी हुए हैं और उग्र भाषावाद नेतृत्व प्राप्ति का साधन भी बन गया है। तमिलनाडु में 'द्रविड़ मुनेत्र कड़गम' दल को बहुमत इसी आधार पर मिला है। पंजाब की शिक्षा नीति भाषाई आधार पर निर्मित हुई है। हिन्दी-विरोधी बुद्धिवादियों ने हिन्दी की बोलियों को उकसाया है कि ब्रज, अवधी, भोजपुरी, छत्तीसगढ़ी, बुन्देली आदि हिन्दी की बोलियाँ न होकर स्वतन्त्र भाषाएँ हैं। अतः उन्हें भी अपना स्वतन्त्र राज्य स्थापित करने की छूट है। 'छत्तीसगढ़' के पृथक राज्य-निर्माण की माँग इसी प्रेरणा का परिणाम है। प्रादेशिक भाषाओं का हिन्दी-विरोध देश में विघटनवादी प्रवृत्ति को पनपा रहा है। आज हम बंगाली पहले हैं—भारतवासी बाद में, मद्रासी पहले हैं—भारतीय बाद में, पंजाबी पहले हैं—हिन्दुस्तानी बाद में आदि।

(२) विदेशों में हिन्दी-विरोध:—अँग्रेज़ी के पक्षधर राष्ट्र, भारत में अँग्रेज़ी के साम्राज्य को यथापूर्व बनाये रखना चाहते हैं। इससे वे तीन प्रकार के लाभ देखते हैं—(१) अँग्रेज़ी की पुस्तकों के व्यापार से वे अर्थ प्राप्त करते हैं। (२) पुस्तकों में निहित विचारों के कारण अपनी साम्राज्यवादी-पूँजीवादी विचारधारा का प्रचार करते और भारत के स्वतन्त्र चिन्तन को रोकते हैं। (३) भारतीयों में विदेश-प्रेम जाग्रत कर स्वदेश के धर्मप्रेम, संस्कृति-प्रेम, देशप्रेम और भाषा-प्रेम के प्रति अनास्था जगाते हैं। इसके लिए वे आजकल प्रयुक्त सभी प्रकार के प्रलोभनों का उपयोग करते हैं।

०४.०२. विरोध का स्वरूप :—

अँग्रेज़ी तथा प्रादेशिक भाषाओं के द्वारा किया जाने वाला विरोध भ्रममूलक, स्वार्थमूलक, अज्ञानमूलक तथा पाखण्डमूलक है। हिन्दी के विविध रूपों को एकीकृत कर उसे अविकसित भाषा बताना भ्रान्ति उत्पन्न करना नहीं तो और क्या है ? इसी प्रकार अँग्रेज़ी को बनाये रखना और प्रादेशिक भाषाओं में से किसी एक को भारत की अन्तर-राज्यीय भाषा बनाने तथा संविधान संशोधन करने के विचार रखना स्वार्थ-साधना ही है। खड़ीबोली के अस्तित्व को सन् १८५० ई. के बाद निर्धारित करना इतिहास को विकृत करने का प्रयास करना, महान् अज्ञानता है। नेताओं द्वारा अपने बालकों को सार्वदेशिक भाषा में शिक्षा देना और साधारण जनता के बच्चों को प्रादेशिक भाषा की शिक्षा देने की दुरंगी-नीति, पाखण्ड नहीं तो और क्या है ?

०४.०३. विरोध के कारण :—

हिन्दी विरोधियों ने जो तर्क हिन्दी की अक्षमता, अप्रेषणीयता, अव्यापकता, अनिश्चयात्मकता और अव्यावहारिकता के सम्बन्ध में दिये हैं, उनकी विवेचना प्रस्तुत परिच्छेद में की जा रही है। आज हिन्दी का विरोध अँग्रेज़ी कर रही है और उसका साथ दे रही हैं कतिपय प्रादेशिक भाषाएँ। इसी प्रकार का विरोध इसके सौ वर्ष पहले भी हुआ था तब इसका विरोध उर्दू कर रही थी। उर्दू के पक्षधर थे राजा शिवप्रसाद 'सितारे हिन्द' और हिन्दी के राजा लक्ष्मणसिंह तब भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र ने सन् १८७३ ई. में मध्यम मार्ग निकालकर हिन्दी को नई दिशा दी थी। वही स्थिति अब राजभाषा-हिन्दी की है। राजभाषा-

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

हिन्दी का स्वरूप स्थिर न होने का कारण विरोधियों ने दिया है, जिसकी समीक्षा आगामी परिच्छेदों में की जा रही है।

०४.०३१. राजभाषा हिन्दी, नामों में अराजकता के कारण–अविकसित भाषा है

हिन्दी को संविधान की हिन्दी, प्रादेशिक हिन्दी, साहित्यिक हिन्दी, क्लिष्ट हिन्दी, सरल हिन्दी, सामान्य हिन्दी, नागरी हिन्दी, आदर्श हिन्दी, बाजारू हिन्दी, बनावटी हिन्दी, हिन्दुस्तानी, हिन्दुस्तानी हिन्दी, प्रशासनिक हिन्दी, राष्ट्रभाषा हिन्दी, विश्वभाषा हिन्दी, कामकाजी हिन्दी, ठेठ हिन्दी, खड़ी-बोली हिन्दी, प्रामाणिक हिन्दी, लोकभाषा हिन्दी, बोलचाल की हिन्दी, लिखित हिन्दी, विद्वानों की हिन्दी, न्यायालयों की हिन्दी, प्राध्यापकीय हिन्दी, विद्यार्थियों की हिन्दी, व्यावसायिक हिन्दी, समाचार-पत्रों की हिन्दी, संस्कृत-निष्ठ हिन्दी, उर्दू-निष्ठ हिन्दी, सटोरियों की हिन्दी, देहलवी हिन्दी, कलकतिया हिन्दी, मद्रासी हिन्दी, बम्बइया हिन्दी आदि विभिन्न नाम देकर हिन्दी विरोधी शक्तियों ने उसमें अराजकता पैदा कर दी है। कतिपय समाचार-पत्रों तथा नेताओं ने उसका उपहास करने के लिये 'यह किस देश-प्रदेश की भाषा है ?'[६] शीर्षक स्थायी स्तम्भ देकर कृत्रिम उदाहरण प्रस्तुत किये हैं और इनके संकलनकर्ताओं को पुरस्कार देकर हिन्दी-विरोध को बढ़ावा दिया है। इसके विपरीत कतिपय समाचार-पत्रों ने 'स्वर्णिम-वाक्य'[७] देकर हिन्दी के श्रेष्ठ उदाहरण भी संकलित किये हैं। हिन्दी के कुछ प्रतिष्ठित दैनिकों ने काल्पनिक शब्द गढ़कर हिन्दी विरोध का नया वायुमण्डल निर्माण किया है।[८] यह स्थिति हिन्दी के विकास के लिये चिन्तनीय है। इस विरोध का मर्मस्थल कहाँ है, चिन्तनीय है। यह विरोध पूँजीवादी प्रतिष्ठानों के धन से प्रकाशित होने वाले एकाधिकारवादी दैनिक, साप्ताहिक और मासिक पत्रों द्वारा किया जा रहा है। इस विरोध के मूल में वे वेतनभोगी भारतीय पत्रकार हैं, जिन्होंने धन के लिये अपनी आत्मा बेच दी है। वस्तुतः राजभाषा-हिन्दी के अन्तर्गत प्रशासकीय काम में आनेवाली संविधान की हिन्दी, साहित्यिक हिन्दी और लोकभाषा-हिन्दी के सरल-सहज और सुबोध रूपों को ही स्थान दिया जाता है। रचनात्मक दृष्टिकोण अपनाने वाले भारतवासी इसी हिन्दी को हिन्दी मानते हैं, शेष रूपों को विरोध के लिये विरचित कृत्रिम हिन्दी मानते हैं। इन तीनों रूपों के विकास का इतिहास भाषा तथा साहित्यिक ग्रन्थों में संरक्षित है। इसका विकास प्रस्तुत परिच्छेद में दिया जा रहा है।

---

६. स्तम्भ—'यह किस देश-प्रदेश की भाषा है' : सरिता : फरवरी (प्रथम) १९७५, पृ. २५
(१) वही वही वही मार्च (द्वितीय) : १९७७, पृष्ठ ७३
(२) वही वही वही जनवरी (प्रथम) : १९७८, पृष्ठ १३९
(३) वही वहो वही मार्च (द्वितीय) : १९७८, पृष्ठ १६२

७. स्तम्भ—'स्वर्णिम-वाक्य', मुक्ता : सितम्बर (द्वितीय) : १९७४, पृष्ठ ७८
वहो वही जुलाई (प्रथम) : १९७६, पृष्ठ २५

८. यथा —'रेल' के लिये 'लोहपथगामिनी' और 'साइकिल' के लिये 'द्विचक्रथ' आदि

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

में हिन्दी-विरोधी भाषाई आन्दोलन भी हुए हैं और उग्र भाषावाद नेतृत्व प्राप्ति का साधन भी बन गया है। तमिलनाडु में 'द्रविड़ मुनेत्र कड़गम' दल को बहुमत इसी आधार पर मिला है। पंजाब की शिक्षा नीति भाषाई आधार पर निर्मित हुई है। हिन्दी-विरोधी बुद्धिवादियों ने हिन्दी की बोलियों को उकसाया है कि ब्रज, अवधी, भोजपुरी, छत्तीसगढ़ी, बुन्देली आदि हिन्दी की बोलियाँ न होकर स्वतन्त्र भाषाएँ हैं। अतः उन्हें भी अपना स्वतन्त्र राज्य स्थापित करने की छूट है। 'छत्तीसगढ़' के पृथक राज्य-निर्माण की माँग इसी प्रेरणा का परिणाम है। प्रादेशिक भाषाओं का हिन्दी-विरोध देश में विघटनवादी प्रवृत्ति को पनपा रहा है। आज हम बंगाली पहले हैं—भारतवासी बाद में, मद्रासी पहले हैं—भारतीय बाद में, पंजाबी पहले हैं—हिन्दुस्तानी बाद में आदि।

(२) विदेशों में हिन्दी-विरोध:—अँग्रेज़ी के पक्षधर राष्ट्र, भारत में अँग्रेज़ी के साम्राज्य को यथापूर्व बनाये रखना चाहते हैं। इससे वे तीन प्रकार के लाभ देखते हैं—(१) अँग्रेज़ी की पुस्तकों के व्यापार से वे अर्थ प्राप्त करते हैं। (२) पुस्तकों में निहित विचारों के कारण अपनी साम्राज्यवादी-पूँजीवादी विचारधारा का प्रचार करते और भारत के स्वतन्त्र चिन्तन को रोकते हैं। (३) भारतीयों में विदेश-प्रेम जाग्रत कर स्वदेश के धर्मप्रेम, संस्कृति-प्रेम, देशप्रेम और भाषा-प्रेम के प्रति अनास्था जगाते हैं। इसके लिए वे आजकल प्रयुक्त सभी प्रकार के प्रलोभनों का उपयोग करते हैं।

०४.०२. विरोध का स्वरूप :–

अँग्रेज़ी तथा प्रादेशिक भाषाओं के द्वारा किया जाने वाला विरोध भ्रममूलक, स्वार्थ-मूलक, अज्ञानमूलक तथा पाखण्डमूलक है। हिन्दी के विविध रूपों को एकीकृत कर उसे अविकसित भाषा बताना भ्रान्ति उत्पन्न करना नहीं तो और क्या है? इसी प्रकार अँग्रेज़ी को बनाये रखना और प्रादेशिक भाषाओं में से किसी एक को भारत की अन्तर-राज्यीय भाषा बनाने तथा संविधान संशोधन करने के विचार रखना स्वार्थ-साधना ही है। खड़ीबोली के अस्तित्व को सन् १८५० ई. के बाद निर्धारित करना इतिहास को विकृत करने का प्रयास करना, महान् अज्ञानता है। नेताओं द्वारा अपने बालकों को सार्वदेशिक भाषा में शिक्षा देना और साधारण जनता के बच्चों को प्रादेशिक भाषा की शिक्षा देने की दुरँगी-नीति, पाखण्ड नहीं तो और क्या है?

०४.०३. विरोध के कारण :–

हिन्दी विरोधियों ने जो तर्क हिन्दी की अक्षमता, अप्रेषणीयता, अव्यापकता, अनिश्चयात्मकता और अव्यावहारिकता के सम्बन्ध में दिये हैं, उनकी विवेचना प्रस्तुत परिच्छेद में की जा रही है। आज हिन्दी का विरोध अँग्रेज़ी कर रही है और उसका साथ दे रही है कतिपय प्रादेशिक भाषाएँ। इसी प्रकार का विरोध इसके सौ वर्ष पहले भी हुआ था तब इसका विरोध उर्दू कर रही थी। उर्दू के पक्षधर थे राजा शिवप्रसाद 'सितारे हिन्द' और हिन्दी के राजा लक्ष्मणसिंह तब भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र ने सन् १८७३ ई. में मध्यम मार्ग निकालकर हिन्दी को नई दिशा दी थी। वही स्थिति अब राजभाषा-हिन्दी की है। राजभाषा-

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy: Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

हिन्दी का स्वरूप स्थिर न होने का कारण विरोधियों ने दिया है, जिसकी समीक्षा आगामी परिच्छेदों में की जा रही है।

०४.०३१. राजभाषा हिन्दी, नामों में अराजकता के कारण–अविकसित भाषा है

हिन्दी को संविधान की हिन्दी, प्रादेशिक हिन्दी, साहित्यिक हिन्दी, क्लिष्ट हिन्दी, सरल हिन्दी, सामान्य हिन्दी, नागरी हिन्दी, आदर्श हिन्दी, बाजारू हिन्दी, बनावटी हिन्दी, हिन्दुस्तानी, हिन्दुस्तानी हिन्दी, प्रशासनिक हिन्दी, राष्ट्रभाषा हिन्दी, विश्वभाषा हिन्दी, कामकाजी हिन्दी, ठेठ हिन्दी, खड़ी-बोली हिन्दी, प्रामाणिक हिन्दी, लोकभाषा हिन्दी, बोलचाल की हिन्दी, लिखित हिन्दी, विद्वानों की हिन्दी, न्यायालयों की हिन्दी, प्राध्यापकीय हिन्दी, विद्यार्थियों की हिन्दी, व्यावसायिक हिन्दी, समाचार-पत्रों की हिन्दी, संस्कृत-निष्ठ हिन्दी, उर्दू-निष्ठ हिन्दी, सटोरियों की हिन्दी, देहलवी हिन्दी, कलकतिया हिन्दी, मद्रासी हिन्दी, बम्बइया हिन्दी आदि विभिन्न नाम देकर हिन्दी विरोधी शक्तियों ने उसमें अराजकता पैदा कर दी है। कतिपय समाचार-पत्रों तथा नेताओं ने उसका उपहास करने के लिये 'यह किस देश-प्रदेश की भाषा है ?'[६] शीर्षक स्थायी स्तम्भ देकर कृत्रिम उदाहरण प्रस्तुत किये हैं और इनके संकलनकर्ताओं को पुरस्कार देकर हिन्दी-विरोध को बढ़ावा दिया है। इसके विपरीत कतिपय समाचार-पत्रों ने 'स्वर्णिम-वाक्य'[७] देकर हिन्दी के श्रेष्ठ उदाहरण भी संकलित किये हैं। हिन्दी के कुछ प्रतिष्ठित दैनिकों ने काल्पनिक शब्द गढ़कर हिन्दी विरोध का नया वायुमण्डल निर्माण किया है।[८] यह स्थिति हिन्दी के विकास के लिये चिन्तनीय है। इस विरोध का मर्मस्थल कहाँ है, चिन्तनीय है। यह विरोध पूँजीवादी प्रतिष्ठानों के धन से प्रकाशित होने वाले एकाधिकारवादी दैनिक, साप्ताहिक और मासिक पत्रों द्वारा किया जा रहा है। इस विरोध के मूल में वे वेतनभोगी भारतीय पत्रकार हैं, जिन्होंने धन के लिये अपनी आत्मा बेच दी है। वस्तुतः राजभाषा-हिन्दी के अन्तर्गत प्रशासकीय काम में आनेवाली संविधान की हिन्दी, साहित्यिक हिन्दी और लोकभाषा-हिन्दी के सरल-सहज और सुबोध रूपों को ही स्थान दिया जाता है। रचनात्मक दृष्टिकोण अपनाने वाले भारतवासी इसी हिन्दी को हिन्दी मानते हैं, शेष रूपों को विरोध के लिये विरचित कृत्रिम हिन्दी मानते हैं। इन तीनों रूपों के विकास का इतिहास भाषा तथा साहित्यिक ग्रन्थों में संरक्षित है। इसका विकास प्रस्तुत परिच्छेद में दिया जा रहा है।

---

६. स्तम्भ—'यह किस देश-प्रदेश की भाषा है' : सरिता : फरवरी (प्रथम) १९७५, पृ. २५
(१) वही वही वही मार्च (द्वितीय) : १९७७, पृष्ठ ७३
(२) वही वही वही जनवरी (प्रथम) : १९७८, पृष्ठ १३९
(३) वही वही वही मार्च (द्वितीय) : १९७८, पृष्ठ १६२

७. स्तम्भ—'स्वर्णिम-वाक्य', मुक्ता : सितम्बर (द्वितीय) : १९७४, पृष्ठ ७८
वही वही जुलाई (प्रथम) : १९७६, पृष्ठ २५

८. यथा—'रेल' के लिये 'लोहपथगामिनी' और 'साइकिल' के लिये 'द्विचक्ररथ' आदि

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

०४ ०३२. राजभाषा हिन्दी के विविध नामों के सम्बन्ध में भ्रान्ति-

(अ) संस्कृत-निष्ठ हिन्दी —

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने हिन्दी-साहित्य के आधुनिककाल का प्रारम्भ १८४३ ई. से माना है। खड़ी-बोली का गद्य १८०३ ई. से प्रारम्भ होता है।[९] इसके प्रथम तीन प्रवर्तक लल्लूजी लाल, सदल मिश्र और गिलक्राईस्ट हैं।[१०] भारतेन्दु के साहित्य क्षेत्र में पदार्पण करने पर गद्य के विकास के युग का नाम भारतेन्दु-युग रखा गया है।[११] इस समय देश में अँग्रेज़ शासन को चलाने के लिये तथा अपनी शिक्षा-नीति के प्रवर्तन के लिये देश की भाषाओं का अध्ययन कर रहे थे। उन्होंने फोर्ट विलियम कॉलेज की स्थापना सन् १८०० ईस्वी में की।[१२] इस समय तक हिन्दी का गद्य अपने व्यवस्थित रूप में नहीं था। 'इस युग में मूल संघर्ष हिन्दी की स्वीकृति और प्रतिष्ठा को लेकर चला। फ़ारसी के स्थान पर हिन्दी को प्रतिष्ठित करने के लिये किये गये प्रयत्न ही जागरण के आधार बने। इस युग के दो प्रसिद्ध लेखकों–राजा शिवप्रसाद और राजा लक्ष्मणसिंह ने हिन्दी के स्वरूप-निर्धारण के प्रश्न पर दो सीमान्तों का अनुगमन किया। राजा लक्ष्मणसिंह ने संस्कृत-निष्ठ हिन्दी का समर्थन किया और राजा शिवप्रसाद ने हिन्दी का गँवारूपन दूर करते-करते उसे उर्दू-निष्ठ बना दिया। इन दोनों के बीच सर्वमान्य हिन्दी-गद्य की प्रतिष्ठा कर गद्य-साहित्य के विविध विधाओं के विकास का ऐतिहासिक कार्य भारतेन्दु ने पूरा किया।[१३] इस समय देश में प्रचलित भाषाओं को कई नामों से जाना जाता था। मुसलमान उसे 'भाखा' कहते थे।[१४] यह शब्द साहित्यिक-हिन्दी का द्योतक था, जिसमें आवश्यकतानुसार संस्कृत, ब्रजभाषा और खड़ी-बोली के शब्द प्रयुक्त होते थे। यही संस्कृत-मिश्रित हिन्दी उर्दू वालों की दृष्टि में 'भाखा' थी। वे अरबी-फ़ारसी मिश्रित हिन्दी को उर्दू और संस्कृत-मिश्रित हिन्दी को 'भाखा' कहते थे।[१५]

---

९. खड़ी-बोली स्वरूप और साहित्यिक परम्परा : ओंकार राही : पृष्ठ ११

१०. दि हिन्दी स्टोरी : वी. गिलक्राईस्ट : वाल्यूम II : कलकत्ता : १८०२ ई., पृष्ठ २

११. हिन्दी साहित्य का इतिहास : रामचन्द्र शुक्ल, पृष्ठ ४८१

१२. भाषा-विज्ञान-कोश : भोलानाथ तिवारी, पृष्ठ ७३५

१३. हिन्दी-साहित्य का इतिहास : डॉ. नगेन्द्र, पृष्ठ ४३३

१४. वही वही पृष्ठ ४७४

१५. भाखापन का प्रयोग संस्कृत-मिश्रित हिन्दी के लिये किया गया है क्योंकि मुसलमान लोग संस्कृत के तत्सम् शब्दों से युक्त भाषा के लिये ही इस शब्द का प्रयोग किया करते थे–वीणा, सितम्बर १९४१ : पृष्ठ २३०

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

'हिन्दुस्तानी' शब्द का प्रयोग हिन्दी-भाषा के अर्थ में सन् १७५० ई. के आसपास हुआ।[१६] १८वीं सदी के अन्त में यह 'उर्दू' का पर्यायवाची बन गया। १८०० ई. के आसपास फोर्ट विलियम कॉलेज में हिन्दुस्तानी-विभाग को स्थापना के समय हिन्दुस्तानी का अर्थ वह 'ठेठ-हिन्दी' था, जिसमें अरबी-फ़ारसी शब्दों की भरमार थी और जो फ़ारसी-लिपि में लिखी जाती थी।[१७] वस्तुत १९वीं सदी के प्रथम दशक में हिन्दुस्तानी शब्द अरबी-फ़ारसी शब्दों से युक्त गिलक्राईस्ट की हिन्दी के लिए प्रयुक्त होने लगा और 'हिन्दी' शब्द हिन्दुओं में प्रयुक्त संस्कृतमिश्रित भाखा के लिए।[१८] हिन्दी का स्पष्ट रूप से लिखित प्रयोग सर्व-प्रथम कैप्टन टेलर ने किया था—'१८१२ ई. में फोर्ट विलियम कॉलेज के वार्षिक विवरण में वे कहते हैं—'मैं केवल हिन्दुस्तानी या रेख्ता का जिक्र कर रहा हूँ जो फ़ारसी लिपि में लिखी जाती है...........मैं हिन्दी का जिक्र नहीं कर रहा जिसकी अपनी लिपि है... ....जिसमें अरबी-फ़ारसी शब्दों का प्रयोग नहीं होता और मुसलमानी आक्रमण से पहले से जो भारतवर्ष के समस्त उत्तर-पश्चिम प्रान्त की भाषा थी'।[१९] इसी प्रकार १८२४ ई. में फोर्ट विलियम कॉलेज के हिन्दी प्रोफेसर विलियम प्राइस ने स्पष्ट शब्दों में हिन्दी के लगभग सभी शब्दों के संस्कृत होने की बात कही तथा हिन्दुस्तानी के शब्दों के अरबी-फ़ारसी होने की।[२०] ईस्ट-इण्डिया कम्पनी के कर्मचारी उर्दू के पर्यायवाची इसी हिन्दुस्तानी का प्रयोग करते थे। १९वीं सदी में हिन्दुस्तानी का यहीं अर्थ रहा। गार्सां द तासी, फ्रेडरिक पिन्काट, जान गिलक्राईस्ट, विलियम प्राइस तथा राजा शिवप्रसाद सितारेहिन्द इसी हिन्दुस्तानी को हिन्दुई, उर्दू, हिन्दी, रेख्ता और ठेठ हिन्दी कहते रहे किन्तु बीसवीं सदी के तीसरे दशक में उर्दू-हिन्दी विवाद बढ़ जाने से महात्मा-गाँधी ने इसे भारत की राष्ट्रभाषा की पदवी दे दी, जिसमें हिन्दी और उर्दू दोनों भाषाओं की सामान्य 'शब्दावली थी, संस्कृत, अरबी-फ़ारसी के कठिन शब्दों के लिए स्थान न था तथा संरचनात्मक ढाँचा ठेठ हिन्दी[२१] का था। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के संविधान में इसी को राष्ट्रभाषा कहा है।[२२]

संस्कृतनिष्ठ हिन्दी या क्लिष्ट हिन्दी कोई अलग से विधा नहीं और न हिन्दी का कोई प्रकार है, किन्तु विभिन्न विद्वानों ने इसके भिन्न-भिन्न नाम देकर नई-नई व्याख्याएँ

---

१६. हजारीप्रसाद द्विवेदी : दो सौ वर्ष पुरानी खड़ी-बोली के नमूने : हजारीप्रसाद द्विवेदी : विशाल भारत : भाग २५, अंक–४, १९४०, पृ. ३६६–३७०

१७. खड़ीबोली स्वरूप और साहित्यिक परम्परा : ओंकार राही, पृ. १४

१८. हिन्दी भाषा : भोलानाथ तिवारी (प्रवेश), पृ. १३३

१९. इम्पीरियल रिकार्डस् : वाल्यूम ९ : पृ. २७६–२७७

२०. हिन्दी-भाषा : भोलानाथ तिवारी (प्रवेश), पृ. १३३

२१. सभ्य-समाज की बोलचाल की भाषा को ठेठ हिन्दी कहते हैं : अयोध्यासिंह उपाध्याय, ओंकार राही, खड़ी-बोली, पृ. १८२

२२. हिन्दी-साहित्य-कोश, भाग–१ ; धीरेन्द्र वर्मा, पृ. ९७७

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

की हैं। हिन्दू और मुसलमान भारत में दीर्घकाल से रह रहे हैं। उनकी अपनी-अपनी संस्कृतियाँ हैं। संस्कृत प्राचीन समय से भारत की राजभाषा रही है।[२३] उसके उपरान्त देश में मुगलों के आगमन से फ़ारसी-भाषा राजभाषा बनी। इस प्रकार दीर्घकाल तक दोनों भाषाओं के राजभाषा होने के कारण इनके कई शब्द प्रचलन में आते गये और वे एक-दूसरे में घुल-मिल गये। दोनों भाषाओं को मानने वाले लोग धार्मिक कट्टरता के कारण अपनी-अपनी भाषा के महत्व को प्रदर्शित करते रहे हैं। संस्कृतनिष्ठ हिन्दी, हिन्दी की एक अपनी शैली है[२४] —भारतेन्दु आधुनिक-हिन्दी के जन्मदाता माने गये हैं। आपके उदयकाल में हिन्दी की दो प्रमुख शैलियाँ प्रचलित थीं। एक संस्कृत-बहुल और दूसरी फ़ारसी-बहुल। आपने एक तीसरी ही शैली को अपनाया जो इन दोनों से भिन्न अपना सरल, सुबोध, और सर्वप्रिय रूप लेकर सामने आई।[२५] अभी तक हिन्दी-भाषा के स्वरूप के विषय में विवाद चलता रहा और उसका स्वरूप निर्धारण हुआ। जब भारतेन्दु अपनी मँजी हुई, परिष्कृत भाषा सामने लाए तब हिन्दी-भाषा जनता को गद्य के लिये खड़ी-बोली का प्रकृत साहित्य-रूप मिल गया और भाषा के स्वरूप का प्रश्न ही न रह गया।[२६]

---

२३. (अ) भारतीय भाषाओं के साहित्य का संक्षिप्त इतिहास-भारत सरकार, १९७४, पृ. २८६। पाणिनि ने वैदिक भाषा को छान्दस और बोलचाल की भाषा को केवल भाषा कहा है। इससे सिद्ध होता है कि उनके समय में संस्कृत लोक-व्यवहार की भाषा थी। पाणिनि ने इसे नियमबद्ध कर एक परिनिष्ठित रूप दिया और उसका एक मानदण्ड स्थापित किया जो तब से आज तक उसी तरह मान्य है। पाणिनि के अनन्तर कात्यायन की वार्तिक (ई. पू. चतुर्थ शतक) और पतंजलि के महाभाष्य (ई. पू. द्वितीय शतक) भी इस बात के प्रमाण हैं कि उनके समय में सस्कृत जनभाषा थी। इसके अतिरिक्त और भी अनेक प्रमाणों से यह सिद्ध हो चुका है कि संस्कृत किसी समय एक सजीव और लोक-व्यवहार की भाषा थी और अनेक वर्षों तक वह भारतीय संस्कृति एवं शासन की भाषा बनी रही।

(ब) यहाँ के मनीषियों ने ज्ञानोन्मेष-काल से ही अनेकता में एकता का विधान कर आसेतु हिमाचल व्यापी भारतीय भूमि भाग को एक राष्ट्र में ग्रथित किया था और संस्कृत को तत्कालीन राष्ट्रभाषा का पद दिया था—राष्ट्रभाषा हिन्दी का स्वरूप विधान : डॉ. रामेश्वर मिश्र, प्र. संस्करण १९७५ : पृ. १०८

२४. उर्दू, हिन्दी की एक शैली विशेष है। वस्तुतः हिन्दी की इस समय प्रमुखतः तीन शैलियाँ चल रही है : एक उर्दू, एक संस्कृतनिष्ठ हिन्दी तथा एक बीच की जिसे हिन्दुस्तानी कहते हैं—डॉ. भोलानाथ तिवारी : हिन्दी-भाषा : १९६६, पृ. १४०

२५. 'सम्पादकीय'—वीणा : सन् १९५० ई., पृ. ७३५

२६ हिन्दी-साहित्य का इतिहास : रामचन्द्र शुक्ल—'प्र. १ सा. प.' : पृ. ४३०

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

भारतेन्दु द्वारा स्थिर किये गये खड़ी-बोली-गद्य के स्वरूप निर्माण के तीन आधार थे—

(१) हिन्दी के तद्भव और प्रचलित शब्दों का प्रयोग

(२) उर्दू-फ़ारसी के लोक-व्यवहार में प्रचलित शब्दों का प्रयोग और

(३) आवश्यकता पड़ने पर संस्कृत के मूल स्रोत से शब्दों को ग्रहण करने की नीति। [२७]

यहाँ कतिपय प्रतिनिधि लेखकों की हिन्दी का उदाहरण दिया जा रहा है तथा उनकी शैली की विवेचना दी जा रही है—

(क) इंशा अल्लाखां (१८०० ई. के लगभग रचनाकाल है)—

'एक दिन बैठे-बैठे यह बात अपने ध्यान में चढ़ी कि कोई कहानी ऐसी कहिए कि जिसमें हिन्दवी छुट और किसी बोली का पुट न मिले, तब जाके मेरा जी फूल की कली के रूप में खिले। बाहर की बोली और गंवारी कुछ उसके बीच में न हों. .. .अपने मिलने वालों में से कोई एक बड़े पढ़े-लिखे, पुराने-धुराने, डाँग, बूढ़े, घाघ यह खटराग लाए.......और लगे कहने, यह बात होते दिखाई नहीं देती। हिन्दवीपन भी न निकले और भाखापन भी न हों। बस, जैसे भले जोग—अच्छों-से-अच्छे-आपस में बोलते-चालते हैं ज्यों का त्यों वही सब डोल रहे और छाँव किसी की न हो। यह नहीं होने का'। [२७A]

इसमें 'हिन्दवी' और 'भाखा' को पृथक् भाषाएँ माना है।

(ख) राजा शिवप्रसाद सितारेहिन्द (१८२३-१८९५ ई.)—

प्रारम्भ में इनकी भाषा उर्दू रहित बहुत सरल ठेठ हिन्दी थी, जिसमें संस्कृत के तत्सम् और तद्भव शब्द पर्याप्त मात्रा मे प्रयुक्त हुए हैं किन्तु बाद में वह उर्दू, फ़ारसी-निष्ठ हो गई। [२८] उनके 'राजाभोज का सपना' में संस्कृत के तत्सम् शब्दों का प्रचुर प्रयोग हुआ है। फ़ारसी और अरबी के तत्सम् शब्दों का नितान्त अभाव है :—'मारे व्रत और उपवासों के अपना फूल सा शरीर काँटा बनाया, ब्राह्मणों को दान-दक्षिणा देते-देते सारा खज़ाना खाली कर दिया'। [२९]

उनकी फ़ारसी-निष्ठ हिन्दी का उदाहरण है— 'साबित है कि यहाँ के भूमिये इस मुल्क के हर हिस्से में जुदा-जुदा किस्म की बोलियाँ बोलते थे। इससे यह मतलब नहीं कि किस कदर-कदम-ब-कदम हटते हुए दक्खन को चले गये।' [३०]

---

२७. हिन्दी-साहित्य का इतिहास : डॉ. नगेन्द्र, : पृ. ४९०

२७A हिन्दी-साहित्य का इतिहास : रामचन्द्र शुक्ल : पृ. ३९६

२८. हिन्दी-गद्य का स्वरूप : रामचन्द्र तिवारी : पृ. २९

२९. हिन्दी-गद्य का प्रस्तावना काल : वीणा : फरवरी १९४२ पृ ३४२

३०. वही वही : पृ. ३४३, एवं 'रघुवंश' (१८७८) विज्ञापन, पृ. २—३

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

(ग) राजा लक्ष्मणसिंह (१८२६–१८९६ ई.)–

ये राजा शिवप्रसाद की संस्कृत-प्रधान भाषा के पक्षपाती थे। इन्होंने अपने विचार 'रघुवंश' के गद्यानुवाद की भूमिका में इस प्रकार प्रकट किये हैं—'हमारे मत में हिन्दी, उर्दू दो न्यारी-न्यारी बोली हैं। हिन्दी इस देश के हिन्दू बोलते हैं और उर्दू यहाँ के मुसलमानों और फ़ारसी पढ़े हुए हिन्दुओं के बोलचाल की भाषा है। हिन्दी में संस्कृत के पद बहुत आते हैं, उर्दू में अरबी-फ़ारसी के; परन्तु कुछ आवश्यक नहीं है कि अरबी-फ़ारसी के शब्दों के बिना हिन्दी न बोली जाय और हम उस भाषा को हिन्दी कहते हैं; जिसमें अरबी-फ़ारसी के शब्द भरे हों। इन्होंने संस्कृत के तत्सम् और तद्भव शब्दों का प्रयोग अपनी आवश्यकता के अनुरूप ही किया है जिससे भाषा में सरलता बनी रहे।[३१]

(घ) भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र (१८५०–१८८५ ई.)–

भारतेन्दुजी ने, राजा शिवप्रसाद 'सितारेहिन्द' और राजा लक्ष्मणसिंह की दो विरोधी भाषाओं के मध्य समन्वित भाषा का विकास किया। उन्होंने अपने मासिक-पत्रों 'कवि-वचन-सुधा' और 'हरिश्चन्द्र चन्द्रिका' के द्वारा ऐसी मध्यमार्गी हिन्दी का आदर्श प्रस्तुत किया, जो पढ़े-लिखे लोगों को मान्य था। उनकी भाषा दैनिक-व्यवहार की भाषा थी। वे सप्रयास भाषा के विरोधी थे। बोलचाल की भाषा को साहित्य, प्रशासन और समाज में प्रचलन योग्य बनाकर भारतेन्दु आज की भाषा के प्रमुख निर्माता थे।[३१अ]

संस्कृतनिष्ठ हिन्दी न केवल गद्य की भाषा ही थी अपितु वह पद्य में भी प्रचलित थी। पद्य में इसका प्रचलन इस प्रकार से था कि यह पहचानना कठिन हो जाता है कि यह हिन्दी का पद्य है या संस्कृत का—

(अ) रूपोद्यान प्रफुल्लप्राय कलिका राकेंदुबिंबानना।
तन्वंगी-कलहासिनी-सुरसिका-क्रीड़ाकलापुतली॥
शोभावारिधि की अमूल्य मणि-सी, लावण्यलीलामयी।
श्रीराधा मृदुभाषिणी-मृगद्रगी-माधुर्यसन्मूर्ति थी॥[३२]

(ब) प्रतिपल-परिवर्तित-व्यूह. भेद-कौशल-समूह
राक्षस-विरुद्ध-प्रत्यूह, क्रुद्ध-कपि-विषम-हूह,
विच्छुरित-वह्नि-राजीवनयन-हत-लक्ष्य बाण,
लोहित-लोचन-रावण-मद-मोचन-महीयान॥[३३]

---

३१. हिन्दी-गद्य का स्वरूप विकास : डॉ. रामचन्द्र तिवारी, : द्वितीय संस्करण, अगस्त १९६८ : पृ. ३०

३१अ खड़ीबोली का स्वरूप और साहित्यिक परम्परा : ओंकार राही, पृ. १६८-१६९

३२. 'प्रियप्रवास' : हरिऔध : पृ. ४

३३. 'राम की शक्ति पूजा' : सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' : अनामिका : जुलाई १९६३, पृ. १५२

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy: Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

आज भी हिन्दी में संस्कृतनिष्ठ हिन्दी का प्रचलन है, यथा – 'शिलासन पर बैठकर प्रकृति छटा दर्शनोन्मत्त अर्धोन्मीलित साश्रुनयन द्वारा अस्तप्राय तप्तकांचन् वर्ण रवि-मंडल-पथ कमनीय-कांति की ओर निहारता हूँ तव स्वभाव सुन्दर लज्जावनत अप्रकट सुमन-सौरभ रसिक पवन आकर, श्रवण पुट द्वारा तेरा विरहोत्कंठित प्रिय सन्देश सुना जाता है।' [३४]

(ब) अरबी-फ़ारसीयुक्त हिन्दी : हिन्दुस्तानी –

हमारे देश में जब मुसलमान आए उस समय यहाँ पर विभिन्न स्थानों पर विभिन्न भाषाएँ और बोलियाँ प्रचलित थीं। हिन्दी का प्रचलन भी होने लगा। मुसलमानों के कारण इस देश में अरबी-फ़ारसी के शब्द भी प्रचलित हो गए। उन्होंने अपनी आवश्यकता पूर्ति के लिये यहाँ की भाषा बोलना चाही परन्तु यह प्रारम्भ में असम्भव था। अतः कुछ उनके शब्द और कुछ टूटीफूटी बोली में उनके ही अनुरूप भाषा का प्रयोग वे लोग करने लगे। ऐसी भाषा को 'भाखा' कहने लगे। जिस प्रकार वे अरबी-फ़ारसी मिली हिन्दी को उर्दू कहते थे उसी प्रकार संस्कृत मिली हिन्दी को भाखा। [३५] मुसलमानों के कारण ही हिन्दी की इस शैली को शब्दों के सम्मिश्रण के कारण ही एक नया नाम उर्दू दिया गया। भाषावैज्ञानिकों ने इसे हिन्दी का एक रूप माना है। खड़ी-बोली का दूसरा अर्थ है, वह भाषा जिस पर आधुनिक परिनिष्ठित हिन्दी, उर्दू, हिन्दुस्तानी, रेख्ता आदि आधारित हैं।............साहित्यिक दृष्टि से हिन्दी, उर्दू (रेख्ता-रेख्ती), हिन्दुस्तानी, दक्खिनी इसके विभिन्न रूप हैं। [३६] भाषा के अर्थ मे 'उर्दू' के प्रयोग का प्रारम्भ कब से हुआ यह अब भी विवादास्पद विषय है। [३७] इतना ही नहीं इसकी उत्पत्ति भी अज्ञात है। निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता। इस सम्बन्ध में मुसलमानों में भी विभिन्न मत हैं। [३८]

उर्दू के लिये विभिन्न कालों में 'हिन्दुस्तानी', 'हिन्दवी', 'रेख्ता', 'हिन्दी' तथा 'हिन्दवी-उर्दू' आदि नामों का प्रयोग हुआ है। 'हिन्दुस्तानी' नाम का प्रयोग फोर्ट विलियम कॉलेज में भी किया। [३९] इसमें १८ अगस्त. १८०० ई. के डॉ. जॉन बौथेविक के पत्रानुसार

---

३४. वियोगी हरि : ओंकार राही : खड़ी-बोली : पृ. १९६

३५ 'खड़ीबोली का गद्य' : हिन्दी-साहित्य का इतिहास : आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पृ. ३९६

३६ हिन्दी-भाषा : भोलानाथ तिवारी (प्रवेश), प. २२२

३७ वही वही पृ. २२५

३८. 'उर्दू की उत्पत्ति' : चन्द्रकली पाण्डेय--नागरी-प्रचारिणी-पत्रिका : भाग–१८, संवत् १९९४, पृ. २४५–२८१

३९. कालेज में विविध विषयों की शिक्षा दी जाती थी--अरबी, फ़ारसी, संस्कृत, हिन्दुस्तानी, बंगला, तेलुगु, मराठी, तमिल, कन्नड़, शरअ मुहम्मदी...... नक्षत्र-विज्ञान आदि। हिन्दी-गद्य का स्वरूप विकास : डॉ. रामचन्द्र तिवारी, पृ. १५

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

गिलक्राईस्ट को 'हिन्दुस्तानी' भाषा का प्रोफेसर बनाया गया। [४०] इसके उपरान्त यह नाम महात्मा-गाँधी ने विशेष रूप से प्रयोग किया। उन्होंने इसे हिन्दी और उर्दू के बीच एक शैली के लिए मध्यममार्ग के रूप में एक लम्बे समय तक प्रयोग किया जिसे काँग्रेस के नेताओं ने भी अपनाया।

(स) बाजारू हिन्दी :—

समाज जैसे-जैसे सभ्यता की ओर बढ़ने लगा उसकी आवश्यकताएँ बढ़ने लगीं और मनुष्य उसकी पूर्ति के लिए विभिन्न प्रकार के प्रयत्न करने लगा। राजा-प्रजा, शासक-शासित, धनी-गरीब, किसान-मजदूर आदि के वर्ग बने। संघर्ष प्रारम्भ हुए और एक देश से दूसरे देश पर अधिकार करने के लिए युद्ध हुए। इस युद्ध में एक देश के लोग दूसरे देश पर विजय प्राप्त कर विजेता बनें। विजेता और पराजित की भाषा, भौगोलिकता, रहन-सहन, खान-पान, धर्म-संस्कृति, आचार-विचार, उच्चारण सब भिन्न थे। इससे इन सबके समन्वय से आवश्यकता पूर्ति के माध्यम से सम्मिलन प्रारम्भ हुआ। ऐसे सम्मिलनों का माध्यम हाट-बाट, बाजार-चौराहे तथा क्रेता-विक्रेताओं के स्थान मुख्य यही बाजार थे। [४१] जो भाषा बनी, विकसित हुई और प्रचलित हो गई वह एक निश्चित रूप धारण करने लगी। उससे स्वदेशी और विदेशी लोगों का काम चलने लगा और वह इस बाजारू रूप में समाज में चल निकली। इस भाषा को कालान्तर में भाषा-विज्ञान के अध्येताओं ने जब अध्ययन किया तो, इसे बाजारू हिन्दी नाम दिया।

बाजारू हिन्दी का प्रारम्भ मुगलों के भारत में आने से हुआ। उनकी भाषा से इस देश के लोग परिचित नहीं थे परन्तु वे जब यहाँ के शासक बनें तब यहाँ के लोगों के मध्य अपनी आवश्यकता पूर्ति का कार्य चलाने के लिए यहाँ के लोगों से उन्होंने कुछ अपने शब्दों और कुछ यहाँ के शब्दों के मिले-जुले शब्दों से अपना कार्य चलाया। यह प्रवृत्ति उन सभी विदेशियों की बन गई जो समय-समय पर इस देश में आये। फलतः वे देश के जिन-जिन भागों में रहे, वहाँ-वहाँ इस प्रकार के स्वतन्त्र प्रयोग बाजार के माध्यम से प्रारम्भिक रूप में चलते रहे। इस तरह देश में एक मिश्रित भाषा और संस्कृति चली। इसे कई नामों से पुकारा गया। अँग्रेजों ने इसे 'हिन्दुस्तानी' नाम दिया। [४२] मुगलों ने इसे रिसाले की भाषा कहा। जनता ने इसे बाजारू हिन्दी कहा। [४३]

बाजारू हिन्दी या बाजारू हिन्दुस्तानी या आम जनता की हिन्दुस्थानी यह केवल उर्दू भाषा तथा साधु-हिन्दी या नागरी-हिन्दी का सरलीकृत रूप है। नागरी-हिन्दी के कुछ

---

४०. हिन्दी-गद्य का स्वरूप विकास : डॉ. रामचन्द्र तिवारी, पृ. १५

४१. अर्थशास्त्र के सिद्धान्त : अनुवाद—ल. ना. नाथूराम : बाजार, प्रथम संस्करण, पृ. १०

४२. हिन्दी-गद्य का स्वरूप विकास : डॉ. रामचन्द्र तिवारी : पृ. १५

४३. स्वतन्त्रता पूर्व हिन्दी के संघर्ष का इतिहास : रामगोपाल—'वि. भा. का आगमन : शाक १८८६, पृ. ५

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

लेखक इसे 'लघु-हिन्दी' कहकर भी पुकारते हैं। इसका कोई सुनिश्चित रूप नहीं है। यह सर्वत्र प्रचलित बहुरूपी भाषा है, जिसका व्याकरण 'खड़ी-बोली' के व्याकरण से उत्तरीभारत के विभिन्न क्षेत्रों में न्यूनाधिक अँशों में भिन्न दिखलाई पड़ता है। यह हिन्दी-उर्दू (खड़ी-बोली) का प्रचलित रूप है। [४४] इसका उदाहरण है—

'एक राजा का एक बेटी था वह बड़ा खूबसूरत था। उसका छोटा बहन विधवा हो गया। राजा का बेटी बोला हम शादी नहीं करेगा, वह तो बेवा औरत है। वह क्या कहेगा।'? [४५]

इस प्रकार बाजारू हिन्दी खड़ी-बोली का ही एक रूप है, जिसका प्रयोग व्याकरण-सम्मत नहीं है। जिसका अपना कोई निश्चित रूप नहीं है। भाषा, प्रयोग करने वाले की इच्छा के अनुसार प्रयोग की जाती है। हिन्दुस्तानी १५ करोड़ लोगों की साहित्यिक भाषा है। इसके बोलचाल के प्रचलित बाजारू रूप को भारत के तथा भारत से बाहर करीब साढ़े चौबीस करोड़ लोग समझ सकते हैं। इनके अतिरिक्त कश्मीरी तथा अन्य आर्य-भाषाओं को बोलने वाले १० लाख जन हैं, जो हिन्दुस्तानी के समझने वालों के वृत्त में आ सकते हैं। अतः इसको समझने वालों की संख्या लगभग ५० करोड़ हो जाती है।

'बाजारू हिन्दी का रूप प्रत्येक प्रदेश में किंचित्-भिन्न होगा। नागपुर के बाजार में जो हिन्दी बोली जायेगी उसमें मराठी की महक, मद्रास में बोली जाने वाली हिन्दी में तमिल की तिलंद, कलकत्ते में बोली जाने वाली हिन्दी में बंगला की बू, गुजरात में बोली जाने वाली हिन्दी में गुजराती की सुगन्ध, असम में बोली जाने वाली हिन्दी में असमी का आमोद विद्यमान रहने की पूर्ण सम्भावना है। बोलचाल में हिन्दी का एक रूप और सामने आ रहा है जिसमें अँग्रेज़ी का अहंकार छलकता है। [४६] विद्यार्थी भाषा, प्राध्यापकी भाषा, क्लबों की भाषा, कर्मचारियों की भाषा, मजदूरों की भाषा आदि इतने अधिक रूप हैं, जितने व्यवसाय हैं। बाजारू हिन्दी वस्तुतः अर्थशास्त्र की भाषा है और यही परिष्कृत होकर लोकभाषा या जन-भाषा बन जाती है। हिन्दी का सच्चा रूप यही है।

राजभाषा, राष्ट्रभाषा और सम्पर्क भाषा के इन विविध रूपों में एकता की अन्तर्धारा बह रही है, वह है इसका जनता की बोली होने से, जनता से जीवन्त सम्पर्क। यही इसकी सबसे बड़ी शक्ति है। महान् भारतीय जनता की बोलचाल की भाषा होने से यह जन-जन के विचारों की वाहिका बनी हुई है और चूँकि भारतीय जनता विविध वर्गों में बटी हुई है, इसलिए इसके विविध नाम हैं, रूप हैं, काम हैं, स्थान हैं।

इसके इस विस्तृततम रूप को देखकर ही तो राजभाषा-आयोग के सदस्य बंगाल के डॉ. सुनीतिकुमार चटर्जी और मद्रास के डॉ. पी. सुब्बारायन ने अपने-अपने असहमति-पत्रों में

---

४४. भारतीय आर्य-भाषा और हिन्दी : डॉ. सुनीतिकुमार चटर्जी : पृ. १७९–१८०

४५. भारत की भाषाएँ और भाषा सम्बन्धी समस्याएँ : डॉ. सुनीतिकुमार चटर्जी : पृ. १९४

४६. हिन्दी का व्यावहारिक रूप : विनयमोहन शर्मा : १९६८, पृ ४१

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

हिन्दी को अविकसित और पिछड़ी हुई भाषा बताया है।[४७] ये विद्वान् भाषा-विज्ञान के ज्ञाता होकर भी समझबूझकर राजनीतिक विद्वेष भावना से अपना यह मत व्यक्त कर गये हैं, अन्यथा डॉ सुनीतिकुमार चटर्जी जैसा विद्वान् खड़ीबोली के अस्तित्व को १८५० ई. के पूर्व न माने,[४८] एक आश्चर्य में डालने वाली बात है क्या वे लल्लूजी लाल, सदल मिश्र, इंशा अल्लाखां, सदासुखलाल, रामप्रसाद निरंजनी, गिलक्राईस्ट, फ्रेडरिक पिन्काट, विलियम प्राइस और १८०० ई. में स्थापित फोर्ट विलियम कॉलेज के इतिहास को भूल गये हैं ? सत्य कुछ और है। स्वार्थ सत्य को भी भुला देता है। इसीलिए राजभाषा-आयोग के गुजराती सदस्य मगनभाई पी. देसाई को हिन्दी-प्रचार-आन्दोलन का इतिहास लिखना पड़ा।[४९] इससे हिन्दी विरोधियों का हिन्दी को अविकसित भाषा बताने का आरोप निर्मूल सिद्ध हो गया।

०४.०३३. उग्र-प्रादेशिक भाषावाद :—

हमारे देश में आज हिन्दू, मुसलमान, जैन, बौद्ध, पारसी, ईसाई, आँग्लभारतीय, सिख और अनेक धर्मों के मानने वाले लोग रहते हैं। ये सभी अपने-अपने धर्मों के नियमों के बताये अनुसार आचरण करते हैं। इसलिए सभी के, सभी कार्यों में अन्तर है। सभी की अपनी-अपनी अलग-अलग भाषाएँ हैं। भाषा और संस्कृति का गहरा तथा कभी न टूटने वाला सम्बन्ध है। भाषा मनुष्य के भावों का व्यक्त स्वरूप है जो ध्वनि चिन्हों की लिखावट में व्यक्त होता है। भाषा प्रतीक की वह प्रणाली है जिसमें अर्थ एवं ध्वनि-चित्रों का आवश्यक रूप से संयोग होता है तथा जिसमें प्रतीक के दोनों भाग मनोवैज्ञानिक होते हैं।[५०] भाषा के बिना मानव अपने भावों को उचित प्रकार से व्यक्त करने में समर्थ नहीं है। भाषा के ही द्वारा मनुष्य एक-दूसरे को समझ सकता है, मिल-जुलकर काम कर सकता है। इसलिए चाहे भौतिक सुख-सुविधाओं का प्रश्न हो, सांस्कृतिक विकास की बात हो या आध्यात्मिक उन्नति करना हो, सामाजिक संगठन और विकास के सब क्षेत्रों का मूल आधार भाषा ही रहा है।[५१] भाषा और संस्कृति दोनों का सम्बन्ध मनुष्य और समाज से है। संस्कृति मानव के आचरण, उसके क्रिया-कलाप तथा उसमें विद्यमान गुणों का नाम है जो उसे जन्म के द्वारा और समाज के द्वारा प्राप्त होते हैं। इस प्रकार संस्कृति का सम्बन्ध मानव के जन्म से है। मानव में गुणों या अवगुणों का जन्म वंशानुक्रमगत के

४७, राजभाषा-आयोग, १९५५ का प्रतिवेदन, पृ २२३–२७५

४८ वही वही, पृ. २३७

४९. वही वही, अध्याय–६; पृ. ३२०

५०. भाषाशास्त्र की रूपरेखा : डॉ उदयनारायण तिवारी : पृ. ३०–३१

५१. राजभाषा आयोग का प्रतिवेदन, १९५६; भारत सरकार, पृ. ८

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

कारण होता है। भाषा उनके इन्हीं गुणों-अवगुणों के प्रसार का माध्यम है। [५२] जब ये समाज में व्यक्त होते हैं तो इन्हीं से संस्कृति का निर्माण होता है। जिस भाषा का इतिहास उस भाषा को बोलने वाली जाति के सांस्कृतिक जीवन का इतिहास होता है। साहित्य समाज के सर्वोत्तम या कम-से-कम अत्यधिक मुखर व्यक्तियों के चिन्तन, विचार और कल्पनाओं को व्यक्त करता है लेकिन भाषा को बनाने में उस समाज के छोटे-से-छोटे व्यक्ति का भी कुछ-न-कुछ हाथ रहता है। [५३]

हमारे देश का इतिहास के आधार पर अध्ययन किया जावे तो हम देखते हैं कि यहाँ पर प्राचीन समय से लेकर आज तक कोई-न-कोई जाति आति रही है। आर्य, शक, हूण, मुगल, डच, फ्रांसिसी, अँग्रेज़ इत्यादि विभिन्न जातियाँ आई। ये जातियाँ चाहे शासक के रूप में आई हो, व्यापारियों के रूप में आई हो शरणार्थियों के रूप में आई हो या किसी भी रूप में आई हो। विभिन्न जातियों के आगमन के कारण यहाँ पर विभिन्न धर्म की भाषाएँ और संस्कृतियाँ जन्मी, पल्लवित हुई और नष्ट भी हुई है। इन सब जातियों ने अपने-अपने अस्तित्व को बनाये रखने के साथ विचारों के आदान-प्रदान का कार्य भी किया क्योंकि इसकी आवश्यकता प्रथम अनुभव हुई। ये सभी लोग देश के विभिन्न भागों में बस गये। इनके साथ इनके आचार-विचार, धर्म, रीति-रिवाज, व्यवहार, खान-पान, वेशभूषा इत्यादि भी हमारे देश के सम्पर्क में आये। हमारे देश की संस्कृति ने इनमें से कइयों को पचा लिया और उन्हें अपने ही रूप में आत्मसात् कर लिया; परन्तु इनके अवशेषों के रूप में बचे इनके उत्तराधिकारी लोग आज भी देश के विभिन्न भागों में पाये जाते हैं। इस तरह हमारे देश में विभिन्नता बढ़ने लगी। ये सभी संस्कृतियाँ और भाषाएँ पूरी तरह से नष्ट नहीं हुई। ये भीतर-ही-भीतर देश में पनपने लगी। देश के कोने-कोने में ये विभिन्नता आज भी है। यह एक मनोवैज्ञानिक सत्य है कि मानव अपनी भाषा, विचार, व्यवहार, इत्यादि चाहे उसमें गुण हो या न हो, चाहे उनकी अपनी विशेषताएँ हों या न हों फिर भी उसे वह श्रेष्ठ, सुन्दर और आदर्श मानता है। वह उसे छोड़ना नहीं चाहता है। मानव इनको इसलिए भी नहीं छोड़ना चाहता है क्योंकि यहाँ पर सभी जातियों ने शक्तियों के अनुसार अपनी-अपनी भाषाओं को समय-समय पर प्रमुखता दी है और उन्हें राजभाषा बनाया है। दूसरी भाषाओं को दबाया है। भारत में आर्यों ने संस्कृत को, मुसलमानों ने फ़ारसी को तथा अँग्रेजों ने अँग्रेज़ी को राजभाषा बनाकर इसी प्रवृत्ति को प्रोत्साहित किया है।

हमारे देश में वर्तमान में तीन प्रकार की प्रादेशिक भाषाएँ प्रचलित हैं—१. आर्यकुल की प्रादेशिक भाषाओं में पंजाबी, हिन्दी, बंगाली, असमी, उड़िया, मराठी, गुजराती, सिन्धी और संस्कृत है, २. द्राविड़ कुल की तमिल, तेलुगु, मलयालम और कन्नड़ है तथा ३. सामी कुल की उर्दू व कश्मीरी हैं। भारतीय संविधान इन्हें मान्यता दे चुका है। [५४]

---

५२. संस्कृति के चार अध्याय : रामधारीसिंह 'दिनकर', पृ. ६५३
५३. कला और संस्कृति : डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल, पृ. १-१६
५४. भारत का संविधान : जगदीशलाल : १९७७, पृ. २३७

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

इन प्रादेशिक भाषाओं में से तमिल, बंगाली और पंजाबी भाषाओं ने अँग्रेज़ी के स्थान पर हिन्दी के प्रयोग का विरोध किया है। तमिलनाडू, बंगाल और पंजाब में हिन्दी-विरोध में दंगे हुए। परिणामतः इन राज्यों में हिन्दी को राजभाषा के रूप में कार्य करने का अवसर नहीं मिल रहा है। प्रान्तीय भाषावाद की उग्र भावनाएँ उभर आने से राष्ट्रीय अखण्डता के प्रश्न पर भी प्रश्नचिन्ह लगा हुआ है। तमिलनाडु में तमिल-भाषा और हिन्दी की संस्कृति में भिन्नता है किन्तु बंगाल और पंजाब में तो दलगत राजनीति के संघर्ष का परिणाम है। प्रान्तीय नेताओं ने भाषावादी अस्त्र से सत्ता हथियाने का साधन मानकर हिन्दी-विरोध चालू रख रखा है।

प्रान्तीय भाषाओं के विकास की छूट सभी भाषाई राज्यों को दी गई है किन्तु स्वभाषा-प्रेम और राजनीतिक महत्वाकाँक्षा ने इन राज्यों के नेताओं और सुविधा प्राप्त बुद्धिजीवियों ने विवेक का परित्याग कर दिया है। उन्होंने हिन्दी का विरोध किया है किन्तु अँग्रेज़ी को अपने-अपने राज्यों में चालू कर रखा है। गाँधीजी का यह स्वप्न कि अँग्रेज़ी को विदा होना है और हिन्दी को उसका स्थान लेना है, कोरा स्वप्न ही दिखाई दे रहा है।

०४.०३४. प्रशासनिक सेवाओं द्वारा हिन्दी-विरोध :–

मानव की प्रवृत्ति होती है कि वह कोई भी कार्य करने के पूर्व उसके परिणाम को अपने दायरे में रखकर विचार करता है। ऐसे बिरले ही मानव होंगे जो दूसरे के लिये कार्य करते हैं। मनुष्य की अपनी कई आवश्यकताएँ होती हैं जिन्हें वह पूरा करना चाहता है। मानव की यह चाह ही उसकी अपनी इच्छा है जिसके लिए वह कार्य करने की दिशा में प्रेरित होता है। परिणाम-स्वरूप वह अपने विषय में सोचता है और जो कार्य वह करता है उसका सम्बन्ध अपने से जोड़ता है, खोजता है, तभी तो कार्य करने, न करने का निर्णय करता है। यदि किसी कार्य के करने से उसे या उसकी इच्छा को, उसके दृष्टिकोण से उपयोगी लगता है तो वह कार्य करता है। कार्य में उपयोगिता की मात्रा के कारण उसमें गति आती है। मानव की इस प्रवृत्ति को स्वार्थ कहा जाता है। स्वार्थ कोई वस्तु नहीं है अपितु मानव के सोचने की एक दृष्टि है। जिससे वह अपने-पराये या अपने देश के लिये विचार करता है। यह प्रवृत्ति चाहे मानव हो या पशु-पक्षी सब में होती है परन्तु हम मानव के मध्य रहते हैं और हमारे जीवन के कार्य मानव के सम्पर्क और संसर्ग से होते हैं। अतः उसका अध्ययन शीघ्रता व सरलता से हम कर लेते हैं।

मानव की इस स्वार्थमयी प्रवृत्ति ने जहाँ एक ओर समस्याएँ दी हैं, वहीं विभिन्न समस्याओं का निराकरण भी किया है। इस प्रकार मानव के जीवन का क्रम निरन्तर चलता है। हिन्दी भारतीय संघ के द्वारा सैद्धान्तिक दृष्टिकोण से राजभाषा स्वीकार कर ली गई, कुछ उपबन्धों के साथ। आजकल हम देखते हैं कि इतना होने पर भी हिन्दी को वह महत्व प्राप्त नहीं है जो एक राजभाषा को होना चाहिए। इसके कई कारण हैं। उनमें से एक कारण मानव की स्वार्थमयी प्रवृत्ति भी है। उसे यह आशंका है कि हिन्दी जिसे आज राजभाषा का पद तो दे दिया गया है परन्तु व्यवहार में उससे कोई विशेष लाभ नहीं होता है। अतः वह लाभ के दृष्टिकोण को सामने रखकर विचार करता है तो उसे यह आशंका

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

होने लगती है कि कहीं ऐसा न हो कि इसके कारण उसका जीवन दूभर हो जाय या उसे अपना जीवन चलाने के लिये साधनों से वँचित होना पड़े। अत: वह उस भाषा का समर्थन करता है जिसमें उसे नौकरी मिलती है, सम्मान मिलता है या जिसके कारण वह अपने और अपने परिवार की आवश्यकताएँ और दायित्व पूरा करता है। मानव के स्वार्थ की घटना द्रष्टव्य है—'दिनांक २८–२–६७ के एक आदेशानुसार १००।१२० शब्द प्रति मिनट की गति से (आशु-लिपि) की परीक्षा उत्तीर्ण करने पर जूनियर ग्रेड के आशुलिपिकों को दो-चार वार्षिक वेतन-वृद्धियाँ देने का भारत सरकार ने निर्णय किया था, इसमें राष्ट्रभाषा-हिन्दी तथा अँग्रेज़ी में कहीं भी कोई भेद नहीं था। दिनाँक १९–२–६८ के एक आदेशानुसार आकाशवाणी के महानिदेशक ने भारत सरकार के स्पष्टीकरण के नाम पर सभी लोगों की वेतनवृद्धियाँ बन्द कर दी परन्तु दिनांक २७–११–६८ को आदेश हुआ कि केवल अँग्रेज़ी-भाषा के आशुलिपिकों को ही अग्रिम वेतनवृद्धियाँ दिनाँक २८–२–६७ से दी जाय। इस आदेश ने राष्ट्रभाषा-हिन्दी के आशुलिपिकों को उनके न्यायिक लाभ से वँचित कर दिया।

आकाशवाणी के राज्यमन्त्री महोदय ने २०–३–६९ को लोकसभा में बताया कि हिन्दी आशुलिपिकों को अँग्रेज़ी आशुलिपिकों के समान सारी सुविधाएँ शीघ्र दे दी जाएंगी परन्तु २०–११–६९ को उन्होंने फिर कहा कि चूँकि हिन्दी आशुलिपिकों समेत भारतीय भाषाओं के आशुलिपिकों को भी इसी प्रकार की रियायत देने का प्रश्न सरकार के पास विचाराधीन है, अतएव इसमें विलम्ब होना अनिवार्य है। यह है राष्ट्रभाषा हिन्दी की प्रगति का समाजवादी नारा और यह है संविधान के प्रति निष्ठावान रहने की शहंशाही कसमें।[५५]

इसी प्रकार हिन्दी वालों के साथ या हिन्दी में कार्य करने वालों को आर्थिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। उन्हें न्यायिक लाभ से वँचित होना पड़ता है। अत: वे लोग उस भाषा में कार्य करने का निश्चय करते हैं जिसमें उन्हें आर्थिक लाभ मिलता है। चाहे उस भाषा के सीखने में उन्हें कितना ही परिश्रम क्यों न करना पड़े? इसलिए लाभ प्राप्त करने वाले व्यक्ति, राजभाषा-हिन्दी का विरोध करने लग जाते हैं।' 'जनवरी, १९६८ से मैंने एक सरकारी अधिकारी के नाते अपना सारा काम हिन्दी में करना शुरू कर दिया। न्यायालय के निर्णय भी हिन्दी में लिखना शुरू कर दिया।

न्यायालय में कुछ मनोरन्जक घटनाएँ घटी। एक वकील साहब हिन्दी में बहस करते करते कहने लगे 'सर, आई नो माई एपील हैज नो फोर्स, बट फार द सैटिसफैक्शन ऑफ माई क्लायंट आई हैव गाट टू ग्यूं इट आउट इन लेन्थ' (मैं जानता हूँ कि मेरी अपील में बल नहीं है फिर भी मुवक्किल के सन्तोष के लिए मुझे लम्बी बहस करनी होगी) और फिर उन्होंने हिन्दी में बहस शुरू कर दी। मैंने उनसे कहा 'दिज शोज दैट इंगलिश इज द लैंग्वेज ऑफ द डिसेप्शन' (इससे सिद्ध होता है कि अँग्रेज़ी छल की भाषा है)।

५५. वी. पी. धवन—'आकाशवाणी का हिन्दी में तिरस्कार'—नेशनल फेडरेशन ऑफ ऑल इण्डिया रेडियो एम्प्लाईज़, राजोरी गार्डन, नयी दिल्ली—राष्ट्रभाषा सन्देश, शुक्रवार, १६ जनवरी, १९७०, पृ. २

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

इससे पहले मैं देख चुका था कि मेरे हिन्दी में फैसले बोलते समय ग्रामीण मुवक्किल बड़े ध्यान से एक-एक शब्द सुनते थे और बीच में कभी-कभी फैसले की किसी बात को पकड़कर अपनी युक्ति भी देने लगते थे। मैं उनको भी सुनकर उस तर्क को भी उत्तर समेत अपने फैसले में लिखा देता था। इससे उन्हें संतोष हो जाता था कि उनकी बात पर विचार किया गया।

एक मुकदमें में बहस की समाप्ति पर मैंने अपनी राय प्रकट कर दी कि इस अपील में कोई बल नहीं है। हारे हुए व्यक्ति के वकील महोदय ने तत्काल अपने ग्रामीण मुवक्किल से कहा कि वह अदालत से बाहर चले। विचार करने पर उनके इस आदेश का अभिप्राय यह प्रतीत हुआ कि वह नहीं चाहते थे कि उनका मुवक्किल हिन्दी में बोले जाने वाले फैसले को सुनकर वकील साहब की तर्क-योग्यता पर अपना मत स्थिर करे। पीछे वह उन्हें कुछ भी समझा देंगे कि तुम इस कारण हार गये।[५६] हिन्दी-भाषा को जन-साधारण समझ लेता है। चाहे वह ग्रामीण हो या अहिन्दीभाषी ही क्यों न हो? कम-से-कम पूरी तरह नहीं तो मूल आशय तो समझ ही लेते हैं परन्तु वे लोग जो दूसरे को भ्रम में रखकर या उनकी अज्ञानता का लाभ प्राप्त करना चाहते हैं। वे अपने निजी-स्वार्थ के कारण राजभाषा-हिन्दी का विरोध ही नहीं करते अपितु अन्य लोगों को भी प्रेरित करते हैं। इसी प्रकार नौकरियों के कुछ उदाहरण हैं :—हमीरपुर (उ. प्र) के नागरिक श्री लक्ष्मणदास पाराशर ने लिखा कि—'१० मार्च, १९६८ को छतरपुर (म॰ प्र.) से महोबा (उ. प्र.) चलने वाली व्यक्तिगत बसों की अनियमितताओं के सन्दर्भ में एक शिकायत-पत्र हिन्दी में लिखा था। राज्य-परिवहन के यात्रियों के सामने मध्यप्रदेश के परिवहन निरीक्षक ने हिन्दी में शिकायत-पत्र पाकर पत्र को फाड़ डाला और कहा कि मैं इस हिन्दी की वजह से आपकी कोई भी बात सुनने के लिए तैयार नहीं हूँ। यदि आप अँग्रेज़ी में प्रार्थना-पत्र दें तो मैं सोच सकता हूँ। इस बात पर मैंने आपत्ति की तो श्रीमानजी ने कड़े शब्दों का प्रयोग किया।[५७]' इस शाखा के कर्मचारी अव्वल तो हिन्दी में हस्ताक्षर स्वीकार ही नहीं करते और अगर कोई साहसी व्यक्ति अड़ ही जाय तो यह शर्त लगाते हैं कि पहले वह अपने हिन्दी हस्ताक्षर को किसी से प्रमाणित कराइए। अँग्रेज़ी में दस्तखत करने वालों पर ऐसी कोई पाबन्दी नहीं है।

राजधानी के वयोवृद्ध तथा सुप्रसिद्ध आयुर्वेदाचार्य श्री रामगोपाल शास्त्री के साथ एक नहीं कई बार यह घटना घट चुकी है।

---

५६. 'अँग्रेज़ी छल की भाषा है'—राष्ट्रभाषा सन्देश, सोमवार १६ दिसम्बर, १९६८, भाग–४, अँक १२, पृ. ४। साप्ताहिक 'दिनमान' में आगरा के श्री राजहंस ने जो एक उच्च सरकारी अधिकारी हैं और जो न्यायालय का कार्य भी करते हैं, अपने अनुभव को प्रकाशित करते हुए न्यायालयों में हिन्दी के प्रयोग के बाधक तथा साधक तत्वों का अच्छा परिचय दिया है। पाठकों की जानकारी के लिये हम यहाँ प्रकाशित कर रहे हैं— सम्पादक–राष्ट्रभाषा समिति

५७ श्री लक्ष्मणदास पाराशर (हमीरपुर, उ. प्र.) ने दिनमान में लिखा 'राष्ट्रभाषा सन्देश, १६ मार्च तथा १ अप्रैल, १९६८, भाग–३, अंक १८, १९, पृ. ३

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy- Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

कुछ दिन पूर्व जब बैंक वालों ने उनके हिन्दी हस्ताक्षर अस्वीकार कर दिये, तो वे अड़ गये लेकिन सजा के तौर पर उन्हें बैंक में कई घण्टे बैठे रहना पड़ा।[५८]

(स) 'हिन्दी भारतीय संघ की प्रमुख राजभाषा है। राजभाषा (संशोधन) अधिनियम १९६७, जहाँ केन्द्रीय सरकार के सभी विभागों, कार्यालयों में लागू है वहीं केन्द्रीय सरकार द्वारा नियन्त्रित निगम, कम्पनी, संस्थान एवं बैंकों पर भी समान रूप से लागू है, जैसा कि अधिनियम की धारा ६ (ग) में व्याख्या की गई है किन्तु व्यवहार में बैंक उपेक्षा बरतते हैं। केन्द्रीय सचिवालय, हिन्दी-परिषद् पूर्वोत्तर रेल्वे, लखनऊ के मन्त्री जगपतिशरण निगम का कथन है कि जब मैं अपने चैक का भुगतान लेने स्टेट बैंक की लखनऊ शाखा में गया तब मुझे कहा गया कि प्रधान लिपिक से अँग्रेज़ी में हस्ताक्षर का अनुवाद कराइए। यह सुनकर मुझे अत्यन्त आश्चर्य एवं दुःख हुआ। मैंने प्रधान लिपिक से पूछा कि हस्ताक्षरों का क्या अनुवाद होगा ? इस पर उन्होंने कहा कि हिन्दी हस्ताक्षरों के नीचे अँग्रेज़ी में नाम लिखना आवश्यक है अन्यथा भुगतान नहीं होगा। उन्होंने स्वयम् ही मेरे हस्ताक्षरों के नीचे अँग्रेज़ी में लाल स्याही से मेरा नाम लिखा तथा भुगतान प्राप्त हुआ। यह नियम केवल हिन्दी में किये गये हस्ताक्षर पर ही लागू है। अँग्रेज़ी के साथ नहीं। इस प्रकार हिन्दी में हस्ताक्षर करने वालों को अनावश्यक असुविधाएँ तो उठानी ही पड़ती है, भुगतान भी विलम्ब में प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त बैंक को अनावश्यक व्यय भी करना पड़ता है।

हिन्दी प्रमुख राजभाषा होते हुए भी उसके साथ ऐसा सौतेला व्यवहार क्यों है ?— यह तो केवल स्टेट बैंक के अधिकारी ही बता सकते हैं।[५९] नौकरियों में इस प्रकार की समस्या चिन्ता का विषय है। चिन्ता का विषय इसलिये भी कि देश के स्वतन्त्र और राजभाषा-हिन्दी होने के बाद भी जनता को कष्ट सहने पड़ते हैं। इससे कर्मचारी जगत् में हिन्दी के प्रति असन्तोष की भावना दृढ़ होती जाती है। उनमें हीन-भावना सबलता से बनती जा रही है। इस प्रकार की समस्या का हल डॉ. सेठ गोविन्ददास ने अलीगढ़ में इस प्रकार बताया– 'सेठ गोविन्ददान ने स्थानीय गाँधी उद्यान की सभा में कहा कि हिन्दी की समस्या सिर्फ पाँच सौ व्यक्तियों ने पैदा की है. जो प्रतिवर्ष केन्द्रीय नौकरियों में लगते हैं। ये नौकरियाँ अभी तक अँग्रेज़ी के माध्यम से प्राप्त होती है। इसीलिए इस सम्बन्ध में हमारा सुझाव यह है कि केन्द्रीय नौकरियों की नियुक्ति, जनसंख्या के अनुपात पर प्रदेशानुसार निश्चित कर देनी चाहिए। एक दूसरा समाधान यह है कि आप हिन्दी के साथ किसी अन्य भारतीय भाषा को राष्ट्रभाषा बना दीजिए। हम उसे स्वीकार कर लेंगे

---

५८. राष्ट्रभाषा सन्देश, १ नवम्बर, १९६८, भाग–४, अंक ९, पृ. ३

५९. 'स्टेट बैंक द्वारा हिन्दी की उपेक्षा'—जगपतिशरण निगम, मन्त्री केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद् पूर्वोत्तर रेल्वे, लखनऊ–राष्ट्रभाषा सन्देश, १ फरवरी, १९७०, भाग–५, अंक १५, पृ. २

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

परन्तु अँग्रेज़ी को नहीं। [६०] जब राजभाषा विधेयक १९६३ को संसद में संशोधन के लिये रखा जाने लगा तो उसके विरुद्ध देशव्यापी आन्दोलन हुए। जिससे प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गाँधी चिन्तित हुई तब श्री अटलबिहारी वाजपेयी ने उन्हें समझाया कि 'ये आन्दोलन मुख्यतः इसलिए हो रहे हैं कि हिन्दी माध्यम से पढ़े हुए विद्यार्थी अपने भविष्य के प्रति चिन्तित हो उठे हैं। उन्हें केन्द्रीय नौकरियों में स्थान मिलने की आज्ञा नहीं रह गयी है, क्योंकि भारत में केन्द्रीय नौकरियों के लिये हिन्दी का ज्ञान अनिवार्य नहीं माना गया है। [६१] यह स्थिति थी विभिन्न नौकरियों में कार्यरत ऐसे व्यक्तियों की जो हिन्दी के आधार पर नौकरी करते थे। इससे धीरे-धीरे एक बड़े वर्ग के लोगों में राजभाषा-हिन्दी के प्रति विद्रोहात्मक भावनाएँ जमती जाती है और इन परिणामों को देखते हुए लोग हिन्दी के प्रति आशंकित हो जाते हैं।

०४.०३५. शिक्षा-शास्त्रियों द्वारा हिन्दी-विरोध :—

नौकरियों में जिस प्रकार हिन्दी-माध्यम या आधार वाले कर्मचारियों को अपने लाभ से वँचित होना पड़ता है या अपमानित होना पड़ता है ठीक वैसे ही उन्हें शिक्षा के क्षेत्र में भी सहन करना पड़ता है। वहाँ उनकी उपेक्षा ही नहीं, अपमानित ही नहीं वरन् अपना अमूल्य समय भी खोना पड़ता है। कुछ व्यक्ति तो संघर्ष कर लेते हैं परन्तु सभी नहीं। दिल्ली में इण्डियन स्कूल ऑफ इन्टरनेशनल स्टडीज नाम की संस्था है जहाँ भारत व विदेश के विद्यार्थी विभिन्न विषयों में शोध करते हैं। इस संस्था को भारत सरकार प्रतिवर्ष ६ लाख रुपए का अनुदान देती है। इस संस्था में केवल अँग्रेज़ी में ही शोध-ग्रंथ लिखा जा सकता है, राष्ट्रभाषा हिन्दी व अन्य भारतीय भाषाओं में लिखने पर प्रतिबन्ध था। अपने ही देश में अपनी राष्ट्रभाषा के उपयोग पर प्रतिबन्ध है। इन्दौर के एक युवक वेदप्रताप वैदिक ने इस संस्था में प्रवेश लेकर राष्ट्रभाषा हिन्दी में ही शोध-ग्रंथ लिखने का निश्चय किया किन्तु संस्था वालों ने आज्ञा नहीं दी और संस्था से निकाल दिया। परिणाम-स्वरूप इस युवक ने अपने अधिकार और राष्ट्रभाषा हिन्दी को प्रतिबन्ध से मुक्त कराने के लिये संघर्ष किया। यह मामला संसद में अनेक बार उठा। देश के सभी समाचार-पत्रों ने समर्थन किया। पहले तो सरकार ने भी संस्था का पक्ष लिया किन्तु इस युवक के दृढ़ निश्चय और निरन्तर संघर्ष एवं उचित माँग के सामने सरकार को, संस्था को झुकना पड़ा और हिन्दी में शोध-ग्रंथ लिखने की आज्ञा मिल गई। ....वेदप्रताप वैदिक हिन्दी माता का वह सपूत है जिसने निरन्तर डेढ़ वर्ष तक संघर्ष किया, अपमानित हुआ और कठिनाइयाँ उठाई; परन्तु उसकी चिन्ता नहीं की और हिन्दी के सम्मान को

---

६०. 'भाषा की समस्या सिर्फ पाँच सौ व्यक्तियों ने पैदा की'—राष्ट्रभाषा सन्देश, १६ मार्च तथा १ अप्रैल, १९६८, भाग–३, अँक–१८–१९, पृ. १

६१. 'हिन्दी और नौकरी'—राष्ट्रभाषा सन्देश, १६ दिसम्बर, १९६७, भाग–३, अँक १३, पृ. ७

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

ऊँचा उठाया।[६२] बंगाल में उच्चअध्ययन करने के लिये हिन्दी-भाषी छात्रों को महाविद्यालयों में प्रवेश नहीं दिया जाता। 'हिन्दी-भाषी राज्यों से कलकत्ता में उच्च शिक्षा के लिये आने वाले हजारों छात्रों को १९६८ में निराश होना पड़ा है, क्योंकि कलकत्ता विश्व-विद्यालय ने सभी सम्बन्धित महाविद्यालयों को हिन्दी-भाषी राज्यों के छात्रों को प्रवेश न देने का आदेश दे दिया है।'[६३] इस प्रकार के उदाहरण हैं—संघीय लोक-सेवा-आयोग की १९६५–६६ वर्ष के प्रतिवेदन में बताया गया है कि संघ के एक परीक्षार्थी को केवल इस कारण शून्यांक दिया गया कि उसने कुछ प्रश्नों के उत्तर हिन्दी में दिये थे।[६४] प्रतिवेदन में बताया गया कि ऐसा स्वराष्ट्रमन्त्रालय की सलाह पर किया गया था, जिसने यह निर्णय किया कि सन् १९६५ ई. के बाद हिन्दी के सरकारी भाषा हो जाने का यह अर्थ नहीं है कि वह परीक्षाओं का माध्यम बन गई है। प्रतिवेदन में कहा गया है कि भारत सरकार ने पहले आयोग को सूचित किया था। उन्होंने संसदीय सरकारी-भाषा-समिति को इस संस्तुति को स्वीकार कर लिया है कि हिन्दी को आयोग की परीक्षाओं का एक वैकल्पिक माध्यम बनाया जाय। यह सूचना जून, १९६० ई. में दी गई थी और २७ अप्रैल, १९६० ई. को राष्ट्रपति ने धारा ३४४ के अन्तर्गत एक आदेश भी निकाल दिया था। मार्च, १९६४ ई में आयोग को सूचित किया गया कि उस आदेश के परिपालन के लिए कार्रवाई की जाय व १९६५ ई. में हिन्दी को परीक्षाओं का एक वैकल्पिक माध्यम बना दिया जाय। आयोग ने प्रारम्भिक कार्य कर सूचना दी गई कि सरकार ने हिन्दी को वैकल्पिक माध्यम बनाने का निश्चय स्थगित कर दिया है।

इसके पश्चात् आयोग को सूचना दी गई कि सरकार ने संविधान की अष्टम अनुसूची में वर्णित सभी भाषाओं को माध्यम बनाने का सिद्धान्त मान लिया है और उस पर परीक्षाओं के कार्यक्रम, समय तथा परिपाटी के बारे में आयोग सुझाव दे।

जब आयोग ने इस पर सरकार का ध्यान दिलाया कि २६ जनवरी के बाद हिन्दी सरकारी भाषा हो गई है और १९६५ ई. के प्रशासकीय परीक्षा के नियम, कि परीक्षार्थी केवल अँग्रेज़ी में उत्तर दें, इसके विपरीत मालूम होते हैं, तो भारत सरकार ने निर्णय दिया कि शिक्षा का माध्यम संघ के 'सरकारी कामकाज' की परिभाषा में नहीं आता। यदि २६ जनवरी, १९६५ ई. के बाद हिन्दी अपने आप संघीय परीक्षाओं की वैकल्पिक भाषा नहीं हो जाती और जब तक नियमों में स्पष्ट उल्लेख न हो, हिन्दी में उत्तर देने वाला नियमानुसार परीक्षा नहीं देता और आयोग के लिये यह उचित होगा कि यदि उत्तर हिन्दी में लिखे गये हैं तो उनके अँक काटकर केवल शून्य दे दिया जाय।

---

६२. श्री वेदप्रताप वैदिक का हिन्दी-प्रेम : राष्ट्रभाषा सन्देश, गुरुवार, १६ जुलाई १९७०, भाग–६, अँक–२, पृ. ८

६३. बंगाल में हिन्दी भाषा-भाषी छात्रों के साथ अन्याय : राष्ट्रभाषा सन्देश, १६ जुलाई, १९६८, भाग–४, अँक–२, पृ. १

६४. हिन्दी में उत्तर देने पर शून्यांक, राष्ट्रभाषा सन्देश, शनिवार, १ जुलाई, १९६७; भाग–३, अँक–१, पृ. ६

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

उक्त प्रश्न-पत्रों में शिक्षामन्त्री श्री त्रिगुणसेन ने राज्यों के भारतीय भाषाओं के विकास से सम्बन्धित अधिकारियों के एक दिन के सम्मेलन में कहा – 'अँग्रेज़ी की अपेक्षा मातृभाषा में शिक्षण का कार्य अधिक कठिन है। जब कोई अध्यापक अँग्रेज़ी के माध्यम से पढ़ाता है तो वह एक ऐसी भाषा के माध्यम से पढ़ाता है, जिसे छात्र नहीं समझते। अतः कोई प्रश्न नहीं पूछते और पढ़ाई का कार्य बगैर किसी पूर्व तैयारी के चल जाता है। इसके विपरीत जब मातृभाषा के माध्यम से शिक्षा दी जाती है, तो छात्र अनेक प्रश्न करते हैं। ऐसी अवस्था में अध्यापक को पढ़ाने के पहले काफी तैयारी करनी पड़ती है। यही कारण है कि कुछ विश्वविद्यालयों में कुछ लोग मातृभाषा के द्वारा पढ़ाई का विरोध कर रहे हैं। [६५]

महाविद्यालयों में प्राध्यापक और अधिकारी जब विद्यार्थियों के समक्ष यह भूत खड़ा करते हैं कि तुम पुस्तकों के बिना रह जाओगे, तुम्हारे मन का विकास पूरी तरह न हो सकेगा, हिन्दी माध्यम में परीक्षा देने वाले निचले स्तर के माने जायेंगे, तब तरुण विद्यार्थियों का आशंकित हो जाना स्वाभाविक है। घबराये विधार्थी जब हिन्दी परीक्षा के माध्यम का पक्ष छोड़ देते हैं तब कहा जाता है कि इस महाविद्यालय के दस प्रतिशत विद्यार्थी भी हिन्दी नहीं चाहते।

स्पष्ट है कि जब इस प्रकार का उल्लेख महाविद्यालयों से आयेगा तब हिन्दी को परीक्षा का माध्यम बनाना भी बन्द कर दिया जायगा अथवा हिन्दी माध्यम के विद्यार्थियों को अति अल्प संख्या में कर उनमें हीनता की भावना उत्पन्न की जा सकती है यही षड्यन्त्र है जिसकी ओर तत्काल ध्यान की आवश्यकता है।

केवल परीक्षा का माध्यम हिन्दी मान कर अध्यापन माध्यम हिन्दी को बनाने की माँग इसलिए छोड़ दी गई थी कि हिन्दी वाले स्वभावतः समझौतावादी होते हैं। लेकिन उनकी भद्र मनोवृत्ति का अनुचित लाभ उठाना अनुचित है। [६६] उक्त उदाहरणों से यह स्पष्ट हो जाता है कि मनुष्य के शिक्षा के माध्यम से जो उसे उन्नति के पक्ष उज्ज्वल दिखलाई देने लगते हैं वे हिन्दी के माध्यम से शिक्षा ग्रहण करने में अन्धकारमय बन जाते हैं और जब किन्हीं लोगों के साथ ऐसी दुर्घटनाएँ घटित होती हैं, तो वे इस पथ से आगे बढ़ने वाले समूह को भयाकुल कर देती है तथा उस समूह से सम्बन्ध रखने वाले परिवार, नगर, अँचल और क्षेत्र-विशेष के लोगों को पीछे धकेल देती है और कालान्तर में वे अपने पीछे जाने का कारण इस प्रकार की शिक्षा-नीति को समझने लगते हैं और वे हिन्दी समर्थक, हिन्दी-प्रेमी, हिन्दी-अनुयायी होते हुए भी ऐसे परिणामगत सत्य को अपनी हानि का कारण समझने लगते हैं और भविष्य की हानि के प्रति शंकित हो उठते हैं। इस प्रकार हिन्दी-विरोधियों का एक सबल समूह तैयार हो जाता है।

---

६५. 'अध्यापक मातृभाषा में क्यों नहीं पढ़ाना चाहता'?—राष्ट्रभाषा सन्देश, मंगलवार, १ अक्टूबर, १९६८, भाग–४, अँक ७, पृ. २

६६. 'कॉलेजों में हिन्दी माध्यम के विरुद्ध षड्यन्त्र' : दीवानचन्द खोसला—राष्ट्रभाषा सन्देश : शनिवार : १ नवम्बर, १९६९, भाग–५, अँक–९, पृ. ६

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पूर्व हिन्दी का पठन-पाठन और प्रचार-प्रसार उसके राज्य-शासन में प्रवेश का अच्छा साधन समझा गया था और कई राज्यों में शिक्षा के माध्यम के रूप में उसे गौरव के साथ स्वीकार किया गया था किन्तु स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात शिक्षा के माध्यम में इस प्रकार के विरोधों ने लोगों को इस अपनाव से, अपने भविष्य की हानि की आशंका को घनीभूत रूप में अनुभव किया और यह विरोध दिन-प्रतिदिन विद्यालयों, महाविद्यालयों, प्रान्तीय प्रतियोगिताओं की परीक्षाओं और केन्द्रीय लोक सेवा आयोग की परीक्षाओं के माध्यम के रूप में उभरने लगा। इस आन्दोलन ने इस विरोध को देशव्यापी रूप में हिन्दी विरोध का शिक्षा के क्षेत्र में एक आन्दोलनात्मक रूप खड़ा कर दिया जो वास्तव में एक ओर स्वार्थ पूर्ति के लिए अस्वाभाविक रूप में योजनाबद्ध तरीके से खड़ा किया गया था और दूसरी ओर यह स्वार्थ हानि की आशंका के रूप में भय के कारण पल्लवित होता ही चला गया, जिसके परिणामस्वरूप राजभाषा का प्रश्न विदेशी और स्वदेशी अन्य भाषाओं के शीर्ष के विद्वानों द्वारा उलझन में डाला गया।

०४.०३६. राजनीतिक नेताओं का अँग्रेज़ी मोह :–

राजभाषा-हिन्दी का प्रबल विरोध अँग्रेज़ी-भाषा जानने वाले करते हैं। प्रारम्भ में जब अँग्रेज़ इस देश में आये तो वे बन्दरगाहों और नगरों के किनारे बसे, व्यापार की सुगमता के लिए। अत: वहाँ के लोगों के सम्पर्क के कारण, वहाँ के रहने वालों ने अँग्रेज़ी का प्रयोग प्रारम्भ किया क्योंकि वे लोग सरलता से नौकरियाँ प्राप्त करने लगे। अब ये ही लोग शासन में प्रमुख हो गये। ये और इनका परिवार जो अँग्रेज़ी और अँग्रेज़ियत में रँग गये हैं उसका मोह छोड़ना नहीं चाहते बल्कि अँग्रेज़ी का समर्थन करने के लिये विभिन्न प्रकार के तर्क देते हैं। 'दिल्ली प्रशासन के एक अधिकारी ने निजी बातचीत में स्पष्ट किया कि हमारे पास जो पत्र अँग्रेज़ी में आते हैं हम उन्हें जल्दी निपटा लेते हैं हिन्दी में आये पत्रों का जवाब बाद में दिया जाता है, हिन्दी में काम करने वाले व्यक्ति हमारे पास कम हैं–जनसंघ द्वारा[६७] रात-दिन जो हिन्दी-हिन्दी की रट लगाई जाती है? इस प्रश्न के उत्तर में उन्होंने बताया कि यह सब 'राजनीतिक प्रचार' है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के समय चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य भारत के अन्तिम गवर्नरजनरल थे तथा पंडित जवाहर-लाल नेहरू अन्तरिम केन्द्रीय शासन के मुखिया तथा मौलाना आज़ाद शिक्षामँत्री हुए। ये नेतागण हृदय से हिन्दी को बढ़ावा नहीं देना चाहते थे। संविधान स्वीकृत हो जाने के बाद भी कार्यपालिका का कामकाज इन्हीं के संकेतों पर चलता था इसलिए हिन्दी की प्रगति जैसी चाहिए वैसी न हो सकी। जिससे साधारण जनता की मनोवृत्ति बदल गई। सामान्य लोगों की मान्यता हो गई कि अँग्रेज़ी का अखबार मेज पर पड़ा होने से आये-गये लोगों पर रोब पड़ता है।[६८] हमारे देश में अँग्रेज़ी का प्रचलन शासन में अधिक है। अभी तक भारत के लोग न्यायालयों में चाहें तो भी हिन्दी में बोलना सुलभ नहीं है।

---

६७. प्रस्ताव अँग्रेज़ी में विचार हिन्दी में : अटलबिहारी वाजपेयी : राष्ट्रभाषा-सन्देश १६ मार्च, १९७०, भाग-५, अँक १८, पृ. ३.

६८. 'अँग्रेज़ी से रोब जो पड़ता है'–ज्ञानेश्वर शास्त्री, राष्ट्रभाषा सन्देश, बुधवार १६ दिसम्बर, १९७०, भाग-६, अँक १२, पृ. २.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

०४.०३७ न्यायालयों द्वारा हिन्दी की उपेक्षा :-

न्यायालयों की भाषा-नीति के सम्बन्ध में श्री राजनारायण का पत्र विचारणीय है। आपको मालूम होगा कि मैं आचकल एक माह से ऊपर हुआ बन्दीप्रत्यक्षीकरण याचिका (हीवियस कारपश पेटीशन की सर्वोच्च-न्यायालय में सुनवाई के लिए तिहाड़ जेल में बन्द हूं। गत २६ अगस्त को सर्वोच्च-न्यालय से मैंने प्रार्थना की कि मैं अपने मुकदमें की हकीकत जानता हूं इसलिए मुझे अपनी मातृभाषा में अपनी बात रखने की इजाजत दी जाए, मैं अँग्रेज़ी में अपनी बात नहीं रख सकता। माननीय न्यायालय ने हमारी प्रार्थना स्वीकार करते हुए आदेश किया कि राजनारायण के मुकदमें की सुनवाई स्थगित की जाती है, इसके लिए एक दूसरा नया वेंच बनेगा, जिसमें हिन्दी जानने वाले जज होंगे। इस आदेश की तह में मैं इस उम्मीद को दिल में सँजोकर जेल काट रहा हूं कि कोई हर्ज नहीं, यदि मेरे कुछ ज्यादा दिन तक जेल-काटने से सर्वोच्च-न्यायालय में मातृभाषाओं का प्रचलन हो जाए तो देश के ९८ प्रतिशत लोगों की कटी हुई ज़ुबान उनको मिल जाएगी।

९ सितम्बर को मैंने 'हिन्दी' (अपनी मातृभाषा) में बहस आरम्भ की। १० सितम्बर को जब पुनः श्री मधुलिमये, श्री एस. ए. डांगे के मुकदमे में शिरकत करते हुए बोलने खड़े हुए तो माननीय न्यायमूर्ति ने मुझे मातृभाषा में बोलने से रोक दिया। मुझे इस पर बड़ी मानसिक पीड़ा हुई। मैं सोचने लगा कि क्या भारत के नागरिकों को अपनी मातृभाषा में अपना पक्ष पेश करने की अनुमति अपने राष्ट्र के सर्वोच्च-न्यायालय में नहीं है ? हम अपने देश में, अपने सवाल पर, अपने न्यायालय में अँग्रेज़ी बोलने पर मजबूर किए जाएँ, फिर भी हम आज़ाद हैं ? क्या हमने आज़ादी की लड़ाई इसलिए लड़ी थी कि मुल्क आज़ाद होने पर भी अँग्रेज़ी की गुलामी कायम रहेगी ? तब हमने कम-से-कम तीन दिन की भूख हड़ताल पूरी की।

कल यानी २२-९-७० ई. को सर्वोच्च-न्यायालय में मुझे बुलाया गया। माननीय न्यायमूर्ति ने कहा कि मैं अँग्रेज़ी में बोल पाऊंगा। अब नया बेंच न बनेगा। यह सुनकर मैं स्तब्ध रह गया। जिस आज़ादी को हासिल करने के लिए अनगिनत नौजवानों ने फाँसी की रस्सी चूमी, ललनाओं के सिन्दूर धुले, मासूम बच्चे संगीन की नोंकों पर सुलाए गए, लाखों नर-नारियों ने कष्ट झेले, राष्ट्रपिता गाँधी शहीद हुए, नेताजी सुभाषचन्द्र बोस अमर हुए, क्या उस आज़ाद मुल्क के सर्वोच्च-न्यायालय में अपने नागरिकों की मातृभाषाओं का इतना तिरस्कार होगा और अँग्रेज़ों का राज खत्म होने के बाद भी अँग्रेज़ी का राज चलेगा ?

मान्यवर, यह प्रश्न केवल मेरा व्यक्तिगत सवाल नहीं है। यह राष्ट्र के सम्मान, राष्ट्रीय आज़ादी की रक्षा, राष्ट्र के नंगे-भूखे-पिछड़े ९८ फीसदी लोगों का सवाल है। देश का किसान, मजदूर, मेहनतकश अँग्रेज़ी नहीं जानता। आप स्वयं सोचें, वह क्यों मजबूर किया जाए अँग्रेज़ी बोलने के लिये ? क्यों न राष्ट्र की सभी भाषाएँ-हिन्दी, उर्दू, बंगला, पंजाबी, तमिल, मलयालम, गुजराती, मराठी, कन्नड़ आदि सर्वोच्च-न्यायालय में जगह पायें ? क्या दुनिया में एक भी ऐसा मुल्क है, जहाँ किसी विदेशी भाषा को अपने न्यायालय की भाषा माना गया हो ? हरगिज़ नहीं। मैं ज्यादा क्या लिखूँ ? आप स्वयं

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

समझदार हैं। देश, समाज के नाम पर आपसे साग्रह निवेदन है कि आप समय की पुकार को पहिचानें और सार्वजनिक जीवन में अँग्रेज़ी की जगह मातृभाषाओं की शुरुआत सर्वोच्च-न्यायालय से कराने के लिये सभी प्रकार से कोशिशें करें, आवश्यकता हो, संविधान में संशोधन करें या कानून बना दें या कोई अन्य तरीका निकालें। मैं दुःखी दिल से यह पत्र आपकी खिदमत में भेज रहा हूँ। उत्तर की प्रतीक्षा में।[६९]

०४.०३८. बुद्धिजीवियों की हीनता-ग्रन्थि :—

अँग्रेज़ी पढ़े-लिखे व्यक्ति और उनका परिवार अँग्रेज़ी की नकल करके अपने आपको अँग्रेज़ मानने का अनुभव कर गर्वोन्नत रहते हैं। इस भाषा ने सम्पूर्ण देश के संस्कार और नैतिक-चरित्र को प्रभावित किया है। अभी भी यह भाषा इस देश से विदा नहीं हुई है, यथापि अँग्रेज़ी-राज्य यहाँ से चला गया है। इस भाषा के विषय में हमारे देश के भूतपूर्व प्रधानमन्त्री स्व. पं. जवाहरलाल नेहरू का मत है कि 'अँग्रेज़ों की छत्रछाया में १९वीं शताब्दी में हमारे देश में अँग्रेज़ी जानने वालों की एक नई जाति पैदा हुई थी। इस जाति ने देश के राजनीतिक एवं सामाजिक जीवन में निहित स्वार्थी बनकर भारत को हानि पहुंचाई। मैं भी कुछ हद तक इस बुराई का शिकार रहा। मेरा दृढ़ मत है कि अँग्रेज़ी के प्रति लोगों का मनोवैज्ञानिक लगाव, अब खत्म होना चाहिये जिससे लोगों के चरित्र पर इसका बुरा प्रभाव न पड़े।[७०] इस अँग्रेज़ी के मोह ने और राजनीतिक नेताओं के स्वार्थ के कारण हमारे देश की राष्ट्रीय सम्पत्ति को भारी क्षति हुई, राष्ट्रीय जीवन प्रभावित हुआ और इस विज्ञान के युग में हमारा देश इन भाषाओं के आन्दोलनों के कारण प्रभावित हुआ। यह आन्दोलन छात्र-आन्दोलनों के रूप में प्रारम्भ हुआ और राजनीति के मंच पर चला गया। इसका परिणाम यह हुआ कि छात्रों और शासन के मध्य खींचातान चली। छात्रों ने उपद्रव किये। उन पर देश के विभिन्न भागों में लाठी चालन हुए, आँसू गैसों को छोड़ा गया, नगर-के-नगर बन्द हुए, पुस्तकों की होलियाँ जलीं (हिन्दी-प्रदेशों में अँग्रेज़ी की, अहिन्दीभाषी प्रान्तों में हिन्दी की), नाम पट्टिकाओं पर कोलतार पोता गया और सम्पूर्ण देश में अशान्ति का वातावरण निर्मित हुआ। प्रमुख रूप से दो दल बन गये और संघर्ष सन् १९६५ से लेकर १९७१ तक व्यापक रूप से चला।[७१] इस स्थिति का अनुमान कुछ

---

६९. सर्वोच्च-न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश के नाम श्री राजनारायण का पत्र, तिहाड़ सेन्ट्रल जेल, नयी दिल्ली, २३-९-७०-वीणा, अक्टूबर, १९७०, वर्ष-४३, अंक-१२ के अन्तिम मुखपृष्ठ ३-४ पर।

७०. पं. जवाहरलाल नेहरू, ४ मई, १९६३ ई. को राज्य-सभा का एक भाषण : लक्ष्मीचन्द-हिन्दी भा. आ. : पृष्ठ ११६

७१. सन् १९६५ से १९७० तक के देश के विभिन्न दैनिक-पत्र जो हिन्दी और अँग्रेज़ी में छपते हैं, दिनमान (साप्ताहिक), धर्मयुग (साप्ताहिक), साप्ताहिक हिन्दुस्तान और राष्ट्रभाषा सन्देश (पाक्षिक)।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

इस प्रकार लगाया जा सकता है—'प्रादेशिक भाषाओं को साथ लेकर अँग्रेज़ी पर हल्ला बोल दिया जाये,[७२] भारत से अँग्रेज़ी का उन्मूलन आवश्यक,[७३] अँग्रेज़ी को पहले हटाइये,[७४] तमिलनाडु छात्रों का हिन्दी-विरोध,[७५] हिन्दु विश्वविद्यालय के सभी अंग्रेज़ी सूचना पट्टों पर अलकतार पोता गया,[७६] मद्रास में अँग्रेज़ी समर्थक छात्रों पर लाठी चार्ज,[७७] मद्रास में छात्रों पर अश्रुगैस।[७८] हमारे देश में शासन को सुचारू रूप से चलाने के लिये देश को विभिन्न प्रान्तों में बांटा गया। यह विभाजन भाषाई-आधार पर किया गया, जिससे राजनीति में जातीयता और भाषा दीर्घकाल तक अपने स्वार्थ साधने लगी। यह हिन्दी के विरोध में एक षड्यन्त्र के रूप में सामने आया। इस भाषावार-विभाजन से इसे बल प्राप्त हुआ। प्रत्येक प्रदेश की अपनी भाषा और इसमें कामकाज की दुहाई दी गई। इस भाषावार-प्रदेश–विभाजन से देश में स्वभाषा की साम्प्रदायिक मनोवृत्ति जाग उठी और इस पर दंगे हुए,[७९] कई नये प्रदेश बने, महाराष्ट्र, गुजरात, आन्ध्र, मद्रास और पंजाब बँटकर दो-दो हो गये। इस पुनर्गठन का परिणाम यह हुआ कि भाषाई चेतना इतनी प्रबल हो गयी कि एक प्रदेश अपने को दूसरे से श्रेष्ठ मानने लगा और हिन्दी के विरुद्ध एक राजनीतिक गढ़ बन गया, जिसके अन्तर्गत प्रशासनिक अधिकारियों की सूझ–बूझ अँग्रेज़ी का पालन-पोषण करने लगी। अँग्रेज़ी समर्थक तर्क देने लगे कि अँग्रेज़ी को हटाने से भारत टूट जायेगा। वे इस प्रकार का प्रचार करके अपने आपको बनाये रखना चाहते हैं जबकि देश के कर्णधारों में प्रमुख पण्डित जवाहरलाल नेहरू, महात्मा गाँधी, मौलाना अबुलकलाम आज़ाद, इत्यादि नेताओं ने देश की एकता के लिए अँग्रेज़ी नहीं बल्कि 'हिन्दुस्तानी' भाषा का एक लम्बे समय तक समर्थन किया। उन्होंने देश के संविधान निर्माण समिति में इसके लिए लम्बी-लम्बी बहसें की। देश के विभिन्न भागों में हुए सम्मेलनों में भाषण दिये। इतना ही नहीं गाँधीजी ने तो दक्षिण-प्रचार-सभा, मद्रास का नाम बदलकर दक्षिण-भारत-हिन्दुस्तानी-प्रचार-सभा, मद्रास कर दिया।

---

७२. राष्ट्रभाषा सन्देश, ५, १२ अगस्त, १९६५; पृष्ठ ३

७३. वही, पृष्ठ ६

७४. वही, ३ मार्च, १९६६, पृष्ठ २, सम्पादकीय

७५. वही, रविवार, १ अक्टूबर, १९६७, पृष्ठ ६

७६. वही, रविवार, १ अक्टूबर, १९६७, पृष्ठ ८

७७. वही, १ जनवरी; १९७१, पृष्ठ ८

७८. वही, १६ दिसम्बर, १९७०; पृष्ठ २

७९. 'पंजाबी सूबे के निर्माण से सीमाप्रान्त में कलह की ज्वाला; 'हिन्दी देश की एकता में मुख्य सहायक',–राष्ट्रभाषा सन्देश, गुरुवार, २४ मार्च, १९७६, भाग–१; अंक ३४, ३५, ३६, पृ. ९,

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

वस्तुतः इनकी मान्यता थी कि हिन्दी का राष्ट्रभाषा के रूप में प्रयोग करने से हमारे बहुभाषी देश में एकता की भावना बढ़ेगी तथा सामान्य-जन का उत्थान होगा। आम-जनता के साथ सम्पर्क बनाने के लिए हिन्दी का राष्ट्रीय स्तर पर प्रयोग आवश्यक है। अँग्रेज़ी तो हमारी जनसंख्या का दो प्रतिशत से भी कम लोग बोलते हैं इसीलिए हिन्दी को एक राष्ट्रीय-सम्पर्क-भाषा के रूप में विकसित करना आवश्यक है।[८०] इस सम्बन्ध में भारतीय और कुछ विदेशी विद्वानों के मत हैं —

(क) डॉ. राममनोहर लोहिया —'जहाँ भी लोक-भाषाओं और अँग्रेज़ी को साथ-साथ रखने की नीति होगी, वहाँ लोकभाषाएँ कभी पनप नहीं सकेंगी। खोटा सिक्का और अच्छा सिक्का जब दोनों साथ चलते हैं, तो खोटा ही पहले चलता है, अच्छा नहीं चलता। अँग्रेज़ी बिलकुल हटे, विकल्पों में वह ही न हो, लोक-भाषाओं को उनका स्थान देने का तभी कोई मतलब है।'[८१] अँग्रेज़ी ने एक नया सामंतवादी वर्ग उत्पन्न किया है जिसने देश के आर्थिक जीवन तथा सभी उच्च प्रशासकीय पदों पर अपना एकाधिकार स्थापित कर लिया। यह सामन्त वर्ग देश के लिये पुराने राजाओं और महाराजाओं से भी अधिक खतरनाक है। अँग्रेज़ी हमारी नयी पीढ़ी के बौद्धिक विकास में सबसे बड़ी बाधा है। हमारे समाज के लिये बहुत बड़ी विघटनकारी शक्ति बनी है। इसने बौद्धिक वर्ग और सामान्य-जनता के बीच बहुत बड़ी खाई बना दी है।'[८२]

(ख) प्रोफेसर शेरसिंह—'अँग्रेज़ी-प्रेमी व्यक्तियों और अखबारों ने आज तक यह दोहराना शुरू किया है कि अँग्रेज़ी की उपेक्षा से राष्ट्र पिछड़ जाएगा। मैं अँग्रेज़ी का विरोधी बिल्कुल नहीं हूँ परन्तु मैं इस बात का ज़ोर से विरोध करना चाहता हूँ। मैं इन लोगों को बताना चाहता हूँ कि तुम अपने स्वार्थ के पोषण में जन-मानस में हीनभावना उत्पन्न कर रहे हो, पराजय की वृत्ति उत्पन्न कर रहे हो और हमारे आत्मविश्वास और क्षमता पर घृणित आक्रमण कर रहे हो। पिछले दो युद्धों के बीच और पश्चात् अनेक राष्ट्रों ने यह सिद्ध कर दिया है कि उनका समस्त कार्य और उनकी सारी शिक्षा उनकी भाषा के माध्यम से बहुत ही सुचारू रूप से चलाई जा सकती है। इतना ही नहीं, उनके वहाँ विज्ञान की आशातीत उन्नति हुई है और टैक्नोलोजी ने भी बहुत विकास किया है। परन्तु हमारे यहाँ अँग्रेज़ी-प्रेमी इस बात को देखना नहीं चाहते, स्वीकार नहीं करना चाहते और निरन्तर अपने कथनों से राष्ट्र की आत्म-शक्ति कमज़ोर करने का यत्न करते हैं।'[८३]

---

८०. राष्ट्रभाषा सन्देश, १६ फरवरी, १९७६, भाग–११, अँक १५, पृ. १,

८१. 'खोटी अँग्रेज़ी बिलकुल हटे'–राममनोहर लोहिया–राष्ट्रभाषा सन्देश, गुरुवार, १४, २१ अगस्त, १९६५, भाग–१, अँक ६, ७, पृष्ठ ८

८२. 'नयी पीढ़ी के बौद्धिक विकास में हिन्दी', बलराज मधोक-राष्ट्रभाषा सन्देश, रविवार, १ अक्टूबर, १९६७, भाग–३, अँक ३, अँक ७, पृष्ठ ४

८३. कर्नाटक महिला हिन्दी-सेवा-समिति के द्वितीय पदवीदान समारोह के दीक्षान्त भाषण में दिये गये भाषण का अँश–राष्ट्रभाषा सन्देश, अक्टूबर, १९६७

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

(ग) श्री मोरारजी देसाई—'कोई कितना भी विरोध करे, एक दिन तो देश में सभी को हिन्दी स्वीकार करनी ही है किन्तु आवश्यकता इस बात की है कि हिन्दीभाषी प्रदेश अपने हृदय को टटोलें कि क्या वे हिन्दी को अपने यहाँ उचित स्थान दे रहे हैं? यह एक विचित्र बात है कि देश ने अपने को तो आज़ाद किया किन्तु अपनी भाषा को आज़ाद नहीं किया। वह अभी भी विदेशी भाषा के प्रभुत्व के नीचे दबी हुई है। जनता का राज आया, किन्तु जनता की भाषा में नहीं। शासन ऐसी भाषा में चलाया जा रहा है जिसे दो प्रतिशत लोग भी नहीं जानते।'[८४]

(घ) विदेशियों के मत—डॉक्टर ओडोलेन स्मेकेल—

चेकोस्लोवाकिया के चार्ल्स विश्वविद्यालय में दर्शनशास्त्र के प्रधान प्रवक्ता और हिन्दी के विद्वान हैं। उन्होंने राजस्थान विश्वविद्यालय में विद्यार्थियों और प्राध्यापकों के समक्ष भाषण दिया और कहा कि—'भारत जब तक अँग्रेज़ी की दासता से मुक्त नहीं हो जाता और अपनी ही भाषा को नहीं अपना लेता तब तक असली माने में स्वतन्त्र नहीं कहला सकता। अपनी ही भाषा का यह निरादर लज्जाजनक है। हिन्दी संसार की पूर्ण और मुख्य भाषा है। उन्होंने इस बात पर आश्चर्य और खेद प्रकट किया कि भारतवासी अपनी ही भाषा के प्रति अनुराग क्यों नहीं रखते, जबकि चेकोस्लोवाकिया में वहाँ के सब निवासी अपना सारा काम अपनी ही भाषाओं में करते हैं।'[८५]

(ङ) डॉ. हेरमन वान ओल्फन—

आपने कहा कि—भारतवर्ष में आज भी अँग्रेज़ी सरकारी-कामकाज की भाषा बनी हुई है जबकि भारत को आज़ाद हुए सत्ताईस वर्ष हो चुके हैं। यहाँ की भाषाओं में सरकारी-कामकाज होना चाहिये, नाम-पट्टों को भी मातृभाषाओं और हिन्दी में होना चाहिए था। राष्ट्रभाषा के बिना यह सत्य है कि राष्ट्रीय-विकास अवरुद्ध हो जाता है। इसके लिए बड़े ही रचनात्मक तरीके से आन्दोलन चलाना चाहिये। भारत में आत्म-चेतना और स्वविवेक की कमी के कारण आज इस पक्ष को महत्वहीन समझा जा रहा है जबकि यही पक्ष व्यावहारिक है और सर्वाधिक महत्वपूर्ण भी। हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाकर अपना सर्वाधिक महत्वपूर्ण निर्णय देने में विलम्ब न करें। पंजाब में हमने एक विशेष बात पायी कि वहाँ पर सार्वजनिक स्थानों पर पंजाबी भाषा का अधिक प्रयोग हो रहा है किन्तु पंजाबी के साथ अँग्रेज़ी का प्रचलन आज भी दिखाई पड़ता है।[८६]

---

८४ प्रयाग विश्वविद्यालय में 'हिन्दी कार्य शिविर' के अवसर पर दिये गये भाषण से, राष्ट्रभाषा सन्देश, ७ मई, १९६६।

८५. स्मेकल—'जब तक भारत अपनी भाषाओं को नहीं अपनाता, उसे सही अर्थ में स्वतन्त्र नहीं कहा जा सकता—'राष्ट्रभाषा सन्देश, १०, १७ और २४ मार्च, १९६६, भाग-१; अंक ३४, ३५, ३६, पृष्ठ १

८६. डॉ. हेरमन वान ओल्फन, एसोसियेट प्रोफेसर एशियाई और अफ्रीकी भाषा-विभाग, टैक्सास विश्वविद्यालय, संयुक्त राज्य अमरीका—राष्ट्रभाषा सन्देश, १६ फरवरी, २७ माघ १८९७, भाग ११ अंक १५ पृष्ठ ३ पर

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

(च) डच विद्वान डॉ. री :-

'भारत में अँग्रेज़ी भाषा की अनिवार्य पढ़ाई तथा इसका सार्वजनिक प्रयोग देश की तरक्की में बाधक है। अँग्रेज़ी से पश्चिमी प्रभाव बढ़ेगा। अँग्रेज़ी अन्य भाषाओं के रूप में पढ़ाई जा सकती है।'[८७]

(छ) डॉ. लोठार लुत्से-

भारत में हिन्दी की उपेक्षा विदेशों में हिन्दी-प्रचार में समस्या पैदा करती है।[८८]

(ज) डॉ. मलिक मोहम्मद-

'आपने इस बात पर क्षोभ प्रकट किया कि २७ वर्षों में हम हिन्दी को राजभाषा का दर्जा भी नहीं दे सके और अब उसे अन्तर्राष्ट्रीय भाषा बनाने का स्वाँग कर रहे हैं।'[८९]

०४.०३९. अँग्रेज़ी समर्थकों द्वारा विरोध :-

भाषाई आधार पर अपने स्वार्थ-सिद्धि की नीति में कार्य कर रहे अहिन्दीभाषी लोगों के स्वार्थों पर हिन्दी के राजभाषा होने से चोंट पहुँचने की आशंका थी। वे इसी आशंका के भय से इतने अधिक भयभीत थे कि बिना सिद्धान्त के राजभाषा-हिन्दी का विरोध करते थे जबकि उनका अँग्रेज़ी-प्रेम भी केवल दिखावा, छलावा और दूसरों के साथ धोखा मात्र था। वे अपने स्वार्थ-पूर्ति के लिए ऐसा विरोध करने में लगे हुए थे क्योंकि किसी को अपनी झूठी प्रतिष्ठा दिखाने की, विद्वता प्रदर्शित करने की और अपने आपको ऊँचा सिद्ध करने की जो युक्ति दिखलाई देती थी वह केवल अँग्रेज़ी के माध्यम से ही बनी रह सकती थी। इसका एक मात्र कारण यह था कि जिन लोगों के सामने वे ऐसा करते थे याने जन-साधारण में से अँग्रेज़ी समझने वालों की संख्या केवल २ प्रतिशत थी, जैसे वकील अपने पक्षकारों को छलावे में छलना चाहते थे, न्यायाधीश अपने निर्णयों में विद्वता दर्शाना चाहते थे, शिक्षक अपने गहन अध्ययन में विद्वता दिखलाना चाहते थे, व्यावसायिक और धनिक लोग नकली शान-शौकत बतलाना चाहते थे, कुछ राजनैतिक नेता जो कि उच्च वर्ग से आये थे और अहिन्दी-प्रदेशों के थे और जिनका सारा शिक्षण अँग्रेज़ी के माध्यम से हुआ

---

८७. डॉ. री, हॉलेण्ड के अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त मनोचिकित्सक हैं। उन्होंने अँग्रेज़ी हटाओ सम्मेलन के आयोजकों को अपना मंतव्य देते हुए कहा था। ये लोग उन्हें वाराणसी सम्मेलन, १९६८ में भाग लेने के लिए स्वीकृति के लिये गये थे। उन्होंने स्वीकृति देते हुए कहा-राष्ट्रभाषा सन्देश, १ सितम्बर, १९६८, भाग-४, अंक ५, पृ. १

८८. विश्व हिन्दी सम्मेलन एक विहंगावलोकन : डा. म. कपूर : भाषा (त्रैमासिक) : मार्च-जून, १९७५ : वर्ष १४ : अँक ३-४, पृष्ठ १४६

८९. वही, वही, वही, पृष्ठ १५१

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

था और स्वतन्त्रता के पूर्व जिसकी सारी धाक संकुचितता के माध्यम से अँग्रेज़ी से ही जमी थी ऐसे लोग भ्रम में थे और वे अपने भ्रमवश अपनी इस स्थिति को अपने स्वार्थपूर्ति का ही एक मात्र साधन समझते थे। उन्हें राजभाषा-हिन्दी बन जाने से एक प्रकार की हीनत्व-वृत्ति आने लगी थी। वे अपने स्वार्थ-पूर्ति की आशंका के कारण बड़े सबल ढँग से, विविध प्रकार से जहाँ भी उन्हें अवसर आता था, राजभाषा-हिन्दी का विरोध करते थे। भारत की शेष जनता स्वतन्त्रता के पश्चात भी इस उच्च-वर्ग के मार्ग-दर्शन, निर्देशन पर ही विकास की ओर चलती है। अतः ऐसे उच्च-वर्गों के लोगों का यह प्रभाव, उनकी अवसरवादिता को सफलता देने लगा। ऐसे उच्च-वर्ग के लोग साधन-सम्पन्न थे। जिनके पास धन, प्रचार के साधन, प्रभुत्व के अवसर और सभा-सोसायटियों में उनका अपना गहरा प्रभाव था। उनका विरोध सिद्धान्तहीन, अव्यावहारिक, असंगत, व्यवहारविहीन तथा देश के लिए हानिकारक होते हुए भी वह चल निकला और उसने देश की राजभाषा को बहुत अधिक हानि पहुँचाई। देश की आम जनता में से किसी भी श्रमिक, कृषक तथा अन्य ट्रेड यूनियनों के संगठनों में से राजभाषा-हिन्दी का विरोध देश के किसी भी कोने से नहीं पाया गया। जबकि २ प्रतिशत अँग्रेज़ी जानने वाले लोगों के इस देश में अँग्रेज़ी का समर्थन और उसे भारत में बनी रहने देने की हिमायत अखबारों के माध्यम से तथा विभिन्न प्रमुख संगठनों के माध्यम से देश-व्यापी दिखलाई दी। यह केवल एक दिखावा मात्र था किन्तु धन, प्रभाव और अन्य साधनों के कारण इसका रूप देशव्यापी दिखाई दिया जो वास्तविकता से परे है।

०४. ०४०. विरोध के लिये विरोध की नीति—

हमारे देश में हिन्दी-भाषा ने बहुत समय तक संघर्ष किया है। यह संघर्ष उसके विकास के पग-पग पर रहा परन्तु फिर भी हिन्दी आज इस स्थिति में आ गई कि शासन ने उसे संविधान में राजभाषा का स्थान दिया। इसके पूर्व हिन्दी को सबसे पहले अँग्रेज़ों के शासन में राजभाषा के लिये फ़ारसी से संघर्ष करना पड़ा। हिन्दी, उर्दू और हिन्दुस्तानी का विवाद देश की जनता, अँग्रेज़ और कांग्रेस के राजनैतिक नेताओं के मध्य चलता रहा। संविधान निर्माण समिति में इस विवाद के साथ अँग्रेज़ी का विवाद भी उठा। इसी बीच देश का विभाजन हुआ। फलस्वरूप हिन्दी, उर्दू और हिन्दुस्तानी का विवाद समाप्त होकर हिन्दी और अँग्रेज़ी के मध्य द्वन्द होता रहा। बीच-बीच में कभी-कभी लोग संस्कृत तथा अन्य प्रान्तीय-भाषाओं की बात करते रहे।

प्रत्येक के पीछे स्वार्थ था परन्तु अन्ततोगत्वा यह विरोध समाप्त हो गया। अब स्थिति यह है कि विरोध मुख्य रूप से अँग्रेज़ी और हिन्दी के मध्य है। हिन्दीभाषी प्रदेश और अहिन्दीभाषी प्रदेशों में यह विरोध है। यह भी वास्तव में कम है परन्तु केवल विरोध के लिये विरोध की नीति को लोग अपना रहे हैं। इस सम्बन्ध में सेठ गोविन्ददास का वक्तव्य है कि 'यह कहना गलत है कि अकेले अहिन्दी-भाषा-भाषी लोग हिन्दी का विरोध कर रहे हैं। हिन्दी के प्रचलन का, हिन्दी को केन्द्र में चलाये जाने का विरोध केवल अहिन्दी भाषा-भाषी लोग ही नहीं, वरन् हिन्दी-भाषा-भाषी भी कर रहे हैं और यह विरोध कौन लोग कर रहे हैं? यह विरोध वही दो प्रतिशत लोग कर रहे हैं, जिनके हाथ में सारी राजसत्ता है,

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

जिनके हाथ में देश का सारा कामकाज है, जो आज भी अपना आधिपत्य इस अँग्रेज़ी के द्वारा इस देश में बनाये रखना चाहते हैं। वे हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाओं का प्रचलन नहीं होने देना चाहते क्योंकि उनका स्वार्थ अँग्रेज़ी से सधता है। इसलिये यह कहना कि केवल अहिन्दी-भाषा-भाषी विरोध कर रहे हैं, यह बात सही नहीं है। अहिन्दी-भाषा-भाषी भी कर रहे हैं और हिन्दी-भाषा-भाषी भी कर रहे हैं। वे लोग इसका विरोध कर रहे हैं जिनका स्वार्थ ग्रेअँज़ी से सधता है। दक्षिण में मद्रास को छोड़कर केरल, मैसूर और आन्ध्र हिन्दी के विरुद्ध नहीं हैं। पश्चिम में गुजरात और महाराष्ट्र हिन्दी के विरुद्ध नहीं हैं। केवल बंगाल और तमिलनाडु तक ही यह विरोध केन्द्रित है।'[१०] आजकल हिन्दी का विरोध तमिलनाडु और मद्रास में प्रमुख रूप से है। इस विरोध के पीछे उद्देश्य क्या है? यह देखना है। क्या यह मात्र प्रचार है, राजनैतिक साजिश है या स्वार्थ-पूर्ति के लिये किया गया झूठा प्रचार मात्र है।[११]

अँग्रेज़ी-विरोधी इस आन्दोलन में प्रत्यक्ष तो छात्र लोग भाग ले रहे थे परन्तु इसके पीछे छात्र–संस्थाएँ, हिन्दी की विभिन्न साहित्यिक संस्थाएँ; राजनैतिक दलों के विभिन्न नेता लोग, पत्रकार, साहित्यकार इत्यादि थे। इस आन्दोलन में विशेष करके मध्यम-वर्ग के लोग जिन्हें बुद्धिजीवी कहा जाता है, राजनैतिक नेताओं के साथ मिलकर इसका संचालन कर रहे थे। यह आन्दोलन केवल विरोध करने की नीति का संचालन कर रहा था। इसमें जो विभिन्न लोग थे जो इसके संचालक थे उनके उद्देश्य अलग-अलग हो सकते हैं।[१२] यदि इस आन्दोलन का उद्देश्य और कुछ होता तो समाज के श्रमिक लोग, ट्रेड यूनियनें और मजदूरों की विभिन्न यूनियनें भी इसमें भाग लेती परन्तु ऐसा इस आन्दोलन में नहीं हुआ। यह आन्दोलन पढ़े-लिखे लोगों तक या समाज के बुद्धिजीवी वर्ग विशेष तक ही सीमित रहा।

जिस प्रकार उत्तर भारत के छात्रों ने अँग्रेज़ी का विरोध किया उसी प्रकार तमिलनाडु के छात्रों ने भी हिन्दी के विरोध में व्यापक जन-आन्दोलन चलाया है।[१३] 'तमिलनाडु विद्यार्थियों की 'हिन्दी-विरोधी-परिषद्' द्वारा आयोजित सार्वजनिक सभा में भाषण करते हुए विद्यार्थी नेताओं ने स्थानीय सिनेमाघरों के मालिकों से कहा है कि वस अक्टूबर से वे हिन्दी-फिलमें दिखाना बन्द कर दें। हम तमिलनाडु पर हिन्दी का

---

१०. राजभाषा विधेयक पर सेठ गोविन्ददास के वक्तव्य से–सेठ गोविन्ददास 'राजभाषा–हिन्दी', पृष्ठ २७–४०

११. 'हिन्दी भाषा आन्दोलन' : सम्पादक लक्ष्मीचन्द : शकाब्द १८८५ : पृष्ठ ११६

१२. 'समस्त उत्तर भारत में अँग्रेजी के विरुद्ध व्यापक 'जन–आन्दोलन' : राष्ट्रभाषा सन्देश, शनिवार, १६ दिसम्बर, १९६७, भाग–३, अँक १२, पृष्ठ ६

१३. 'कड़गम का हिन्दी विरोध', : राष्ट्रभाषा सन्देश, रविवार १ अक्टूबर, ६७, भाग–३, अँक ७, पृष्ठ १

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

थोपा जाना सहन नहीं करेंगे। उन्होंने केन्द्र से कहा है कि मद्रास की हिन्दी-प्रचार-सभा को सहायता देना बन्द की जाय। विद्यार्थी नेताओं ने कांग्रेस सहित सभी दलों से कहा है कि वे मिलकर दक्षिण पर हिन्दी थोपे जाने का विरोध करें। केन्द्र से दक्षिण के भाषाई हितों की रक्षा के लिये संविधान में संशोधन करने का आग्रह किया गया है।[९४]

तमिलनाडु में हिन्दी-विरोधी-नीति का संचालन अन्नादुराई और राजगोपालाचार्य ने किया। इन्होंने सरकारी विधेयक को ठुकराने की सलाह दी, राजाजी पहले हिन्दी के समर्थक थे। इन्होंने अपने समय में मद्रास में सर्वप्रथम प्रयोग के तौर पर हिन्दुस्तानी को एक अनिवार्य विषय के रूप में हाईस्कूल के प्रथम तीन हिस्सों में चलाया था।

स्वतन्त्रता के पूर्व ये हिन्दी को ही राष्ट्रभाषा के लिए उपयुक्त मानते थे और हिन्दी को शिक्षा के लिये, देश के लिये और उत्तर तथा दक्षिण के भाषा-भाषियों के लिये आवश्यक थी। उसी हिन्दी और उसके विधेयक के लिये वे अब उसका विरोध करते हैं। उसे राष्ट्रभाषा के लिये समर्थन तो दूर रहा उसका विरोध करते हैं। इसका कारण यह है कि पहले जब वे शासन में थे तो उनका दृष्टिकोण भिन्न था, अब उनका दृष्टिकोण भिन्न हो गया है।[९५] अब उन्हीं राजाजी का मत है कि सरकारी विधेयक से न तो हिन्दी-भाषी लोगों की माँगें पूरी होती है और न अहिन्दी-भाषी लोगों की आकाँक्षाओं की पूर्ति होती है।[९६] इस तरह वर्तमान समय में लगता है कि ये हिन्दी का विरोध इसलिये करते हैं कि इन्हें विरोध करना है और उसके लिये ये विरोध की नीति का संचालन करते हैं। वास्तविकता इससे कुछ और है। ऐसा ये लोग इसलिये करने में समर्थ हो जाते हैं कि एक लम्बे समय से ये मद्रास के सबसे अधिक लोकप्रिय नेता रहे हैं। अतः अपने प्रभाव का उपयोग ये विरोध की नीति का संचालन करने में कर रहे हैं। वस्तुतः तमिलनाडु में हिन्दी का विरोध एक फैशन हो गया है। उन्होंने कहा कि प्रत्येक मद्रासवासी यह जानता है कि हिन्दी के द्वारा ही देश की एकता बनी रह सकती है लेकिन राजनीतिक कारणों से वह हिन्दी का विरोध करता है। ....दक्षिण में हिन्दी के विरोध के लिये अँग्रेज़ी का समर्थन किया जाता है।[९७]

---

९४. तमिलनाडु छात्रों का हिन्दी–विरोध। राष्ट्रभाषा सन्देश, रविवार १ अक्टूबर, १९६७, पृष्ठ ६

९५. भारतीय शिक्षा–पद्धति पर भाषण : श्री राजगोपालाचारी : राष्ट्रभाषा सन्देश, १५ जुलाई, १९६५; पृष्ठ ८

९६. 'राजभाषा विधेयक; द्रमुक तथा राजाजी' : राष्ट्रभाषा सन्देश, १६ दिसम्बर, १९६७, पृष्ठ ७

९७. 'हिन्दी की राह के रोड़े' : सम्पादकीय टिप्पण : राष्ट्रभाषा-सन्देश, १६ फरवरी, १९६९, पृ. ५

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

०४.०४०. अहिन्दी-भाषियों की दुरंगी-नीति–

हिन्दी के साथ अनेक राष्ट्रभाषाओं की जब चर्चा की जाने लगी तब देश की सभी प्रमुख भाषाओं को राजभाषा का दर्जा दिया गया। इसी समय भेदमूलक त्रि-भाषा सूत्र का जन्म हुआ। उर्दू और सिन्धी को भी राजभाषाओं में स्थान दिया गया। परिणाम यह हुआ कि अहिन्दी-भाषी नेतागण यह जानते हुए कि एक-न-एक दिन सम्पूर्ण भारत में हिन्दी का प्रयोग होगा। अपने बालकों को अँग्रेज़ी का अध्ययन कराते हैं और स्वयं जनता-मंच से हिन्दी का विरोध करते हैं। तमिलनाडु, बंगाल और पंजाब में यही हो रहा है।

०४.०४१. हिन्दी-भाषियों की अकर्मण्यता–

जब से हिन्दी राजभाषा बनी तब से हिन्दी की अखिल भारतीय संस्था हिन्दी साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग परस्पर संघर्षों के चक्र में फँस गई। यही स्थिति नागरी-प्रचारिणी सभा, काशी और राष्ट्रभाषा-प्रचार-समिति, वर्धा की हुई। जिस समय हिन्दी भाषियों को हिन्दी के प्रचार और प्रसार में स्वार्थ त्यागकर अग्रसर होना चाहिए था उस समय वे अकर्मण्य बने हुए हैं।

०४.०४२. अँग्रेज़ीभाषी देशों की कूटनीति–

विदेशी अँग्रेज़ीभाषी राष्ट्र, अँग्रेज़ी के प्रसार द्वारा पुस्तकों का व्यवसाय भारत से करते हैं। ये पुस्तकें एक ओर उन्हें आर्थिक लाभ देती है तो दूसरी ओर उनके विचारों से भारतीय बुद्धिजीवियों को वैचारिक दासता में बाँध लेती है। पुस्तक की चिन्तन–पद्धति का प्रभाव पाठक पर पड़ता है इसलिये पूँजीवादी देश इन पाठकों पर बौद्धिक विजय प्राप्त करते हैं और पाठकों के मौलिक विचारों को कुँठित कर देते है। इस कुण्ठा के कारण देश में रहने वाले और विदेश में जाने वाले भारतीय बुद्धिजीवियों के आत्म-सम्मान पर प्रभाव पड़ता है और ये लोग अपने देश, धर्म, भाषा और संस्कृति के प्रति उदासीन हो जाते हैं तथा अपनी भाषा को हीनता की दृष्टि से देखते हैं। अँग्रेज़ी उनकी आश्रयदात्री बन जाती है। वे 'अँग्रेज़ी हटाओ' आन्दोलन के देश-विदेश में प्रबल विरोधी सिद्ध होते हैं। विदेशों में भारतीय दूतावासों में काम करने वाले लोग अँग्रेज़ी के समर्थक और हिन्दी के विरोधी बन जाते हैं।[१८]

०४.०४३. व्यापारिक प्रतिष्ठानों की हिन्दी-नीति–

भारत में आज टाटा, बिड़ला, डालमिया, मफतलाल आदि ऐसे व्यापारिक प्रतिष्ठान हैं जो नागरिकों को काम-काज देने और व्यापार में अभिवृद्धि करने का कार्य करते हैं। ये प्रतिष्ठान प्रशासनिक अधिकारी वर्ग के संकेतों पर अँग्रेज़ी का ही प्रयोग अपने दैनिक कार्यक्रमों में करते हैं। परिणामतः लाखों बुद्धिजीवी अपनी रोटी-रोजी की समस्या का निदान करने के लिये करते हैं अँग्रेज़ी को ग्रहण। यही स्थिति राष्ट्रीयकृत बैंकों, सार्वजनिक लघु-उद्योगों और केन्द्रीय औद्योगिक प्रतिष्ठानों की है। इन प्रतिष्ठानों में

१८. 'विदेशों में अँग्रेज़ी हटाओ : क्यों और कैसे ? : डॉ. वेदप्रताप वैदिक : पृ. २७-३१

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

रोजगार की समस्या अँग्रेज़ी के माध्यम से ही हल होती है इसलिए [अँग्रेज़ी का प्रचार और प्रसार तथा हिन्दी का विरोध यहाँ भी होता ही है।[९९]

०४.४४. हिन्दी की बोलियों को भाषाई रूप देने का षड्यन्त्र–]

दक्षिण भारत, बंगाल और पंजाब में हिन्दी-विरोध को प्रेरणा देने वाली अँग्रेज़ी समर्थक शक्तियाँ, मैसूर में अमेरिकी आर्थिक सहयोग से और अमेरिका में शिक्षित भाषा-वैज्ञानिकों की सहायता से हिन्दी की बोलियों को स्वतन्त्र भाषाओं का दर्जा दिलाने के लिए प्रयत्नशील हैं। इन शक्तियों ने छत्तीसगढ़ी को प्रेरणा देकर छत्तीसगढ़ का स्वतन्त्र भाषाई राज्य स्थापित करने की योजना संचालित कर दी है। साथ ही भोजपुरी और अवधी को वे स्वतन्त्र भाषाएँ मानकर हिन्दी बोलने वालों की संख्या भी कम बताती है। आज के हिन्दी-सेवकों को अपना उत्तरदायित्व निभाने की आवश्यकता है।

०४.०५. उपसंहार–

राजभाषा-हिन्दी को इस प्रकार आन्तरिक और बाह्य दोनों विरोधों का सामना करना पड़ रहा है। आन्तरिक विरोध केन्द्रीय शासन के अँग्रेज़ी-प्रेमियों द्वारा किया जा रहा है। दूसरे विभिन्न राज्यों में भी निहित स्वार्थी अधिकारियों और हिन्दी-प्रदेश के अकर्मण्य हिन्दी-भाषियों के कारण विविध आन्दोलनों का सामना हिन्दी को करना पड़ रहा है। बाह्य-विरोध, पूँजीवादी और साम्राज्यवादी, अँग्रेज़ी-भाषी पश्चिमी राष्ट्रों के द्वारा किया जा रहा है। ये राष्ट्र भारतीय बुद्धिजीवियों को नौकरी, छात्रवृत्ति और आर्थिक सहायता देकर हिन्दी को राजभाषा पद से अपदस्थ कराना चाहते हैं। भारत का आन्तरिक आंदोलन तो स्वार्थवश है किन्तु विदेशों का आन्दोलन अँग्रेज़ी साम्राज्यवाद की स्थापना के द्वारा बौद्धिक-विजय का है। इस विरोध का सामना विवेकवादी चिन्तन से किया जा सकता है। आज युवा पीढ़ी में अँग्रेज़ी ठीक से नहीं चल रही है। समूचे देश में ८० प्रतिशत छात्र अँग्रेज़ी में अनुत्तीर्ण होते हैं। ये छात्र अँग्रेज़ी-त्यागकर हिन्दी माध्यम से शिक्षा ग्रहण करते हैं। ये ही लोग छोटी शासकीय सेवाओं में प्रशासन के आधारभूत अँग बन जाते हैं। जब इनमें अँग्रेज़ी का अज्ञान और हिन्दी का ज्ञान रहेगा तो २ प्रतिशत अधिकारी वर्ग को अपने स्वार्थों की तिलांजलि देना होगी और अपने अधीन कर्मचारियों की भाषा में कार्य करना होगा। इस प्रकार हिन्दी का विरोध अपने आप शान्त होगा। जहाँ तक प्रादेशिक भाषाओं और हिन्दी के विरोध का प्रश्न है वहाँ हिन्दी-भाषी सात प्रांतों को नेतृत्व करना चाहिए। अँग्रेज़ी तो विदा हो जायेगी किन्तु तमिलनाडु, बंगाल, पंजाब तथा कश्मीर में घुल-मिलकर विचार-विनिमय और सहयोग करना होगा। केन्द्रीय सरकार लोक सेवा आयोग की परीक्षाओं में, राज्यों के साथ पत्र-व्यवहार में और अपने कार्यालयों के राजकाज में हिन्दी का प्रयोग निश्छल रूप से करे तथा सातों हिन्दी-राज्य शिक्षा-दीक्षा, विधि-न्याय और राज-काज विशुद्ध रूप से राजभाषा हिन्दी में ही करें। इससे हिन्दी की बोलियों, प्रादेशिक भाषाओं तथा अँग्रेज़ी से हिन्दी का विरोध समाप्त हो जाएगा।

---

९९. स्वतन्त्रता रजत जयन्ती अभिनन्दन ग्रंथ : गोपालप्रसाद व्यास : पृ. ३१६-३१७.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy: Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

अध्याय--५

राजभाषा की समस्याएँ और समाधान

०५.०० प्रवेशिकी : हिन्दी, अँग्रेज़ी और प्रादेशिक भाषाएँ-

देश में स्वतन्त्रता के पूर्व 'एक भाषा और एक लिपि' की घोषणा की गई थी। १९ वीं शती में 'एक भाषा-आन्दोलन' चला और देश की स्वतन्त्रता में भाषा ने एकता के लिए प्रमुख भूमिका निभाई।[1] स्वतन्त्रता के पूर्व हिन्दी को राष्ट्रभाषा और हिन्दी के माध्यम से प्रशासन करने का संकल्प स्वीकार किया गया था। देश स्वतन्त्र हुआ। संविधान बनाने के लिए राजनेताओं में विचार-विमर्श हुआ। भाषा के प्रश्न पर भी एक लम्बा विवाद हुआ और अंततः संविधान स्वीकार कर लिया गया। उसमें यह व्यवस्था है कि देश की राजभाषा हिन्दी है और प्रशासन इसी भाषा में चलाया जाएगा परन्तु जब तक हिन्दी सक्षम नहीं हो जाती तब तक अँग्रेज़ी सहभाषा के रूप में कार्य करती रहेगी। १५ वर्षों की अवधि बीतने पर अँग्रेज़ी का स्थान, पूर्ण रूप से, हिन्दी ग्रहण कर लेगी। इसी प्रतिबन्ध ने हिन्दी के समक्ष विभिन्न समस्याओं को जन्म दिया। इससे संविधान निर्माताओं ने प्रतिबन्ध लगाकर हिन्दी का अधिकाधिक विकास करने की अपेक्षा अँग्रेज़ी को विभिन्न स्तरों पर प्रमुखता देकर उसका प्रचलन और अधिक कर दिया। जिससे लोग उसकी ओर आकृष्ट हुए। इससे राजभाषा हिन्दी का विकास अवरुद्ध हुआ और समस्याएँ बढ़ने लगीं। इन समस्याओं के प्रमुख कारण आर्थिक हैं। नौकरी की समस्या सबसे प्रमुख है। विभिन्न प्रकार की प्रशासनिक अथवा शासकीय सेवाओं में अँग्रेज़ी का ज्ञान आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य था। अँग्रेज़ी के जानकारों को प्राथमिकता दी जाती थी। इससे लोगों को आर्थिक लाभ हुआ। मानव की सभी समस्याओं में से प्रमुख समस्या हल हो गई। समाज में इस प्रकार की प्रवृत्तियों के कारण दो वर्ग बन गये। एक वर्ग ने समाज में ऊँचे-ऊँचे पदों के कारण प्रतिष्ठा प्राप्त की, वे लोग थे अँग्रेज़ी जानने वाले, अँग्रेज़ी-सभ्यता में रँगे, अंग्रेज़ी रहन-सहन और वेशभूषा वाले लोग। इससे अँग्रेज़ी के प्रति आकर्षण और हिन्दी के प्रति उपेक्षा का भाव गहरा होता गया क्योंकि प्रत्येक मानव सामाजिक प्रतिष्ठा चाहता है। राजनैतिक क्षेत्र में भी संविधान निर्माताओं ने संविधान में द्विभाषा-सूत्र को स्वीकार किया, जिससे अँग्रेज़ी का प्रभाव स्वयं बढ़ गया। हमारे देश में प्रान्तों का विभाजन भाषा के आधार पर किया गया है। अतः प्रादेशिकता की भावनाएँ उभरकर आज जटिल हो गई हैं। जिसके कारण शिक्षण में त्रि-भाषा सूत्र को स्वीकार किया गया। इस प्रकार राजभाषा-हिन्दी के

1. हिन्दी का राष्ट्रभाषा के रूप में विकास : डा. शिवराज वर्मा : दिल्ली १९७० : पृ. १६१

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

सम्मुख समस्याएँ दिन-प्रतिदिन बढ़ती चली गई और उनके अनेक रूप सामने आते रहे। इन विभिन्न समस्याओं का विस्तृत अध्ययन विभिन्न दृष्टिकोणों से प्रस्तुत अध्याय में किया गया है।

०५.०१. राजभाषा की मूलभूत समस्याएँ–

उच्च शैक्षणिक स्तर, विशेष रूप से ज्ञान और अनुसंधानों से सम्पर्क स्थापित करने के लिए, शेष विश्व में होने वाली विज्ञान और विचारों की प्रगति के साथ जीवित सम्पर्क बनाये रखने के लिए तथा अन्तर्राष्ट्रीय सम्पर्कों में एवं कूटनीतिक प्रयोजनों में हिन्दी भाषा के प्रयोग का प्रश्न मूलभूत समस्या है। साथ ही शिक्षा, प्रशासन, देश के प्रतिदिन के सार्वजनिक जीवन और व्यवहार में राजभाषा-हिन्दी के मार्ग में आने वाली कठिनाइयों को दूर करने की प्रणालियों को विकसित करना भी इसकी एक प्रमुख समस्या है। भारत में सहयोगिनी प्रादेशिक भाषाओं से मधुर सम्बन्ध बनाये रखने तथा प्रशासकीय एवं सार्वजनिक क्षेत्र से अँग्रेज़ी को हटाने की समस्या तीसरा पहलू है। भारतीय संविधान संघ और राज्यों की भाषा के विषय में संवैधानिक उपबन्धों के अतिरिक्त, अल्पसंख्यकों के सांस्कृतिक और शैक्षणिक अधिकारों के हेतु उनकी भाषाओं और लिपि के संरक्षण में जो सुविधाएँ प्रदान करता है उनको किस प्रकार कार्यान्वित करना यह चौथी समस्या है। इन मूलभूत समस्याओं को सफलतापूर्वक हल करने के लिये हिन्दी को अपने आप को स्वस्थ, सबल और सुन्दर व्यावहारिक-भाषा बनाना होगा। इस दृष्टि से प्रयोग की हिन्दी कौन-सी और कैसी हो तथा उसके रूप को कहाँ और कैसे प्रयोग में लाया जाय का प्रश्न आधारभूत प्रश्न है। इस रूप में हिन्दी का स्वरूप निर्माण करने की समस्या सबसे बड़ी है। इन पाँचों दृष्टिकोणों से हिन्दी की समस्या का विवेकपूर्ण निराकरण अपेक्षित है। हम हिन्दी के स्वरूप निर्माण की समस्या से ही अपना विवेचन प्रारम्भ करते हैं।

०५.०२. राजभाषा-हिन्दी का स्वरूप कैसा हो ? कौन-सी हिन्दी का व्यवहार करें ?

हिन्दी को समर्थ राजभाषा होने के लिए अपने चारों अँगों को भारतीय परिवेश के अनुसार पुष्ट करना होगा। उसका वाक्य-विज्ञान, पद-विज्ञान, ध्वनि-विज्ञान और अर्थ-विज्ञान भारत की भाषाई आवश्यकता को पूर्ण करने वाला होना चाहिए।

मानव अपने मन के भावों को प्रकट करने के लिये दूसरों के समक्ष बोलता है। जब वह बोलता है तो उसके मुख से ध्वनि उत्पन्न होती है, जिसका निश्चित संकेत और चिन्ह होता है जिसे शब्द कहा जाता है। यह ध्वनि कई प्रकार की होती है। मनोविज्ञान द्वारा ऐसे कई प्रयोग किये गये हैं कि यदि दो जुड़वाँ भाई भी जन्में, तो भी उनके द्वारा बोली जाने वाली ध्वनि में अन्तर होता है। यह आवश्यक नहीं है कि उनके द्वारा बोली जाने वाली ध्वनि भी समान हो। क्योंकि ध्वनि का सम्बन्ध मानव के मुख के साथ-ही-साथ उसकी जीभ, दाँत, ओठ, कंठ, तालू, वर्त्स्य आदि शरीरावयवों की बनावट और प्रयोग पर आधारित होती है।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

ध्वनि और उच्चारण का गहरा सम्बन्ध है। जब मानव अपने मुख से भावों को प्रकट करने के लिए प्रयत्न करता है तो ध्वनि उत्पन्न होती है। यह ध्वनि सार्थक होती है, सप्रयत्न होती है। अतः इसे उच्चारण कहा जाता है। उच्चारण और ध्वनि भिन्न-भिन्न होते हैं। किसी के स्वरयन्त्र से बारीक, किसी से मोटी और किसी के स्वरयन्त्र से भारी ध्वनि निकलती है। इससे उस मनुष्य के उच्चारण पर प्रभाव पड़ेगा। कोई जल्दी बोलना चाहता है। इससे शब्दों के उच्चारण में जो समय लगना चाहिए, उससे कम समय लगता है। परिणाम यह होता है कि वह शब्द या तो आधा उच्चरित होता है या जल्दी के कारण दीर्घ की अपेक्षा ह्रस्व उच्चरित होता है और इसके विपरीत यदि कोई मनुष्य स्वाभाविक रूप से न तो तेज उच्चारण करता है और न धीमा ही, तो ऐसे व्यक्ति के उच्चारण और ध्वनि में पहले वाले व्यक्ति के उच्चारण और ध्वनि से पर्याप्त अन्तर होगा। फलतः उच्चारण की एक समस्या खड़ी होगी।

०५.०३ उच्चारण की समस्या–

भाषा-विज्ञान के अनुसार प्रत्येक शब्द के उच्चारण करने में एक निश्चित समय लगता है जिसे 'काईमोग्राफ' के ट्रेसिंग के द्वारा जाना जाता है, जैसे–'हिन्दी और दक्षिण-भारत की भाषाओं के ह्रस्व और दीर्घ स्वर के उच्चारण में जितना समय लगता है, उससे थोड़ा अधिक समय दक्षिण भारतीयों के उच्चारण में लगता है। 'इ' और 'ई' स्वरों के सम्बन्ध में विचार करें तो यह तथ्य सामने आएगा कि हिन्दी-भाषियों के 'इ' स्वर के उच्चारण में यदि लगभग ०.०८० सेकन्ड लग जाते हैं तो दक्षिण वालों के उच्चारण में लगभग ०.१०० सेकन्ड लग जाते हैं। इसी प्रकार 'ई' स्वर के उच्चारण में हिन्दी-भाषियों को यदि लगभग ०.३५० सेकण्ड लग जाते हैं तो दक्षिण-भारत के भाषा-भाषी को लगभग ०.१८० सेकन्ड लग जाते हैं। यदि इस काल अवधि को ग्राफ (रेखाचित्र) में अँकित किया जाए तो चित्र लगभग इस प्रकार बनेगा'–[२]

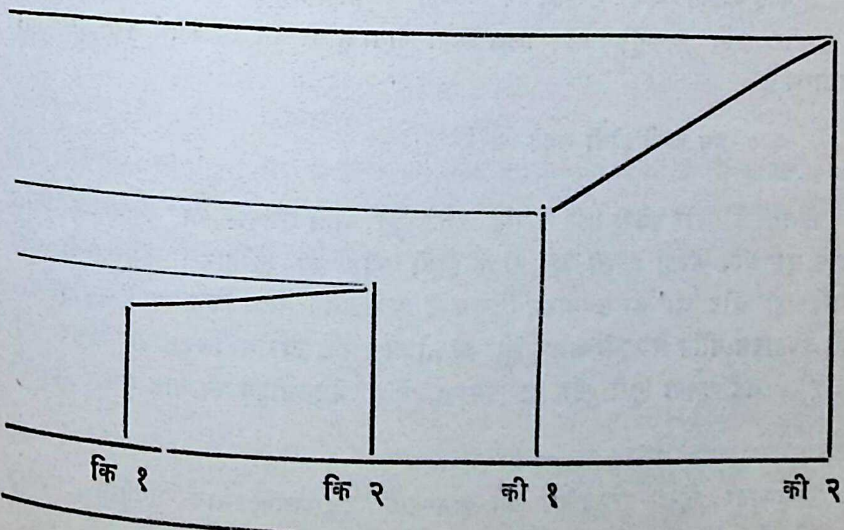

२. 'कि और की : एक वर्णनात्मक विश्लेषण' : नि. रेड्डी : भाषा (त्रैमासिक) : सितम्बर, १९७३, वर्ष १३ : अँक–१, पृ. ५८.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

कि$_1$; की$_1$ = हिन्दी-भाषियों का उच्चारण
कि$_2$, की$_2$ = दक्षिण-भारतीयों के उच्चारण.

इस प्रकार उच्चारण करने में समय के अन्तर के कारण भाषा में उच्चारण की समस्या जन्म लेती है। जिसके कारण अर्थ में अन्तर हो जाता है। सुनने में कम या अधिक आता है। परिणाम यह होता है कि लिपि में भी अशुद्धि आ जाती है। हिन्दी ऐसी भाषा है, जो जैसी बोली जाती है वैसी ही लिखी जाती है, जैसे ज्ञान, अभिज्ञान, विशेषज्ञ, ज्ञातव्य आदि। इन शब्दों के उच्चारण करने में एकरूपता नहीं है। हिन्दी 'ज्ञ' का उच्चारण अनिश्चित है। कोई उसे 'ग्य' कहता है, कोई 'ग्यं', कोई 'ज्य', कोई 'ज्यँ' और कोई 'ज्न' अथवा 'ज्नँ'। यों 'ज्ञ' का 'ज्यां' उच्चारण अधिक प्रचलित है और अपने मूल उच्चारण से भी अधिक दूर नहीं है। ऐसी स्थिति में 'ज्ञान', 'विशेषज्ञ', 'अभिज्ञान,' 'ज्ञातव्य' आदि शब्दों का उच्चारण क्रमशः 'ज्यांन', 'विशेषज्यँ', 'अभिज्यानँ', 'ज्यांतव्य' आदि होगा।' इसी प्रकार यदि 'ज्न्ँ' को 'ज्ञ' के मूल उच्चारण के सर्वाधिक निकट मानकर शुद्ध एवं उच्चस्तरीय उच्चारण मान लिया जाए तो 'ज्ञान', 'विशेषज्ञ', 'अभिज्ञान', 'ज्ञातव्य' आदि का उच्चारण क्रमशः : 'ज्नांन'—'विशेषज्न'— 'अभिज्यानँ'— 'ज्नाँतव्य' आदि होगा।[3]

उच्चारण की अराजकता एवं अनिश्चय के कारण किसी एक उच्चारण को कैसे शुद्ध मानें, यह समस्या है। इसी प्रकार भासा, भाशा (भाषा), शडानन (षडानन), शडयन्त्र, (षडयन्त्र), शट्रस (षटरस), रिशि (ऋषि) इत्यादि का उच्चारण समस्या के मूल में है। यदि कोई भाषा को भासा, क्षेत्र को छेत्र, मालुम को मालूम, विष को विस एवं मित्र को मितर करके बोले तो उसकी गणना अनपढ़ आदमियों में ही करना चाहिए।[4]

ध्वनि और उच्चारण की भिन्नता के कारण वाक्यों के अर्थ में भी परिवर्तन हो जाता है। कोई व्यक्ति यदि रुक-रुककर बोलता है या बोलने में अनावश्यक विलम्ब करता है और उसी के अनुरूप यदि लिख लिया जाता है तो अर्थ का अनर्थ तक हो जाता है। उदाहरण है–

'हम होली होली कहते फिरेंगे'

पहला 'हो' और दूसरा 'ली'। यदि वक्ता इन दोनों अक्षरों का उच्चारण विना विराम के एक साथ करता है तो अर्थ होगा 'होली' नाम का त्योहार। जैसे–होली बीत गई। यदि–'हो' और 'ली' का उच्चारण विराम के साथ अलग-अलग किया जाए अर्थात् 'हो', 'ली' की उच्चारण नीति में पहले अक्षर 'हो' को बोलकर कुछ विराम लिया जाए फिर 'ली' बोला जाए तो अर्थ होगा 'पूरी हुई' या 'समाप्त हुई'। जैसे–मोहन की बात मुझसे हो ली।

---

३. 'राष्ट्रभाषा हिन्दी उच्चारण की समस्याएँ' : लालताप्रसाद सक्सेना : भाषा (त्रैमासिक) : जून १९७२ : वर्ष–११, अंक–४, पृ. १८८-१८९.

४. शुद्ध–हिन्दी : डॉ. हरदेव बाहरी, पृ. १

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

(१) त्योहार-अर्थसूचक लेखन—'हम होली होली कहते फिरेंगे।' (२) पूरी हुई-अर्थसूचक लेखन—'हम हो ली हो ली कहते फिरेंगे।[५]

हिन्दी की व्याकरणिक समस्याओं पर जबलपुर विश्वविद्यालय में अखिल-भारतीय हिन्दी-व्याकरण-संगोष्ठी और पूना विश्वविद्यालय में व्याकरण-संगोष्ठी हुई। जबलपुर में हिन्दी के विकास की चर्चा करते हुए डॉ॰ बाबूराम सक्सेना ने हिन्दी-भाषा के सन्दर्भ में उच्चारण के अनुरूप लेखन की समस्याओं की विवेचना की। 'ऋ' एवं 'ष' वर्णों का उच्चारण नहीं होता है। इस कारण यदि विद्यार्थी इनको उच्चारण के अनुरूप 'रि' एवं 'श' लिखता है तो इनको स्वीकार कर लेना चाहिए। इसी प्रकार 'ण' एवं 'न' के वैकल्पिक प्रयोगों को छूट दी जानी चाहिए। हिन्दी के अक्षर-विन्यास में किस प्रकार परिवर्तन हुआ है, इसकी उन्होंने मीमांसा की। ढाई हजार वर्षों से विसर्ग का उच्चारण लुप्त हो गया था किन्तु हम लिखते चले आ रहे हैं।[६] इस प्रकार पूना विश्वविद्यालय की संगोष्ठी में हिन्दी-व्याकरण की समस्याओं पर विचार-विमर्श इस संगोष्ठी की विशेषता थी। भाषा-प्रवृत्ति, हिन्दी वर्णमाला, प्रयोग एवं वाच्य-संकल्पना, वर्तन और पदबन्ध, अनुनासिक का चिह्न, चन्द्रबिन्दु, वचन तथा लिंग आदि विषयों पर बारह निबन्ध पढ़े गये और उनके विभिन्न पक्षों पर विचार-विमर्श किया गया।[७]

०५.०४. व्याकरण की समस्या—

हिन्दी-भाषा को संस्कृत की उत्तराधिकारिणी माना जाता है। संस्कृत से ही हिन्दी निकली है। इसलिये हिन्दी पर संस्कृत का पूरा प्रभाव है। व्याकरण के सन्दर्भ में जब हम हिन्दी पर विचार करते हैं तो ऐसा लगता है कि हिन्दी ने संस्कृत के व्याकरण को पूरी तरह से कुछ परिवर्तनों के साथ अपनाया है। संस्कृत-भाषा बहुत अधिक समृद्ध थी। उसका व्याकरण भी इतना जटिल था कि उसमें दोष खोजना कठिन है। हिन्दी, व्याकरण के क्षेत्र में संस्कृत के प्रभाव से मुक्त नहीं है। अतः व्याकरणिक समस्याओं ने जन्म लिया है।

(अ) कारक और विभक्ति —

हिन्दी-भाषा में कारक और विभक्ति का संस्कृत-भाषा से अन्धा अनुकरण नहीं किया है अपितु उसमें वृद्धि की है। संस्कृत में छः कारक हैं और सात विभक्तियाँ जबकि हिन्दी में कारक और विभक्ति मिलाकर आठ हैं, जो इस प्रकार हैं[८] —

---

५ 'हिन्दी-भाषा में व्याकरणिक श्लेष की समस्या और समाधान' : डॉ. अम्बाप्रसाद सुमन : भाषा (त्रैमासिक) : मार्च-जून, १९७५, वर्ष—१४, अँक—३—४, पृ. ५१.

६. 'व्याकरण संगोष्ठी' समीक्षा-सन्दर्भ (पत्रिका) : मार्च १९७३, वर्ष—१, अँक ३, पृ. ७.

७. वही वही वही, पृ. ९

८. 'हिन्दी की सरलता' राष्ट्रभाषा हिन्दी : समस्याएँ और समाधान : डॉ॰ देवेन्द्रनाथ शर्मा, पृ. २७, संस्करण १९६५

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

कारक	विभक्ति
१. कर्ता	× (ने)
२. कर्म	को
३. करण	से, के द्वारा, के साथ
४. सम्प्रदान	को, के, लिए
५. अपादान	से
६. सम्बन्ध	का, रा.
७: अधिकरण	में; पर
८. सम्बोधन	हे, अरे, ओ

संस्कृत में कारक अलग होने से प्रत्येक कारक या प्रत्यय अपने आपमें और अपने स्थान पर सार्थक सिद्ध होता था परन्तु हिन्दी में ऐसा नहीं है। हिन्दी-भाषा के शब्दों अथवा पर-प्रत्ययों में अन्तर न आने पर भी वाक्य में प्रयुक्त कारक भिन्न हो जाता है। द्वितीया तथा चतुर्थी का विभक्ति-चिन्ह है 'को' और तृतीया तथा पँचमी का विभक्ति-चिन्ह है 'से'। वाक्य में 'को' और 'से' तथा संज्ञा आदि शब्द यथा-स्थिति रहते हैं लेकिन कारक बदल जाते हैं, जैसे —

राम को पढ़ाया है	—	चतुर्थी
राम को बुलाया है	—	द्वितीया
मेरे अपने हाथ से किया गया है	—	तृतीया
मेरे अपने हाथ से छूट गिरा है	—	पँचमी

इन सभी वाक्यों में संज्ञादि शब्दों एवं विभक्ति प्रत्ययों की स्थिति एक-सी रहने पर भी कारक बदल गए हैं। कारण ? इसका कारण हम बताने में असमर्थ हैं क्योंकि यह सब हमने सँस्कृत के आधार पर किया है। संस्कृत में तो वाक्य कहने के पूर्व विचार कर लिया जाता है कि अमुक वाक्य, अमुक कारक के अन्तर्गत आएगा परन्तु हिन्दी में ऐसा नहीं होता। हिन्दी में वाक्य पहले कह लेते हैं और कारकों का निर्धारण उसके उपरान्त किया जाता है। संस्कृत में 'पत्' धातु है। यदि हम वृक्ष से पत्ते गिरते हैं, कहते हैं तो संस्कृत के अनुसार पत्तों के गिरने पर 'वृक्षात्' होगा और यदि पत्ते पेड़ पर ही हैं, गिरे नहीं तो 'वृक्षेण' होगा परन्तु हिन्दी में दोनों ही स्थितियों में 'वृक्ष', 'वृक्ष' ही रहेगा और प्रत्यय 'से'। संस्कृत में तो विभक्ति और कारक की कोई समस्या नहीं है परन्तु हिन्दी में इस प्रकार की स्थितियों के लिये एक निश्चितता नहीं होने से कभी-कभी व्याकरणिक भूल होने की स्थिति पर्याप्त रूप से बनी रहती है। इसी प्रकार (के), द्वारा (के), लिए (के), साथ अव्ययों के पूर्व षष्ठी विभक्ति का योग होने पर भी कहीं हम उन्हें तृतीया में, कहीं चतुर्थी में, तो कहीं सप्तमी आदि में मानते हैं और इसका आधार संस्कृत कारक-सम्बन्धी नियम हैं। उदाहरण के लिए बाहर, नीचे, आगे, पीछे, इधर, उधर आदि अव्यय पदों के पूर्व 'के' प्रत्यय जुड़ने पर उन्हें 'षष्ठी' में ले लिया गया है। देखा जाए तो 'द्वारा', 'साथ',

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

'ऊपर' आदि अव्यय भी इसी कोटि में आते हैं फिर उन्हें विशिष्ट पद प्रदान करने का कोई तर्क समझ में नहीं आता।[९]

परम्परावादी व्याकरणों में कर्ता-कारक का चिन्ह 'ने' माना जाता है किन्तु यहाँ छोड़ दिया गया है, उसका कारण है, हिन्दी में 'ने' के प्रयोग की समस्या बनी हुई है। अहिन्दी-भाषियों का सबसे बड़ा आरोप यही 'ने' का प्रयोग है। किन्तु यदि अध्येता एक नियम याद रखे कि 'ने' का प्रयोग सकर्मक क्रिया के भूतकालिक कृदन्त में ही होता है तो सारी समस्या का निराकरण हो जाता है।

सम्बन्ध कारक का चिन्ह यहाँ संज्ञाओं के लिये केवल एक 'का' माना गया है जबकि आज तक सभी व्याकरणों में 'का', 'के', 'की', के तीन विभक्तचिन्ह माने जाते रहे हैं। मेरी मान्यता है कि 'के', 'का', का बहुवचन है 'ओ', 'की' उसका स्त्रीलिंग। अतः प्रयत्नलाघव के लिये विकारी परसर्गों को मूल विभक्ति न माना जाय। सर्वनामों के लिये मान्य चिन्ह 'रा' है जिसका बहुवचन 'रे' और स्त्री-लिंग 'री' होता है।

सम्बोधन में 'ओ' पूर्वसर्ग मानकर प्रस्तुत शोध में एक नवीन दृष्टिकोण रखने की चेष्टा मैंने की है। प्राचीन व्याकरणों में इसके स्थान पर 'हो' सम्बोधन चिन्ह माना जाता था किन्तु आज की राजभाषा में इसका प्रयोग नहीं मिलता। अतः ओ' पूर्वसर्ग यहाँ संस्तुत है। सम्भव है मेरा यह परिवर्तनवादी दृष्टिकोण विचारकों के लिये समस्या बन जाय।

(ब) सन्धि-नियमों में अस्पष्टता—

कारकों और विभक्तियों के समान हिन्दी में सन्धि-नियम भी अधिक स्पष्ट नहीं हैं। नियम वही होते हैं, जो सर्वत्र और सभी स्थितियों में समान रूप से लागू हों। यदि ऐसा नहीं होता है तो उसके कारण होते हैं या कुछ अपवाद होते हैं जो नियमों की परिस्थितियों से परे होते हैं। ऐसा होने पर उनका भी स्पष्ट उल्लेख होता है। हिन्दी में संस्कृत के परम्परागत तत्सम् शब्दों के लिये ही सन्धि-नियम लागू होते हैं।[१०] ये सन्धि-नियम कई स्थानों पर अपना स्पष्टीकरण देने की अपेक्षा मौन रहते हैं! परिणाम यह होता है कि सन्धि के क्षेत्र में अस्पष्टता रहती है। इस अस्पष्टता को हिन्दी-भाषी लोग तो समझकर अपना काम चला ही लेते हैं परन्तु अहिन्दी-भाषी लोग हिन्दी-व्याकरण में सन्धि सीखते हैं तो उनकी शंकाओं का समाधान करना जटिल होता है। 'हिन्दी-शब्दानुशासन' (पृ. १११) में लिखा है कि 'जिलाधीश' तो बन जाएगा, किन्तु 'मकानाधीश', 'जिलेश' नहीं बनेगा। अच्छी ऊहा है। क्यों नहीं बनेगा? इस पर विचार नहीं चलाया गया। यदि हिन्दी में भी

---

९. 'हिन्दी-कारकों में संशोधन की आवश्यकता' : किरण बजाज : भाषा (त्रैमासिक) जून, १९७१ : वर्ष–१०, अंक–४, पृ. ११५

१०. हिन्दी की सन्धि–व्यवस्था : ज्ञानशंकर पाण्डेय : भाषा, (त्रैमासिक) जून, १९७२ वर्ष–११, अंक–४, पृष्ठ ३०.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

संस्कृति की भाँति सन्धि-नियम हैं तो 'सुअवसर', 'आइए', 'आऊँगा' आदि में क्यों नहीं लागू होते ?'[११]

सन्धि होने पर प्रायः समस्त पद बनते हैं—वाक्य के शब्दों को सन्धि से जोड़ने की प्रथा जो संस्कृत और द्राविड़-भाषाओं में है, हिन्दी में नहीं है। हिन्दी के समस्त पदों में यदि सन्धि करना हो तो हमें मात्र शब्दों के रूप से ही कार्य नहीं चलाना होता है बल्कि शब्दों के स्रोतों का भी विचार करना पड़ता है। 'सूर्यादि', 'पुस्तकादि', 'भवनादि' इत्यादि तो मान्य हो सकते हैं पर 'सूरजादि', 'किताबादि', 'धरादि' इत्यादि मान्य नहीं हैं। 'मासारम्भ' और 'वर्षांत' तो साधारण हैं पर 'महीनारम्भ' और 'सालान्त' नहीं।'[१२]

(स) समासों का मनमाना प्रयोग—

हिन्दी-भाषा में जब हम समास का अध्ययन करते हैं तो जिन दो पदों से मिलकर समास की सामासिकता का अर्थ निकलता है उन पदों की रचना के मूल रूपों के अध्ययन की भी आवश्यकता होती है। उसके बिना समास का अध्ययन नहीं किया जा सकता। हिन्दी में कई पद ऐसे हैं जो अरबी-फ़ारसी के शब्दों से मिलकर बने हैं परन्तु ये शब्द प्रचलन में आ गये हैं, इसलिए चल रहे हैं। यदि हम चाहें कि ऐसे शब्द बना लें तो इस विषय में व्याकरण में विधान नहीं है और ये रूप मान्य भी नहीं होते हैं। हाथ-पैर, तार-घर, इत्यादि शब्द तो प्रचलित हैं परन्तु भिन्न स्तरों का समास प्रायः पूर्णतः वर्ज्य है, जैसे[१३]–

मान्य	अमान्य
हस्तक्षेप	हाथ-क्षेप
पाद-टिप्पणी	पैर-टिप्पण
बाल-भवन, शिशु-भवन	बच्चा-भवन
वस्त्र-विक्रेता	कपड़ा-विक्रेता
अर्चना-पुष्प	अर्चना-फूल
स्वतन्त्रता-दिवस	आज़ादी-दिवस

परन्तु हिन्दी-भाषा के आधुनिक उपन्यासकारों और कहानीकारों ने इस प्रकार के प्रयोग भी किए हैं, जैसे–

---

११. 'हिन्दी व्याकरणों में ऊहा का अभाव' : निगमानन्द परमहंस, भाषा (त्रैमासिक) : जून, १९७१, वर्ष १० : अँक ४, पृ. ९४।

१२. 'हिन्दी में सन्धि और व्युत्पादन की समस्या' : एस. एन. गणेशन, भाषा (त्रैमासिक) मार्च, १९७२, वर्ष ११, अँक ३, पृ. ६०।

१३. वही वही पृ. ६१

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

निर्माणकाम[१४], व्याहकारज[१५], हैरानी-जनक[१६], जेवरादि[१७], आदि।

(द) **योजक-चिन्हों के प्रयोग के प्रति उपेक्षा:-**

भाषा के लिखित स्वरूप को ठीक-ठीक अर्थ ग्रहण करने के लिये कुछ लिपि-संकेतों का प्रयोग किया जाता है। इनमें योजक-चिन्ह (-) कहते हैं। इन चिन्हों का ध्वनि-व्यवस्था में अत्यधिक महत्व है। एक ही ध्वनि के विभिन्न रूपों को पृथक-पृथक चि-ह लगाकर ही व्यक्त किया जाता है। वस्तुत: लिखित-भाषा में इन चिन्हों के द्वारा ही भाषा के पढ़े जाने वाले या बोले जाने वाले रूप का निर्देश किया जाता है। यदि लिखित भाषा में इनके प्रयोग की उपेक्षा की जाए तो बोली जाने वाली भाषा विकृत हो जाएगी, जैसे-[१८]योजक-चिन्ह—

१. वे अब मिल-जुल चुके थे (मिल-जुलकर चले थे)।
वे अब मिल-जुल-चले थे (हेलमेल हो गया था)।

२. मुझे वह कर, देना-पड़ा (मुझे वह टैक्स देना पड़ा)।
मुझे वह कर-देना पड़ा (मुझे वह विवशता में करना पड़ा)।

इनके अतिरिक्त भी हिन्दी व्याकरण की कई समस्याएँ हैं, कई समस्याओं के विषय में निगमानन्द परमहंस ने भाषा पत्रिका के एक लेख में लिखा है-किसी भी हिन्दी व्याकरण में निम्नलिखित बातों का उत्तर नहीं मिलता[१९]—

(१) कह, बोल, धातु सकर्मक हैं जैसे-'राम ने कहा' बनता है वैसे 'राम ने बोला' क्यों नहीं बनता? 'राम बोला' क्यों बनता है?

(२) 'पौने पाँच बजे' बनता है वैसे 'सवे सात बजे' क्यों नहीं बनता? 'सवा सात बजे' क्यों बनता है।

(३) 'दिखाई पड़ता है', 'सुनाई पड़ता है' बनता है, वैसे दूसरी धातुओं के रूप क्यों नहीं बनते?

(४) मर, धर, हर आदि धातुओं के भूतकाल में भरा, धरा, हरा आदि रूप बनते हैं वैसे 'कर' धातु का 'करा' क्यों नहीं बनता? 'किया' क्यों बनता है?

(५) १०१ वाँ-एक सौ एकवाँ, ठीक है?

---

१४. 'अमृत और विष' : अमृतलाल नागर : प्रथम संस्करण : १७ अगस्त, १९६६, पृष्ठ ६०३.

१५. वही, वही, वही, पृष्ठ ६६९

१६. 'एक पति के नोट्स' : महेन्द्र भल्ला, पृष्ठ ३४.

१७. वातायन, अक्टूबर, १९६५, पृष्ठ ६९.

१८. 'हिन्दी की संयुक्त क्रियाएँ' : कन्हैयालाल शर्मा, भाषा (त्रैमासिक) : सितम्बर, १९७३; वर्ष १३ : अंक १, पृष्ठ १४.

१९. हिन्दी व्याकरणों में ऊहा का अभाव : निगमानन्द परमहंस : भाषा, जून, १९७१, वर्ष १०, अंक ४, पृ. ९४-९६।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

(६) 'दो सौ दो वाँ (२०२ वाँ)' होगा या 'दो सौ दूसरा' ? यदि 'दो सौ दो वाँ' होगा तो पूर्णार्थक 'रा' प्रत्यय क्यों नहीं होता ?

(७) पटने का निवासी' होता है वैसे 'उड़ीसे का निवासी' क्यों नहीं होता ?

हिन्दी व्याकरण में अनुस्वार, अनुनासिक्य, नासिक्य, रैफ इत्यादि की समस्या का समाधान, भी उलझनपूर्ण है, जो हिन्दी में समस्या ही है। संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया और क्रिया-विशेषण के प्रयोगों में हिन्दी-भाषियों द्वारा अनन्त अशुद्धियाँ की जाती हैं।[२०] उनके प्रयोगों में समरूपता न होने से हिन्दी को प्रशासनिक अस्पष्टता का सामना करना पड़ता है। हिन्दी व्याकरण के मानक ग्रंथ का अभाव आज हिन्दी की समस्या बनी हुई है।

०५.०५. वैज्ञानिक एवं पारिभाषिक शब्दावली में एकरूपता का अभाव-

ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में पारिभाषिक शब्दों का बड़ा महत्व होता है और पारिभाषिक शब्द सामान्य प्रयोक्ता के लिए नहीं होता। वह तो विशेषज्ञ या शिशिक्षु के लिए होता है।[२१] पारिभाषिक शब्द, सामान्य-साहित्य और व्यावहारिक भाषा से भिन्न होता है। उसे व्याख्या करके समझाना पड़ता है। प्रत्येक पारिभाषिक शब्द का स्रष्टा या नवप्रयोक्ता अपने पूर्वज से आगे आकर बातें कहता है। तभी तो शब्दशक्ति प्रकाशिका में पारिभाषिक शब्द को 'तत्राधुनिक संकेत शालिस्यात् पारिभाषिकम्' बताया गया है।[२२] पारिभाषिक शब्दावली की आवश्यकता को सन् १८३४ में अनुभव किया गया। उस समय पहला काम उर्दू और हिन्दी को लेकर हुआ जिसका केन्द्र ओल्ड डेल्ही कॉलेज' में ही था। मि. वेट्स जो दिल्ली कॉलेज के प्रिंसिपल थे, उस कार्य के सचिव थे[२३]

इस शब्दावली के विषय में सन् १८७४ में बंगाल के प्रसिद्ध शिक्षाविद् राजा राजेन्द्रलाल मित्र ने भी अपने विचार व्यक्त किये।[२४] २० वीं शताब्दी में नागरी-प्रचारिणी-सभा, काशी, बड़ौदा के प्रो. गज्जर, शास्त्रीय परिभाषा कोश-मण्डल, पूना, अंजुमन तरक्की-ए-उर्दू, वंगीय-साहित्य-परिषद्, उस्मानिया यूनिवर्सिटी, हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग, विज्ञान-परिषद् इलाहाबाद, राहुल सांकृत्यायन, डॉ. रघुवीर, सुखसंपतराय भण्डारी आदि विद्वानों और सँस्थाओं ने भिन्न-भिन्न प्रकार की शब्दावलियों का निर्माण किया। सन् १९४७ के उपरान्त राज्य सरकारें भी इस कार्य को करने लगीं, अधिक कार्य होने के कारण

---

२०. 'शुद्ध-हिन्दी' : डा. हरदेव वाहरी, संस्करण-१९७१, पृ. ९१-१८३

२१. 'आधुनिक युग और हिन्दी : डॉ. गोपाल शर्मा : आवश्यकताएँ और उपलब्धियाँ-प्रतिवेदन, विश्व-हिन्दी-सम्मेलन, नागपुर (भारत) : जनवरी, १९७५; पृष्ठ १३०.

२२. वही वही पृ. १२८

२३. 'पारिभाषिक शब्दावली के २५ वर्ष' : डॉ. गोपाल शर्मा : स्वतन्त्रता रजत जयन्ती अभिनन्दन ग्रंथ : प्रथम सँस्करण, १९ जुलाई, १९७३ ई., पृष्ठ ७४.

२४. वही वही पृ. ७३

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

एक ही शब्द के अनेक रूप प्रचलित हुए। प्रत्येक व्यक्ति और संस्थाओं द्वारा निर्मित पारिभाषिक शब्दों में विभिन्नता थी। इसलिए एक नई समस्या उत्पन्न हो गई। सन् १९५० में भारत सरकार के शिक्षा-मन्त्रालय ने पारिभाषिक शब्दावली की जाँच करने और समन्वय करने का निश्चय किया। तदनुसार १९५० में एक वैज्ञानिक और तकनीकी शब्दावली मण्डल की स्थापना की गई। इसके अध्यक्ष भारत सरकार के शिक्षा सलाहकार थे।[२५] इस प्रकार की समस्या केवल हमारे देश में हुई ऐसा नहीं है। यूरोप में भी यही समस्या उत्पन्न हुई थी। पिछली दो सदियों में यूरोप तथा अन्य पाश्चात्य देशों में विभिन्न प्रकार के वैज्ञानिक विषयों की अत्यधिक उन्नति हुई है। नवीन वैज्ञानिक विषयों, शोधों, अध्ययनों तथा तद्विषयक प्रसार एवं विचार–विनिमय का माध्यम प्रधानतया वे यूरोपीय भाषाएँ रही हैं जिनका मुख्य स्रोत लेटिन अथवा यूनानी भाषाएँ हैं तथा उनके आधार पर एक अन्तर्राष्ट्रीय पारिभाषिक शब्दावली का निर्माण हुआ है। ऐसा होते हुए भी यह अन्तर्राष्ट्रीय पारिभाषिक शब्दावली सब उन्नत यूरोपीय भाषाओं में एक समान प्रयुक्त नहीं हुई है। विद्वानों का अनुमान है कि आधुनिक ज्ञान–विज्ञान प्रायः ६०० शाखाओं में विभक्त है तथा उनमें प्रयुक्त शब्दों की संख्या लगभग बीस लाख है।[२६] शिक्षा–मन्त्रालय ने शब्दावली निश्चित करने और नई शब्दावली बनाने का कार्य अपने हाथ में लिया। सन् १९५०-५१ में मन्त्रालय के हिन्दी प्रभाग में एक हिन्दी एकक खोला गया जिसमें विशेष अधिकारी और अनुसन्धान अधिकारी रखे गये। अनुसन्धान-सहायक विशेषज्ञ-समितियों की बैठकों के लिए विचारणीय सामग्री तैयार करते थे और उस सामग्री को विशेषज्ञ समिति में चर्चा के लिये रखने के पहले विशेषाधिकारी उसकी जांच करते थे। उसके उपरान्त इन समितियों द्वारा स्वीकृत शब्द पारिभाषिक शब्दों की अन्तिम सूचियों के रूप में प्रकाशित किये जाते थे और देश भर के विद्वानों तथा सँस्थाओं के पास सुझाव और सम्मतियों के लिए भेजे जाते थे। सन् १९६० में शिक्षा-मन्त्रालय ने केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय की स्थापना की। इसने सम्पूर्ण तकनीकी कार्य अपने हाथ में लिया। इसने दो वर्ष के भीतर स्नातक स्तर के विषयों के लगभग डेढ़ लाख शब्दों का 'समेकित संग्रह' १९६२ में प्रकाशित किया।[२७] प्रारम्भ में नीति-निर्देशन के लिए वैज्ञानिक और तकनीकी-शब्दावली-आयोग की नियुक्ति के

---

२५. 'पारिभाषिक शब्दावली के २५ वर्ष : डॉ. गोपाल शर्मा : स्वतन्त्रता रजत जयन्ती अभिनन्दन ग्रन्थ : प्रथम संस्करण : १९७३, पृ. ८०। बोर्ड के निम्नलिखित सदस्य थे—डॉ. एस. एस. भटनागर, डॉ. डी. एस. कोठारी, डॉ. बेनीप्रसाद, डॉ. के. एल. बहल, डॉ. जे. सी. घोष, प्रो. एम. मुजीब, डॉ. के. मित्रा, डॉ. सी. आर. रेड्डी, डॉ. सुनीति कुमार चटर्जी, आचार्य नरेन्द्रदेव, काका कालेलकर, डॉ. जाफर अली खाँ 'असर', डॉ. यदुवन्शी।

२६. 'पारिभाषिक शब्दावली की समस्याएँ (लेख), राष्ट्रभाषा हिन्दी : समस्याएँ और समाधान : डॉ. देवेन्द्रनाथ शर्मा : १९६५, पृ. ५७।

२७. आधुनिक-युग और हिन्दी : ब्रजकिशोर शर्मा : विश्व हिन्दी सम्मेलन (नागपुर) भारत : प्रतिवेदन १९७५, पृ. १३३।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

साथ-साथ आयोग के लिए एक केन्द्रीय परामर्श बोर्ड भी नियुक्त किया गया। इसने ३ लाख, १५ हजार पारिभाषिक शब्द निर्माण किये तथा १९७० से शब्दावली में आपसी तालमेल बैठाना प्रारम्भ किया।

आज वैज्ञानिक और तकनीकी-शब्दावली-आयोग और निदेशालय ने पाँच खण्डों में हिन्दी की वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली का प्रकाशन कर दिया है। इतना सब कुछ होते हुए भी देश की विशालता और जनसंख्या को देखते हुए लगता है कि हिन्दी-भाषा में अभी भी वैज्ञानिक एवं पारिभाषिक शब्दावलियों का अभाव है। इसका एक कारण यह भी है कि हम अपनी हिन्दी कि तुलना विश्व की समृद्धतम भाषाओं से करते हैं जिनका इतिहास और परम्पराएँ एक लम्बे समय से रहीं है। हमारे देश को स्वतन्त्र हुए अभी ३० वर्ष ही हुए हैं; इस प्रकार के कार्य को करते हुए इसलिए हमें तकनीकी, पारिभाषिक एवं वैज्ञानिक शब्दावली का अभाव प्रतीत होता है।

प्रशासकीय और निजी क्षेत्रों द्वारा लोकप्रिय शैली में प्रकाशित तकनीकी ग्रन्थों के प्रसार एवं प्रचार की आज आवश्यकता है। साथ ही विभिन्न क्षेत्रों द्वारा तैयार किये गये पारिभाषिक व वैज्ञानिक शब्दों के व्यावहारिक परीक्षण की भी आवश्यकता है। बाल-साहित्य के प्रकाशन और हिन्दी के सामान्य पाठक को अद्यतन ज्ञान से परिचित रखने की समस्या भी आज बनी हुई है। नव-निर्मित वैज्ञानिक पदावली के निन्दक अँग्रेज़ी के मोह से ग्रस्त उस प्रभावशाली, सुविधाभोगी वर्ग से मुक्ति की समस्या भी अपने आप में जटिल है, जो उपलब्ध साहित्य के व्यावहारिक प्रयोग करने देने में बाधक बना हुआ है। ये लोग प्रशासनिक सेवाओं के कर्णधार हैं। इनका कहना है कि पहले पूरी हिन्दी-शब्दावली तैयार कर ली जाय तब अँग्रेज़ी के स्थान पर हिन्दी लाई जाय। इनकी यह युक्ति अँग्रेज़ी को निरन्तर चालू रखने की योजना का एक अँग है। इनका यह कहना वैसा ही है कि 'आप पहले तैरना सीखिए, फिर पानी में उतरिए। 'क्या पानी में उतरे बिना तैरना सीखा जा सकता है? उसी प्रकार क्या प्रयोग के बिना निर्मित पदावली का परीक्षण हो सकता है? उच्च प्रशासकीय सेवाओं की यही मनोवृत्ति अब वैज्ञानिक व तकनीकी पदावली के अभाव की मूल समस्या है।[२८] इसी वर्ग के संकेत पर केन्द्र एवं राज्यों में ऐसी शब्दावली निर्मित हुई जो विभिन्नता लिए हुए है। यह विभिन्नता भाषायी अस्थिरता व्यक्त करने के लिए जानबूझकर थोपी गई है। संचालक, निर्देशक और निदेशक जैसे शब्दों में से किसी एक शब्द का प्रयोग स्थिर कर दिया जाना चाहिए किन्तु केन्द्र, राज्य, विश्वविद्यालयों और साहित्य-सर्जकों में शब्दों की अराजकता विद्यमान है। अतः समन्वय एकरूपता की अपेक्षा रखता है।

०५. ०६. प्रामाणिक कोशों का अभाव :–

भारतीय साहित्य में कोशों की परम्परा प्राचीन और सुव्यवस्थित है। भारतीय भाषाओं में संस्कृत सबसे प्राचीन है। संस्कृत भाषा को प्रारम्भ में सुनकर याद रखा जाता था

---

२८. राष्ट्रभाषा हिन्दी : समस्याएँ और समाधान : डॉ. देवेन्द्रनाथ शर्मा, पृष्ठ ६८.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

क्योंकि छापखानों का आविष्कार नहीं हुआ था। ऐसा साहित्य श्रुति और स्मृति के नाम से जाना जाता है। इस प्रकार प्राचीन ज्ञान सुरक्षित रखने की परिपाटी थी। आगे चलकर वेद लिखे गये। इन वेदों में मण्डल हैं। ये मण्डल ज्ञान के संकलन हैं। कोशों के अर्थ में है क्योंकि इनका परिचय साधारण लोगों को नहीं हो सकता। अपरिचित का परिचय देने की इस परिपाटी के कारण ही एक ऐसा ग्रंथ बन गया जिसे आज 'अँग्रेजी-भाषी' एनसाइक्लोपीडिया नाम से जानते हैं। एनसाइक्लोपीडिया का मूल ग्रीक भाषा में 'एंकिक्लिअस' (मंडलाकार) और 'पिदिया' (ज्ञान) है। इस दृष्टि से एनसाइक्लोपीडिया अक्षरश: हिन्दी रूपान्तर 'ज्ञान-मण्डल' होगा जिसे एक उड़िया के एनसाइक्लोपीडिया ने ग्रहण भी कर लिया है।[२९] संस्कृत की उत्तराधिकारिणी हिन्दी है इसलिए पूर्वजों से प्राप्त लम्बी परम्परा तो इसके पास है।

भाषा के प्रामाणिक प्रयोगों के लिए ज्ञानात्मक अथवा सन्दर्भ-साहित्य में कोश का बहुत महत्वपूर्ण स्थान है। किसी भी भाषा के व्यापक, श्री सम्पन्न और बहुप्रचलन में आ जाने के बाद, उसमें शब्दों के प्रयोगों में पर्यायवाची शब्दों का प्रयोग बहुत होने लगता है। इस दशा में मन के किस भाव, परिस्थिति और वातावरण के अनुकूलता के दृष्टिकोण से वाक्यों की भावाभिव्यक्ति में किस आशय के लिए कौन-सा शब्द बिलकुल ठीक प्रयुक्त हुआ है। इसका सही परीक्षण कोशों की सहायता से ही सम्भव हो सकता है क्योंकि कोशों में शब्दों, सभी रूपों तथा अँगों (प्रविष्टिक्रम, उच्चारण, व्युत्पत्ति, अर्थ–निर्धारण, अर्थ-क्रम, उदाहरण, चित्र आदि) का सुव्यवस्थित विवेचन होता है।[३०] इससे अध्येत को आसानी से अपनी समस्या का समाधान मिल जाता है। उसे विभिन्न पुस्तकों के लिए इधर-उधर भटकना नहीं पड़ता है।

हिन्दी में कोशों की परम्परा का सूत्रपात बहुत पहले से हो चुका था। स्वतन्त्रता के पूर्व हिन्दी में १०० से अधिक कोशों की रचना हो चुकी थी।[३१] ये कोश विश्वकोश, पारिभाषिककोश, पर्यायकोश, लोकोक्तिकोश, भाषाकोश, हिन्दीकोश इत्यादि के नाम से मुख्य रूप से लिखे गये थे। हिन्दी कोशों के पूर्व भी हिन्दी की जननी संस्कृत के कोशों की एक लम्बी परम्परा रही है जिससे हिन्दी पल्लवित हुई है। जिनमें 'अमरकोश' बहुत प्रसिद्ध है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् राजभाषा के विभिन्न दृष्टिकोणों से कोशों की बहुत कमी अवश्य प्रारम्भ में अनुभव हुई। हिन्दी में कोशविज्ञान पर डॉ. भोलानाथ तिवारी की

---

२९. मानव सभ्यता में विश्वकोशों की परम्परा : प्रभाकर द्विवेदी, भाषा (त्रैमासिक) : जून, १९६२, पृ. ३७.

३०. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी-कोश-साहित्य : (लेख) : डॉ. शशि प्रभा : स्वतन्त्रता रजत जयंती अभिनन्दन ग्रंथ : १९७३, पृ. ६४९.

३१. हिन्दी-कोश-साहित्य (१५००–१८००) : डॉ. अचलानन्द जखमोला, १९६१ एवं हिन्दी-कोश-साहित्य का विकास (१७६५–१९६३) : डॉ बंशीधर पण्डा, १९६३.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

भाषा-विज्ञान पुस्तक में संक्षिप्त रूप से विचार किया गया है। कोश के व्यावहारिक पक्ष पर श्री रामचन्द्र वर्मा ने सन् १९४९ में सर्वप्रथम 'प्रामाणिक हिन्दी-कोश' के नाम से प्रकाशित हुआ। डॉ. युगेश्वर वर्मा ने 'हिन्दी-कोश-विज्ञान' का उद्भव और विकास पर १९७१ में शोध-प्रबन्ध प्रकाशित किया। इसी तरह से डॉ. वंशीधर पण्डा और डॉ. अचलानन्द जगमोला के शोध–प्रबन्ध भी सन् १९६३ और १९६१ में शोध-प्रबन्धों के रूप में 'हिन्दी-कोश-साहित्य का विकास' और 'हिन्दी-कोश-साहित्य' शीर्षक के अन्तर्गत शोध-प्रबन्ध प्रकाशित हुए। इसी के साथ विगत ३० वर्षों में स्वतन्त्रता प्राप्ति के उपरान्त लगभग छोटे-बड़े १०० कोश ग्रँथ सम्पादित हुए हैं। इनमें एकभाषिककोश, द्विभाषिककोश, हिन्दी से अन्य भाषाकोश, मुहावराकोश, पर्यायकोश, पारिभाषिक शब्दकोश, अँग्रेज़ी-हिन्दी वैज्ञानिक कोश, व्यावहारिक शब्दकोश, राजकाज शब्दकोश, पारिभाषिक शब्द-सँग्रह तथा अलग-अलग विषयों के कोश, जैसे–जन्तुविज्ञान, अर्थशास्त्र, वाणिज्य, सांख्यिकीय, गणितीय, भौतिक-विज्ञान, राजनीति, शासन शब्दकोश, विधि-शब्द सागर इत्यादियों का सुसम्पादित भण्डार सामने आया है और अब बोली-कोश, लोकोक्तिकोश, चरित्रकोश, विषयकोश (भाषा-विज्ञान, मानविकीय, भौगोलिक, राजनीतिक) और विश्वकोश के रूप में व्यापकता के साथ सम्पादित किये जाकर विभिन्न विद्वानों, सँस्थाओं, शासन (राज्य और केन्द्रीय) के द्वारा प्रकाशित किये गये हैं। जहाँ तक हिन्दी शब्द-कोशों के प्रामाणिक शब्दकोशों का प्रश्न है। उनमें डॉ. रघुवीर, रामचन्द्र वर्मा, डॉ. सत्यप्रकाश लगातार काम करते आ रहे हैं। साथ ही डॉ. भोलानाथ तिवारी (१२ कोश), महेन्द्र चतुर्वेदी (६ कोश), डॉ. हरदेव बाहरी (३ कोश), डॉ. कामिल बुल्के (२ कोश), सम्पादित और प्रकाशित करके महत्वपूर्ण कोशकार के रूप में काम करने वाले हैं।

विगत ३० वर्षों के प्रामाणिक कोश-साहित्य का अवलोकन करने से अब यह स्पष्ट हो चुका है कि हिन्दी-भाषा की व्यापकता के साथ उसके विभिन्न विषयों, वर्गों, व्यक्तियों और कृतियों पर प्रमुखता से प्रामाणिक शब्दकोश सम्पादित और प्रकाशित किए जा रहे हैं। संसदीय राजभाषा-समिति, राजभाषा-आयोग और प्रादेशिक शासनों के भाषा विभाग इस दिशा में संतोषजनक और उत्साहवर्धक काम कर रहे हैं। इससे संविधान निर्मित होने के समय जो प्रामाणिक शब्दकोशों का अभाव हिन्दी-भाषा में था और विभिन्न विद्वान, आलोचक, हिन्दी विरोधी अहिन्दी–भाषा–भाषी तथा अन्य राजनेता जो हिन्दी-भाषा पर प्रामाणिक शब्दकोश न होने का आक्षेप लगाते थे; वह आज प्रायः समाप्त हो गया है। हिन्दी-भाषा में साहित्यिक, वैज्ञानिक, तकनीकी, विधिक, व्यक्तिपरक एव कृतिपरक प्रामाणिक शब्दकोशों का भंडार है।

कोश के बिना शब्द-मीमांसा सम्भव नहीं। अतः भाषा-ज्ञान का यह तृतीय उपकरण भी अति महत्वपूर्ण है। ६७ वर्षीय डॉ. वि. पोरीज्का, प्राग में हिन्दी चैक-कोश, पूर्व जर्मन में कु. एरिका येकल हिन्दी-जर्मन कोश, मार्गोवे जर्मन-हिन्दी-कोश और ए. कलीम जर्मन-हिन्दी कोश, एल. पी. मिश्रा द्वारा सम्पादित इटालियन-हिन्दी, हिन्दी-इटालियन-कोश, चैलिशेव का हिन्दी-रूसी शब्दकोश, डॉ. इगौर सैर ब्रियाकोव का हिन्दी-रूसी शब्दकोश, बी. एम. बेस्कन

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

रोवरी का रशियन-हिन्दी डिक्शनरी कतिपय उल्लेखनीय कृतियाँ हैं। [३२] हिन्दी के तीन विश्वकोश अत्यन्त प्रामाणिक हैं -- (१) हिन्दी विश्वकोश, २५ भाग, सम्पादक श्री नगेन्द्रनाथ बसु (१९२५-१९३१), हिन्दी विश्व भारती (१२ खण्ड), सम्पादक श्री कृष्णवल्लभ द्विवेदी (१९४०-१९४५) और हिन्दी विश्वकोश, १२, खण्ड, नागरी-प्रचारिणी, वाराणसी (१९७० ई.)। हिन्दी-साहित्य-कोश, दो भाग, सम्पादक धीरेन्द्र वर्मा, ज्ञानमण्डल, वाराणसी (१९६३ ई.) तथा प्राचीन चरित्रकोश, सम्पादक सिद्धेश्वर शास्त्री चित्राव, भारतीय चरित्रकोश मण्डल, पूना (१९६४), ये दोनों कोश भी उल्लेखनीय हैं। इन कोशों से हिन्दी-ज्ञान-सम्पदा में अभिवृद्धि हुई है। इतने पर भी जो अभाव है उसके लिए भारत शासन के शिक्षा-मन्त्रालय ने निश्चय किया है कि सामाजिक विज्ञानों का एक हिन्दी विश्वकोश तैयार किया जाए। प्रस्तावित विश्वकोश में १० प्रमुख विषयों--नृविज्ञान, अर्थशास्त्र, भूगोल, इतिहास, विधि, राजनीतिक-विज्ञान, मनः चिकित्सा, मनोविज्ञान, समाज-विज्ञान, साँख्यिकी और उनके अन्तर्गत अन्य सम्बद्ध उपविषयों से सम्बन्धित सामग्री सँकलित करने का विचार किया गया है।

०५. ०५. अनुवाद की समस्या :--

देश-विदेश की भाषाओं में उपलब्ध ज्ञान-विज्ञान को भारत की सर्वांगीण प्रगति के लिए प्राप्त करने का एकमात्र साधन अनुवाद है। यह अनुवाद सर्जनात्मक साहित्य में भावानुवाद के रूप में और उपयोगी साहित्य का बौद्धिक रूप में किया जाना चाहिए। आज भारत को संस्कृत, प्रादेशिक भाषाओं, अँग्रेज़ी, ग्रीक, लेटिन, फ्राँसीसी, चीनी, रूसी, जर्मन आदि समृद्ध भाषाओं में सन्निहित ज्ञान की आवश्यकता है। यह अनुवाद से ही उपलब्ध होगा और इसके लिए आधार-भाषा हिन्दी ही होगी क्योंकि हिन्दी में इन सभी भाषाओं के अनुवाद करने वाले मिल जाएँगे। इसी प्रकार देशी-भाषाओं का अनुवाद पहले हिन्दी में किया जाय और बाद में वाँछित भाषा में, हिन्दी का विकास भी होगा और सम्बन्धित दोनों प्रादेशिक भाषाओं से उसके सम्बन्ध भी मधुर होंगे। उदाहरणार्थ यदि असमी का कन्नड़ में अनुवाद करना है और कोई अनुवादक कन्नड़ में नहीं मिलता तो यह श्रेयस्कर होगा कि असमी ग्रँथ का अनुवाद पहले हिन्दी में हो और बाद में हिन्दी से कन्नड़ में। इसका दोहरा लाभ होगा। एक तो हिन्दी समृद्ध होगी और उसमें भारत की सभी भाषाओं के ग्रँथ मिल जाएँगे और दूसरे हिन्दी दो भाषाओं के संयोजन में सेतु का कार्य करेगी, वह संयोजक-भाषा कहलायेगी। ऐसी योजना राष्ट्र-संघ में है जहाँ अँग्रेज़ी, फ्रांसीसी, रूसी, स्पेनी, चीनी में अनवरत युगपन अनुवाद होते रहते हैं। भाषाओं में परस्पर अनुवाद का कार्य अत्यन्त व्यय-साध्य है और यह कार्य केन्द्र सरकार ही कर सकती है इसके लिए पृथक अनुवाद-विभाग की आवश्यकता है। भारत सरकार अँग्रेज़ी से हिन्दी अनुवाद तो करा रही है किन्तु अन्तर-प्रादेशिक और विश्वभाषाओं से अनुवाद की समस्या अभी भी जटिल है।

०५.०६. उग्रभाषावाद तथा स्वार्थ-साधना की मनोवृत्ति--

मनुष्य अपने मन की धारणाएँ, निश्चयों, विश्वासों और संकल्पों को समय-समय

३२. विदेशी विद्वानों की हिन्दी-सेवा (लेख): के. कृ. शर्मा : स्वतन्त्रता रजत जयन्ती अभिनन्दन ग्रन्थ, १९७३, पृ. ७२५.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

पर परिस्थिति और वातावरण के अनुसार अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु विभिन्न माध्यमों से अभिव्यक्त करता है। अभिव्यक्ति के माध्यमों में भाषा ही सबसे बड़ा माध्यम है। भाषा सर्व-प्रथम मनुष्य ने जन्म के साथ माता से, कुटुम्ब के साथ परिवार से, भू-भाग के साथ प्रदेश से और राज्य के साथ राज्य से और राष्ट्र के साथ राष्ट्र से, मनुष्य को प्राप्त होती है। इस दृष्टि से मनुष्य जितना भी विकास समाज, राज्य और राष्ट्र में अपने विभिन्न क्षेत्र में अर्जित कर लेता है उसके सोचने–समझने और काम करने के तरीके उतने ही विभिन्न रूपों में दिखलाई पड़ते हैं किन्तु मनुष्य के आज दिन तक के मनोवैज्ञानिक अध्ययन से यह बात अधिक स्पष्ट रूप से सामने आई है कि मनुष्य में जन्मजात संस्कारों का प्राबल्य है जो उसे किसी वंश-परम्परा के रक्त से प्राप्त होता है। दूसरी ओर जन्मभूमि की भौगोलिक परिसीमाओं से भी उसे बहुत अधिक लगाव रहता है। तीसरे रूप में माता के दूध के साथ जो मातृभाषा के संस्कार उसमें पाये गये हैं और शिक्षा के साथ जिस भाषा का अध्ययन कर उनसे ज्ञान अर्जित किया है; उस भू-भाग की भाषा से चाहे वह बोली ही क्यों न हो ? उसे बहुत अधिक मोह, प्रेम और सम्मान रहता ही है। चौथी ओर वह जन्म से लेकर जिस विकसित भाषा से ज्ञान प्राप्त करता है उस भाषा से ही उसे बहुत लगाव होता है चाहे वह श्री सम्पन्न न भी हो। पाँचवी ओर वह जिस भाषा के माध्यम से अपनी रोजी-रोटी अर्जित करता है और जो उसके साथ आर्थिक सम्बन्ध से बँधी हुई है वह भी उसके मोह और सम्मान की भाषा होती है। ये सब मनुष्य के विकास के साथ-साथ मनोवैज्ञानिक, जन्मजात और अर्जित संस्कारों के रूप में बने रहते हैं। प्राचीन वस्तुओं से लिपटे रहना उसका सहज स्वभाव है। कारण कि परिवर्तन में कुछ–न–कुछ असुविधा अवश्य होती है और उस असुविधा को दूर करने के लिए श्रम भी करना पड़ता है और श्रम से बचना मनुष्य की नैसर्गिक दुर्बलता है। वह न्यूनतम श्रम में अधिकतम फल प्राप्त करना चाहता है।[३३] इसी कारण से मानव नौकरी के लिये अँग्रेज़ी सीखता है। उसे वह छोड़ना नहीं चाहता क्योंकि उसके साथ उसका आर्थिक सम्बन्ध होता है। इसके साथ ही वह अपनी मातृभाषा को जिसे उसने बचपन से बोला है, नहीं छोड़ता है। हमारे देश में प्रत्येक मानव घर में अपनी मातृभाषा का ही प्रयोग करता है। यदि पंजाबी है तो पंजाबी, केरल या मद्रास का है तो तमिल इत्यादि। इस प्रकार एक ओर प्रान्तीयता प्रबल रहती है तो दूसरी ओर आर्थिकता। ऐसे में वह हिन्दी को सीखने में अपना श्रम नहीं लगाता क्योंकि इसके आधार पर उसे नौकरी नहीं मिलती है। इसे सीखने में उसे श्रम भी अधिक करना पड़ता है। प्रो. पारकर का विचार है कि प्रत्येक मानव अपनी मातृभाषा के अतिरिक्त अन्य भाषाओं के प्रति सहानुभूति कम रखते हैं–हाँ निश्चय ही कुछ लोगों में यह भावना उभरी हुई होती है तो कुछ में प्रसुप्त। अतः हिन्दी-शिक्षक का सर्वप्रथम कर्त्तव्य यह है कि उसके अहिन्दी छात्रों में यदि यह भावना प्रसुप्तावस्था में हो तब वह मनोवैज्ञानिक ढँग से उभारे।[३४] हिन्दी की समस्या को हल करने के लिये हमें बालकों

---

३३. 'हिन्दी की समस्याएँ' : राष्ट्रभाषा हिन्दी : समस्याएँ और समाधान : डॉ. देवेन्द्रनाथ शर्मा, १९६५, पृ. ४९.

३४. 'अहिन्दी भाषा-भाषियों के हिन्दी-शिक्षण का मनोवैज्ञानिक पक्ष' : प्रयागनाथ चतुर्वेदी, भाषा (त्रैमासिक) : जून १९६३, पृ. १३.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

से अर्थात् स्कूल स्तर से धीरे-धीरे हिन्दी के प्रतिरुचि जागृत करना होगी तभी धीरे-धीरे वह अपनी मातृभाषा के अतिरिक्त उसे सीखने का प्रयत्न करेगा और अँग्रेज़ी के मोह से अपने आपको मुक्त कर पायेगा। मानव में जो मातृभाषा के द्वारा प्रान्तीयता की भावना है उसके कारण हिन्दी को इस समस्या का सामना करना पड़ता है।

भारत एक संघीय राज्य है जिसमें विभिन्न धर्मावलम्बियों, जातियों, सम्प्रदायों और मान्यताओं वाले लोगों का, निवास का, जिनके अपने-अपने रीति-रिवाज, पहनाव; अपनाव, खान-पान, लिपि और बोली एवं भाषाएँ हैं। कुछ का तो अपना समृद्ध साहित्य भी है। इसी के साथ मुस्लिम आक्रमणकारियों ने राज्य-स्थापना के साथ उर्दू और फारसी-भाषा तथा अँग्रेज़ों ने अपनी अँग्रेज़ी-भाषा को भी इस देश में फैला दिया। इसी से स्वतन्त्रता के पश्चात् संविधान निर्मांताओं के समक्ष जब राष्ट्र और राज्य के लिए एक सर्वमान्य राजभाषा और राष्ट्रभाषा का प्रश्न उपस्थित हुआ तब वह एक गम्भीर प्रश्न बन गया। उन्होंने इसे उस समय दृढ़ता से न सुलझाकर राष्ट्र की १६ भाषाओं को अपने संविधान में राष्ट्रभाषा घोषित किया तथा अँग्रेज़ी को सम्पर्क भाषा सशर्त हिन्दी के विकास के साथ स्वीकार किया। कालान्तर में विभिन्न जाति, धर्म, सम्प्रदाय और सँस्कृति के एक-एक समाज ने भाषावार प्रान्तों की माँग की, आन्दोलन चलाए और हिन्दी का विरोध प्रारम्भ किया। यह भाषावार प्रान्तों का आन्दोलन ही मुख्य रूप से मनुष्य के मनोवैज्ञानिक पक्ष के आधार पर ही खड़ा हुआ था और इस प्रकार आन्दोलनों ने ही भाषावार प्रान्तों का बंटवारा करके[३५] एक राजभाषा को मान्यता देने में अवरोध पैदा कर दिया तथा अँग्रेज़ी भाषा को उसका कोई भू-भाग, जाति और धर्म के आधार पर इस देश में कोई आधार नहीं है, बनाये रखने का निश्चय घोषित किया जिसके पीछे कोई सैद्धान्तिक बल नहीं था। क्योंकि जिस भाषा को देश के १ प्रतिशत लोग भी निपुणयता के साथ न तो बोल सकते हैं, न लिख सकते हैं, न ही साहित्य-रचना कर सकते हैं। यह भाषा ही स्वतन्त्र भारत के इस देश के विभिन्न मनोवैज्ञानिक, जाति और धार्मिक आधारों पर सहारा लेकर अभी तक टिकी हुई है।

अतः भाषाई प्रश्नों में मनोवैज्ञानिक आधार ही एक प्रबल तत्व के रूप में विद्यमान रहता है और वह समय-समय पर संगठन और विघटन की प्रक्रियाओं में कुछ निश्चित स्वार्थों के आधारों का बल पाकर विकसित हो जाता है। वैसे एक भाषा के मानने वाले लोगों में लड़ाई-झगड़े-संघर्ष हुआ करते हैं।[३६]

०५.०७. दलगत राजनीति का प्रवेश–

हमारी भाषा-समस्या को हमारे देश में सबसे पहले किसने उठाया? जब संस्कृत प्रधान भाषा थी तब वह राजभाषा थी, उसके उपरान्त मुसलमानों के समय से राजभाषा

---

३५. 'राजनीतिक मतभेद' : भावात्मक एकता : डॉ. ओ. पी. शास्त्री : संस्करण १९७४, पृष्ठ ५७.

३६. 'भाषा और संस्कृति' : आचार्य क्षितिमोहन सेन : वीणा स्वर्ण जयन्ती विशेषांक : वर्ष ५१ : अँक ३,४,५,६, मार्च-अप्रैल-मई-जून, १९७८, पृष्ठ १६७.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

का प्रश्न फ़ारसी के माध्यम से हल होता रहा और चलता रहा। अँग्रेज़ आये तब उन्होंने व्यापार के माध्यम के लिये यहाँ की भाषा के साथ मिलकर कार्य किया। उस समय इस देश में कोई निश्चित भाषा नहीं थी। अँग्रेज़ों में सबसे पहले लॉर्ड मैकॉले ने अँग्रेज़ी विद्यालय और महाविद्यालय खुलवाये तथा अँग्रेज़ी शिक्षा देने का कार्य प्रारम्भ किया तभी दयानन्द सरस्वती, मदनमोहन मालवीय, महात्मा-गाँधी आदि राजनेताओं ने भी भाषा के प्रश्न को गम्भीरतापूर्वक ग्रहण किया, फिर देश में स्वतन्त्रता की लहर के साथ पुनर्जागरण और राष्ट्रीयधारा के विचार का युग एक आन्दोलन के रूप में चला। उसके साथ-ही-साथ भाषा का प्रश्न भी समय-समय पर उठाया जाता रहा और उस पर विचार होता रहा।

इस प्रकार हिन्दी-भाषा एक समस्या के रूप में चलती रही। इसे राजनेताओं और राजनीति में कार्य करने वाले कार्यकर्ताओं, नेताओं तथा राजनैतिक संस्थाओं का सम्बल मिला। देश के स्वतन्त्रता के पूर्व ही देश के लिए एक भाषा के रूप में हिन्दी-भाषा संघर्षरत रही तथा देश की एकता एवं देश को स्वतन्त्र कराने के लिए हिन्दी-भाषा को प्रारम्भ में मान्यता मिली किन्तु इसके फलस्वरूप देश की राजनैतिक विचारधारा के अनुरूप हिन्दी-भाषा के विविध रूप और विविध नाम बदलते चले गये। देश के स्वतन्त्र हो जाने के कारण संविधान वनाने वाली समिति के समक्ष भी यह भाषा एक समस्या के रूप में सामने आई। अंततः इसे संविधान में अँग्रेज़ी के साथ स्वीकार किया।

हिन्दी को मूलतः शिक्षा-जगत् में विद्यालयों के माध्यम से अँग्रेज़ों के कार्यकाल से संघर्ष करना पड़ा क्योंकि प्रत्येक राज्य और शासन का मूल प्रश्न है शासन करना। प्रत्येक शासक जनता को अपने मनोनुकूल रखना चाहता है। अतः अपने उद्देश्य-पूर्ति हेतु भाषा को, अपनी पद्धति से, अपने अनुकूल ही शिक्षा-दान करता है। प्रत्येक शासक शिक्षा के माध्यम से अपना राज-काज करता है। आज यही भाषा का प्रश्न शिक्षा का विषय होते हुए भी राजनीति में एक समस्या के रूप में उभरकर सम्पूर्ण देश को प्रभावित किये हुए है। राजनीतिज्ञों ने अपनी-अपनी विचारधारा के अनुसार इसका हल खोजा परन्तु अभी तक इसे सर्वमान्य हल नहीं प्राप्त हो सका है। अभी भी हिन्दी-भाषा का राष्ट्रभाषा और राजभाषा का प्रश्न समस्या के रूप में विद्यमान है तथा राजनेताओं के द्वारा समय-समय पर इसे अपने-अपने स्वार्थ हेतु जनता के समक्ष उछाला जाता है। राजनैतिक संस्थाओं, नेताओं एवं व्यक्तियों द्वारा इस प्रकार जो प्रयत्न किये जाते रहे उसका क्रमिक किन्तु संक्षिप्त विवरण निम्नानुसार है—

अँग्रेज़ों के समय फोर्ट विलियम कॉलेज के द्वारा हिन्दी की रीडरों को पाठ्यक्रम के लिए तैयार किया गया। इसमें मुल्ला-मौलवियों ने हिन्दी-भाषा के साथ उर्दू भाषा के मिश्रण से पुस्तकें तैयार की। इसके विपरीत पण्डितों और लेखकों के द्वारा संस्कृतनिष्ठ हिन्दी की रीडरें तैयार की गई। इस प्रकार हिन्दी के दो रूप प्रचलित हुए। दीर्घकाल तक विवाद चलता रहा। देश की स्वतन्त्रता का प्रश्न प्रमुख था। देश में काँग्रेस और मुस्लिम-लीग नामक संस्थाएँ बन चुकी थीं। देश विभाजन के कगार पर था। अतः महात्मा-गाँधी जैसे कई नेताओं ने देश की स्वतन्त्रता, एकता और अखण्डता के लिए तथा राजनैतिक चेतना और राष्ट्रीयता की भावना के लिए हिन्दी-भाषा को हिन्दुस्तानी नाम से

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

परिभाषित किया।[३७] हिन्दुस्तानी एक ऐसी भाषा थी जिसमें उर्दू और संस्कृत शब्द मिले थे जो आम जनता को समझने के लिये थी। इस निवेदन में एक सारगर्भित बात आ जाती है। वह यह है कि हिन्दी और उर्दू के बीच में भेद नहीं रखा गया है। वास्तव में हम अपने इस्लामी भाइयों से क्यों झगड़े? वे उर्दू-लिपि में पढ़ें। हम में से थोड़े लोग उर्दू-लिपि भी जानते हैं तथा और अधिक लोग उसे सीख लेंगे। जब तक इस्लामी भाई नागरी-लिपि नहीं पढ़ लेंगे तब तक हमारे राष्ट्रीय कार्य दोनों लिपियों में हुआ करेंगे। कैसे ही क्यों न हो? इस प्रश्न का निपटारा हम इस्लामी भाइयों के साथ भ्रातृत्वभाव से कर सकते हैं।[३८] गाँधी की इस नीति का विरोध मालवीयजी, गोविन्द वल्लभ पंत, पुरुषोत्तमदास टण्डन, सेठ गोविन्ददास आदि करते रहे। अन्त में देश का विभाजन हुआ। पाकिस्तान बना और हिन्दी-हिन्दुस्तानी का राजनैतिक विवाद समाप्त हुआ।

इसके साथ संविधान बनाया जाने लगा फिर हिन्दुस्तानी का स्थान अँग्रेज़ी और प्रांतीय भाषाओं ने लिया। अन्त में संविधान में हिन्दी को राजभाषा और अँग्रेज़ी को १५ वर्ष तक सशर्त सहभाषा स्वीकार किया गया। इसका बहुत विरोध हुआ परन्तु देश की एकता के नाम पर यहाँ भी हिन्दी-भाषा को अपने अधिकारों को त्यागकर सहनशीलता का परिचय देना पड़ा।[३९] हिन्दी को राजभाषा स्वीकार करते समय जो शर्त थी वह इस प्रकार थी कि— १५ वर्ष तक हिन्दी का विकास करने में केन्द्र समुचित प्रयास करेगा और यदि हिन्दी समृद्ध होकर कार्य करने में सक्षम होगी तो उसको अँग्रेज़ी के स्थान पर स्थानापन्न कर दिया जावेगा। यह प्रतिबन्ध अपने आप में राजभाषा-हिन्दी के साथ षडयन्त्र था, क्योंकि १५ वर्ष की अवधि में विद्यालयों में अँग्रेज़ी पढ़ाई जाने लगी, विभिन्न बड़े-बड़े पदों के लिए उसे अनिवार्य रखा गया। आई. ए. एस. लोक-सेवा-आयोग आदि प्रतिस्पर्धी परीक्षाओं का माध्यम अँग्रेज़ी रही। इस प्रकार धीरे-धीरे जन-मानस में अँग्रेज़ी ने अपना आधिपत्य जमा लिया तथा जो लोग अँग्रेज़ी पढ़े-लिखे थे वे १५ वर्ष की अवधि में शासन में ऊँचे-ऊँचे पदों पर पहुँच गये। अतः १५ वर्ष उपरान्त जब सन् १९६५ में राजभाषा संशोधन अधिनियम प्रधानमन्त्री श्री लालबहादुर शास्त्री के समय पारित हुआ तब हिन्दी को उसका पद देने की अपेक्षा अँग्रेज़ी को अनिश्चित काल तक बनाये रखने का प्रस्ताव पारित किया गया। इसका परिणाम यह

---

३७. हिन्दुस्तानी वह भाषा है जिसे उत्तर हिन्दुस्तान के शहरों और गाँवों में हिन्दू, मुसलमान आदि सब लोग बोलते हैं, समझते हैं और आपस में कारोबार में बरतते हैं और जिसे नागरी और फ़ारसी दोनों लिखावटों में लिखा-पढ़ा जाता है और जिसके साहित्यिक रूप आज हिन्दी और उर्दू नाम से पहचाने जाते हैं। हिन्दुस्तानी-प्रचार-सभा, वर्धा की परिभाषा-काका कालेलकर : प्रा. शं. दा. चितले, राष्ट्रभाषा-विचार-संग्रह : पृष्ठ ४६.

३८. 'गाँधीजी और भारतीय भाषाएँ' : रामधारीसिंह 'दिनकर', भाषा (त्रैमासिक) : सितम्बर, १९६९, पृ. ८८।

३९. 'भाषा समस्या की पृष्ठभूमि' : डॉ. सीताराम अग्रवाल : साहित्य-परिचय, भाषा-समस्या विशेषांक, जनवरी-फरवरी, १९६८, पृ. ४८।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

हुआ कि सम्पूर्ण देश में दंगे हुए, आन्दोलन हुए, जुलूस निकाले गये तथा घोर विरोध हुआ। इस प्रकार संविधान द्वारा हिन्दी को राजभाषा मानने के उपरान्त भी राजनीतिज्ञों ने अपनी कुर्सी बचाने के लिये तथा देश की एकता के नाम पर, हिन्दी को अविकसित और शासकीय कार्यों के लिए अक्षम कहकर षडयन्त्र किया गया। यह षडयन्त्र राजनैतिक उद्देश्य के लिए किया गया। पिछले आम चुनाव में मद्रास में हिन्दी के प्रश्न पर पर्याप्त उत्तेजना थी और फलत: हिन्दी के विरोधियों की विजय हुई। आज तमिलनाडु में हिन्दी के चलचित्रों का विरोध हो रहा है और विविध-भारती से जो हिन्दी का कार्यक्रम प्रसारित होता है उसका विरोध भी राजनीतिक कारणों से उठाया गया है। काँग्रेस की भाषा सम्बन्धी ढुलमुल-नीति के कारण यह स्थिति उत्पन्न हुई।[४०] देश का शासन सुचारू रूप से चलाने के लिये देश का विभाजन किया गया। यह विभाजन भाषावार प्रान्तों के विभाजन के आधार पर किया गया। आचार्य कृपलानी ने इसका विरोध किया और कहा कि इस विभाजन से देश में इतने ही पाकिस्तान और बन जाएँगे। भाषावार प्रान्तों के विभाजन से यह कटुता प्रदेशों की सीमाओं में आज तक बनी हुई है।[४१] यह कटुता राजनीतिज्ञों के द्वारा ही उत्पन्न की गई है। आज देश में भावात्मक एकता को क्षति पहुँचाने वाला वर्ग राजनीतिज्ञों का है। देश के सबसे बड़े राजनीतिक दल काँग्रेस ने ही यह कार्य किया। काँग्रेस ने देश का विभाजन करने वाली मुस्लिम लीग से चुनाव के लिए केरल और अन्य प्रदेशों से समझौते किए हैं और कर रहे हैं। मतों की प्राप्ति के लिए ही ये राजनीतिज्ञ दंगे करवाते हैं। पंजाब में सिक्ख तथा हिन्दू का प्रश्न उठाते हैं। हरियाणा में जाट और ब्राह्मण एवं बनिया का प्रश्न खड़ा करते हैं। महाराष्ट्र एवं कर्नाटक के सीमा-विवाद मिटने ही नहीं देते। हिन्दू और मुसलमान का प्रश्न सदा ही बनाये रहते हैं। क्षेत्रीय झगड़े यही राजनीतिज्ञ उभारते हैं। भाषा-विवाद को पालते हैं। मन्त्रियों तक ने त्याग-पत्र भाषा के प्रश्न पर दिए हैं। श्री सुब्रह्मण्यम इनमें प्रमुख हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि आज के राजनीतिज्ञ कुर्सी के लोभ में, मतों को प्राप्त करने के लिए देश की एकता को नष्ट-भ्रष्ट कर भाषा को अपनी लोकप्रियता का आधार बनाते हैं।[४२]

अब देश के राजनीतिज्ञों ने देश की एकता, प्रादेशिकता की अखण्डता और संगठन की सबलता के लिये भाषा सूत्र को अपनाया है। इसके अन्तर्गत मातृभाषा अथवा प्रादेशिक भाषा का ज्ञान अनिवार्य है और इसी के साथ हिन्दी तथा अँग्रेज़ी का ज्ञान भी अनिवार्य माना गया है। जिन लोगों की मातृभाषा हिन्दी है, उनके लिए एक अन्य भारतीय भाषा का ज्ञान अपेक्षित है। यह सूत्र सभी दृष्टियों से उचित है लेकिन राजनीतिक कारणों से इसकी आड़ में प्रादेशिक भाषाओं को सबसे अधिक महत्व देकर अँग्रेज़ी को अनिवार्य

---

४०. 'भाषा समस्या की पृष्ठभूमि' : डा. सीताराम अग्रवाल : साहित्य-परिचय-भाषा-समस्या विशेषांक, १९६८, पृ. ४८।

४१. 'राजनीतिक मतभेद', भावात्मक एकता : डा. ओमप्रकाश शास्त्री—१९७४; पृ. ५७-५८।

४२. वही वही पृ. ३१-६२।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

किया गया है और हिन्दी के लिए विभिन्न प्रकार के आरोप लगाकर उसका विरोध किया जाता है। हिन्दी को शासक वर्ग सम्पर्क भाषा कहकर समर्थन करते हैं। इस प्रकार ये राजनीतिज्ञ दोहरी नीति पर चल रहे हैं।

देश की एकता के लिये प्रदेशों और केन्द्रीय सरकार में तालमेल न होने के कारण संघर्ष की स्थिति बनी रहती है। इसका प्रथम कारण है—देश का भाषावार विभाजित होना। इससे प्रदेशों के विवाद बढ़ गये हैं। सभी प्रदेशों की शिक्षा-नीति पृथक-पृथक है और इसके कारण जन-जीवन का सन्तुलन भी स्थिर नहीं रहता।[४३] केन्द्र और राज्यों में उचित तालमेल न होने के कारण पंजाब राज्य में सन् १९६६ से पंजाब का पुनः बटवारा हुआ, सच्चर फार्मूले को समाप्त करके अकाली-दल की सरकार ने, सरकारी-गैर-सरकारी शिक्षण सँस्थाओं ने प्राथमिक शिक्षा से लेकर विश्वविद्यालय तक की शिक्षा का माध्यम पंजाबी बना दिया है तथा केवल गुरुमुखी-लिपि में, पंजाबी-भाषा में परीक्षाओं में उत्तर-पुस्तकें लिखने का कठोर नियम बनाया।[४४] इसी प्रकार मणिपुर राज्य में भी सरकार सरकारी कामकाज हिन्दी में न किये जाने के कारण हिन्दी में पढ़े-लिखे तथा उपाधिकारी लोग बेकार हो गये हैं। जब तक कर्मचारी अँग्रेज़ी में काम करते रहेंगे तब तक हिन्दी का विकास सम्भव नहीं है। वहाँ पर आज भी सरकारी कामकाज की भाषा अँग्रेज़ी है।[४५]

स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद भारतीय रियासतों का विलय हुआ और इनमें से ग्वालियर, इन्दौर, जयपुर, उदयपुर तथा भावनगर की रियासतों के न्यायालयों, शिक्षा सँस्थाओं और प्रशासन में जो कामकाज हिन्दी में होता था, सर्वश्री जवाहरलाल नेहरू, मौलाना आज़ाद, चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य के मार्गदर्शन में राजभाषा के साथ जो व्यवहार किया गया, वह राष्ट्रीय एकता के लिए घातक हुआ है। इसी से डॉ. राममनोहर लोहिया ने 'अँग्रेज़ी हटाओ' नीति को अपनाया तथा समाजवादी राजनीतिज्ञों को संगठित किया। बदले हुए संदर्भों में श्री जयप्रकाश नारायण के नेतृत्व में सम्पूर्ण क्रान्ति के आह्वान के साथ भाषाई विषमता दूर करने का प्रयास भारतीय जनता पार्टी कर रही है। इससे यह प्रश्न दलगत राजनीति का हो गया है इसलिए यह समस्या सत्ता-प्राप्ति के साधन का अँग हो गई है। इसका निराकरण अब सबल और समर्थ केन्द्र ही कर सकता है।[४६]

०५.०८. हिन्दी के व्यावहारिक प्रयोग की समस्या–

अखिल भारतीय प्रयोजनों के लिये भारतीय संविधान में भाषाई माध्यम स्पष्ट रूप से हिन्दी है। संघ की भाषा के रूप में यह अन्तर्राज्यीय भाषा स्वीकृत है। इसी

४३. राजनीतिक मतभेद-भावात्मक एकता : डा. ओमप्रकाश शास्त्री, १९७७, पृ. २६।
४४. पंजाब : हिन्दी पर कुठाराघात : श्री तेगराम : स्वतन्त्रता रजत जयन्ती अभिनन्दन ग्रन्थ, १९७३, पृ. २५९।
४५. वही वही पृ. २५९।
४६. क्रान्तिबोध : गणेश मन्त्री : धर्मयुग, १५ सितम्बर, १९७४, पृ. ११।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

प्रकार देश-विदेश में दूतावासों के माध्यम से इसका व्यवहार अपेक्षित है। केन्द्रीय शासन के सरकारी कामकाज में, शिक्षा के क्षेत्र में, न्याय-पालिका और प्रसारण के क्षेत्र में, इसकी आवश्यकता अपेक्षित है। सेनाओं में यह आदेशों की भाषा के रूप में, परेड और प्रशिक्षण में उपयुक्त होती है किन्तु अधिकारी वर्ग अँग्रेज़ी में ही प्रशिक्षित होता है। और इसी भाषा में प्रशिक्षण भी देता है। इससे कमीशन प्राप्त और कमीशन-रहित सैनिकों में दो वर्ग बन जाते हैं। इस प्रकार हिन्दी के प्रयोग को न तो दूतावासों में, न केन्द्रीय शासन के शिक्षण-क्षेत्र में और न अन्तर्राज्यीय भाषाई सहयोग में इसका प्रयोग किया जाता है और न अल्पसंख्यकों के हितों के संरक्षण में भी इसका प्रयोग होता है। कार्य-पालिका की यह उदासीनता संघ भाषा हिन्दी के विकास में सबसे बड़ी बाधा है। जिससे शिक्षा-पद्धति; प्रशासन, कानून-निर्माण, न्यायालय, सार्वजनिक-सेवा-परीक्षाएँ, प्रचार-साधन, निजी क्षेत्र तथा रक्षा-विभाग में राजभाषा की दुर्दशा का दायित्व केन्द्रीय अधिकारी वर्ग पर है। यह समस्या मनोवृत्ति परिवर्तन के साथ-साथ प्रशासकीय शिथिलता का एक अँग है।

०५.०९. उपसंहार–

राजभाषा-हिन्दी के व्यावहारिक प्रयोग में आने वाली बाधाओं के कारण राजभाषा का स्वरूप अस्थिर हो गया है। यह प्रश्न उठ खड़ा हुआ है कि लोग कौन-सी हिन्दी का प्रयोग करें–संस्कृतनिष्ठ-हिन्दी, उर्दू निष्ठ-हिन्दी या बाजारू हिन्दी। इसी प्रकार सामान्य जनता के सामने हिन्दी के प्रादेशिक रूप का भी प्रश्न सामने आ गया है। प्रादेशिक राज-भाषा के रूप में हिमाचल-प्रदेश की पहाड़ी हिन्दी, दिल्ली राज्य की देहलवी हिन्दी, हरियाणा की हरियाणवी हिन्दी, राजस्थानी हिन्दी, मध्यप्रदेशीय हिन्दी, उत्तरप्रदेशीय हिन्दी और बिहारी हिन्दी में से किसे प्रामाणिक हिन्दी माना जाए। इसी प्रकार शिक्षा के क्षेत्र में प्राध्यापकीय हिन्दी और विद्यार्थीय हिन्दी में से किसे मानक हिन्दी माना जाय; यह प्रश्न भी समस्या उत्पन्न करता है। वस्तुत: राजभाषा आन्तर्प्रान्तीय व्यवहार की भाषा है। इसलिए इसमें स्थानीय रंगत नहीं होती किन्तु दलगत राजनीति, प्रादेशिक भाषावाद और निहित स्वार्थी अँग्रेज़ी-प्रेमियों ने राजभाषा हिन्दी के स्वरूप को लेकर ही भ्रान्ति उत्पन्न कर दी है। इसलिए हिन्दी के उच्चारण, व्याकरण, पदावली, कोश तथा अनुवाद की समस्याओं का लेखाजोखा प्रस्तुत कर हिन्दी को अविकसित भाषा बताने की चेष्टा की है। व्याकरण, उच्चारण, पदावली, कोश, अनुवाद और लिपि की समस्याएँ विश्व की प्रत्येक भाषा में विद्यमान है। यदि ये अस्थिरताएँ भाषा में न हों तो भाषा को प्रगति-शीलता रुद्ध हो जाती है। हिन्दी जीवित भाषा है इसलिए इसकी प्रगतिशीलता इन्हीं तत्वों की परिवर्तनशीलता में विद्यमान है। अत: ये समस्याएँ कल्पित और विरोध-स्वरूप बढ़ा-चढ़ाकर प्रस्तुत की जाती रही है।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

अध्याय–६

राजभाषा-हिन्दी और उसकी लिपि देवनागरी

०६.०१ देवनागरी की अक्षरात्मकता–

देवनागरी-लिपि का प्रत्येक लिपि-चिन्ह अक्षर है। अँग्रेज़ी शब्दावली में अक्षर के लिए 'सिलेबिल' प्रयुक्त रहा है। इसलिए कहा जाता है कि देवनागरी-लिपि सिलेबिक (अक्षरात्मक) है। अक्षर का प्रयोग सिलेबिल के लिए प्राचीन भारत में प्राय प्रचलित था[१] परन्तु उसका अभिप्राय विवादास्पद है। अक्षर का विवेचन करते हुए कहा गया है कि एक अक्षर में कभी शुद्ध स्वर, कभी स्वर एवं व्यंजन, कभी स्वर और अनुस्वार और कभी स्वर, व्यंजन एवं अनुस्वार सभी सन्निहित रहते हैं।

मनोवैज्ञानिक दृष्टि से वाक्यधारा का स्थिर अंश यही है। इसी भाव को लेकर आचार्य यास्क ने अपने निरुक्त में अक्षर का पहला अर्थ यह किया है—'जिसका क्षरण नहीं होता[२] परन्तु ऐतिहासिक भाषा-विज्ञान की दृष्टि से यह अर्थ ग्राह्य नहीं है। 'वैदिक पदानुक्रम कोश'— 'अक्षर' शब्द के रूप में उदात्त दूसरे अक्षर अर्थात् 'क्ष' पर ही है। इसलिए वैदिक स्वर प्रक्रिया में निषेधात्मक अर्थ का समर्थन नहीं होता। यास्क ने अपने ग्रन्थ निर्वचन में अक्षर का मूलभूत 'अक्ष' बताया है अर्थात् धुरी जो रथचक्र का आधार है। भाषण प्रवाह का आधार होने के कारण इसे 'अक्षर' कहा गया है। अमेरिकी विद्वानों ने 'अक्षर' की कल्पना को अनावश्यक बताया है। उन्होंने 'मात्रा' आदि को ही 'फोनीम' बताकर अक्षर के प्राण को कुचलने का प्रयत्न किया जा रहा है। हमारे यहाँ 'अक्षर' के साथ सांस्कृतिकता सम्बद्ध है इसलिये हमारे यहाँ 'अक्षर' को 'अक्षर-ब्रह्म' कहा जाता है। महाभाष्य में पतंजलि ने क्षीण न होने वाली ध्वनि को अक्षर कहा है।[3] आगे चलकर इसके अर्थ में विकास हुआ आर इसके अनेक अर्थ हुए किन्तु आज उसकी परिभाषा है—एक झटके से उच्चरित ध्वनि—इकाई। इससे अक्षर का स्वरूप अखण्ड्य-ध्वनि है। 'क', 'ख', 'ग' आदि अक्षर हैं। हिन्दी-भाषा में अक्षरात्मक-लिपि का ही प्रयोग किया जाता है, जिसे देवनागरी-लिपि कहते हैं।

---

१. 'फोनेटिक आब्जुर्वेशन्स ऑफ इण्डियन ग्रैमेरियन्स, नया संस्करण–१९६१, पृ. ५५

२. 'न क्षरति न क्षीयते'–एवं 'सव्यंजनः सानुस्वारः शुद्धो वापि स्वरो क्षरम्।'
–दि एटिमालाजीज ऑफ यास्क : १९५३, पृ. ३२

३. भाषा-विज्ञान-कोश : भोलानाथ तिवारी, पृ. ६

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

देवनागरी-लिपि में 'चिन्ह' अक्षरों में व्यक्त किये जाते हैं। इसमें कुछ वर्णों को छोड़कर सभी के लिए अलग-अलग चिन्ह हैं। इस लिपि में ध्वनि-प्रधान है क्योंकि यह जैसी बोली जाती है वैसे ही लिखी जाती है। अतः उच्चारण और ध्वनि ही इसका मूल आधार है। इसमें कुछ अक्षरों के दो या उनसे अधिक रूप प्रचलित हैं। कुछ ध्वनियाँ उच्चारण में तो अलग और स्पष्ट हैं परन्तु लिखावट में अन्तर नहीं होने से समस्या बन जाती है। इसका यदि ध्वनि के आधार पर अध्ययन किया जावे तो असुविधा होती है। इसके कुछ लिपि-चिन्ह भ्रामक हैं। जिनका विवेचन विभिन्न विद्वानों ने समय-समय पर किया है। हमारी लिपि में अक्षरात्मकता में एकरूपता और साम्यता होनी चाहिये थी। 'शास्त्र शुद्ध वर्णमाला 'क' और 'ख' इन वर्णों में जितना साम्य है उतना ही लिपि में भी होना चाहिये था। 'क' में साधारण परिवर्तन करने से 'ख' बनना चाहिये। जिस तरह 'ट' से 'ठ', 'प' से 'फ' बनता है। उसी तरह 'क' का सहज रूपान्तर 'ग' होना चाहिये और जिस परिवर्तन से 'क' का 'ख' बनता है उसीसे 'ग' का 'घ' बनना चाहिये। स्वरों का काम दो तरह का है। वे स्वतन्त्र भी होते हैं और व्यंजन में मिल भी सकते हैं। स्वतन्त्र स्वर के रूप में आने पर उनका आकार एक होता है और व्यंजन से मिल जाने पर एकदम दूसरा। शुद्ध लिपि में यह शोभा नहीं देता।[४] हमारी लिपि में हमें इस प्रकार के दोष दिखलाई देते हैं परन्तु यदि हम इस प्रकार अध्ययन करें कि लिपि का जन्म किस उद्देश्य के लिए हुआ था? तो हम देखते हैं कि प्रारम्भ में मात्र विचारों की अभिव्यक्ति ही प्रमुख ध्येय रहा है।' भारतीयों के पास अनेक अच्छी लिपियाँ तब तक पहले ही थीं किन्तु अब भारत में लिपि केवल 'लिखने' के लिए बनाई गई थी। कम-से-कम स्थान पर अधिक-से-अधिक ध्वनियाँ—सम्पूर्णता, शुद्धता और स्पष्टता से लिखी जा सके। यही हमारा लक्ष्य रहा था।'[५] समय की परिवर्तनशीलता के साथ हमारा लक्ष्य बदलता गया और हमने लिपि पर भी वैज्ञानिक दृष्टिकोण से विचार करना प्रारम्भ किया। हम उसका उपयोग बोलने की सुविधा के साथ—साथ मुद्रण, टंकन, शीघ्र-लेखन, ध्वनि—प्रसारण और ध्वनि-संचरण में भी करने लगे। अतः वैज्ञानिक प्रगति के अनुरूप उसके स्वरूप में परिवर्तन होते गये किन्तु इन परिवर्तनों के अनुरूप ध्वनि—संकेतों के दृश्य रूप को विद्वानों ने मान्यता नहीं दी तथा विभिन्न विद्वानों ने विभिन्न कालों, देशों और स्थानों में विभिन्न लिपि—चिन्ह खोज लिए। फलतः उसके दृश्य माध्यम अक्षरों या वर्णों में अराजकता उत्पन्न हो गई है। तथा कतिपय वर्णों के लिए भिन्न रूप प्रस्तुत कर दिये गये हैं, यथा 'छ—छ', 'झ-झ', 'ण—ए', 'ध—घ', 'ल-ल-ळ', 'श-श', 'क्ष—क्ष', 'त्र—त्र', 'ज्ञ—ज्ञ', 'अ—अ', 'इ—इ', 'उ—उ' 'ए—ए', आदि। अक्षरों की यह विभिन्नता—समस्या, देव-नागरी लिपि की अपनी समस्या है किन्तु लिपि-चिन्हों की यह विविधरूपता ऐतिहासिक विकास का परिणाम है।

देवनागरी का विकास भारत की प्राचीनतम लिपि ब्राह्मी से हुआ है। ब्राह्मी में 'एक उच्चारण के लिए एक अक्षर : चिन्ह : का सिद्धान्त मान्य है। आर्यों के मतानुसार इस लिपि

४. वीणा, मार्गशीर्ष संवत् १९८५, अंक ३, पृ. १८७

५. वीणा, वर्ष ४५, अंक—८, अगस्त १९७२, एवं स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी-साहित्य-रजत-जयन्ती, अंक, पृ. १२६

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

के निर्माता स्वयं ब्रह्मा थे। तब से इसमें नियमित परिवर्तन होता रहा है। वेदों की लिखित ऋचाओं का पढ़ना अधम पाठ माना जाता है।[६] अतः इतना तो स्पष्ट है कि ब्राह्मी-लिपि का अस्तित्व वेदकाल में था। चीनी 'विश्वकोश फायुअन्-चु-लिन्, सन् ६६८ ई. में बना, जिसमें लिखा है कि ब्रह्मा ने ब्राह्मी, खरोष्ठ ने खरोष्ठी और 'त्सं-क्री' ने चीनी-लिपि का आविष्कार किया था। ब्राह्मी बाँई ओर से दाहिनी ओर, खरोष्ठी दाहिनी ओर से बाँई ओर और चीनी ऊपर से नीचे की तरफ पढ़ी जाती है।[७] प्राचीन लिपिमाला ग्रंथ में ब्राह्मी-लिपि के ई. पू. दसवीं शताब्दी से लेकर आज तक की विकास परम्परा का वैज्ञानिक वर्णन दिया गया है।[८] जिससे समय-समय पर होने वाले परिवर्तनों का इतिहास अंकित है (द्रष्टव्य विकास चित्र)।

०६.०२. कुछ वर्णों की आवश्यकता—

व्यंजनों के पाँच वर्गों में सभी में पांच-ही-पांच अक्षर आते हैं। इतने पर्याप्त नहीं हैं, छः होने चाहिए। हिन्दी शब्द 'तुम्हें', में, 'म्हें' संयुक्ताक्षर नहीं है। ये संयुक्ताक्षर होते तो 'तु' पर बलाघात पड़ता। सच कहिए तो 'म्ह', म का महाप्राण है। 'प' का महाप्राण 'फ'; 'ब' का 'भ', उसी तरह म का म्ह। त-थ, द-ध, न-न्ह। इस तरह छः अक्षरों का वर्ग होना चाहिये। मराठी शब्द 'कण्हेरी' में 'ण्हे' सच्चा युक्ताक्षर नहीं है लेकिन 'ण' का महाप्राण है। इसी कारण 'क' पर ज़ोर नहीं पड़ता। गुजराती में 'उन्हाळो' का उच्चारण होते हुए भी 'उनाळो' ही लिखना पड़ता है। अगर 'न' का महाप्राण उच्चारण स्वीकार करके उसके लिए लिपि ने स्वतन्त्र अक्षर खोज निकाला होता, तो उक्त कठिनाई न होती। इस दृष्टि से देवनागरी की वर्णमाला का स्वरूप ऐसा स्थिर होना चाहिए कि उच्चरित वर्णों के आवश्यक चिन्ह विद्यमान हों।

भारतीय संविधान की राजभाषा-हिन्दी की लिपि देवनागरी है। इसकी वर्णमाला का जो स्वरूप आज प्रचलित है, वह इस प्रकार है—

अ आ इ ई उ ऊ ऋ ए ऐ ओ औ अं अः
क ख ग घ ङ
च छ ज झ ञ
ट ठ ड ढ ण
त थ द ध न
प फ ब भ म
य र ल व श
ष स ह क्ष त्र ज्ञ
ं ः ँ

६. प्राचीन लिपिमाला : रायबहादुर गोवर्धनलाल हीराचन्द ओझा, पृ. १४-१५

७. वही वही पृ. १८

८. वही वही लिपि पत्र ८३ वां.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

लिपिपत्र ८२वां.

नागरी लिपि की उत्पत्ति.

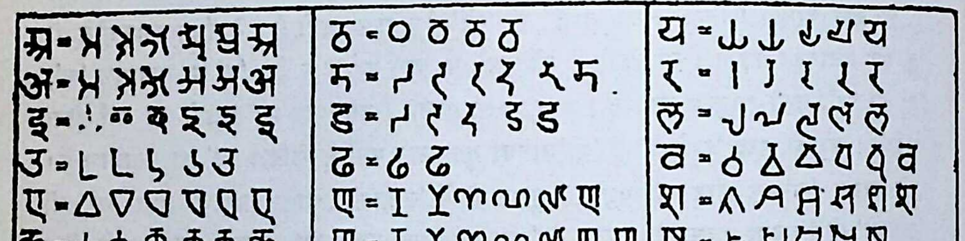

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

०६. ०३. संयुक्ताक्षरों का प्रयोग :-

नागरी-वर्णमाला में 'क्ष'; 'त्र', और 'ज्ञ' को संयुक्त-अक्षर माना जाता है। इनके उच्चारण करने में भिन्नता है। जैसे-'ज्ञ'-इसका उच्चारण 'ग्य' या 'ग्यँ' होता है। कहीं 'ज्ञ' या 'दन' या इससे मिलता-जुलता होता है। कुछ सुधारक इसका उच्चारण 'ज्यँ' करना उचित समझते हैं। संस्कृत की प्रातिशाख्यानुमोदित उच्चारण-प्रक्रिया के अनुसार 'ज्ञ' (ज+ञ) के दूसरे वर्ण 'ञ्' का उच्चारण य्ँ' नहीं होता जैसा कि लोग समझते हैं। 'ज्' और 'ञ्' प्राचीन संस्कृत की तालव्य ध्वनियाँ हैं। दोनों के उच्चारण में जिह्वा का मध्यभाग अपने सामने ऊपर के तालु का स्पर्श करता है। अन्तर केवल इतना ही है कि 'ज्' निरनुनासिक ध्वनि है, 'ञ्' सानुनासिक। अपने उच्चरित रूप में 'य्ँ' तो सानुनासिक अर्द्धस्वर है। यह कभी 'ञ्' का स्थान ग्रहण नहीं कर सकता। 'ज्ञ' संस्कृत के लिए असामान्य संयुक्ताक्षर है।[९]

ध्वनि-विकास के नियमों के अनुसार यदि यह सवर्गीय निरनुनासिक-सानुनासिक व्यंजन समूह 'ज्-ञ्' (ज्ञ) हिन्दी-भाषा-भाषी क्षेत्र में 'ग्य' के रूप में परिणत हो गया है तो इसमें आश्चर्य की क्या बात है? और फिर कम-से-कम हिन्दी के लिए 'ग्य' को ही मानक उच्चारण मान लेने में क्या आपत्ति है? 'त्र' में उच्चारण के समय 'त' का रूप बड़ी रेखा मात्र रह जाता है, जैसे 'क्त' या दुहरे 'त्' (त्त) में। उसी प्रकार 'ज्ञ' में 'ज्+ञ्' का योग है। इसी प्रकार संयुक्त-अक्षरों का प्रयोग मुद्रण और टंकन में बहुतायत के साथ प्रचलित है-

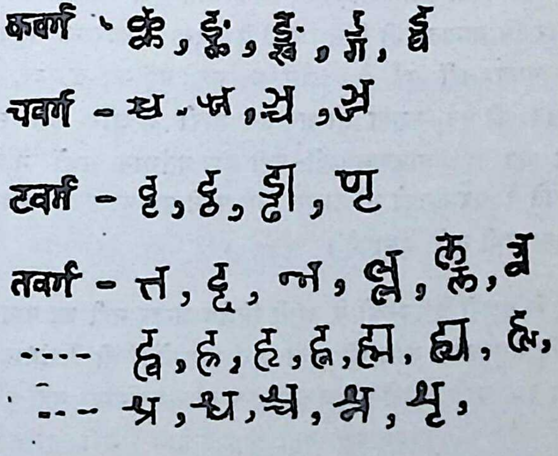

'संयुक्त स्वर सम्बन्धी वर्तनी की अराजकता तब तक ढोनी ही पड़ेगी जब तक देवनागरी में समुचित सुधार करके इनके मूल स्वरों के अँकन के लिए उपयुक्त चिन्हों का निर्माण नहीं होता।[१०]

---

९. 'ज्ञ' की समस्या : रामकृष्ण शर्मा : भाषा : त्रैमासिक : सितम्बर १९६२, पृ. २६.

१०. देवनागरी प्रतिलेखन : लक्ष्मीनारायण शर्मा : भाषा : त्रैमासिक; मार्च १९७२, पृ. १३.

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

सन् १९५२ में मराठी-साहित्य-पत्रिका में दाते ने इन संयुक्ताक्षरों के सुधार के विषय में लिखा। उनका मत है कि—

(१) संयुक्ताक्षर नष्ट किये जायं।

(२) सब अक्षर दण्डयुक्त हों, जैसे—व ा, न, प ा, न।

(३) ट, ठ, ड, ढ़, द, ह ये अक्षर दण्डयुक्त नहीं हैं। अतः उन्हें दण्डयुक्त बनाया जाय।

(४) स्वर-चिन्हों के बदले अ, आ, इ, ई, उ, ऊ इन स्वरों के आधे वर्णों को जोड़कर उनके पूरे वर्ण बनाना, जैसे—म्अ, आ, ठई, स्आ, हइ, हअ, ष्अ, इ, ष्अ, द् याने मराठी-साहित्य-परिषद्।

(५) प्रचलित स्वर-चिन्हों के स्वरूपों में परिवर्तन, जैसे—अ, आ, इ, ई की बारहखड़ी का व्यवहार करना और दंड के ऊपर व नीचे आने वाले किन्तु दायें-बायें विस्तार पाने वाले स्वरूपों को संकुचित करना, जैसे—(ि), (ो)।

(६) उकारादि चिन्ह ह्रस्व-दीर्घ 'रु, रू' की तरह सामने किन्तु अक्षर की पँक्ति में सरका लेना या उनके प्रचलित स्वरूपों में परिवर्तन आदि।

इनका प्रचलन अभी प्रयोग में नहीं लाया गया। अब संयुक्ताक्षरों की संख्या कम हो गई है, जैसे—क्क, क्क, क्व, क्व, च्च, च्च, ट्ट, ट्ट, न्न, न्न, ल्ल, ल्ल, प्त, प्त आदि शब्दों में संयुक्ताक्षर के स्थान पर आधा अक्षर छोड़कर उनके आगे पूरा लिखने की पद्धति चालू हो गई है। इसे व्यवहार में मान्यता भी मिल चुकी है परन्तु रकारान्त संयुक्ताक्षरों के बारे में यह पद्धति अभी मान्य नहीं हुई है। जैसे-क्र, क्र, ग्र, ग्र, ब्र, ब्र, श्र, श्र आदि। इन अक्षरों को लिखने की पूर्व पद्धति ही अब तक जारी है और उसे छापने का कार्य भी उसी प्रकार हो रहा है। आजकल कहीं—कहीं कुछ वर्तमान पत्रों में दूसरे स्वरूपों के संयुक्ताक्षर छापे जाते हैं पर उनको भी टाइप कम पड़ने पर काम में लाया जाता है। सर्वत्र इसका प्रचलन अभी नहीं हुआ है।

बिना दण्ड के अक्षरों के स्वरूपों में अभी विशेष अन्तर नहीं आ पाया है। यथा—द्वन्द, द्व, द्ध, ह्म, ह्य, आदि संयुक्ताक्षर आज भी अपने पूर्व स्वरूपों में ही विद्यमान और प्रचलित हैं तथा जब तक बिना दण्ड वाले अक्षरों का आधा रूप बनकर तैयार नहीं होता, तब तक इस पद्धति में विशेष परिवर्तन की आवश्यकता नहीं दिखाई देती। मेरी दृष्टि में ऐसे संयुक्ताक्षर प्रमुखतः दकार और हकार युक्त होने से ऐसे संयुक्ताक्षरों के आधे 'द्' का 'द' और आधे ह् का 'ह्ल' इस प्रकार के दो स्वतन्त्र टाइप ढलवाये गये हैं। इनकी सहायता से सब संयुक्ताक्षर उनके संयुक्त रूपों में न लिखे जाकर उन्हें इस प्रकार लिखा जा सकता है, यथा—दव, द्व, दद, द्म, दध आदि तथा हम, हव, आदि दकारयुक्त और हकार—युक्त संयुक्ताक्षर लिख सकते हैं। इनका प्रयोग सर्वत्र नहीं हो पाया है।

उक्त वर्णमाला को अभी संशोधित करने की आवश्यकता बनी हुई है। विभिन्न भारतीय भाषाओं के मध्य-लिपि में पर्याप्त समानता है। एक जैसे वर्णों के कारण देवनागरी-लिपि,

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

विश्वलिपि बनने की क्षमता रखती है। इसके अक्षर बहुत काल से संस्कृत, हिन्दी, मराठी, नेपाली भाषाओं में लिखे जा रहे हैं। गुजराती–लिपि में शिरोरेखा छोड़कर शेष वर्ण देवनागरी जैसे ही हैं। गुरुमुखी और बंगला-लिपियों में भी पर्याप्त समानता विद्यमान है। अतः भारत की लिपियों में से आधी जनसंख्या की लिपि देवनागरी है इसीलिए राष्ट्र निर्माताओं के मस्तिष्क में सारे देश के लिए एक लिपि की आवश्यकता का विचार आया। प्रारम्भ में सन् १९१० ई. में जस्टिस शारदाचरण मित्र ने इलाहाबाद में 'एक लिपि' कान्फ्रेंस का आयोजन किया। अध्यक्षता कृष्णास्वामी अय्यर ने की जिन्होंने भारत के लिये एक सामान्य लिपि अपनाने की आवश्यकता पर बल दिया और कल्पना की कि यदि पूरे भारत में एक लिपि अपना ली गई तो चीन और जापान जैसे देश भी इसे अपना लेंगे। इसके पूर्व लोकमान्य तिलक ने १९०५ ई. में नागरी–प्रचारिणी–सभा, काशी के सामने व्याख्यान देते हुए देवनागरी को राष्ट्रलिपि बनाने का समर्थन और 'रोमन' वर्णमाला का बहिष्कार करने का आव्हान किया। उन्होंने यह भी चेतावनी दी कि भारत के लिये देवनागरी–लिपि के अतिरिक्त यदि किसी अन्य लिपि को अपनाने का सुझाव दिया तो वह आत्मघातक होगा।

यह सर्वविदित है कि महात्मा-गाँधी सब भारतीय भाषाओं के लिये एक लिपि अपनाने के पक्षपाती थे किन्तु हिन्दू–मुस्लिम एकता के लिये वे हिन्दुस्तानी का प्रचार करने के साथ–साथ देवनागरी और उर्दू दोनों लिपियों का प्रचार करते थे। उन्होंने कहा था कि दो लिपियों के बोझ से मैं जनता को मुक्त रखना चाहता हूँ किन्तु देश के उद्धार के लिये उर्दू–लिपि का भी समर्थन करता हूँ। महात्मा-गाँधी भी रोमन–लिपि का विरोध करते थे।

सन् १९३५ में अखिल-भारतीय-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के इन्दौर अधिवेशन में गाँधीजी ने देवनागरी-लिपि की वैज्ञानिकता और सरलता की सराहना की और इसे सार्वभौम-लिपि के उपयुक्त माना। इसीलिए काका कालेलकर की अध्यक्षता में बनाई गई 'देवनागरी-लिपि-सुधार समिति' के लिए गाँधीजी ने जो मार्ग-निर्देश दिया वह यह था कि प्रान्तीय भाषाओं में इसका व्यावहारिक प्रयोग करके परीक्षण किया जाय कि देवनागरी-लिपि उन सबकी ध्वनियों को अभिव्यक्त करने में सक्षम है या नहीं।

इसी समय श्री जवाहरलाल नेहरू ने रोमन-लिपि के सम्बन्ध में अपने विचार प्रकट किये थे और कहा था—मैं भलीभाँति जानता हूँ कि रोमन-लिपि भारत में स्वीकार नहीं की जाएगी। इसका विरोध राष्ट्रवादी, धार्मिक सँस्थाएं, हिन्दू-मुस्लिम, नये और पुराने लोग तथा सब वर्ग के लोग करेंगे। इसलिए रोमन की अपेक्षा देवनागरी को अपनाना ही श्रेयस्कर है किन्तु यह आवश्यक है कि भाषा-वैज्ञानिकों के द्वारा इसका परीक्षण करा लिया जाय। यहीं से रोमन-लिपि के समर्थक कतिपय विद्वान सामने आए जिनमें डॉ. सुनीतिकुमार चटर्जी प्रमुख थे। उन्होंने तुर्की, इण्डोनेशिया तथा यूरोप के अनेक देशों के उदाहरण देकर सिद्ध किया कि यह विज्ञान और टेक्नालाजी के लिये उपयुक्त लिपि है। रोमन-वर्णमाला में देवनागरी-वर्णमाला से कम अक्षर हैं। इसलिए मुद्रण, टंकन, शीघ्रलेखन, दूरलेखन और अणु-लहरों में इसका उपयोग सरलता से हो सकता है। इस कथन कि जब यांत्रिक-परीक्षा की गई तो यह पाया गया कि यांन्त्रिक दृष्टि से देवनागरी भी उतनी ही सक्षम है, जितनी की रोमन।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

इसलिए आचार्य नरेन्द्रदेव की अध्यक्षता में 'लिपि-सुधार-समिति' बनी। इस समिति ने सन् १९४७ में यह निर्णय दे दिया कि देवनागरी में कतिपय वर्णों में सुधार करने के बाद उसी को अपनाना उपयुक्त है, रोमन को नहीं।[११]

गांधीजी तथा कांग्रेस के कतिपय नेताओं के आग्रह पर राष्ट्रभाषा हिन्दुस्तानी को दो लिपियों में लिखा जाता था किन्तु १९४७ में देश का विभाजन हो जाने के बाद दो लिपियों का सिद्धान्त समाप्त हो गया और उर्दू की लिपि को राष्ट्रीय स्तर पर मान्यता दे दी गई।

भारतीय ध्वनि-प्रणाली का उचित प्रतिबिम्बन इसी देवनागरी लिपि में सम्भव है क्योंकि इसकी वर्णमाला व्यापक है। अक्षरों की क्रम-व्यवस्था वैज्ञानिक है, स्वर और व्यंजन के मध्य स्पष्टता है, विभिन्न ध्वनियों को प्रतिबिम्बित करने के लिये संयुक्त वर्णों का प्रावधान है तथा मिश्रित ध्वनियों का प्रत्यक्षीकरण सरल है। इसलिए देवनागरी-लिपि विश्व में सर्वाधिक सुडोल, प्रामाणिक, सुन्दर और पूर्ण वर्णमाला है। इसमें मनुष्य के ध्वनि-यन्त्र से निःसृत सभी ध्वनियों का प्रतिबिम्बन करने की क्षमता है। इसीलिए सन् १९५१ के बाद सेना की शैक्षणिक परीक्षाएँ जवानों के लिए देवनागरी-लिपि के माध्यम से ली जाने लगीं और उसका परिणाम यह हुआ कि सेनाओं में संतोष की लहर जागृत हो गई। यही कारण था कि अन्य भाषाओं को देवनागरी-लिपि में लिखे जाने के लिए विनोबा भावे ने आग्रह किया था।[१२] उनकी मान्यता है कि हिन्दी, बंगला; गुजराती, असमिया समूह की भाषाओं को देवनागरी में लिखने से भावनात्मक एकता बढ़ेगी। यदि उत्तर की भाषाएँ देवनागरी में लिखि गई तो दक्षिण की भाषाएँ भी देवनागरी में लिखी जा सकती है और सम्भव है भारत की सीमा पार के देश-नेपाल, बर्मा, श्रीलंका, चीन, जापान आदि भी इसे अपना लेंगे। देवनागरी के वर्णों में जो कुछ कमियां हैं वे पूर्ण कर लीं जांय और इसे समस्त भारतीय भाषाओं की ध्वनियों का प्रतिबिम्बन करने के निमित संशोधित कर लिया जाय। जिससे उत्तर, दक्षिण, पूर्व, पश्चिम भारत में प्रचलित प्रादेशिक भाषाओं की लिपियों के साथ-साथ देव-नागरी-लिपि का भी प्रयोग हो सके। भारतीय एकता के लिए लिपि में ये सुधार आवश्यक होंगे और इसके लिए एक मानक वर्णमाला स्वीकृत करना आवश्यक होगा। इस सम्बन्ध में शोधकर्ता के विचारों के उपयुक्त मानक वर्णमाला प्रस्तुत है—

---

११. 'भारतीय भाषाएँ और लिपि-समस्या' : डॉ. रामविलास शर्मा : साहित्य सन्देश जुलाई-अगस्त, १९५७, पृ. १३१-१३३ तक।

१२. 'नागरी-दि कामनलिंक स्क्रिप्ट' : विनोबा भावे : १९७३, पृष्ठ १ से १९.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

वर्ण

अ़ अ आ इ ई उ ऊ ऋ ए ए़ ऐ ओ ओ़ औ अं अः
क क़ ख ख़ ग ग़ घ ङ
च छ ज ज़ झ ञ
ट ठ ड ड़ ढ ढ़ ण ण्ह
त थ द ध न न्ह
प फ फ़ ब भ म म्ह
य र ल व श ष स ह ल्ह
क्ष त्र ज्ञ त्त
ह्न ह्य, द्ध, द्द, ह्म, द्य, द्र, द्व

मात्राएँ

ा ि ी ु ू ृ े ै ो ौ ं ः
क का कि की कु कू कृ के कै को कौ कं कः । [13]

विराम–चिन्ह

पूर्ण,	अल्प,	अर्द्ध,	प्रश्नवाचक,	विस्मयबोधक,	संक्षेप,	उद्धरण
।	,	;	?	!	.	" "

कोष्टक,	योजक,	निर्देशक,	विवरणबोधक [14]
( ), [ ], { }	-	—	:—

०६.०४. मात्राएँ, अनुनासिक एवं अनुस्वारों का बाहुल्य :–

हिन्दी-ध्वनि के लिपि-चिह्नों को तीन वर्गों में विभाजित किया जा सकता है—

(१) वर्ण
(२) मात्राएँ
(३) चिह्न

भाषाओं का सम्बन्ध स्वरों से है। भाषाओं की स्थिति स्वरों के अंश के रूप में है। स्वरों से ही मिलकर व्यंजन बनते हैं। व्यंजनों का उच्चारण करते हैं तो हम देखते हैं कि प्रत्येक व्यंजन के अन्त में स्वर होता है। हिन्दी में स्वर उच्चारण के समय के अनुसार तीन प्रकार के होते हैं—(१) ह्रस्व (२) दीर्घ (३) और प्लुत

---

१३. व्यावहारिक हिन्दी-व्याकरण : डॉ. हरदेव बाहरी, पृ. १७–१८

१४. वही वही पृ. १८६

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

इनके अनुसार ही मात्राएँ होती हैं। ये मात्राएँ ऊपर-नीचे, बाएँ और दाएँ चारों ओर लगाई जाती हैं, यथा—

क का कि की कु कू कृ के कै को कौ कं कः ओऽ

ं, ा, ि, ी, ु, ू, ृ, े, ै, ो, ौ, ं, ः, ऽ

देवनागरी ध्वन्यात्मक-लिपि है। इसके अक्षर अखण्ड्य हैं। इसलिए स्वर और व्यंजन के मेल से जो ध्वनि रूप बनता है वह वर्ण कहलाता है। उदाहरणार्थ— 'कंपन' में तीन वर्ण हैं जिसमें प्रथम वर्ण 'कं'—'का' और 'अं' की संयुक्त-ध्वनि से बना है। 'अं', 'क' की मात्रा है जो उसके उच्चारण-काल का द्योतन करती है। यदि उच्चारण-काल स्वल्पातिस्वल्प है तो ह्रस्व, स्वल्प है तो दीर्घ और यदि प्रलम्बित है तो 'प्लुत' उच्चारण कहलाता है, उदाहरणार्थ—

१. आपने क्या कहा ? (सीधा उच्चारण)

२. आपने क्या कहा ? (विलम्बित उच्चारण)

३. आपने क्या कहा ? (प्रलम्बित उच्चारण)

इस प्रकार की उच्चारण–प्रक्रिया प्रायः सभी प्रगतिशील भाषाओं में विद्यमान होती है। उसको प्रतिरूपित करने के लिये भाषा में जो ध्वनि-चिन्ह समयेकित किए जाते हैं वे ही लिपि की प्रकृति बन जाते हैं। देवनागरी मात्रिक-लिपि है। अतः इसमें मात्राओं के प्रयोग की सावधानी रखना अनिवार्य है। अन्यथा 'कल' का 'काल', 'किस' का 'कीस', 'कुल' का 'कूल', 'केला' का 'कोला' और 'हँस' का 'हंस' बनकर अर्थ का अनर्थ कर देते हैं। व्याकरण के नियमानुसार पंचम वर्णों को अनुनासिक कहते हैं। अनुनासिक वर्ण वर्गों के अन्तिम अक्षर हैं जिनका उच्चारण मुख तथा नासिक से होता है। ये पाँच हैं—

ङ्, ञ्, ण्, म्, न्

इनके उच्चारण स्थान क्रमशः नासिक-कण्ठ, नासिका-तालु, नासिका–मूर्धा, नासिका-ओष्ठ और नासिका–दन्तमूल हैं। इनमें (ङ्); (न्) तथा (म्) के उच्चारण में तो प्रायः अन्तर है किन्तु (ञ्) तथा (न्) के उच्चारण में अन्तर स्पष्ट नहीं होता है। इनके उच्चारण स्थान अलग-अलग हैं; किन्तु सुनने में समानता होने के कारण लिखने में गलती हो जाती है। हिन्दी-भाषा में इन पांचों अनुनासिकों का चिन्ह (ं), है। प्रायः अनुनासिक वर्णों का चिन्ह अनुस्वार है। शिरो-रेखा के ऊपर स्थित बिन्दी (ं) अनुस्वार है। जहाँ पंचमाक्षर के बाद उसी वर्ग के शेष चार वर्णों में से कोई वर्ण हो, वहाँ अनुस्वार का ही प्रयोग किया जाए, जैसे-अंत, अन्य, गंगा, संपादक आदि। 'हिन्दी में प्रत्येक स्वर के अनुनासिक रूप भी मिलते हैं। वास्तव में अनुनासिक स्वर को निरनुनासिक से सर्वथा भिन्न मानना चाहिए क्योंकि इसके कारण शब्दभेद, अर्थभेद तथा दोनों भी हो सकते हैं, यथा-बास, बाँस, गोद, गोंद, इत्यादि' [१५]

---

१५. हिन्दी-भाषा का उद्गम और विकास : उदयनारायण तिवारी, द्वितीय संस्करण, सं. २०१८ वि., पृ. ३२१।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

अनुनासिक स्वरों के उच्चारण में स्थान वही रहता है किन्तु साथ ही कोमल तालु और कौवा कुछ नीचे झुक जाता है और बाहर आने वाली वायु का कुछ भाग मुखविवर के अतिरिक्त नासिकाविवर से भी निकलने लगता है जिससे स्वर में अनुनासिकता आ जाती है। हिन्दी में अं, आँ, इं, ईं, उं, ऊं, एं, ऐं, ओं, औं अनुनासिक स्वर हैं।

अनुस्वार यदि पँचवर्गीय अक्षरों के पूर्व आता है तो उसका उच्चारण सम्बन्धित वर्ग के पँचम अक्षर के समान होता है। यह अनुस्वार, इस प्रकार किसी व्यंजन ध्वनि का प्रतिनिधित्व करता है : यथा—

कंकाल (कङ्काल)
ठंडा (ठण्डा)
पंप (पम्प)
तंतु (तन्तु)

चन्द्र-विन्दु के बगैर प्रायः अर्थ में भ्रम की सम्भावना रहती है, जैसे—हंस-हँस-अंगना-अँगना, बास-बाँस आदि में। अतएव ऐसे भ्रम को दूर करने के लिये चन्द्रविन्दु का प्रयोग अवश्य किया जाना चाहिए, किन्तु चन्द्रबिन्दु के प्रयोग से लिपि, छपाई आदि में कठिनाई हो और चन्द्रबिन्दु के स्थान पर अनुस्वार का प्रयोग कोई भ्रम उत्पन्न न करे, वहाँ चन्द्रविन्दु के स्थान पर अनुस्वार के प्रयोग की भी छूट दी जा सकती है, जैसे-नहीं, में, मैं।

इस प्रकार हिन्दी-भाषा में अनुस्वार और अनुनासिकता में बाहुल्य होने के कारण और सूक्ष्म उच्चारण-भेद होने के कारण भ्रम हो जाता है। मानक राजलिपि में सुधारवादियों ने 'ङ्' और 'न्' के स्थान पर अनुस्वार के प्रयोग की छूट दे दी है, जिससे टंकन, मुद्रण और लेखन में भी सरलता आ गई है। कंकाल, ठंडा, पंचम जैसे रूप वैकल्पिक दृष्टि से मान्य हो गये हैं।

०६.०५. कतिपय वर्णों के अनेक रूपों का प्रचलन :—

हमारी नागरी-भाषा का उद्भव और विकास संस्कृत से हुआ है। हमारे देश में प्राचीन-काल में भी और वर्तमान समय में भी कई बोलियाँ और भाषा प्रचलित हैं। ये भाषाएँ देश के विभिन्न भागों में बोली जाती है, लिखी जाती हैं और इनका अपना साहित्य भी हैं। अतः मानव के स्वभाव के अनुसार विभिन्न भाषाभाषी लोग जब सम्पर्क में आते हैं तो उनके विचारों का आदान-प्रदान भाषा के द्वारा होता है। इसी प्रकार पत्र-व्यवहार के माध्यम से लिपि का भी आदान-प्रदान होता है। प्रत्येक भाषा की अपनी लिपि और वर्णमाला होती है। प्रायः लिपि नागरी का ही प्रयोग बहुतायत से होता है। फिर भी वर्णमाला के कुछ वर्णों में लिखने (बनावट) के दृष्टिकोण से अन्तर है जबकि अर्थ के दृष्टिकोण से वर्ण एक ही है। इस प्रकार एक ही वर्ण के अनेक रूप लिपि में प्रचलित हो गए। इनके रूपों में समानता है। प्रयोगाधिक्य के कारण वर्तमान समय में ये सभी प्रचलित रूप नागरी के हैं या नहीं -- इस विषय में जन-साधारण को निश्चित रूप से ज्ञान नहीं है। क्योंकि वे इस विषय पर विचार करना उनके कार्यक्षेत्र से परे है। उनका कार्य अपना काम चलाना है न कि अध्ययन करना। अतः इन बातों का अध्ययन तो केवल अध्येता ही करते हैं।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

हमारी नागरी में भी इसी प्रकार के कई वर्ण प्रचलित हैं जो इस प्रकार हैं—

अ — अ
ख — ख
छ — छ
ण — ण
घ — घ
भ — भ
ल — ल; ळ
श — श
क्ष — क्ष
त्र — त्र
ऋ — ऋ
झ — झ

र — ( ), ( ), ( ); ( ) ( )
श्र — श्र

'नागरी वर्ण—अ, ऋ; छ, ण, ल, श, क्ष, इ, ई, उ, ऊ, ए; ऐ, ओ; औ

मराठी वर्ण—अ, ऋ, छ, झ, ण, ळ, श; क्ष, अि, अी, अु, अू, अे, अै[१६]

एक ही वर्ण के कई रूप कुछ तो अन्य भाषाओं के सम्पर्क से प्रयोग में आने लगे। कुछ वर्ण मुद्रण के कारण आये क्योंकि मुद्रण के दृष्टिकोण से कई वर्णों के रूपों में परिवर्तन करके कुछ नये रूप प्रचलित हो गये। कुछ वर्ण लिपि-सुधार के प्रयत्नों द्वारा प्रचलित हो गये। क्योंकि नागरी-लिपि में समय-समय पर विभिन्न व्यक्तियों, संस्थाओं और समितियों के द्वारा सुधार किये गये और अभी भी प्रयत्न चल रहे हैं। आज लिपि संशोधनों के बाद केन्द्रीय सरकार के द्वारा मान्य लिपि में जो ध्वनि-चिह्न स्वीकृत हैं, वे हैं— अ, ऋ, छ, झ, ण, ल, ळ, श, क्ष, इ, ई, उ, ऊ, ए, ऐ।

इस निर्णय से देवनागरी में वैज्ञानिकता आ गई और भारतीय भाषा की ध्वनियों को अभिव्यक्त करने की क्षमता बढ़ गई। इसमें भारत की सब प्रादेशिक भाषाओं के लिए एक समान लिपि के प्रयोग की आवश्यकता पूर्ण हो जाती है।[१७]

०६.०६. वर्ण-संख्या की अधिकता :—

सुधारकों का कहना है कि 'नागरी' में बहुत से वर्ण हो गए हैं इसलिए मुद्रायंत्र (प्रेस) और छापयन्त्र (टाइप-रायटर) के सुभीते के लिए इन्हें कम करना चाहिए। उनकी दृष्टि में

---

१६. वाङ्मय-विमर्श : विश्वनाथप्रसाद मिश्र, तृतीय संस्करण, संवत् २००७, पृ. ४५१।
१७. लेख—ओमप्रकाश भाटिया 'अराज' : रजत जयन्ती अभिनन्दन ग्रन्थ : गोपाल व्यास पृ. ५८—५९।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

कुछ वर्ण भ्रामक भी हैं और संयुक्ताक्षरों के व्यर्थ ही स्वच्छन्द रूप हो गए हैं। रोमी या अरबी-फ़ारसी-लिपि के अनुकरण पर जो 'ख' को 'क्ह', 'घ' को 'ग्ह' लिखना चाहते हैं, वे इनकी अवैज्ञानिकता को दुर्लक्ष्य करते हैं। किसी परिवर्तन में परम्परा का विचार रखना ही बुद्धिमानी या वैज्ञानिकता हो सकती है, मनमानी नहीं। भ्रामक वर्णों में 'ख' और 'र' का नाम आता है। 'ख' का रूप 'र' और 'व' का मिला रूप-सा हो गया है। हिन्दी में तद्भव या संस्कृत के शब्दों में 'ख' के 'र व' समझे जाने या 'र व' के 'ख' समझे जाने की सम्भावना नहीं है, अरबी-फ़ारसी के शब्दों में ऐसा हो सकता है। 'रवाना' को 'खाना' पढ़ा जा सकता है पर प्रत्येक शब्द वाक्य में प्रयुक्त होकर कोई अर्थ भी व्यक्त करता है। आज तक हिन्दी में 'ख' और 'र व' की भ्राँति से कहाँ कठिनाई हुई। 'र' का रूप 'ए' में भी दिखाई पड़ता है। अतः 'ए' को परिवर्तित करने का भी सुझाव है। वस्तुतः सारे झगड़े की जड़ 'र' है। 'र' का व्यंजन रूप 'र' रेफ (ˆ) होकर वर्णों के मस्तक पर बैठता है। इसे भी भ्रामक कहा जाता है। वास्तविकता यह है कि 'र' के रूप हिन्दी में दो हैं। उसका एक रूप 'कोणवत्' होता है जो प्राचीन हस्तलिखित पुस्तकों में मिलता है और कैथी; महाजनी आदि लिपियों में चलता है। नागरी में वह रेफ और नीचे लगने वाले 'र' के रूप में बना है। संयुक्ताक्षरों में 'र' ऊपर रहकर रेफ होता है जो पहले 'कोणवत्' था पर अब गोल हो गया है। वर्णों के नीचे लगने पर उसकी दो रेखाओं में से एक व्यक्त रहती है और दूसरी वर्ण की खड़ी पाई में मिल जाती है। जहाँ मिलने का अवसर नहीं होता वहाँ वह अपने पूरे रूप में व्यक्त होता है। 'क्' में 'र' मिलकर 'क्र' होता है। इसमें वस्तुतः 'क' के नीचे 'र' का रूप कोणवत् (‸) है केवल एक रेखा '—' मात्र नहीं। 'क' की खड़ी मध्य रेखा में 'र' की दूसरी रेखा मिल गई है। इन रूपों में जो परिवर्धित देवनागरी है, उसमें सुधार किया गया है। रू, 'ख', ए को ण और र के ऊपर-नीचे के रूपों में क्रमशः गोलाकृति और वक्राकृति के रूप में परिवर्तित कर दिया गया है।[१८]

०.६ ०७. मुद्रण एवं टंकन की कठिनाइयाँ :—

(अ) मुद्रण :—

इस विषय पर सर्व-प्रथम संविधान-सभा ने विचार किया। उन्होंने इस कार्य का श्रीगणेश किया 'इन सबने मुद्रण के अतिरिक्त टंकणयन्त्रों और दूरमुद्रकों के लिए देवनागरी के उपयोग की समस्या पर भी विचार किया।'[१९] लेकिन इन यन्त्रों के लिए लिपि-सुधार का प्रश्न गौण और कुंजीपटल के मानवीकरण का प्रश्न प्रमुख रहा है। अतः लिपि-सुधार मुद्रण के पहलू से ही सम्बन्धित है।

मुद्रण के लिए, स्वरूप की दृष्टि से, मात्राओं के ऊपर-नीचे लगने तथा संयुक्ताक्षर वर्णों के कारण मुद्रण-यन्त्रों में भारी अवरोध उपस्थित होता है। छोटे आकार के अक्षरों की छपाई में या तो शिरोरेखा टूट जाती है अथवा वर्ण की चोटी या टाँगे (मात्राएँ) टूट जाती हैं। इधर

---

१८. 'भारतीय-लिपि'—हिन्दुस्तानी : दुर्गादत्त ओझा : जनवरी, १९३८। पृ. १०६–१०७.
१९. 'देवनागरी लिपि–सुधार : मदनमोहन विष्ठ; भाषा : त्रैमासिक, : जून, १९६२, पृ. १२५.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

इसके लिए अर्धसफल प्रयास हुए हैं। कुछ शब्द ऐसे हैं जिनमें मुद्रण के कारण लिखने में अन्तर हो गया है — मिलन, शान्ति, स्थित।

यह शब्दों का प्रचलित शुद्ध रूप है। इन शब्दों में 'इ' की मात्रा का दाहिना सिरा क्रमशः म, त और थ के दाहिने सिरे से छूना चाहिए—मिलन, शान्ति, स्थित।

आजकल इन शब्दों के इस प्रकार लिखने को कोई भी विद्वान व्यक्ति गलत नहीं कहता है।

इसी प्रकार	मुद्रण में
ब्रह्म, अपराह्ण	(I) ब्रह्म, अपराहन
शङ्ख, रञ्ज	(II) शंख, रंज
लिप्त, राष्ट्र	(III) लिप्त, राष्ट्र

अब चन्द्रबिन्दु के स्थान पर केवल बिन्दी का प्रयोग होता है। ऐसा मुद्रण की सुविधा के लिए किया गया क्योंकि ऐसा नहीं होने से चन्द्रबिन्दु शब्दों की शिरोरेखा के ठीक ऊपर नहीं छप पाता है बल्कि दाहिनी ओर कुछ आगे खिसक कर या दो शब्दों के मध्य शिरोरेखा के ऊपर छप जाता है। जिससे ऐसे छपे शब्द अलग-अलग छपते हैं। उनकी शिरोरेखा टूट जाती है। इसी तरह चन्द्रबिन्दु कहाँ पर लगाना चाहिए और अनुस्वार कहाँ लगाना चाहिए इसका भी ज्ञान न होने के कारण ये दोनों ही गलत स्थान पर प्रयुक्त हो जाते थे। इस समस्या का अन्त मात्र बिन्दी लगाकर कर दिया गया। कुछ संयुक्ताक्षरों के रूपों में तो इससे भी अधिक परिवर्तन किया गया है, जैसे—

पुराना रूप—निश्चय, पँक्ति
नया रूप—निश्चय, पंक्ति

वर्तमान में नागरी-लिपि में मात्राएँ अक्षरों के चारों ओर, दाहिने, बाँएं, ऊपर, नीचे इत्यादि स्थानों पर लगाई जाती है। दाहिनी और बाँई ओर की मात्राओं के कारण तो अब मुद्रण में कोई कठिनाई नहीं पड़ती। ा, ि, ी आदि मात्राएँ अलग से ढाली जाती है और अक्षरों में जोड़ दी जाती है।[२०] वास्तव में ऊपर-नीचे की मात्राओं के कारण कठिनाई का सामना करना पड़ता है, जैसे—यदि हमें 'वतन' छापना हो तो 'व', 'त' और न' की मुद्राओं को मिला देने पर 'वतन' शब्द प्राप्त हो जावेगा परन्तु यदि 'वेतन' छापना हो तो हमें 'व', 'त', और 'न' की मुद्रा में मात्रा ' े ' की मुद्रा को मिलाना होगा या फिर व में ' े ' की मात्रा मिलाकर पूरे 'वे' की मुद्रा को ढालना होगा। इस प्रकार प्रत्येक अक्षर के लिए दो प्रकार की मुद्राओं की आवश्यकता होगी। इससे कम्पोज करने में समय अधिक लगता है।

अतः हमें मुद्रण की सुविधा के लिए ऐसे प्रयत्न करना होंगे जिससे कम-से-कम मुद्राओं में, कम-से-कम अक्षरों में और कम-से-कम स्थान में कार्य हो जावे। रोमन-लिपि में २६ अक्षर होते हैं और इसलिए ये लोग १२५ प्रकार की मुद्राओं का उपयोग करते हैं।

---

२०. 'मुद्रण और नागरी-लिपि-सुधार' : ब्रजमोहन : भाषा, त्रैमासिक, सितम्बर, १९६२, पृ. ३०-३२।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

नागरी-लिपि में ५२ अक्षर होते हैं और इसलिए आज मुद्रणालयों में २१६ प्रकार की मुद्राएँ उपलब्ध हैं इसलिए देवनागरी-लिपि अपने स्वरूप की संरक्षा करते हुए मुद्रणोपयोगी सिद्ध हुई है। इससे उसकी वैज्ञानिकता बढ़ी है और वह भारतीय भाषाओं के सभी ध्वनि-संकेतों को मुद्रित करने में समर्थ है। भारत के सभी प्रान्तों के लिए केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय द्वारा प्रस्तुत परिवर्धित देवनागरी लिपि की मुद्राएँ मुद्रणोपयोगी वन गई है। [२१]

(व) टँकन :—

१९ वीं सदी में एक यांत्रिक युक्ति अपनाई गई जिसे 'टाइपरायटर' कहते हैं। सन् १७७४ में प्रोटोटाइप का पुराना रूप सामने आया। इस सदी के अन्त में दैनंदिन राजकार्य सम्बन्धी काम-काज में इसका प्रयोग होने लगा। **टाइपरायटर** में ८८ से ९२ चाभियाँ होती हैं। **'व्हेरी टाइपरायटर'** अपने 'की-बोर्ड' में एक सौ वीस अक्षरों की व्यवस्था करता है। **चायना का टाइपरायटर** जो कि जापान में वनाया गया है, आश्चर्यजनक रूप से ३००० ठोस लोहे के टंक लिखित संकेत अपने 'की-बोर्ड' में रख सकता है।

हमारे देश में भी टंकन-यन्त्र का प्रयोग प्रारम्भ हुआ। अँग्रेज़ी के समान देवनागरी लिपि टंकन का आविष्कार हुआ। प्रारम्भ में हमारी लिपि को लेकर इस विषय में विवाद हुआ। लोगों का मत था कि देवनागरी टंकन-यन्त्र के लिए उपयोगी लिपि नहीं है। इसके कई कारण थे। अन्त में देवनागरी-लिपि के टंकन-यन्त्र बने। प्रारम्भ में **अंडरवुड** और **रेमिंग्टन** इत्यादि के टाइपरायटर बने। 'इनमें ४२ से ४७ तक की 'की' थी। [२२] इन टाइपरायटरों के 'की-बोर्ड' में अन्तर था। अतः एक पर कार्य करने वाला व्यक्ति दूसरे पर कार्य करने में असमर्थ होता था। अतः भारत सरकार ने उक्त कठिनाई को ध्यान में रखकर उसमें सुधार करने के लिए 'स्टेण्डर्ड की वोर्ड' वनाने के लिए एक विशेष समिति गठित की। समिति ने दिसम्बर, १९५५ में अस्थायी 'की-वोर्ड' प्रकाशित किया था जिस पर लोगों की राय माँगी थी। उनके आधार पर उस 'की-बोर्ड' में कुछ परिवर्तन किये गये। इस समिति ने भाषा और यांत्रिक सुविधा, दोनों की दृष्टि से 'की-बोर्ड' बनाने पर विचार किया। उसने छानबीन के उपरान्त प्रायः प्रतिदिन कार्य में प्रयुक्त होने वाले अक्षर के आधार पर 'की-बोर्ड' बनाया। इसमें इस बात का विशेष ध्यान रखा गया कि किस अँगुली से कौन-सी कल दवाने में आसानी होती है।

०६.०८ टँकन की कठिनाइयाँ और उनका समाधान —

देवनागरी-लिपि में एक के बाद दूसरा बिम्ब (टाईप) लगाने से काम चल सके ऐसी सम्पूर्ण रूप में जहाँ तक न की जाय वहाँ तक यह आपत्ति रहेगी। इसके कारण मुद्रण योजना एवं मोनो-लिनो टाइप-यन्त्र, टाइप-रायटर, टेलिप्रिन्टर आदि में यांत्रिक असुविधा वहुत बाधाजनक प्रतीत हुई है। क्या देवनागरी लिपि की आज की विशिष्टता को रखते हुए ऐसा कोई संशोधन सम्भव है? यहाँ इस विषय में एक सुझाव है —

२१. वैज्ञानिकता के परिवेश में देवनागरी : बालकृष्ण, भाषा, त्रैमासिक : मार्च, १९७२, पृ. २८-२९।

२२. केसरी, रविवार-२ सितम्बर, १९५६, पृ. ८ का हिन्दी अनुवाद।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

(१) हमारे पास आज मूल स्वर 'अ, इ, उ, ऊ, ऋ, ए' ये संकेतों की दृष्टि से पड़े हैं। इनमें से 'आ, ई, ऐ, ओ, औ' चिन्हों की मदद से बनाये जाते हैं। ए–ऐ को निकाल दिया जाय, 'ओ–औ' की तरह उनको कर लिया जाय। गुजराती-लिपि में 'अ' से ही ये चार स्वर बनाये जाते हैं। 'ई–ऊ' को किस प्रकार से बनाना वह 'बाराखड़ी' के समय नीचे यथा-स्थान निर्दिष्ट होगा तो मूल संकेत 'अ, इ, उ, ऋ' इन चार से ही हमारा काम सिद्ध होगा।

(२) आज अनुस्वार और अनुनासिक उच्चारणों के लिये बिन्दु और सबिन्दु अर्धचन्द्र चिन्ह प्रचलित है, तो भी दोनों के लिये बिन्दु से ही काम चलाया जाता है। ये दोनों चिन्ह संकेत के ऊपर लगाये जाते हैं। यहाँ अखण्ड-बिम्ब (टाइप) न होने के कारण वर्ण ऊपर से काटा हुआ लेकर उसके ऊपर दोनों के चिन्हों के बिम्ब लगाये जाते हैं। मैं यहां वर्ण की दाहिनी ओर अनुस्वार के लिये (०) और अनुनासिक के लिये (˙ ˎ) इन दोनों चिन्हों का प्रयोग सूचित करता हूँ। यों इन दोनों चिन्हों से हमारा कार्य सभी स्थानों में सिद्ध होगा।

(३) व्यंजनों के साथ स्वरों के लघु-चिन्ह लगाये जाते हैं, इनमें मात्र 'आ' के विषय में 'ा' दाहिनी ओर आता है; अवशिष्ट चिन्हों में से या तो ऊपर अथवा नीचे, तो ह्रस्व इकारक ऊपर और बांई ओर, एवं दीर्घ ईकार का ऊपर और दाहिनी ओर लगाया जाता है। तीन माला (स्टोरेजेस) दूर करने के लिए–जिसको 'मोनो-लिनो टाइप-यन्त्र', 'टाइप-रायटर' एवं टेलिप्रिन्टर में बहुत जरूरत है, सुविधा भी होगी–हमेशा 'ा' की तरह सभी चिन्ह दाहिनी ओर ही आ रहे यह हमारी परम आवश्यकता है। 'इ' को यों दीर्घ 'ई' की सूचित रचना से और 'उ' को दीर्घ 'ऊ' की सूचित रचना से बनाना आसान बन जायगा। अंग्रेज़ी उच्चारण में विवृततर 'अँ,–'आँ' के लिये यहाँ उलटी मात्रा ही है, जैसे —

क] क 7, क ु कू क ृ क, दृ क > क < क ≥
(कि की कु कू कृ कॄ के कें कैं)

यों बताए हुए प्रकार के नव चिन्हों से हमारा कार्य 'बाराखड़ी' के विषय का सिद्ध होगा। 'ः' यह दसवाँ विसर्ग का कार्य तो महाविराम चिन्ह : (कोलन) से ही होता है। अनुस्वार-अनुनासिक के ऊपर बनाये गये नये चिन्ह ऊपर के बनाये गये सस्वर व्यंजनों की दाहिनो ओर आ जायेंगे।

यह ख्याल में रहना चाहिये कि आज 'रु', 'रू' में दाहिनी ओर ही 'उ-ऊ' की वरड़ी आती है। वह पुरानी पद्धति का अवशेष है। यह पद्धति देवनागरी की एक समय की व्यापक रूप में थी।

स्वर–अनुस्वार–अनुनासिक–विसर्ग और स्वर–चिन्ह ये सब मिलकर १७ बिम्ब (टाइप) यहाँ तक होते हैं।

(४) अब व्यंजनों का विचार करते समय संयुक्त व्यंजनों के विषय में कुछ संशोधन जरूरी है। आज संयुक्त व्यंजनों के कारण बहुत से बिम्ब (टाइप्स) आवश्यक बने हैं। 'ब्राह्मी–लिपि' में तो पूर्व व्यंजन ऊपर के भाग में और पिछला व्यंजन नीचे के भाग में

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

रखा जाता था। बिना पाई के व्यंजनों के विषय में यही पद्धति आज तक प्राय: चालू है। पाई वाले व्यंजनों की तो पाई हटाकर उनके द्वारा द्वितीय व्यंजन को आज लिखा–छापा जाता है। इनमें से भी कितनों के संयुक्त व्यंजनों को अखण्ड-बिम्ब (टाइप्स) बनाये गये हैं। इसी कारण कीलकों की संख्या बहुत बढ़ गई है।

जब संयुक्त व्यंजन प्रारम्भ में हो तब 'करण' और अन्त में हो तब 'नम्र' यों लिखना आवश्यक होगा। बिना पाई के सभी वर्ण जब आदि में हो तब हल्‌चिन्ह साथ ही लिखना–छापना आवश्यक होगा। नीचे का अलग माल (स्टोरी) बन न जाय इसीलिये अखण्ड-बिम्ब (टाइप्स) बनाते समय वर्ण का आकार जरा-सा छोटा करके हल्‌चिन्ह नाम में समा रहे इस प्रकार से कर लेने का होगा।

संस्कृत भाषा में पदान्त, हलन्त शब्दों का भी प्रयोग होता है, इसके लिये पाई वाला व्यंजन भी हल्‌चिन्ह वाले चाहिये इससे तो दूसरे २३ बिम्ब बढ़ जायं। इस आपत्ति का निवारण हल्‌चिन्ह वाली पाई स्वतन्त्र ही बना ली जाय और आधे व्यंजनों को दाहिनी ओर लाई जाय।

आज के देवनागरी तीन वर्ण–'ख', 'ध' और 'भ' के विषय में इतना जरूरी है कि 'ध' और 'भ' में ऊपर की पाँखड़ी में 'ध' जैसा शून्य का आकार किया जाय, जिससे उनकी 'घ' और 'म' की साथ होती हुई भ्रान्ति दूर हो जाय। 'ख' में 'र+व' की भ्रान्ति है। वह दूर करने के लिये गुजराती आकार का उसको बना लिया गया है। आजकल 'ख' का प्रचलन छापने में हो गया है। इसे टाइप ढालकर प्रयोग किया जाता है।

आकार की दृष्टि से मराठी घाट के 'अ, क, ञ, ण, फ, ल' और जैनी–देवनागरी के गुजराती प्रकार के 'शं' का समादर किया जाय।

बिना पाई के व्यंजन के बाद जब संयुक्तता में 'य' आता है तब पाँखड़ीवाला 'य' लिखा–छापा जाता है। यह आवश्यक लगता है। गुजराती–मराठी आदि एवं द्राविड़ी-कुल की भाषाओं के लिये जिह्वामूलीय 'ळ' की तो अनिवार्यता है ही।

संयुक्त व्यंजनों में 'क्ष' की अब कोई जरूरत नहीं है, वह तो 'क्‍ष' ही सिद्ध है: राष्ट्रभाषा-प्रचार-समिति ने इसका ही व्यापक प्रचार किया है, आसानी भी है। 'ज्ञ' का तो उच्चारण ही नष्ट हो गया है। तत्सम् शब्दों के लिये ही उसको रखा जाय जिनको 'श्र' का आग्रह हो वे 'श्र' को भी रख सकते हैं।

यों 'य', 'ष्ठ', 'ज्ञ', 'श्र' के साथ पूर्ण वर्णों की व्यंजन संख्या ३७, बिना पाई के 'ङ, छ, ट, ठ, ड, ड़, प, र, ह' व्यंजनों के हल्‌चिन्ह वाले स्वरूपों की ९, 'क, फ, ल, ष्ठ' के आधे आकार 'क, फ, ल' ये ४, पाई वाले व्यंजनों के पाईरहित आधे स्वरूपों की २३, हल्‌चिन्ह वाली पाई और (१), (२), (३) में बताई हुई १९ की संख्या, ये सब मिलकर संख्या ९१ की होगी।

हिन्दी में अनादि 'ड़–ढ़' के अर्ध तालव्य उच्चारण के लिये नीचे नुक्ता लगाया जाता है–ग्रामीणों में 'ग' का अघोष कण्ठ्य उच्चारण है और उर्दू, सिन्धी, अंग्रेज़ी आदि भाषाओं के कितने ही कुछ उच्चारण भी आये हैं जो कि समान व्यंजन के नीचे नुक्ता से बताये जाते हैं। 'अ़, फ़, ख़, ग़, ज़, ड़, ढ़, ग' ये आठ पूर्ण स्वरूप हैं।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

इस प्रकार टाइपरायटर का 'की-बोर्ड', टेलिप्रिन्टर और तार-लेखन के अनुरूप बना लिया गया है और वह प्रादेशिक-लिपियों को भी टंकित करने की क्षमता रखता है। इसलिए आज समाचार-पत्रों में भी दूर-लेखन के माध्यम से 'देवनागरी 'समाचार-सेवा' प्रारम्भ कर दी गई है। इस दृष्टि से देवनागरी-लिपि विश्वलिपियों के समकक्ष हो गई है।

०६.०९ शीघ्र-लेखन (आशु-लिपि) की कठिनाइयाँ :—

हिन्दी की देवनागरी-लिपि वैज्ञानिक है। इसका सम्बन्ध उच्चारण की ध्वनि से है। जब हम किसी भी शब्द का उच्चारण करते हैं तो उसमें उच्चरित किये जाने वाले शब्दों की ध्वनि पूरी-पूरी और स्पष्ट सुनाई देती है। कई शब्द पूर्ण होते हैं, कई आधे और कई शब्दों में अनुनासिक्य, अननुनासिक्य इत्यादि भी सम्मिलित होते हैं। सभी ध्वनियों का उच्चारण स्थान भी अलग-अलग है। देवनागरी-लिपि में शब्द का जैसा उच्चारण होता है उसे वैसे ही लिखा जाता है। इस लिपि का ध्वनि-चिन्हों में इस प्रकार परिवर्तन करके वर्णमाला का निर्माण किया है कि चाहे ध्वनि आधी हो या पूर्ण, उसमें उच्चारण-विभेद होगा और उसी के अनुरूप उसकी लिखावट होगी।

इस लिपि में अनुस्वार, चन्द्रबिन्दु, संयुक्त अक्षर, कई वर्णों के भिन्न-भिन्न प्रचलित रूप इत्यादि एवं अन्य भाषाओं के प्रभाव के कारण उनकी कुछ विशेषताओं से युक्त लिखावट, जैसे—उर्दू पर अरबी-फ़ारसी के प्रभाव के कारण देवनागरी-लिपि में लिखने पर शब्दों के नीचे नुक्ता लगाकर लिखने की पद्धति तथा अँग्रेज़ी के कारण पूर्ण विवृत कण्ठ्य ध्वनि के सम्मिलित उच्चारण के कारण शब्दों के सिर पर आधा चन्द्र बनाना, जैसे-डाक्टर के डा में अर्ध-चन्द्र लगाकर अँग्रेज़ी-भाषा के उच्चारण के अनुरूप 'डॉ.' लिखना के कारण लिखने में समस्या उत्पन्न होती है।

मानव का यह स्वभाव होता है कि वह कम-से-कम समय में अधिक-से-अधिक कार्य करना चाहता है। मानव का स्वभाव है कि वह आराम चाहता है। यही वृत्ति उच्चारण करने में भी देखी गई है। इसे भाषाविज्ञान की पारिभाषिक शब्दावली में 'प्रत्यन-लाघव' के नाम से जाना जाता है। जैसे वह 'जीजी' को 'जी', 'दादा' को 'दा'—'जीजाजी' को 'जीजा', 'उपाध्याय को 'झा' इत्यादि बोलना पसन्द करता है और बोलता भी है। मानव जितनी जल्दी से उच्चारण कर लेता है उसी गति से लिपि द्वारा लिपिबद्ध करना भी चाहता है। लिखने में इन सभी कारणों से उसे समय लगता है, वह शीघ्र-लेखन में कठिनाइयों का सामना करता है। अतः देवनागरी-लिपि पर यह आरोप लगाया जाता है कि वह शीघ्र-लेखन में कठिनाइयाँ उत्पन्न करती है या शीघ्र—लेखन के योग्य नहीं है। परन्तु आज-कल देवनागरी-लिपि में मुद्रण, टंकन, आशुलिपि और विभिन्न कठिनाइयों के कारण इसकी लिपि को दृष्टिगत रखते हुए इसमें समय-समय पर परिवर्तन हुए हैं। इन परिवर्तनों के लिये लिपि समितियाँ बनी हैं, सरकार के द्वारा विभिन्न आयोग गठित किये गये, जिन्होंने देवनागरी की लिपि सम्बन्धी समस्याओं पर ध्यान देकर उन समस्याओं का समय-समय पर निराकरण किया है।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

वर्तमान समय में देवनागरी-लिपि पर यह आरोप लगाना कि वह शीघ्र-लेखन में कठिनाइयाँ उत्पन्न करती है, गलत है।

शीघ्र-लेखन को अँग्रेज़ी में 'शार्ट-हेन्ड' कहा जाता है। यह एक प्रकार की 'संकेत-लिपि' होती है। इसमें मानव के भावों को जो वह जल्दी उच्चारण करके प्रयुक्त करता है लिपिवद्ध कर लिया जाता है। उसके आधार पर कम समय में, कम लिखकर पूरा-पूरा अंश लिख लिया जाता है। हिन्दी (देवनागरी) में इसे 'आशुलिपि' कहा जाता है। इसे शीघ्र-लेखन भी कहते हैं।

वैज्ञानिक-युग में प्रगति का मूल आधार भी गति ही है। किसी भी कार्य को शीघ्रता से सम्पादित करने में ही उसकी सफलता निहित है। जल्दी ही इस आवश्यकता ने हर चीज के लघु रूप को बनाने की प्रक्रिया को जन्म दिया। आशुलिपि का आविष्कार भी उसी प्रक्रिया की एक शृंखला है। कोई व्यक्ति कितनी ही जल्दी और कितना ही अधिक क्यों न बोले, उसे शीघ्रता से कुछ अंकनों में लिपिबद्ध करने की कला को ही आशु-लेखन की संज्ञा दी गई है। इस प्रकार की लेखन-पद्धति का सम्बन्ध महाभारत के रचनाकाल से भी जोड़ा गया है। कालिदास तथा तमिल की पुरानी रचनाओं में ऐसे लेखकों का उल्लेख मिलता है।

आज के हिन्दी आशु-लेखन का प्रश्न है—उसमें विभिन्न प्रणालियाँ प्रचलित हैं और सभी अँग्रेज़ी की आशुलिपि की प्रणालियों पर आधारित है।

किस-किस व्यक्ति ने, कितनी-कितनी गति प्राप्त की इसका कोई प्रामाणिक लेखा-जोखा सन् १९३५ ई. से पूर्व का उपलब्ध नहीं है। सन् १९३५ ई. में ब्यावर (राजस्थान) के श्री पूनमचन्द ने हिन्दी के लिए एक नई संकेत लिपि बनाई, जिसमें इन्दौर के हिन्दी साहित्य सम्मेलन के २४वें अधिवेशन की पूरी कार्रवाई लिखी गई। सन् १९४९ ई. में हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के ३८ वें अधिवेशन के अवसर पर काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा द्वारा सर्वप्रथम अखिल-भारतीय-हिन्दी संकेत-लिपि की प्रतियोगिता आयोजित की। इस कला को प्रोत्साहन देने के लिए 'केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद्' का योगदान महत्वपूर्ण है। इस संस्था ने आशुलिपि-प्रतियोगिता का नियमित रूप से आयोजन करके ऊँची गति पर आशु-लेखन के लिए अवसर उपलब्ध कराये हैं। आशुलिपि की गति का प्रति मिनिट का विवरण, प्रतिवर्ष के अनुसार इस प्रकार है —[२३]

२३. राष्ट्रभाषा सन्देश, शनिवार १६ जुलाई, १९७७, भाग-१३, अंक २, पृ. २

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

सन्	स्थान का नाम	गति प्रति मिनिट शब्द
१९६२	दिल्ली	१००, १२०, १५०, १८०, २००
१९६३	,,	२००
१९६४	दिल्ली, लखनऊ, पटना, भोपाल, जयपुर और बम्बई केन्द्रों पर.	१००; १२०, १५०. १८०; २००;
१९६५	दिल्ली	२००
१९६६	,,	२२०
१९६७	,,	१००, १२०, १५०, १८०, २००, २२०
१९६८	,,	२२०
१९६९	,,	२३०
१९७०	,,	२३०
१९७१, १९७२; १९७३ और १९७४	,,	२३०
१९७६	,,	२४०

इससे प्रमाणित होता है कि वर्तमान समय में देवनागरी— लिपि पर शीघ्र-लेखन (आशुलिपि) में कठिनाइयों का आरोप लगाना गलत है और अप्रमाणिक सिद्ध होता है, बल्कि ये विवरण इस बात की पुष्टि करते हैं कि देवनागरी-लिपि में परिवर्तन-परिवर्धन करके उसे इस योग्य बना दिया गया है कि वह अब अधिक-से-अधिक शीघ्र-लेखन (आशुलिपि) के अनुरूप है। यह (हिन्दी) जिसे संविधान में 'राजभाषा' घोषित किया है, अपनी विकास की स्थिति को और अपनी गरिमा को स्पष्ट करके राजभाषा के अधिकार को सफलता के साथ स्पष्ट करती है।

०६.१०. वर्तनी की समस्या :—

संविधान में हिन्दी को भारत की राजभाषा का पद मिला है और केन्द्रीय सरकार द्वारा परिवर्धित देवनागरी वर्णमाला लेखन के लिए स्वीकृत हुई है। हिन्दीतर प्रान्तों के कई लेखक जब उच्चारणानुसार अपने शब्दों को लिखते हैं तब वह उच्चारण अशुद्ध सा प्रतीत होता है। लेखन और उच्चारण की बहुसम्मत प्रणाली का मानकीकरण होना चाहिए और उनका उच्चारण उसी प्रकार करना चाहिए, यथा-'तेलुगु' भाषा का लेखन 'तेलगु' न कीजिये उसे 'तेलुगु' ही रहने दीजिये। इसी प्रकार तमिल के 'वणक्कम्' के रूप को यथावत् रहने दीजिए, उसे हिन्दी की प्रकृति के अनुकूल मत लिखिये। यही स्थिति 'पीतन', 'वेंकटेश्वर', 'भागवतुलु', 'काकिनाडा' आदि रूपों के सम्बन्ध में है। हिन्दीतर भाषियों की वर्तनी उनके उच्चारणानुकूल होना चाहिए।[२४]

२४. पिडपति वेंकटराम शास्त्री-'हिन्दीतर भाषाओं की वर्तनी और उच्चारण' : भाषा, त्रैमासिक, दिसम्बर १९७१, पृ. १९४-१०६

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

अं० रा० अंक	1	2	3	4	5	6	7	8	9	0
	भारत संविधान की आठवीं सूची में वर्णित भाषाओं के अंक									
संस्कृत	१	२	३	४	५	६	७	८	९	०
मराठी	१	२	३	४	५	६	७	८	९	०
हिन्दी	१	२	३	४	५	६	७	८	९	०
गुजराती	૧	૨	૩	૪	૫	૬	૭	૮	૯	૦
पंजाबी	੧	੨	੩	੪	੫	੬	੭	੮	੯	੦
कश्मीरी	𑇑	𑇒	𑇓	𑇔	𑇕	𑇖	𑇗	𑇘	𑇙	𑇐
बंगाली	১	২	৩	৪	৫	৬	৭	৮	৯	০
असामी	১	২	৩	৪	৫	৬	৭	৮	৯	০
उड़िया	୧	୨	୩	୪	୫	୬	୭	୮	୯	୦
कन्नड़	೧	೨	೩	೪	೫	೬	೭	೮	೯	೦
तेलगु	౧	౨	౩	౪	౫	౬	౭	౮	౯	౦
तमिल	௧	௨	௩	௪	௫	௬	௭	௮	௯	௰
मलयालम्	൧	൨	൩	൪	൫	൬	൭	൮	൯	൦
उर्दू	۱	۲	۳	۴	۵	۶	۷	۸	۹	۰

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

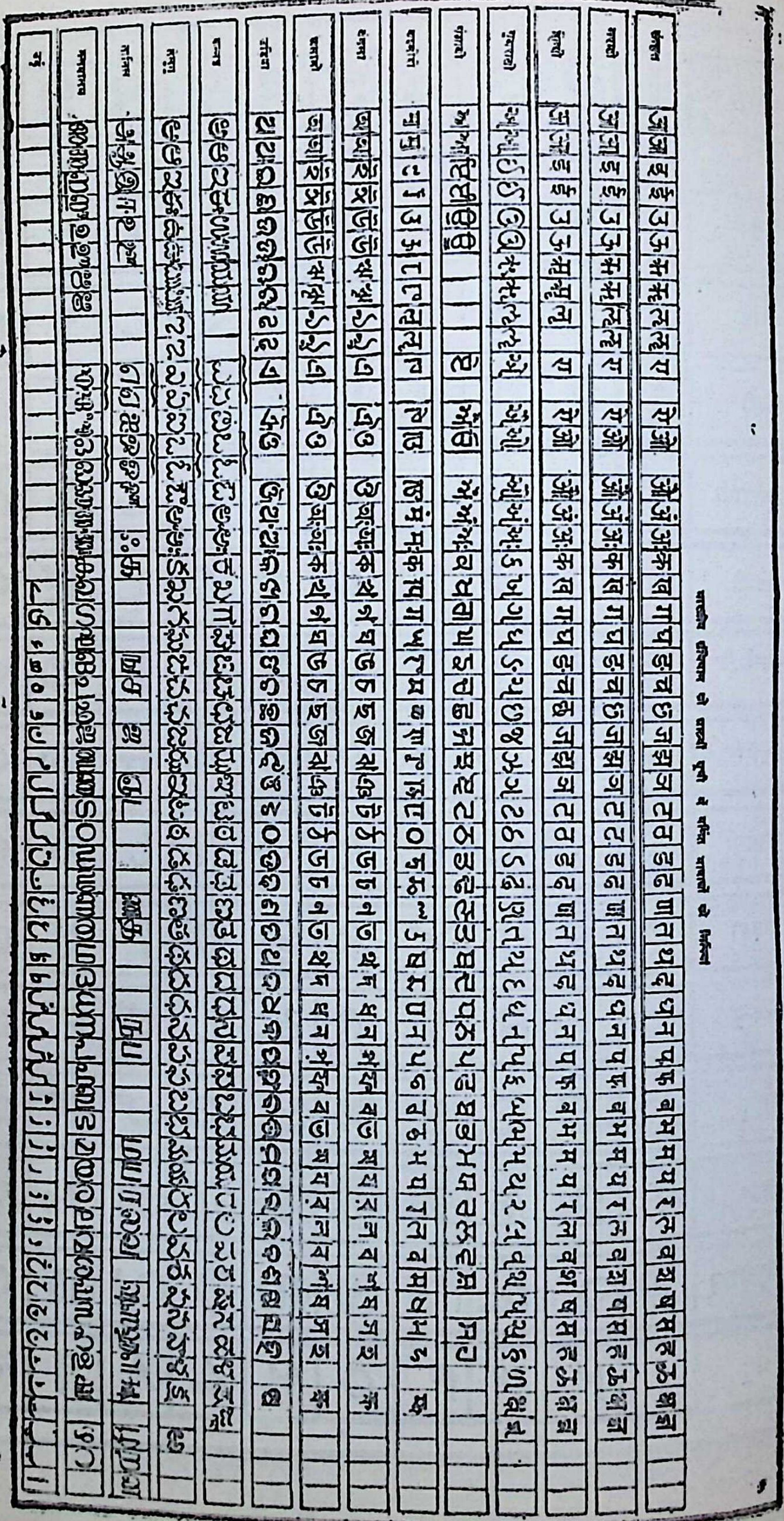
भारतीय संविधान की आठवीं सूची में वर्णित भाषाओं की लिपियाँ
संस्कृत
मराठी
हिन्दी
गुजराती
पंजाबी
कश्मीरी
बंगला
असमी
उड़िया
कन्नड़
तेलुगु
तामिल
मलयालम
उर्दू

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

राजभाषा–हिन्दी पर विभिन्न भाषाओं का प्रभाव पड़ा है, इसलिए उसके उच्चारण और लेखन में विभिन्नता आई है। इसलिए उसके समक्ष वर्तनी की अनेक समस्याओं ने एकरूपता की समस्या खड़ी कर दी है। देश–भेद, काल–भेद और उच्चारण–भेद से शब्दों के रूपों में बहुलता विद्यमान है, किन्तु यथा–सम्भव लेखन में यदि एकरूपता बनी रहे तो अनेक भ्रान्तियों का निराकरण हो जाता है। प्रमुख रूप से संस्कृत के तत्सम शब्दों, य–श्रुति, अनुस्वार, चन्द्रबिन्दु और परसर्ग, समास–शब्दों और विदेशी ध्वनियों के लेखन में ये समस्याएँ उत्पन्न होती हैं।

तत्सम शब्दों में, हिन्दी में शब्द के अन्तिम 'अ–कार' का उच्चारण नहीं होता, जैसे–'राम्', 'नाम्', 'खान्' आदि। इनमें हलन्त लगाया जाय या नहीं यह प्रश्न गम्भीर है। अब जब कि प्रादेशिक भाषाएँ हिन्दी से समरूपता स्थापित कर रही हैं तब उनकी मूल प्रकृति की संरक्षा हिन्दी में होना चाहिए। दक्षिणी भाषाओं में हलन्त की यह प्रवृत्ति नहीं है। इसलिए 'राम', 'नाम', 'खान' लिखना ही उचित है।

तत्सम शब्दों में, संयुक्त व्यंजनों में, द्वित्व किया जाता है, जैसे–अर्द्ध, वुद्ध, शुद्ध आदि। इन शब्दों में द्वित्व रूपों का प्रयोग होना ही चाहिए अन्यथा सार्थकता नष्ट हो जायेगी। 'य–श्रुति' की समस्या भी हिन्दी में अनिश्चितता पैदा करती है। यह संज्ञा, विशेषण और क्रिया के रूपों में आती है। संज्ञा में इकारान्त और ईकारान्त शब्दों के अन्त में 'य' का प्रयोग अनिवार्य है। जैसे–मुनियों और लड़कियों में। विशेषणों में कृदन्तिय–क्रियाओं के विशेषणों में 'य' जोड़ना अनिवार्य है, अन्यत्र नहीं। यथा–नया–नयी–नये, गया, गयी, गये आदि। इसी प्रकार आदरसूचक विधि–लिंग और सामान्य–भूत के उन क्रियाओं में लगता है, जहाँ एक वचन 'या' का आगमन होता है, जैसे—जाया, लाया, पाया। इनके बहुवचनों में 'ये' का प्रयोग कीजिये। इसी प्रकार आदरसूचक–विधि–लिंग में लिखिये, आइये, सोइये, दीजिये रूप शुद्ध हैं। उच्चारण के अनुकूल इन रूपों की शुद्धता वैध है। हिन्दी में अनुस्वार, चन्द्रबिन्दु और पंचम अक्षर का प्रयोग अराजकता पैदा करता है; इन तीनों स्थलों पर व्यावहारिक कठिनाई को दूर करने के लिये तथा टंकन, मुद्रण की सुविधा को बनाये रखने के लिये अनुस्वार के प्रयोग का समर्थन किया जाता है किन्तु अहिन्दी-भाषियों के लिए यह एक समस्या हो गई है। 'ङ' और 'ञ' का प्रयोग कम होता है। इसलिए उनके स्थान पर अनुस्वार का प्रयोग करने में कोई हानि नहीं है, किन्तु ण, न, म के बदले पँचमाक्षरों का प्रयोग करने में कोई हानि नहीं है, किन्तु ण, न, म के बदले पँचमाक्षरों का प्रयोग ही उचित है, जैसे–कण्टक, नन्दन और पम्प। अनुस्वार और चन्द्रबिन्दु में अन्तर है। इन दोनों का प्रयोग अलग-अलग होना चाहिए। साँस और सास, हंस और हँस, वंश और वश में भिन्नता होगी। उसी प्रकार कंस और कँस में अन्तर होगा। अतः अनुस्वार, चन्द्रबिन्दु और पँचम अक्षर हिन्दी की प्रकृति के अनुसार ही लिखें जांय। समास के शब्दों को अलग–अलग लिखने या योजक लगाकर लिखने की समस्या भी जटिल है। जहाँ तक हो सके, समासों को मिलाकर लिखा जाए। यथाशक्ति, नीलकमल, राधाकृष्ण, भूपति, राष्ट्रभाषा जैसे सामासिक शब्दों को सटाकर लिखना ही उपयुक्त है। विभक्तियाँ, संज्ञा और सर्वनाम दोनों में हटाकर लिखना चाहिए। इसी प्रकार आदरसूचक जी प्रत्यय को भी अलग लिखना चाहिए। 'शर्मा जी' लिखना उचित है, न कि 'शर्माजी'।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

विदेशी ध्वनियों के लेखन में अरबी-फ़ारसी शब्दों में नुक्ता लगाकर लिखना ही उचित है अन्यथा भिन्न अर्थ हो जाता है, यथा—जर (खींचना), ज़र (धन)। अरबी-फ़ारसी की ध्वनि क़, ख़, ग़, ज़, फ़ का लेखन उनकी प्रकृति के अनुकूल ही किया जाय तो अर्थ में स्पष्टता रहती है। इसी प्रकार अँग्रेज़ी की दोनों ध्वनियाँ 'ॅ' और 'ॉ' याने अर्द्धचन्द्र और अर्द्ध-एकार का प्रयोग जब किया जाए तो उनका लेखन भी उसी प्रकार का हो, यथा—'कॉलेज और गेराज़'। हिन्दी में कुछ ऐसे भी शब्द हैं, जिनके दो-दो रूप प्रचलित हैं, जैसे-'वापिस-वापस', 'गर्दन-गरदन', 'नरमी-नर्मी', 'दोबारा-दुबारा', इनमें से उसी शब्द को लिखा जाए जिसका प्रयोग अधिक होता है। इस प्रकार लेखन में अनेक-रूपता की समस्या ने लिपि के प्रश्न को उलझन-भरा बना दिया है। इसका निराकरण प्रयोग से होगा।

०६.०११ लिपि की समस्या :—

भारतीय भाषाओं के लेखन के लिए राजनीतिज्ञों, राष्ट्रवादियों और बुद्धिजीवियों ने देवनागरी लिपि को उपयुक्त माध्यम माना है। उसकी ऐतिहासिकता—भारतीय जीवन के प्रति अनुकूलता, लेखन में सरलता और अक्षरों में निश्चयात्मकता के कारण यह लिपि राजलिपि के पद की सर्वथा अधिकारिणी है। भारत में चार वर्गों की लिपियाँ प्रचलित हैं। इनमें पाश्चात्य देशों की रोमन, पश्चिम मध्य-एशिया की अरबी, मध्यएशिया की खरोष्ठी और दक्षिण-भारत की वहेलुतु लिपियाँ भारत में प्रचलित हैं। आर्य-भाषा-कुल की भाषाओं में ब्राह्मी-लिपि से विकसित नागरी-लिपि का प्रयोग होता है। इनमें १० वीं शताब्दी के बाद विकसित देवनागरी, शारदा, गुरुमुखी, महाजनी, कैथी, उड़िया, बंगाली और मोड़ी लिपियाँ प्रमुख हैं। इनके विकास का स्रोत एक ही है। हिन्दी, पंजाबी, गुजराती, मराठी, उड़िया, बंगाली, असमी और नेपाली भाषाएँ ब्राह्मी-लिपि से विकसित प्रादेशिक लिपियों में लिखी जाती है। उर्दू की लिपि अरबी-फ़ारसी है। कश्मीरी की लिपि शारदा है जबकि तमिल की ग्रन्थ, कन्नड़ की कन्नड़ी, तेलुगु की तेलगु और मलियालम की मलियाली-लिपि है। इन लिपियों के अंक और अक्षरों का उल्लेख संलग्न पत्रकों में किया जा रहा है। इन समस्त लिपियों के गुणों का विवेचन कर भारतीय संविधान-परिषद् ने देवनागरी लिपि को राजलिपि घोषित किया है। समस्या का निराकरण तो संसद में हो चुका है किन्तु इसके व्यावहारिक प्रयोग में अँग्रेज़ी-समर्थक, हिन्दी-विरोधी और उग्रभाषावादी शक्तियाँ बाधक बनी हुई हैं। इसकी ग्राह्यता और प्रयोगशीलता के महत्त्व को सभी स्वीकार करते हैं किन्तु विरोधी मनोवृत्ति के कारण राजकाज में इसका व्यवहार नहीं के बराबर है।

राजभाषा-हिन्दी के समान इसमें भी विद्वान लोग अव्यावहारिकता खोजते हैं। शिरोरेखा का प्रयोग अक्षरों के विविध-रूप, भारतीय भाषाओं और विदेशी भाषाओं के ध्वनियों के रूपन की अक्षमता, वर्तनी में अराजकता तथा मुद्रण, टँकन, शीघ्र-लेखन, दूर-लेखन, यन्त्रों के लिये अनुकूलता का आरोप लगाकर इसे अविकसित लिपि घोषित करते हैं।

०६.१२—लिपि-सुधार के प्रयत्न:—

देवनागरी लिपि के समर्थकों ने आत्म-निरीक्षण के द्वारा लिपि की दुर्बलताओं को दूर करने के लिये समय-समय पर सुधार किये हैं। ये सुधार सन् १९०९ से

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

लेकर आज तक हो रहे हैं। शारदाचरण मित्र और कृष्णस्वामी अय्यर के लिपि-विकास कान्फरेन्स के द्वारा सन् १९०९ से जो सुधार चले उनमें कुछ सुधार तो संस्थाओं द्वारा हुए और कुछ वैयक्तिक प्रयासों द्वारा। नागरी-प्रचारिणी-सभा, वाराणसी, हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग, श्री मध्यभारत हिन्दी-साहित्य-समिति, इन्दौर, राष्ट्रभाषा-प्रचार-समिति, वर्धा, दक्षिण-भारत-प्रचार-सभा, मद्रास, महाराष्ट्र-साहित्य-परिषद् पूना और प्रादेशिक हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, दिल्ली ने इस दिशा में पर्याप्त प्रयत्न किया है। वैयक्तिक प्रयासों में सावरकर बन्धुओं का प्रयास मौलिक है। उसके बाद बाल गंगाधर तिलक, काका कालेलकर, आचार्य नरेन्द्रदेव, किशोरीदास वाजपेयी, दुर्गादत्त ओझा और गौरीशंकर हीराचन्द्र ओझा, धीरेन्द्र वर्मा और ओमप्रकाश भाटिया के वैयक्तिक प्रयास सफल रहे हैं। [२५] शासकीय क्षेत्र में केन्द्रीय सरकार, उत्तरप्रदेश और मध्यप्रदेश शासन के प्रयास भी इस दिशा में उपयोगी रहे हैं। विनोबा भावे ने तो इस दिशा में क्रान्तिकारी कार्य किया है और इसे विश्वलिपि की उद्‌भावना की है। उन्होंने इसके लिये पर्याप्त श्रम किया और संशोधित लिपि आज केन्द्रीय शासन द्वारा मान्य होकर राजकाज में प्रयुक्त हो रही है। आत्म परिष्कार और लचीलेपन का यह श्रेष्ठ उदाहरण है। यही कारण है कि सब भारतीय भाषाओं के लिये विकल्प के रूप में प्रयोग करने की सिफारिश प्रथम राजभाषा-आयोग ने की है। [२६]

(अ) श्री शारदाचरण मित्र और उनकी 'एक-लिपि-विस्तार-परिषद्'—

श्री शारदाचरण मित्र कलकत्ता उच्च-न्यायालय के न्यायाधीश थे। ये अपने कार्य से अवकाश ग्रहण करने के उपरान्त सक्रिय रूप से हिन्दी-प्रचार का कार्य करते रहे। आपने अपने कार्य को अधिक-से-अधिक लोगों तक पहुँचाने के लिये तथा हिन्दी के अधिकाधिक प्रचार-प्रसार और लोकप्रिय बनाने के लिए 'देवनागर' नामक पत्र निकाला। सन् १९०५ में कलकत्ते में आपने 'एक-लिपि-विस्तार-परिषद्' की स्थापना की। बाबू बालमुकुन्द गुप्त, पं. जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी और बाबू ईश्वरीप्रसादजी वर्मा इस संस्था के सदस्य बने। [२७] इस संस्था का उद्देश्य था भारतीय भाषाओं के लिए एक-लिपि को प्रचलित और प्रतिष्ठित करना तथा देवनागरी-लिपि की वैज्ञानिकता, व्यापकता और व्यावहारिकता के कारण उसे एक सामान्य-लिपि बनाने के लिए वातावरण बनाना। संस्था के तत्वावधान में १९०७ ई. में 'देवनागर' नामक पत्र का प्रकाशन यशोदानन्दन 'अखौरी' के सम्पादकत्व में हुआ। [२८]

इस पत्र में हिन्दी-भाषा और लिपि के प्रचार-प्रसार के प्रयत्नों को प्रकाशित किया जाता था। हिन्दी की प्रादेशिक बोलियों की रचनाएँ, विभिन्न विरोधी-प्रचार के समन्वय की चेष्टा, व्याकरण और भाषा-विज्ञान सम्बन्धी लेख, इस पत्र में छापे जाते थे। हिन्दी और उसकी बोलियों के विषय में पर्याप्त मात्रा में प्रोत्साहन दिया जाता था। उस समय हिन्दी-

---

२५. नागरीलिपि में सुधार : किशोरीदास वाजपेयी : सम्मेलन पत्रिका : पौष १९९९ वि. : पृ. १९-२२।

२६. राजभाषा-आयोग का प्रतिवेदन १९५६ : भारत सरकार : पृ. १८६।

२७. हिन्दी-पत्रकारिता : डॉ. कृष्णबिहारी मिश्र, १९६८ पृ. २८५।

२८. वही, वही, पृ. २८५।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

पत्रकारिता अपनी शैशवावस्था में ही थी। पत्रकारिता पर अँग्रेज़ी शासन का अधिक नियन्त्रण था। हिन्दी के प्रचार-प्रसार के लिए अन्य पत्र उपलब्ध नहीं होते थे। ऐसी अवस्था में हिन्दी को अधिक-से-अधिक लोगों तक पहुँचाना, उसे बोधगम्य बनाने के लिये इस पत्र ने दिशा सुझाई। आपने वंग-साहित्य-परिषद् के अध्यक्ष पद से राष्ट्रभाषा और राष्ट्रलिपि की महत्ता प्रतिपादित की।[२९] शारदाचरण मित्र का उद्देश्य उनके देवनागर-पत्र के मुखपृष्ठ से ही स्पष्ट हो जाता है।[३०]

भारत में राष्ट्रभाषा के साथ लिपि का आन्दोलन संविधान निर्माण के समय से ही चल रहा है। पहले एक-लिपि का आन्दोलन और फिर सन् १९३३ ई. के उपरान्त महात्मा-गान्धी ने भी दो लिपियों के सिद्धान्तों का समर्थन किया। वे चाहते थे हिन्दुस्तानी (हिन्दी, उर्दू) अलग-अलग और अपनी-अपनी लिपियों में लिखी जायें। गान्धीजी ने नागरी और फ़ारसी-लिपि का समर्थन किया। शारदाचरण मित्र ने हिन्दी-साहित्य में एक निबन्ध लिखकर भेजा उसमें वे लिखते हैं—'हिन्दी समस्त आर्यावर्त्त (भारत) की भाषा है। कलकत्ते की 'एक लिपि विस्तार-परिषद्' समस्त भारतवर्ष में एक नागरी-लिपि के प्रचार करने में तन, मन से लगी हुई है। यद्यपि मैं बंगाली हूँ तथापि मेरे दफ्तर की भाषा हिन्दी है। इस वृद्धावस्था में मेरे लिए वह गौरव का दिन होगा जिस दिन मैं हिन्दी स्वच्छन्दता के साथ बोलने लगूँगा और प्लेटफार्म के ऊपर खड़ा होकर हिन्दी में वक्तृता दूँगा। उसी दिन मेरा जीवन सफल होगा जिस दिन मैं सारे भारतवासियों के साथ साधु हिन्दी में वार्तालाप करूँगा।[३१] इसी प्रकार के विचार विनोबा भावे ने भी सन् १९४९ ई. में व्यक्त किये थे—'सभी भाषाएँ नागरी—लिपि में लिखी जानी चाहिए'।[३२]

---

२९. वर्तमान हिन्दी अनेक परिमाणंइ आमादेर राष्ट्रभाषारं अभाव पूरण करिते पारे, हिन्दी सहजेइ शिक्षा करा जाय, सुतरा सहजेइ, आयुर्यावर्त्तेर राष्ट्रभाषा हइते पारे किन्तु राष्ट्रभाषा यथा समये कि अवयव धारण करिबे, ताहा एखन बला जायना। शब्दोच्चारणेर नैसर्गिक भेद द्वारा भाषार ओ शब्देर स्वभाव सिद्ध पुनर्गठन कर ले अन्यान्य देशीय वैज्ञानिक कृषि वाणिज्ये ओ शिल्प विषयक शब्दे ओ संस्कृत शब्देर अधिक परिमाणे व्यवहार द्वारा राष्ट्रभाषा एक नूतन आकार धारण करिते पारे। बांगला ओर हिन्दीत्तर मित्तिमूले समस्ते भारतवर्षेर विद्वज्जन व्यवहार योग्य नूतन आकारे राष्ट्रभाषा सर्वजन समाहृत हइते पारे। हिन्दी—पत्रकारिता : डॉ. कृ बि. मिश्र, पृ० २९७।

३०. श्रीमद् भारत वर्ष भूतिभरितैर्नाना विधैर्भाविनै :।
पूर्णं भारत भव्य मानव मनो—बन्ध्याय सूत्रं हृदम्।
श्री देवाक्ष रदक्ष मैकलिपि विस्तारैकवीरं नवं।
पत्रं राजति देवनागर महो गृहणन्तु तत्कोविदः॥
—हिन्दी-पत्रकारिता : डॉ कृ बि. मि. : पृ. २९०.

३१ राष्ट्रभाषा का इतिहास—किशोरीदास वाजपेयी, पृ. २६—२७.

३२. वही वही पृ २७.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

(ब) काका कालेलकर –

नागरी-लिपि को सरल और सुबोध बनाने के लिये काका कालेलकर ने समय-समय पर अपने विचार व्यक्त किये हैं। उनका स्पष्ट मत है कि लिपि-सुधार के बिना देश में नागरी को फैलाना सम्भव नहीं है। लिपि-सुधार के बिना हिन्दी का प्रचार आसानी से नहीं होगा।[३३] उनके लिपि-सुधार सम्बन्धी विचार इस प्रकार हैं—[३४]

'नागरी-लिपि में तीन मजली की जगह एक मजली का कम्पोजिंग तुरन्त मान्य करना पड़ेगा। यह एक बात और अक्षरों की संख्या अगर आसानी से थोड़ी भी कम कर सकें तो टाइप-रायटर ज़ोरों से चल सकेगा, यह दूसरी बात। अब हम थोड़े नागरी के सुधारों को 'ए', 'इ', 'उ', उन्हें भी 'अ' के खानदान में लाना चाहते हैं। बच्चों को दोनों रूप सिखाएँगे। लेकिन छापने में, टाइपरायटर में 'अ' की स्वराखड़ी के रूप रखेंगे। ये नये रूप सीखने में तकलीफ नहीं पड़ती। लिखना भी कठिन नहीं है। सबके सब स्वर 'अ' के खानदान में आ जाएँगे। इसे हम 'अ' की स्वराखड़ी कहते हैं। जैसे—स, सा, सि, सी, सु, सू, से, सै, सो, सौ, सं, सः, लिखा जाता है, वैसे, अ, आ, अि, अी, अु, अू अे, अै, ओ, औ लिखा जाएगा और छापा जायेगा।

अब 'अ' की स्वराखड़ी लीजिए। जिसमें ह्रस्व 'अि (इ)' 'ि' का एक सुधार किया है। अपने व्यंजन के पहले 'ि' न आवे। उच्चारण क्रम में प्रथम व्यंजन, बाद में उसका स्वर-चिह्न, यही नियम निरपवाद चलाना अच्छा होगा। हमें विश्वास है कि इसमें किसी का विरोध नहीं होगा।

बस 'अ' की स्वराखड़ी, व्यंजनों के लिए एक मजली बाराखड़ी, ह्रस्व 'इ' का चिह्न उच्चारणक्रम से अक्षरों के बाद आ जाए और नया 'ख' लिया जाय। इतना ही नागरी-लिपि में सुधार हम चाहते हैं।[३५]

(स) काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा : श्रीनिवास शास्त्री एवं गोरखनाथ चौबे—

सभा ने लिपि-सुधार के जो आधार रखे वे हैं—

१. उपयोगिता और प्रचार की दृष्टि से वर्तमान नागरी-लिपि में सुधार और पुनः संस्कार करने की आवश्यकता है।

२. (क) हिन्दी-भाषा की जिन उच्चरित ध्वनियों के लिए प्रचलित वर्णमाला में वर्ण नहीं हैं उनके लिए नवीन संकेत स्थिर करना।

---

३३. 'अगर नागरी को बचाना है' : मंगल प्रभात, मंगलवार २१ जनवरी : १९५८।

३४. नागरीलिपि में सुधार : काका कालेलकर : नई दुनिया : २८ फरवरी. १९७६, पृ. ४।

३५. दैनिक नई दुनिया : दिनांक २८ फरवरी. १९७६, पृ ४।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

(ख) भारत की विभिन्न प्रान्तीय भाषाओं की विशेष ध्वनियों को व्यक्त करने के लिए संकेत बनाना।

(ग) अन्य विदेशी भाषाओं की विशेष ध्वनियों के लिए संकेत स्थिर करके नागरी-लिपि को ऐसा व्यापक रूप देना जिसमें समस्त भाषाएँ लिखी जा सकें।

३. आवश्यकतावश नागरीलिपि का पुनः संस्कार करते समय निम्नलिखित बातों पर ध्यान रखा जाय—

(क) लिपि के प्रचलित रूप से प्रतिसंस्कृत-लिपि का यथासम्भव अपार्थक्य और अनुच्छेद बनाये रखना।

(ख) लेखन-सौकार्य और मुद्रण-सौकार्य के लिए प्रयत्न करना।

(ग) संयोगस्थलों में संयुक्त वर्णों की ऐसी आकृति रखना जिसके पहचानने में भ्राँति न हो।

(घ) लिपि-सौन्दर्य की रक्षा करना।

४. किसी सुधार और संस्कार पर सभा की स्वीकृति दिलाने के पहले जितने महत्वपूर्ण प्रयत्न अब तक लिपि को उपयोगी बनाने के लिए किये गये हैं उन्हें एकत्र करके उन पर विचार करना।

सभा ने अंत में ये सुधार मान्य किये :—

१. यद्यपि प्रचलित रीति के अनुसार संयुक्ताक्षरों को ऊपर-नीचे लिखने तथा मात्राओं को ऊपर, नीचे, आगे, पीछे लगाने की स्वतन्त्रता हस्तलिपि में बरती जा सकती है तथापि मुद्रण-सौकार्य के लिए यह आवश्यक है कि नागरी-लिपि के संयुक्ताक्षर और मात्राएँ दाहिनी ओर बगल में एक ही पँक्ति में लगाई जाएँ।

(क) स्वरों के सम्बन्ध में एक को छोड़कर प्रायः सभी योजनाओं में 'अ' की बारहखड़ी बनाई गई है।

(ख) संयुक्त व्यंजनों को प्रायः एक ही पँक्ति में रखने की विधि स्वीकृत की गई है।

इन सुधारों में श्रीनिवास शास्त्री और गोरखनाथ चौबे के मतों का प्रभाव था जो इस प्रकार है—

(अ) श्रीनिवास शास्त्री के प्रयत्न :—

सुधार के इन प्रयत्नों में श्रीनिवास का प्रयत्न समिति को विशेष संगत प्रतीत हुआ। इन्होंने समूचे 'अ' की बारहखड़ी नहीं की है जो विज्ञान और व्यवहार दोनों की दृष्टि से

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

भ्रामक और अशुद्ध है। ये 'अ' के असंकेतित अतएव निरर्थक अंश के साथ मात्राओं का प्रयोग करके स्वरों का बोध कराते हैं, ऐसा करने से स्वरों में समानता भी आ गई है और प्रत्येक स्वर का लिपिगत रूप भी भिन्न हो गया है। इनकी स्वर-लिपि में एकमात्रिक ह्रस्व और द्विमात्रिक दीर्घ इस परम्परा का निर्वाह भी है। श्रीनिवास प्रत्येक वर्ण की खड़ीरेखा पूर्ण या अपूर्ण को स्वर की मात्रा मानते हैं और उसके प्रयोग से वर्ण को सस्वर और अप्रयोग से अस्वर समझते हैं। इसी प्रकार प्रथम वर्ग के प्रथम और तृतीय वर्णों में महाप्राण का कल्पित चिह्न लगाकर द्वितीय और चतुर्थ वर्णों का बोध कराते हैं। पँचम वर्णों की आकृति भी ये भिन्न नहीं रखते। अपने-अपने वर्ग के किसी अल्पप्राण वर्ण में अनुस्वार का चिन्ह लगाकर उन्हें व्यक्त करते हैं, जैसे—'प' में अनुस्वार का चिह्न 'म' होता है।

यद्यपि ये कल्पनाएँ नवीन हैं और प्राचीन रूपों से इनमें पार्थक्य बहुत है तथापि टाइपराइटर या लाइनोटाइप द्वारा मुद्रण में इनसे बड़ी सुगमता आ जाती है। इस सम्बन्ध में कतिपय अन्य सुझावों से इनका यह सुझाव सर्वथा सरल और व्यवस्थित है, इसमें सन्देह नहीं है। इन सुझावों में समिति को दो बातें खटकती हैं, एक तो महाप्राण चिह्न इतना सूक्ष्म है कि उसके स्पष्ट न होने पर 'भाप' 'बाप' हो जायगा और दूसरे पँचम वर्ण लिखने में अनुस्वार का चिह्न किस अल्पप्राण में जोड़ा जाय यह अनिश्चित है।

(ब) गोरखनाथ चौबे :—

गोरखनाथ चौबे ने लिपि-सुधार के सम्बन्ध में अपने सुझाव दिये हैं वे सुझाव छपाई के दृष्टिकोण से अधिक महत्वपूर्ण हैं। उनके सुझावों का सार इस प्रकार है—उ ऊ, ऋ, ए, ऐ, ओ, औ की मात्राओं तथा अनुस्वार और अर्द्धचन्द्र को कुछ दाहिनी ओर हटाकर लिखने से हिन्दी टाइप की संख्या ७०० से घटकर २०० रह जाएगी। इन्होंने अपने सुझावों को मूर्त्त रूप भी दिया परन्तु ये सुधार अमान्य हो गये।

(२) राधाकृष्णन् कमेटी :—

उत्तर-प्रदेश की सरकार ने आचार्य नरेन्द्रदेव की अध्यक्षता में सन् १९४७ ई. में एक समिति का निर्माण किया। बम्बई सरकार ने मराठी-गुजराती-लिपि समन्वय की दृष्टि से विचार-विमर्श के लिए एक समिति नियुक्त की। टंक-लेखन और लघु-लेखन के लिये काका कालेलकर की अध्यक्षता में केन्द्रीय सरकार द्वारा एक समिति नियुक्त हुई। इन सभी समितियों की सिफारिशों के गुण-दोष दोनों पर लखनऊ-परिषद् में विचार हुआ। यह परिषद् उपराष्ट्रपति डॉ. एस. राधाकृष्णन् की अध्यक्षता में नवम्बर सन् १९५३ ई. में बुलाई गई। इसमें राज्यों के प्रतिनिधि, कुछ प्रमुख व्यक्ति और भाषाविज्ञ, केन्द्रीय सरकार के कुछ मन्त्री और शिक्षा-मन्त्रालय के सचिव ने भाग लिया। कांफ्रेन्स ने देवनागरी-लिपि के रूप का एक नये ढंग से प्रतिमानीकरण किया। सम्मेलन का ब्यौरा इस प्रकार है।[३६]

डॉ. राधाकृष्णन-समिति के अनुसार नागरी-लिपि में 'ए' व 'ओ' के ह्रस्व स्वर नहीं है। 'द्राविड़ कझागम्' में तमिल 'झ' का उच्चारण नागरी के 'झ' से नहीं होता। तमिल में

३६. केसरी, शुक्रवार, ११ दिसम्बर, १९५३, पृ. ५।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

प्रयुक्त कठोर 'र' की देवनागरी में कमी है। उसी प्रकार घ, ध, म, भ, ख, व, र, ब, का लिपि-भेद नवसिखियों के ध्यान में शीघ्र नहीं आता। अतः सम्मेलन में इन सब ज्ञातव्यों पर विचार किया गया। देवनागरी को सर्व-सुलभ बनाने की दृष्टि से उसमें सुधार करना इस सम्मेलन का उद्देश्य है।

सम्मेलन में स्वीकार किये गये सुधार :—

(१) नागरी में सब स्वर पूर्ववत् रहने दिये गये। 'अ' का स्वरूप हिन्दी की अपेक्षा मराठी निश्चित किया गया।

(२) मात्राएँ पहले की ही भाँति कायम रहने दी गई। केवल ह्रस्व 'ि' में परिवर्तन किया गया। दीर्घ 'ी' के अनुसार वह मात्रा भी दाहिनी ओर रहेगी किन्तु वह दीर्घ 'ी' की अपेक्षा छोटी रहेगी। जैसे ह्रस्व 'की' व दीर्घ 'की' (पर इस सुधार से गड़बड़ बढ़ जाना ही अधिक सम्भव प्रतीत होता है)।

(३) अंक पूर्ववत् कायम रहने दिये गये। केवल ६ अंक का स्वरूप हिन्दी के बदले में मराठी ९ के अनुसार रहेगा।

(४) अँग्रेज़ी के सभी विराम-चिह्न कायम रहने दिये गये। पूर्ण-विराम के लिये (.) चिन्ह का उपयोग न करते हुए संस्कृत व हिन्दी के अनुसार (।) दण्ड देने का निश्चय हुआ। उसी प्रकार अँग्रेज़ी का (˙) पूर्ण-विराम भी निकाल दिया गया।

(५) 'ं' अनुस्वार की भाँति 'ँ' अर्धचन्द्र अनुस्वार भी रहने दिया गया।

(६) व्यंजनों में 'झ', 'ण', 'क्ष', 'ज्ञ', 'ल', 'छ', 'ख', 'भ', 'ध', 'ह' आदि अक्षरों में संशोधन सुझाये गये, 'ख' लिखते समय 'र' का अन्तिम भाग 'व' में जोड़ा जाय। हिन्दी के 'छ' के स्थान पर मराठी 'छ', हिन्दी झ बदलकर मराठी 'झ' हिन्दी 'ण' के स्थान पर मराठी 'ण' किया गया। घ, भ पर अच्छी गांठ दी जाय (ध, भ)। नरेन्द्रदेव समिति ने 'न' की सिफारिश की थी परन्तु सम्मेलन में 'र' ही हुआ।

(७) अक्षरों की शिरोरेखा ज्यों-की-त्यों रहने दी गई। यह सुझाव दिया गया था कि गुजराती में शिरोरेखा नहीं होने से उसके लेखन में गतिशीलता है परन्तु उससे लिपि की स्पष्टता नष्ट होती है। अतः शिरोरेखा रहने दी गई। इन संशोधनों को सभी लोगों ने मान्यता दी।

(ल) नरेन्द्रदेव कमेटी :—

सन् १९४७ ई में उत्तर-प्रदेश सरकार ने आचार्य नरेन्द्रदेव की अध्यक्षता में देश के प्रख्यात भाषावैज्ञानिकों की एक समिति का गठन किया। डॉ. धीरेन्द्र वर्मा, मंगलदेव शास्त्री आदि इस समिति के सदस्य थे। इस समिति ने सन् १९४८ ई. में केन्द्रीय सरकार द्वारा

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

संस्थापित 'हिन्दुस्तानी शीघ्रलिपि तथा लेखन-यंत्र-समिति' से विचारविमर्श करके कुछ महत्वपूर्ण सुझाव दिये—

(१) अ की बारहखड़ी न बनाई जाए।

(२) ह्रस्व 'इ' की मात्रा भी दांई ओर लगाई जाय। अन्य स्वरों की मात्राओं में कोई परिवर्तन न किया जाए।

(३) किसी व्यंजन के नीचे दूसरा व्यंजन न लगाया जाए।

(४) सुधार के नाम पर नागरी-लिपि में अवांछनीय आमूल परिवर्तन न किए जाएँ। मशीन की सुविधा के लिए भी कोई अवांछनीय परिवर्तन न किए जाएँ।

(५) मुद्रण और टँकन की सुविधा के लिए मात्राएँ, अनुस्वार, अर्धचन्द्र तथा रेफ अपने वर्तमान स्थान से कुछ दाहिनी ओर हटाकर लगाए जाएँ।

(६) अनुस्वार के स्थान पर शून्य और अर्धचन्द्र के स्थान पर विन्दु का प्रयोग हो।

(७) शिरोरेखा लगाई जाए।

(८) 'त्र्' का रूप 'अ' हो तथा छ, भ्क, ण, ध, भ, के लिए केवल छ, झ, ण, ध, भ, ल, रूपों का प्रयोग हो।

(९) 'क्ष' और 'त्र' के लिए क्रमशः 'क्ष' और 'त्र' लिखे जाएँ,

(१०) अंकों में ९ का रूप ९ हो। शेष यथावत् रहें।

(११) मराठी ळ (मूर्धन्य ल) को वर्णमाला में शामिल कर लिया जाए।

(१२) अँगरेज़ी के सब विराम–चिन्ह ले लिए जाएँ। केवल पूर्ण-विराम के लिए खड़ीपाई (।) का प्रयोग चलता रहे।

इसके पश्चात् उत्तर-प्रदेश सरकार ने मंत्रियों और विद्वानों की एक सभा आमंत्रित की जिसके समक्ष 'नरेन्द्रदेव समिति' के द्वारा सुझाये गये सुझावों को रखकर उन पर गहन विचारविमर्श किया। तद्पश्चात् कुछ परिवर्तनों के साथ समिति द्वारा सुझाये गये सुझावों को स्वीकृत किया गया।

नरेन्द्रदेव समिति के सुझावों में परिवर्तन :—

(१) 'क्ष' के स्थान पर 'क्ष' को स्वीकार नहीं किया।

(२) 'इ' की मात्रा दाहिनी ओर लगाने का सुझाव मान्य किया गया परन्तु उसे पूरी पाई के स्थान पर आधीपाई के ऊपर, लगाने का निश्चय किया गया। जिस के कारण बड़ी 'ई' की मात्रा से भेद रहे जैसे—हीन्दी (हिन्दी) इन सुझावों को उत्तर-प्रदेश सरकार ने कार्य रूप में परिणत करके इनके प्रयोग को व्यावहारिक रूप में देखने की चेष्टा करने के लिए छोटी कक्षाओं की कुछ पुस्तकें छापी,

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

परन्तु उसमें 'इ' की मात्रा के परिवर्तन से 'इ' और 'ई' की मात्राओं में अन्तर बड़ा ही सूक्ष्म पाया गया। अन्य सुधारों को केवल छापखानों ने ही अपनाया।

(ब) विनोबा भावे :—

आचार्य विनोबा भावे ने देवनागरीलिपि के लिए एक लम्बे समय तक कार्य किया। उनका 'भूदान–यज्ञ' आन्दोलन जितना महत्व रखता है उतना ही महत्वपूर्ण कार्य उनका नागरी–लिपि के सुधार के सम्बन्ध में है। वे चाहते थे कि नागरी एशिया की सभी भाषाओं की अतिरिक्त लिपि बनें। यह बात उन्होंने अखिल-भारतीय-नागरी-सम्मेलन में कही। उनका विचार था कि विभिन्न भाषाओं की अपनी-अपनी लिपियाँ भी प्रचलित रह सकती हैं लेकिन देवनागरी-लिपि को अतिरिक्त लिपि स्वीकार की जानी चाहिए।[३७] आज हिन्दी, मराठी, गुजराती, नेपाली भाषाएँ नागरी में ही लिखी जाती है। अन्य भाषा-भाषी लोगों से जो हमारा पत्र-व्यवहार चलता है वह अगर नागरी में चले तो हम अनेक भाषाओं के लिये एक लिपि बना सकेंगे। अन्यथा हमें अलग-अलग भाषाओं के लिये अलग-अलग लिपियाँ सीखना पड़ेगी। यदि सम्पूर्ण देश में एक लिपि होती तो अच्छा होता।[३८] इन विचारों के कारण ही विनोबाजी चाहते थे कि उर्दू–शैली के लिये भी नागरी-लिपि का प्रयोग किया जा सकता है।[३९] जिससे देश की एकता, नागरी की शक्ति और भारत में मुसलमानों की प्रतिष्ठा भी बढ़ेगी। इससे धर्म, संस्कृति और साहित्य में वृद्धि होगी। अतः उनका विचार है कि उर्दू समर्थकों को नागरी-लिपि अपनाने से सब प्रकार से लाभ ही है। पवनार आश्रम में शिक्षा-विदों एवं साहित्यकारों के हो रहे सम्मेलन के अवसर पर प्रकाशित पुस्तिका में विनोबा भावे ने लिखा—'हिन्दी तो देश का एकीकरण नहीं कर पायी किन्तु नागरी-लिपि के माध्यम से राष्ट्रीय ऐक्य स्थापित किया जा सकता है। आपने कहा है कि नागरी-लिपि देश की सभी भारतीय भाषाओं को एक सूत्र में बाँधकर उन्हें निकट लाने की क्षमता रखती है। देश में वर्तमान में विभिन्न विघटनात्मक प्रवृत्तियाँ उमड़ रही हैं। ऐसी स्थिति में यदि नागरी-लिपि की एकीकरण करने की क्षमता का समुचित उपयोग किया गया तो स्थिति में बहुत कुछ सुधार हो सकता है।[४०] नागरी-लिपि एक ऐसी लिपि है जिसमें अधिक सुधार की आवश्यकता नहीं है। पहले आवश्यकता इस बात की है कि उसे सम्पूर्ण देश में कार्यान्वित किया जावे, ऐसा मेरा आग्रह है। आग्रह का तात्पर्य यह नहीं है कि नागरी सब पर लादी जाए। इसका प्रयोग करने का अर्थ यह भी नहीं है कि अन्य लिपियों का निषेध किया जाय।'[४१] नागरी-लिपि में सुधार की अधिक गुंजाइश नहीं है क्योंकि नागरी-लिपि से बढ़कर वैज्ञानिक लिपि

---

३७. राष्ट्रभाषा सन्देश, १ अप्रैल, १९७६, भाग—११, अंक १७–१८, पृष्ठ १।

३८. राष्ट्रभाषा पत्रिका, वर्ष १७, अंक २, दिसम्बर, १९५७ ई., पृष्ठ ६४।

३९. राष्ट्रभाषा सन्देश, १ फरवरी, १९७४, भाग—९, अंक १३–१५, पृष्ठ ३।

४०. राष्ट्रभाषा सन्देश, १५ जून, १९७४, पृ० १०।

४१. राष्ट्रभाषा सन्देश, वर्ष ५, अंक १७, नई दिल्ली—२२ मई, १९३०, पृ० ७।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

मैंने दुनिया में नहीं पायी। जैसे विज्ञान में कोई जाति का सवाल नहीं आता वैसे ही इस नागरी-लिपि में भी जाति का सवाल नहीं है, वैज्ञानिक लिपि है। अँग्रेज़ी के लिए भी रोमन-लिपि अच्छी नहीं है; ऐसा ख्याल जार्ज वर्नार्ड शॉ का था। मैंने चीनी और जापानी भाषा सीखी है। जापानी लोग भी एक लिपि की तलाश में है। वह भाषा भी भारत की नागरी के अनुरूप है। यदि सम्पूर्ण भारत में नागरी-लिपि चले तो जापानी लोग भी उसको अपना लेंगें।[४२] नागरी-लिपि का विकास संस्कृत के आधार पर हुआ है। संस्कृत भाषा और नागरी-लिपि संस्कृत-लिपि है। विनोबाजी ने एक प्रश्न-नागरी-लिपि के लिये हिन्दी वाले क्या कर सकते हैं? के उत्तर में बताया—'हिन्दी की लिपि नागरी है ही, इस वास्ते वे क्या कर सकते हैं? यह पूछा है। उनको दक्षिण की भाषा सीखनी चाहिये। नागरी-लिपि के द्वारा वे सीख सकते हैं। नागरी के द्वारा वे यह काम करेंगे तो बहुत लाभ होगा। आज क्या होता है हिन्दी उनकी मातृभाषा है तो मुफ्त में वे बन गए देशाभिमानी। देशाभिमानी के लिए उनको कुछ भी नहीं करना पड़ता। यदि वे दक्षिण की एक भाषा सीखेंगे तो सारा भारत जुड़ जायेगा। यह उनके लिए खास सूचना है। इस प्रकार नागरी-लिपि सबकी लिपि है।[४३] आचार्य विनोबा भावे ने 'नागरी-लिपि-परिषद्', पवनार (वर्धा) में कहा कि हर भाषा की नागरी-लिपि में पत्रिका चलाई जाय। इसमें जनता के साथ केन्द्र सरकार को भी सहयोग करना चाहिए। समाचार-पत्रों, टेलिप्रिन्टरों और विदेशी भाषाओं को सिखाने के लिये नागरी को महत्त्व दें। अपनी वैज्ञानिकता के कारण नागरी–लिपि संयोजक लिपि का स्थान ले सकती है, एशिया की भाषाओं के मध्य सह-लिपि का स्थान ले सकती है। इसलिए नागरी-लिपि का प्रचार–प्रसार करना चाहिये। इस प्रकार के करने से नागरी–लिपि सर्वनागरी बन सकती है। 'भारत में हमने १६ भाषाओं का एक देश बनाया जो बड़ी बात है। पहले 'संस्कृत' भाषा थी, जो जोड़ती थी। शंकराचार्य केरल से लेकर कश्मीर तक घूमे तो संस्कृत–भाषा का आधार लेकर घूमे। रामानुजाचार्य भी संस्कृत का आधार लेकर सम्पूर्ण भारत में घूमे। उन दिनों संस्कृत ही चलती थी इसलिए एक ही लिपि चलती थी—ब्राह्मी–लिपि। बाद में नागरी आयी। उसके बाद अलग–अलग भाषाएँ बनीं तो अलग–अलग लिपियाँ आयीं। आज भिन्न-भिन्न देशों के लोग लिपि-भेद के कारण अलग हुए हैं। दक्षिण की चार भाषाओं की चार लिपियाँ हैं। अगर एक लिपि हो चारों प्रान्त की तो वे एक–दूसरे की भाषा १५ दिन में सीख सकते हैं। उनकी भाषाओं में बहुत से शब्द समान हैं और संस्कृत के शब्द तो समान हैं ही लेकिन लिपियाँ चार हैं। इसलिए एक–दूसरे कि भाषा सीखना कठिन है। इसलिए इन दिनों मेरा अभिध्यान इस विषय पर चला है। हमारे अभिध्यान का एक विषय देवनागरी–प्रचार है।'[४४]

(ख) भारत सरकार

हमारे देश में लिपि-सुधार के लिये प्रयत्न स्वतन्त्रता के पूर्व से ही किये जा रहे हैं। स्वतन्त्रता के उपरान्त लिपि–सुधार के कार्यों को दो भागों में बांटा गया—

४२. राष्ट्रभाषा सन्देश, १ तथा १६ जनवरी, १९६९, पृ० ४।
४३. राष्ट्रभाषा सन्देश, १६ अप्रैल, १९७६, पृ० ८।
४४. राष्ट्रभाषा सन्देश, १६ नवम्बर, १९७२, पृ० ३।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

(१) सरकार का प्रयास ।

(२) निजी प्रयास ।

सरकार के द्वारा किये गये प्रयासों में भारत सरकार के प्रयास जो सन् १९६७ ई० में किये गये महत्त्वपूर्ण हैं। देवनागरी-लिपि में ऐसे विशेष उच्चारण-चिन्ह और संकेत जोड़े गये हैं जो हिन्दी में नहीं हैं किन्तु जिससे अन्य भारतीय भाषाओं की ध्वनियों को लिखा जा सके। इन उच्चारण-चिन्हों और विशेष संकेतों की रचना के लिये केन्द्रीय सरकार ने भारतीय भाषाओं के प्रतिनिधियों की एक समिति बनाई। सन् १९६१ ई० में मुख्यमन्त्रियों के सम्मेलन में इस प्रकार के चिन्हों को तैयार करने का सुझाव दिया गया था।[४५] इस संबंध में विशेषज्ञों की एक बैठक सन् १९६७ ई० में हुई। राज्य-सभा में शिक्षा-मन्त्री श्री वी. के. आर. वी. राव ने श्री कृष्णकान्त के प्रश्न के लिखित उत्तर में बताया कि 'परिवर्धित देवनागरी' लिपि को इस प्रकार बनाया गया है कि उसमें विभिन्न आधुनिक भारतीय भाषाओं की ध्वनियों को अभिव्यक्त किया जा सके। इस लिपि को विभिन्न क्षेत्रीय भाषाओं के लिए अतिरिक्त लिपि के रूप में भी इस्तेमाल किया जा सकता है।[४६] परिवर्धित देवनागरी की वर्णमाला से निम्नलिखित ध्वनियाँ लिखने का प्रबन्ध हुआ।[४७] संस्कृत स्वर ऋ और लृ के दीर्घ सहित कुल=१४, दक्षिण भारत के स्वर=२, कश्मीरी के स्वर=६, अँग्रेज़ी के स्वर=२। इस प्रकार चौबीस स्वरों को लिखने की व्यवस्था है, इनकी तेईस मात्राएँ तो हैं ही, 'अकार' के होने न-होने का प्रभाव अलग है। अनुनासिकत्व का लोप हो गया है, यह कमी भी आई है। अनुस्वार और विसर्ग के अयोगवाह विद्यमान हैं। दो ये संकेत हैं। व्यंजनों में संस्कृत के हैं पच्चीस स्पर्श, चार अन्तःस्थ, चार ऊष्म, एक मराठी-ळ-अर्थात् ३४ पूर्व-प्राप्त व्यंजन, क्ष, ह, श्र-ये तीन संयुक्त व्यंजन, कश्मीरी के चार व्यंजन, सिन्धी के चार व्यंजन, दक्षिण के र, ट, ष, न से बने चार व्यंजन अर्थात् १५ नये व्यंजन-संकेत। इस प्रकार कुल ४९ (उन्चास) व्यंजन हैं किन्तु रेफ, पैरा का 'र' कुछ को छोड़ शेष के हलन्त रूप और हलन्त संकेत-ये सब मिलकर व्यंजन-संकेत ९० (नब्बे) के करीब बैठते हैं। फिर दस अंक, कम-से-कम दस विरामादि संकेत भी चाहिए। संक्षिप्त तालिका हुई—स्वर=२४, मात्राएँ=२३, अयोगवाह=२, पूर्ण व्यंजन=४९, व्यंजन विकार=४०, अंक=१०, विरामादि संकेत=१०। सब संकेतों का योग हुआ १५८। इतने अक्षरों के बढ़ाने पर भी केन्द्र का यह परिवर्धित-लिपि-सुधार प्रयोग, प्रयोग करने पर असफल ही रहा है। यह सुधार के लिए सुधार किया गया है।[४८]

---

४५. राष्ट्रभाषा सन्देश, १ जून १९६७, पृ० २।

४६. राष्ट्रभाषा सन्देश, १६ मार्च १९७०; पृ० २।

४७. स्वतन्त्रता रजत जयन्ती अभिनन्दन ग्रन्थ, प्रथम संस्करण; पृ० ५६।

४८. स्वतन्त्र भारत में लिपि-शोध : ओमप्रकाश भाटिया : स्वतन्त्रता रजत जयन्ती अभिनन्दन ग्रन्थ, पृ० ५९-६०।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

०६.०१२१—अन्य सुधार :—

देवनागरी-लिपि में सुधार करने में कुछ व्यक्तियों ने भी योग दिया। श्रीकृष्ण विश्वनाथ खडपेकर, पी. दामोदर शास्त्री तथा ना. शु. रा. गणाचे ने भी प्रयत्न किए किन्तु वे पूर्ण नहीं हैं! श्री ओमप्रकाश भाटिया ने 'अरा-लिपि' का आविष्कार किया और देवनागरी से हटकर एक स्वतन्त्र-लिपि का निर्माण किया जिसके प्रयोग में आने की अभी अपेक्षा है। यह लिपि लेखन, टँकन, मुद्रण और दूर-लेखन में कितनी सफल होगी इसका प्रयोग ही बता सकेगा।

०६.०१३. अंकों का रूप : देवनागरी या अन्तर्राष्ट्रीय अंक :—

संविधान-परिषद् ने देवनागरी-लिपि के साथ भारतीय अंकों के अन्तर्राष्ट्रीय रूप को अपनाने का निर्देश दिया है। देवनागरी के अंक और अन्तर्राष्ट्रीय अंकों के रूप में अन्तर है। सब संख्या को १० चिन्हों से ही अभिव्यक्त करने का सुगम उपाय बताने का श्रेय भारत को ही है। संख्या का प्रत्येक चिन्ह अपना निरपेक्ष मूल्य रखता है। अंक-गणित का आविष्कार भारतीय मनीषा की अद्भुत देन है। प्राचीन-काल में अरबी विद्वानों ने भारत से जो अंक प्राप्त किए वे अरब से होते हुए यूरोप पहुँचे और कुछ परिवर्तनों के बाद अन्तर्राष्ट्रीय अंक कहलाये। अंकों के ये चिन्ह अब हमारे संविधान में भारतीय अंकों का अन्तर्राष्ट्रीय रूप कहा जाता है। मौलिक ब्राह्मी से जो परिवर्तन अक्षरों में हुए वे ही अंकों में भी हुए। जहाँ तक अंकों के देवनागरी रूप का प्रश्न है, उसे अपने वर्तमान रूप में देवनागरी-लिपि के साथ अपनाने का विकल्प प्राप्त है किन्तु संघ सरकार ने अन्तर्राष्ट्रीय अंकों के प्रयोग का निर्णय ले लिया है। हिन्दी-भाषी राज्यों में देवनागरी अंकों की कलात्मकता को सुरक्षित रखने की लालसा है और इसीलिए ये सरकारें उन्हें अपनाये हुए हैं किन्तु राजपथों, मोटर-कार और वाहनों के नम्बरों में अन्तर्राष्ट्रीय अंकों को ही प्रयुक्त किया जा रहा है। इनको अपना लेने से एकरूपता तो आ जायेगी किन्तु देवनागरी-लिपि के मध्य उसकी मूल प्रकृति को विकृत कर देंगे। भारत सरकार की यह नीति है कि सामान्य रूप में अन्तर्राष्ट्रीय अंकों को अपनाया जाए किन्तु देवनागरी के हिन्दी प्रकाशनों में मन्त्रालय विशेष की रुचि के अनुसार प्रयोग करने दिया जाए। वस्तुतः ये अंक भारत के ही मूल रूप हैं इसलिए इनके प्रयोग की कोई समस्या देवनागरी-लिपि में नहीं आयेगी। यह अवश्य है कि क्रमसंख्यावाचक अंकों के लेखन में यदि एकरूपता रहे, तो अनेक भ्रान्तियाँ उत्पन्न ही नहीं होंगी।

अंकों के लेखन का मानक रूप है :—

एक, दो, तीन, चार, पाँच, छह, सात, आठ, नौ, दस, ग्यारह, बारह, तेरह, चौदह; पन्द्रह, सोलह, सत्रह, अठारह, उन्नीस, बीस, इक्कीस, बाईस, तेईस, चौबीस, पच्चीस, छब्बीस, सत्ताईस, अट्ठाईस, उन्तीस, तीस, इकतीस, बत्तीस, तैंतीस, चौंतीस, पैंतीस, छत्तीस, सैंतीस, अड़तीस, उन्चालीस, चालीस, इकतालीस, बयालीस, तिरियालीस, चौंवालीस, पैंतालीस, छियालीस, सैंतालीस, अड़तालीस, उनपचास, पचास, इक्यावन, बावन, तिरपन, चौपन, पचपन, छप्पन, सत्तावन, अट्ठावन, उनसठ, साठ, इकसठ, बाँसठ, तिरसठ, चौंसठ, पैंसठ, छाँछठ, सड़सठ, अड़सठ, उनसत्तर, सत्तर, इकहत्तर, बहत्तर, तिहत्तर, चौहत्तर; पचहत्तर, छिहत्तर, सतहत्तर, अठहत्तर, उन्यासी, अस्सी, इक्यासी, बयासी, तिरयासी,

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

चौरासी, पिच्यासी, छियासी; सित्तासी, अट्ठासी, नवासी, नब्बे, इक्यानबे, बानवे, तिरानवे, चौरानबे, पचानवे, छियानवे, सित्तानबे, अट्ठानवे, निन्नानवे, सौ । [४९]

०६.०१४. उपसंहार :—

राजभाषा-हिन्दी और उसकी लिपि देवनागरी भारतीय संविधान में समस्याग्रस्त बनी हुई है । भारत सरकार उनके प्रयोग मे उदासीन बनी हुई है और अँग्रेज़ी समर्थकों के प्रभाव तथा प्रादेशिक भाषाओं के उग्र विरोध से दबकर देश-विदेश में हिन्दी का व्यवहार उसी रूप में नहीं कर पा रही जिस रूप में सन् १९५० में भारतीय संविधान ने उसे यह दायित्व सौंपा था । देवनागरी-लिपि अन्तर्राष्ट्रीय ध्वन्यात्मक वर्णमाला की सभी मौलिक आवश्यकताओं की पूर्ति करती है । इसमें जो बोला जाता है वही लिखा जाता है और जो लिखा जाता है वही पढ़ा जाता है । इसलिए इसमें ध्वनियों के सादृश्य बिम्ब बनने की पूर्ण क्षमता विद्यमान है। अन्तर्राष्ट्रीय ध्वन्यात्मक अक्षरों के प्रपत्र को देखने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि इसमें वे सभी विशेषताएँ विद्यमान है जो प्रगतिशील विश्व-लिपि में होनी चाहिए । सच तो यह है कि विश्व के आधुनिक भाषावैज्ञानिकों के अग्रणी अमेरिकी भाषावैज्ञानिक श्री ब्ल्यूम फील्ड ने इसी लिपि से ध्वन्यात्मक प्रतिबिम्बन की प्रेरणा ग्रहण की थी और उन्होंने 'पाईक, नीड़ा' आदि युवा भाषा-वैज्ञानिकों को प्रेरणा देकर अन्तर्राष्ट्रीय ध्वनि-लिपि निर्माण में सहयोग देने का मार्गदर्शन किया । इसलिए देवनागरी-लिपि और विश्व-लिपि की ध्वन्यात्मकता में कोई अन्तर नहीं है । अन्तर है तो संकेत-चिन्हों में । यह संकेतिकरण प्रत्येक भाषा की प्रकृति का द्योतक है । देवनागरी-लिपि भारतीय प्रकृति का प्रतिबिम्ब है ।

देवनागरी के वर्ण अपनी ध्वन्यात्मकता में पूर्ण हैं । जो कुछ कमियाँ थीं वे भारतीय भाषाओं के सहयोग से तथा विश्व-लिपियों के सन्दर्भ से पूर्ण कर ली गई है । इसकी वर्णमाला में पूर्णता है और अंकों में अन्तर्राष्ट्रीयता है । इसकी बोलियों में जो विभिन्नताएँ हैं उनका मानकीकरण किया गया है । इस दृष्टि से प्रस्तुत अध्याय में देवनागरी की मानक वर्णमाला, मानक संख्या और मानक अंकों का विवेचन हुआ है । अतः देवनागरी प्रादेशिक भाषाओं की द्वितीय-लिपि और विश्व-भाषाओं के लिए मान्य लिपि हो सकती है । विधानानुसार तो सरकारी कामकाज के लिये यह प्रथम लिपि है । राष्ट्रीय-एकता की साधिका, विश्व भाषाओं में एकता की संयोजिका तथा राजभाषा हिन्दी की वाहिका देवनागरी-लिपि भारत की आदर्श-लिपि है । इसीलिए उत्तर-प्रदेश, मध्यप्रदेश, राजस्थान, हरियाणा, पंजाब, विहार, हिमाचल-प्रदेश, दिल्ली तथा नेपाल में इसका नियमित व्यवहार हो रहा है । गुजरात में गांधीजी के प्रभाव से यह द्वितीय भाषा है । विगत् वर्षों में उड़िया, गुजराती, बंगाली, आसामी, तेलुगु, कन्नड़, सिन्धी और बोरो भाषाएँ इसको द्वितीय लिपि के रूप प्रयुक्त करती हैं । सर्वोदय साहित्य का प्रसार विनोबाजी के प्रभाव से पूरे भारत में हो रहा है । इसलिए संयोजिका-भाषा के रूप में यह सभी प्रादेशिक भाषाओं की दूसरी लिपि के रूप में प्रयुक्त हो रही है । इसके प्रचार प्रसार और में यदि सबसे बड़ा तत्व कार्य कर रहा है तो वह है संस्कृत-भाषा । जहाँ-जहाँ संस्कृत है, वहाँ-वहाँ देवनागरी । अतः देवनागरी के राजकीय प्रयोग में रोमन समर्थक बाधक नहीं बनेंगे ऐसी अपेक्षा है ।

४९. 'खड़ी-बोली के संख्यावाचक शब्दों की उत्पत्ति : शि. स. त्रिवेदी, नागरी-प्रचारिणी-पत्रिका : भाग—१५, संवत् १९९१ : नवीन संस्करण, पृ. ४३१ ।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

अध्याय–७

राजभाषा–हिन्दी की प्रगति

०७.००. हिन्दी को अधिमान्यता :–

भारतीय संविधान के द्वारा हिन्दी को राजभाषा घोषित किया गया। भारतीय जनता के एक वर्ग ने इसका समर्थन किया और दूसरे वर्ग ने विरोध। विधान–परिषद् ने जब इसे स्वीकृति दी तब भारत की प्रबुद्ध जनता ने समझा कि राष्ट्रध्वज, राष्ट्रगान और राजभाषा के द्वारा भारत एकता के सुदृढ़ सूत्र में बँध गया है। विभिन्न दिशाओं से इस निर्णय का स्वागत हुआ और संविधान की प्रति पर राष्ट्रनेताओं के हस्ताक्षर हुए। समर्थन करने वाले वर्ग में–जनता, राज्य-सरकारें, केन्द्रीय प्रशासन और प्रबुद्ध साहित्यिक संस्थाएँ अग्रणीं थीं। जिन क्षेत्रों के द्वारा मान्यता प्राप्त हुई, वे थे–(१) जनता (२) राज्य–सरकारें (३) केन्द्रीय–सरकार और (४) प्रवासी–भारतवासी।

जनता के द्वारा जो समर्थन प्राप्त हुआ, उसकी अभिव्यक्ति साहित्य-सेवी-संस्थाओं के कार्यों में हुई। उस समय राजभाषा-हिन्दी का स्वरूप स्पष्ट नहीं था। जो हिन्दी जनता के मध्य बोलचाल के द्वारा भाव-प्रसार का माध्यम थी वह राष्ट्रनेताओं के भाषणों में व्यक्त होती थी और गान्धीजी उसे हिन्दुस्तानी, टंडनजी हिन्दी तथा मौलाना आज़ाद उर्दू कहते थे। इसी प्रकार प्रादेशिक हिन्दी का स्वरूप भी स्थानीय प्रभावों से युक्त था। अतः राजभाषा-हिन्दी के स्वरूप के बारे में प्रशासकों, विद्वानों और जनता में अस्पष्टता विद्यमान थी। वस्तुतः राजभाषा के रूप में हिन्दी का जन्म तो १४ सितम्बर, सन् १९४९ को हुआ और इसको जन्म देने वाली थी, भारतीय विधान–परिषद्। इसे वैधानिक अधिमान्यता जनता और सरकार ने दी।

०७.०१. जनता की अभिस्वीकृति :–

जनता हिन्दी-सेवी-संस्थाओं तथा पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से हिन्दी के विकास में जो योग दिया, वह उसकी रूप-रचना और अभिवृद्धि में सहायक हुआ। संस्थाओं के योगदान की चर्चा यहाँ प्रस्तुत है—

०७.०११. नागरी-प्रचारिणी-सभा, काशी :–

नागरी-प्रचारिणी-सभा, काशी ने अपने स्थापनाकाल १६ जुलाई, १८९३ से ही हिन्दी-भाषा और साहित्य तथा देवनागरी-लिपि के विकास के लिये महत्वपूर्ण कार्य किया है। इसके स्थापना-काल के समय उत्तर-प्रदेश के न्यायालयों में अँग्रेज़ी और उर्दू का ही प्रयोग प्रचलित था। मदनमोहन मालवीय के महान् प्रयत्न से सन् १९०० ई. से उत्तर-प्रदेश में नागरी-लिपि के प्रयोग की आज्ञा हुई और सरकारी कर्मचारियों के लिये हिन्दी-उर्दू जानना

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

अनिवार्य कर दिया गया। तब से सभा रचनात्मक कार्यों के द्वारा हिन्दी के रूप–निर्माण में लगी हुई है। हिन्दी के राजभाषा घोषित होते ही उसने हिन्दी विश्वकोश बारह खण्ड और हिन्दी-साहित्य का वृहत्त इतिहास सोलह खण्डों के द्वारा राजभाषा में जो अभाव थे उनकी पूर्ति के साथ ही हिन्दी-साहित्य-कोश दो भागों के द्वारा हिन्दी का परिचय कराया। नागरी-प्रचारिणी-सभा, राजभाषा के स्वरूप निर्धारण में केन्द्रीय सरकार के साथ सक्रिय सहयोग करती रही है और हिन्दी तथा देवनागरी-लिपि में व्याप्त त्रुटियों को दूर करती रही है। सभा ने रचनात्मक सहयोग द्वारा हिन्दी के रूप–निर्माण में अनूठा योगदान दिया है।

०७.०१२. हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग द्वारा राजभाषा को समर्थन-

सांविधानिक हिन्दी को सर्वप्रथम सम्मेलन ने हार्दिक स्वागत किया। इसका जन्म ही हिन्दी के प्रचार और प्रसार के लिए हुआ था। नागरी-प्रचारिणी-सभा के तत्वावधान में १ मई, १९१० ई. को प्रयाग में हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की स्थापना हुई।[१] इसकी नियमावली के अनुसार सम्मेलन के उद्देश्य थे—

(क) हिन्दी-साहित्य के सब अंगों की उन्नति का प्रयत्न करना।

(ख) देवनागरी-लिपि का देश-भर में प्रचार करना और देशव्यापी व्यवहारों और कार्यों को सुलभ करने के लिए हिन्दी-भाषा को राष्ट्रभाषा बनाने का प्रयत्न करना।

(ग) हिन्दी को सुगम, प्रिय और मनोरम बनाने के लिए समय–समय पर उसकी शैली के संशोधन और उसकी त्रुटियों को दूर करने के उपाय करना।

इसके अतिरिक्त हिन्दी-साहित्य और हिन्दी के प्रचार करने के लिए हिन्दी की उच्च परीक्षाएँ लेने का प्रबन्ध किया गया। इसकी परिणति सम्मेलन के चतुर्थ अधिवेशन (सन् १९१३, भागलपुर) में हुई। हिन्दी के प्रचार-प्रसार के लिये 'सम्मेलन-पत्रिका' का प्रकाशन किया गया। इसके द्वारा दक्षिण भारत में हिन्दी के प्रचार-प्रसार में अत्यधिक सफलता प्राप्त हुई। मद्रास में सम्मेलन की एक शाखा की स्थापना की गई; आगे चलकर यही संस्था 'दक्षिण-भारत-हिन्दी-प्रचार सभा, मद्रास' के रूप में विख्यात हुई। वर्तमान में सम्पूर्ण दक्षिण भारत में इसकी शाखाएँ–प्रशाखाएँ है। जो आज भी बड़ी सफलता के साथ अपना कार्य कर रहीं है। हिन्दी के प्रचार-प्रसार के लिए सम्मेलन ने कई अधिवेशन देश के कोने-कोने में किये। फलतः हिन्दी के लिए एक नया मार्ग बनने में बड़ी सहायता मिली। इसके प्रयत्नों से ही सन् १९३६ ई. में 'राष्ट्रभाषा-प्रचार-समिति', वर्धा की स्थापना की गई। इस संस्था की भी कई शाखाएँ दक्षिण भारत के अहिन्दी-भाषी राज्यों में लोकप्रियता के साथ कार्यरत् हैं। बाद में सम्मेलन के मासिक प्रकाशन 'माध्यम' तथा पाक्षिक प्रकाशन 'राष्ट्रभाषा सन्देश' भी चलता रहा है। राष्ट्रभाषा सम्मेलन सम्पूर्ण देश में हिन्दी के कार्यों का विवरण तथा पूरी जानकारी छापता है। इसके माध्यम से हिन्दी के लिए शासन द्वारा किये जाने वाले कार्यों का लेखा-जोखा, जनता के द्वारा हिन्दी के लिये किये जाने वाले कार्य की सम्पूर्ण जानकारी प्रकाशित होती है। हिन्दी में हिन्दी की जानकारियों से ओतप्रोत यह पत्र बहुत महत्वपूर्ण है।

---

१. हिन्दी-स्मारिका-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग, सन् १९६७, पृष्ठ १३-१९ तक।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

सम्मेलन ने हिन्दी को राजभाषा बनाने में अपना महत्वपूर्ण योग दिया है। संविधान निर्माण के समय सेठ गोविन्ददास, महर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन और इनके सहयोगियों ने संविधान निर्माण समिति से एक दीर्घकाल तक वाद-विवाद किये, उनके तर्कों के उत्तर दिये और अपने तर्क प्रस्तुत किये। अन्त में संविधान की धाराओं में हिन्दी भारत की आधुनिक राजभाषा मान ली गई है। हिन्दी को समृद्ध बनाने के लिए आज भी सम्मेलन तथा सम्मेलन की विभिन्न शाखाएँ-प्रशाखाएँ, विभिन्न प्रकार के शब्दकोश, अनुवाद, हस्तलिखित ग्रंथों का प्रकाशन आदि कार्य करने में संलग्न हैं। इसका आठवाँ अधिवेशन सन् १९१८ में इन्दौर में हुआ। जिसकी अध्यक्षता महात्मा-गाँधी ने की। अध्यक्ष पद से उन्होंने हिन्दी-उर्दू-मिश्रित भाषा का नाम हिन्दुस्तानी रखा और कहा कि हिन्दुस्तानी हिन्दी और उर्दू की वह खूबसूरत मिलावट है जिसे उत्तरी हिन्दुस्तान के लोग समझते हैं और जो नागरी और उर्दू-लिपि में लिखी जाती है। यह पूरी राष्ट्रभाषा है। राष्ट्रप्रेम का तकाजा है, लोग इसे जानें, जो जानेगा वह कमायेगा और न जानने वाला खोएगा। गान्धीजी के इसी भाषण ने कांग्रेस में हिन्दुस्तानी को स्थान दिलाया और जब सन् १९३६ वे पुनः हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के अध्यक्ष के रूप में गान्धीजी ने सार्वदेशिक भाषा की माँग को दृढ़ किया तथा उसे अन्तर्प्रान्तीय व्यवहार के लिये उपयोगी बताया। इस अधिवेशन में जो मौलिक बात हुई, वह थी गान्धीजी द्वारा समर्थित सब भाषाओं की एक लिपि देवनागरी। काका कालेलकर की अध्यक्षता में देवनागरी के स्वरूप-निर्माण के लिये जो समिति बनी, उसने जो सुझाव प्रस्तुत किए वही वर्धा-लिपि के नाम से जानी जाती है। राष्ट्रभाषा-प्रचार-समिति, वर्धा ने इस लिपि को आगे बढ़ाया और लिपि के विकास में महत्वपूर्ण योग दिया। जब हिन्दी राजभाषा घोषित हुई तब टण्डन जी जीवित थे और उन्होंने राजभाषा को सम्मेलनी-हिन्दी कहा और चाहा कि इसका स्वरूप परिनिष्ठित साहित्यिक-हिन्दी जैसा रहे, किन्तु सम्मेलन परस्पर संघर्षों में जुट गया और हिन्दी को भारत की सामासिक संस्कृति के अभिव्यक्ति का माध्यम न बना पाया। यह अवश्य है कि सम्मेलन संविधान की हिन्दी और प्रादेशिक हिन्दी में भेद नहीं करता है। वह उसे भारत की एकता का वाहक मानकर प्रादेशिक हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, दिल्ली के माध्यम से उसके रूप-निर्माण में सक्रिय है। इस मध्य सम्मेलन ने मानक-हिन्दी-कोश का प्रकाशन किया और हिन्दी शब्दों की व्युत्पत्ति में बड़ा योग दिया है।

०७.०१३. श्री मध्यभारत-हिन्दी-साहित्य-समिति, इन्दौर :–

होल्कर राज्य के तत्वावधान में हिन्दी-भाषा और साहित्य की अभिवृद्धि तथा उनके प्रचार और प्रसार के लिये एक संस्था की स्थापना सन् १९१० ई. में सर्वश्री पं. कृष्णानंद मिश्र, पं. शिवसेवक तिवारी, माधवराव किबे, डॉ. सरजूप्रसाद तिवारी, सेठ हुकमचन्द और सर सिरेमल बापना ने की। इनको महाराजा यशवंतराव होल्कर तथा सेठ कस्तूरचन्द, गिरधरशर्मा 'नवरत्न' और कमलाबाई किबे का सहयोग मिला। इन लोगों ने हिन्दी की निष्ठापूर्वक सेवा की और १९१८ तथा १९३५ में अखिल-भारतीय-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन किए। इन्हीं सम्मेलनों में राष्ट्रभाषा हिन्दी और राष्ट्रलिपि देवनागरी की नीति का निर्धारण हुआ। इस संस्था ने अपने प्रकाशन के द्वारा मध्यप्रदेश की सार्वजनिक संस्थाओं का नेतृत्व किया और अपने प्रचार के माध्यम से मराठीभाषी राज्यों में हिन्दी को शिक्षा, न्यायालय, प्रशासन और राज्य की भाषा बनवाया। स्वतन्त्रता के बाद भी इसकी मासिक पत्रिका

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

'वीणा' नियमित प्रकाशित हो रही है। इसने सर्जनात्मक साहित्य के द्वारा हिन्दी के मध्यप्रदेशीय रूप का अभिधान किया है। इसी वर्ष 'वीणा' का रजत जयन्ती अंक प्रकाशित हुआ जो राजभाषा के प्रकाशनों में अपना महत्वपूर्ण स्थान बनाये रखेगा। यह पत्रिका ६५ वर्षों से हिन्दी की सेवा कर रही है।

०७.०१४. दक्षिण-भारत-हिन्दी-प्रचार-सभा :–

दक्षिण भारत में हिन्दी–प्रचार का कार्य १९१८ में महात्मा गांधीजी ने प्रारम्भ किया। प्रथम हिन्दी वर्ग महात्मा गांधी के पुत्र श्री देवदास गाँधी द्वारा चलाया गया। १९१९ ई और १९२० ई. में आन्ध्र और तमिलनाडु में प्रशिक्षण विद्यालय प्रारम्भ किये गये। यहाँ पर हिन्दी-प्रचार के लिए युवकों को प्रशिक्षित किया जाता था। इन प्रचारकों की संख्या बढ़ते-बढ़ते १०,००० हो गई। ये लोग अब ९००० केन्द्रों में हिन्दी–प्रचार के कार्य में संलग्न हैं। दक्षिण के चारों भाषावार राज्यों याने तमिलनाडु, केरल, आन्ध्र और कर्नाटक में सभा के केन्द्र फैले हैं।

हिन्दी-प्रचार कार्य को सुसंगठित रूप से कार्यान्वित करने के पूर्व ही सभा ने दक्षिण भारत का चार भाषावार प्रान्तों में विभाजन कर लिया। पिछले पचास वर्षों से बरहामपुर से लेकर पश्चिम में बेलगाम तक और उत्तर में औरंगाबाद से लेकर दक्षिण में कन्याकुमारी तक के क्षेत्र का हिन्दी-प्रचार कार्य 'दक्षिण–भारत–हिन्दी–प्रचार सभा' के निरीक्षण और तत्वावधान में सम्पन्न हो रहा है। १९२३ को तिरुच्चिराप्पल्ली में दक्षिण-भारत-प्रचार सभा का एक छोटा-सा कार्यालय जनसम्पर्क को विस्तृत करने के लिए खोला गया। तिरुनेलवेली, मन्नारगुड़ी, सात्तूर, कुंभकोणम्, सेलम, कोयंबत्तूर आदि प्रमुख स्थानों पर व्यवस्थित रूप से सभा के कार्यकर्ता कार्य करने लगे। स्वर्गीय श्री का. मा. शिवराम शर्मा निष्ठा के साथ इस क्षेत्र में उतर पड़े थे। १९३६ ई. में तमिलनाडु हिन्दी-प्रचार सभा की स्थापना विधिवत् हुई। सन् १९३७ में श्री चक्रवर्ती राजगोपालाचारी के कांग्रेसी मन्त्रिमण्डल ने मद्रास प्रान्त के सभी स्कूलों में हिन्दी-शिक्षण को अनिवार्य घोषित किया था।

१९४२ ई. तक श्री रघुवरदयालु मिश्र ने मन्त्री के पद पर रहकर तमिलनाडु में कार्य किया। सन् १९५८ ई. में केन्द्र सभा ने प्रान्तीय कार्यालयों को उनके कार्य में सलाह के लिये तथा कार्यकर्त्ताओं में गति लाने के उद्देश्य से संयुक्तमंत्री की नियुक्ति की। श्री एस. महालिंगम संयुक्तमंत्री रहे। सभा का रजत जयंती महोत्सव तिरुच्ची में बड़ी धूमधाम के साथ मनाया गया। पांडुचेरी, नेयवेली आदि नये केन्द्रों में सभा द्वारा वर्ग संचालन होने लगा। प्रारम्भिक परीक्षाओं को संचालित करने का भार भी प्रान्तीय सभा ने ग्रहण किया। सन् १९६४ ई. के उपरांत एक नयी परिस्थिति से सभा को संघर्ष करना पड़ा। हिन्दी विरोधी प्रवृत्ति ने ध्वंसात्मक आन्दोलन का रूप धारण किया। जिससे हिन्दी परीक्षाएँ चलाना भी कठिन हो गया। आज करीब २०० केन्द्रों में व्यवस्थित रूप से हिन्दी–विद्यालय चालू हैं। सन् १९५० से १९६९ ई. तक तिरुच्चिराप्पल्ली में हिन्दी प्रशिक्षण महाविद्यालय चलाया गया। मदुरै शहर में भी दो साल के लिये विशेष रूप से प्रशिक्षण महाविद्यालय चलाया गया। यद्यपि पांडिचेरी राज्य अलग है तो भी वह प्रदेश भी हिन्दी-प्रचार सभा (तमिलनाडु) के कार्यक्षेत्र के अन्तर्गत आता है। सन् १९५८ ई. से हिन्दी

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

प्रचार का कार्य प्रत्यक्ष रूप से सभा द्वारा चलाया जाता है। सभा द्वारा पत्राचार-शिक्षण का कार्य किया जाता है। सभा की मुख पत्रिका 'हिन्दी-पत्रिका' प्रतिमास प्रकाशित होती है। तमिल प्रदेश के प्रथम हिन्दी प्रचारक श्री प्रतापनारायण वाजपेयी की स्मृति में एक विशाल हिन्दी पुस्तकालय सभा भवन में स्थापित है। सन् १९६४ ई. के केन्द्रीय अधिनियम १४ द्वारा सभा को 'राष्ट्रीय महत्व की संस्था' घोषित किया। इस अधिनियम के द्वारा सभा की समुचित परीक्षाएँ चलाकर हिन्दी-भाषा एवं हिन्दी के शिक्षण में प्रवीणता प्राप्ति के लिए सनद, उपाधि, प्रमाण-पत्र आदि देने का अधिकार दे दिया गया। सभा ने हिन्दी की उच्चतम शिक्षा के लिए हिन्दी स्नातकोत्तर अध्ययन एवं शोध-विभाग प्रारम्भ किया। यह विभाग विश्वविद्यालय विभाग के नाम से प्रसिद्ध है। इस विभाग द्वारा बी. एड. प्रचारक उपाधि के लिए प्रशिक्षण देने वाले तीन हिन्दी-प्रशिक्षण महाविद्यालय, मद्रास, बंगलोर और हैदराबाद में चलाए जा रहे हैं।

०७.०१५. मैसूर-हिन्दी-प्रचार-सभा, बंगलोर :-

हिन्दी-प्रचार के कार्य को व्यापक बनाने के उद्देश्य से गान्धीजी के आदेश और काका कालेलकर के प्रस्ताव पर दक्षिण-भारत-हिन्दी-प्रचार-सभा ने प्रान्तीय शाखाओं का वैधानिक संगठन स्वीकार किया और दक्षिण के चारों प्रान्तों में सभा की शाखाएँ खोली गई। इसके पूर्व हिन्दी-प्रचार का कार्य सन् १९२४ ई. में ही, जब भारतीय कांग्रेस का अधिवेशन बेलगांव में हुआ तो हिन्दुस्तानी सेवादल के शिविरों में आरम्भ कर दिया था। सन् १९२७ ई. में पं. सिद्धनाथ पंत ने बंगलोर में अखिल कर्नाटक हिन्दी-प्रचार-सम्मेलन का आयोजन किया जिसके सभापति महात्मा गांधी थे। 'दक्षिण-भारत-प्रचार सभा' का ध्येय हिन्दुस्तानी भाषा का प्रचार था और सभा उर्दू-फ़ारसी मिश्रित हिन्दी के प्रचार का कार्य करने में संलग्न थी। इसके परिणामस्वरूप कर्नाटक में कुछ समय तक 'हिन्दुस्तानी' का प्रचार होता रहा। इसके उपरान्त मैसूर राज्य में कार्य करने वाले कार्यकर्त्ताओं ने अनुभव किया कि कन्नड़ भाषा में संस्कृत शब्दों की प्रधानता है। अतः हिन्दुस्तानी के स्थान पर संस्कृत प्रधान हिन्दी शैली का प्रचार करना चाहिए। अतः उन्होंने सन् १९४३ ई. में बंगलोर में मैसूर हिन्दी-प्रचार-सभा की स्थापना की। कर्नाटक के गाँव-गाँव में यह परिषद् हिन्दी का प्रचार कार्य कर रही है।

०७.०१६. राष्ट्रभाषा-प्रचार-समिति, वर्धा :-

सन् १९३६ में हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन का २५ वाँ अधिवेशन नागपुर में डॉ. राजेन्द्रप्रसाद की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन के एक प्रस्ताव के अनुसार दक्षिणतर अहिन्दी-भाषी प्रान्तों में हिन्दी-प्रचार करने के लिए 'हिन्दी-प्रचार-समिति' संगठित की गई। उक्त समिति की प्रथम बैठक ४ अगस्त, १९३६ ई. को वर्धा में हुई। १३ अक्टूबर १९३६ ई. को समिति का विधिवत् उद्घाटन हुआ। सन् १९३८ ई. में शिमला में सम्पन्न हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के २७ वें अखिल भारतीय अधिवेशन में श्री काका साहब कालेलकर के सुझाव पर 'हिन्दी-प्रचार-समिति' का नाम बदलकर 'राष्ट्रभाषा प्रचार समिति' रखा गया। समिति का मुख्य उद्देश्य है—'एक हृदय हो भारत जननी।'

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

प्रारम्भ में यह समिति हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की परीक्षाओं को संचालित करती थी। सन् १९३८ ई. से समिति ने अपनी स्वतन्त्र परीक्षाएँ आयोजित करना प्रारम्भ किया। समिति की परीक्षाएँ इस प्रकार हैं—राष्ट्रभाषा प्राथमिक, राष्ट्रभाषा प्रारम्भिक, राष्ट्रभाषा प्रवेश, राष्ट्रभाषा परिचय, राष्ट्रभाषा कोविद, राष्ट्रभाषा रत्न, राष्ट्रभाषा आचार्य, अध्यापन कोविद, आलेखन कोविद, अध्यापन विशारद, राष्ट्रभाषा बातचीत, राष्ट्रभाषा महाजनी प्रवेश और राष्ट्रभाषा प्रान्तीय भाषा परीक्षा। सन् १९३८ ई. से समिति ने अपना एक प्रकाशन विभाग भी खोला जो 'भारत-भारती पुस्तकमाला' द्वारा भारत की प्रादेशिक भाषाओं द्वारा राष्ट्रभाषा हिन्दी में साहित्य प्रकाशित करता है। सन् १९४३ ई. के जुलाई माह से समिति ने 'राष्ट्रभाषा' नामक मासिक पत्रिका का प्रकाशन आरम्भ किया जिसमें समिति की सम्पूर्ण गतिविधियों को प्रकाशित किया जाता है। सन् १९५० ई. से समिति ने 'राष्ट्रभारती' के द्वारा हिन्दी की श्रेष्ठ पुस्तकों का अनुवाद किया। सन् १९५० ई. में समिति का द्वितीय अधिवेशन, अहमदाबाद (गुजरात) में हुआ। जिसमें अहिन्दीभाषियों को हिन्दी के प्रति प्रोत्साहन देने के उद्देश्य से महात्मा गांधी की स्मृति में १,५०१ रुपये का नकद पुरस्कार प्रतिवर्ष अहिन्दीभाषी साहित्यकार को दिया जाता है। सन् १९५१ ई. में गुजरात प्रान्तीय राष्ट्रभाषा-प्रचार-समिति ने हिन्दी में एक पत्रिका निकालने का निश्चय किया। उसी वर्ष से 'राष्ट्र-भारती' नामक पत्रिका नियमित प्रकाशित होती है। सन् १९६३ ई. तक यह पत्रिका त्रैमासिक के रूप में निकलती रही। सन् १९६४ ई. से यह मासिक के रूप में प्रकाशित हो रही है। १४ सितम्बर को 'हिन्दी-दिवस' के रूप में मनाने का निश्चय सर्व-प्रथम इसी समिति ने किया और नागपुर अधिवेशन में इसे स्वीकार किया गया। १४ सितम्बर को, हिन्दी को राजभाषा के रूप में भारतीय संविधान में स्वीकार किया गया। सुव्यवस्थित प्रकार से हिन्दी का प्रचार कार्य करने के लिये समिति ने योजनाबद्ध प्रणाली से प्रान्तीय समितियों का गठन किया। ये प्रान्तीय समितियाँ केन्द्रीय समितियों से सम्बद्ध रहकर कार्य करती है। लंका, बर्मा, अफ्रीका, स्याम, जावा, सुमात्रा, मारिशस, अदन, सूदान तथा इंगलैण्ड आदि देशों में भी समिति के केन्द्र हैं। ये केन्द्र नियमित रूप से समिति की परीक्षाओं का संचालन करते हैं, विद्यालय और पुस्तकालय स्थापित करते हैं। इस प्रकार प्रचार एवं प्रसार के माध्यम से वर्धा समिति ने राजभाषा का अभिवर्धन किया।

०७.०१६१. गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबाद :—

सन् १९२० ई. में महात्मा गान्धी के असहयोग आन्दोलन के कारण देश के अनेक विद्यार्थियों ने अँग्रेज़ी शिक्षा का बहिष्कार किया। ऐसे नवयुवकों की शिक्षा के लिये महात्मा गांधी ने गुजरात विद्यापीठ की स्थापना की थी। इस विद्यापीठ में हिन्दी को अनिवार्य विषय के रूप में स्थान प्राप्त हुआ। सन् १९३५ ई. से इस विद्यापीठ ने 'नवजीवन ट्रस्ट' के सहयोग से राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रचार का कार्य सम्पूर्ण गुजरात राज्य में प्रारम्भ किया। यह कार्य सन् १९४२ ई. तक राष्ट्रभाषा-प्रचार-समिति, वर्धा के माध्यम से कार्यान्वित होता रहा। सन् १९४२ ई. में 'हिन्दी-हिन्दुस्तानी' के प्रश्न के परिणामस्वरूप 'हिन्दुस्तानी-प्रचार-सभा, वर्धा' की स्थापना हुई। सन् १९४५ ई. में हिन्दुस्तानी-प्रचार-सभा ने गुजरात में हिन्दी-प्रचार का कार्य विद्यापीठ को सौंप दिया। विद्यापीठ ने प्रारम्भ में हिन्दी (हिन्दुस्तानी)

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

के लिए दो लिपियाँ नागरी और फ़ारसी का प्रचार किया। संविधान द्वारा नागरी-लिपि को मान्यता देने के उपरान्त विद्यापीठ ने फ़ारसी-लिपि के प्रचार का कार्य बन्द कर दिया। विद्यापीठ के कार्यकारी कुलसचिव के पत्र के अनुसार-[२] समाज-विद्याविशारद की पूर्वस्नातक कक्षा के पाठ्यक्रम में तीन वर्ष की पढ़ाई में हिन्दुस्तानी हर वर्ष अनिवार्य है। (२) समाज विद्या-विशारद के तृतीय वर्ष में विशेष विषय के रूप में एक विषय की जो योजना है उसमें हिन्दुस्तानी के अभी दो प्रश्न-पत्र होते हैं उनके स्थान पर अगले वर्ष से तीन होंगे (३) एम. ए. (पारंगत) में हिन्दी को मुख्य विषय के रूप में रखा गया है, गौण विषय के रूप में भी उसे लिया जा सकता है और (४) हिन्दी में पी.-एच. डी. की भी व्यवस्था है। 'हिन्दी-प्रचार-समिति' की ओर से सम्पूर्ण गुजरात और बम्बई में पाँच परीक्षाएँ ली जाती हैं-हिन्दी पहली, हिन्दू-दूसरी, हिन्दी तीसरी, विनीत तथा हिन्दी सेवक। अन्तिम तीन परीक्षाएँ शिक्षा-मन्त्रालय की ओर से मान्य हैं। हाल ही में भारत सरकार ने 'गुजरात विद्यापीठ' को एक विश्वविद्यालय के समान संस्था के रूप में स्वीकार किया है। इस संस्था ने शिक्षा के क्षेत्र में राजभाषा-हिन्दी को परिवर्धित किया है।

०७.०१६२ विश्व-हिन्दी-सम्मेलन :-

पृष्ठ-भूमि-इस सम्मेलन का मूल विचार १९७३ ई. में प्रायोजक संस्था राष्ट्र-भाषा-प्रचार-समिति, वर्धा की कार्यकारिणी समिति की एक बैठक में स्थिर हुआ। सितम्बर १९७३ ई. से इसका कार्य आरम्भ किया गया। दिसम्बर १९७३ ई. के अन्तिम सप्ताह में पवनार में आचार्य श्री विनोबा भावे का आशीर्वाद प्राप्त किया। जनवरी १९७४ में समिति का एक प्रतिनिधि मण्डल तत्कालीन प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधी से मिला और सम्मेलन की योजना प्रस्तुत की गई। मई १९७४ ई. में भारत सरकार से सहयोग का आश्वासन मिला। जनवरी १९७५ में नागपुर में सम्मेलन किया गया।

विश्व-हिन्दी-सम्मेलन के महासचिव श्री अनन्त गोपाल शेवड़े ने सम्मेलन के आयोजन की चर्चा करते हुए बताया कि —'हिन्दी सभी राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय भाषाओं के प्रति आदर की भावना रखते हुए और भारत की सभी पन्द्रह प्रमुख भाषाओं का स्नेह और सहयोग प्राप्त करके ही आगे बढ़ना चाहती है, वह भारत की सामासिक संस्कृति की अभिव्यक्ति का एक सशक्त माध्यम बने। भारत का संविधान उससे इसी प्रकार के उत्तरदायित्व के निर्वाह की अपेक्षा रखता है। इस भावना से हमने विश्व-हिन्दी-सम्मेलन के मन्च से भारत की पन्द्रह प्रमुख भाषाओं के ज्येष्ठ और वरिष्ठ साहित्यकारों का सम्मान करने का निश्चय किया है। इसके अलावा ऐसे हिन्दी-सेवियों का भी सम्मान करने की योजना है जिनकी मातृभाषा हिन्दी को छोड़कर अन्य कोई भारतीय भाषा हो या रूसी, अँग्रेज़ी चेक, जैसी कोई विदेशी भाषा हो। यह सम्मान तो केवल प्रतीकात्मक है जिसके द्वारा भारत की तथा विश्व की सभी भाषाओं के प्रति हिन्दी अपना विनम्र अभिवादन करती है। शताब्दियों से ही नहीं, सहस्त्राब्दियों से भारत के ऋषियों, सन्तों और कवियों की वाणी ने हमेशा विश्व-मानव की कल्पना की है और समस्त विश्व को एक परिवार के रूप में देखा है। केवल विश्व को ही नहीं समस्त ब्रह्माण्ड को और

२. कार्यकारी कुलसचिव के पत्र : २० सितम्बर, १९७२.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

उसमें निहित सभी चेतन और अचेतन तत्त्व को एक चैतन्यमयी दैवी शक्ति के रूप में ही माना है। इसीलिए भारत में कभी कोई साम्राज्यवादी या विस्तारवादी परम्परा नहीं रही। इस देश के बाहर यदि लोग गये हैं जो भगवान बुद्ध के भिक्षुओं के जैसा या स्वामी विवेकानन्द जैसे परिव्राजकों के जैसा प्रेम और मैत्री का सन्देश लेकर ही गए हैं। यह बताने के लिए कि संगति और सन्तुलन ही सृष्टि का नियम है, उसको भंग करने से ही मानव दुःख उठाता है और उसी का पालन करने में उसका सुख और आनन्द समाया हुआ है। वही परम्परा आज भारत के सभी साहित्यकारों, विचारकों, कवियों और कलाकारों को अनुप्राणित और अनुप्रेरित करती है कि कैसे मानव अपनी सारी विषमताओं, संकीर्णताओं और विद्वेषों से ऊपर उठकर नये शान्तिमय, मैत्रीपूर्ण विश्व का निर्माण कर सके। ....इन्हीं स्वप्नों और आकांक्षाओं की पृष्ठभूमि पर इस सर्व-प्रथम विश्व-हिन्दी-सम्मेलन का आयोजन किया जा रहा है।'[३]

१० जनवरी, १९७५ ई. को नागपुर में भारत की प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने सम्मेलन का उद्‌घाटन किया। इस अवसर पर उन्होंने कहा कि—हिन्दी विश्व की महान् भाषाओं में से है। यह करोड़ों की मातृभाषा है और करोड़ों लोग ऐसे हैं जो इसे दूसरी भाषा के रूप में पढ़ते हैं। सभी भाषाएँ भारत की सांस्कृतिक परम्परा की समान उत्तराधिकारी है। ये भाषाएँ भारत की राष्ट्रभाषाएँ हैं और इनमें से हिन्दी भारत की राष्ट्रीय सम्पर्क की भाषा है।

कुछ क्षेत्रों में हिन्दी के विरोध की ओर संकेत करते हुए उन्होंने हिन्दी के समर्थकों को परामर्श दिया कि वे अहिन्दीभाषियों के दिलों को जीतें, उनकी आशंकाओं को दूर करें और उनमें विश्वास जमाएँ। प्रधानमन्त्री ने विश्वास प्रकट किया कि हिन्दी का विकास अवश्यम्भावी है और अन्य भाषाओं की समृद्धि इसमें विशेष सहायक सिद्ध होगी। लोकतन्त्र की सफलता के लिए जरूरी है कि देश के सब लोग समस्याओं को समझ सकें तथा उनका सामना करने में भाग ले सकें। हिन्दी को न केवल सब क्षेत्रों के बीच बल्कि सब वर्गों के बीच एक जीवन्त भाषा बनाना है। इसके लिए भाषा को सादा और लचीली होना है ताकि वह बदलती स्थितियों और नये ज्ञान को अपना सके। जहाँ जरूरी हो, दूसरी भाषाओं से शब्द लेने में संकोच नहीं होना चाहिए।

हम ऐसे भारत की कल्पना नहीं कर सकते जहाँ केवल एक भाषा बोली जाती हो, न ऐसे भारत की जहाँ एक ही धर्म का बोलबाला हो। हमारा देश बहुधर्मी देश है। हमारा देश बहुभाषी देश है। हमारे यहाँ अनेकता में एकता है लेकिन मुझे आशा है कि भारत के लोग अधिक-से-अधिक हिन्दी सीखेंगे। मैंने अक्सर कहा है कि प्रत्येक बच्चा अपनी मातृभाषा सीखे, राष्ट्रीय सम्पर्क भाषा के रूप में हिन्दी सीखें और अन्तर्राष्ट्रीय सम्पर्क भाषा के रूप में अँग्रेज़ी सीखें।

अपने भाषण के अन्त में श्रीमती इन्दिरा गांधी ने आशा व्यक्त की कि हिन्दी-भाषा द्वारा भारत की अन्य देशों से मित्रता की कड़ियाँ और दृढ़ होंगी।[४]

---

३. प्रतिवेदन, विश्व-हिन्दी-सम्मेलन, नागपुर (भारत), जनवरी १९७५, पृ. ११-१२.

४. प्रतिवेदन, विश्व-हिन्दी-सम्मेलन, पृ. १२-१३।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

सम्मेलन के मुख्य अतिथि तथा उद्घाटन समारोह के अध्यक्ष मारीशस के प्रधानमन्त्री सर शिवसागर रामगुलाम ने भारत और मारीशस के प्रेम का परिचय देते हुए ऐतिहासिक विवेचन प्रस्तुत किया। उन्होंने हिन्दी के अन्तर्राष्ट्रीय महत्त्व को स्पष्ट करते हुए कहा— 'हिन्दी भारत की राष्ट्रभाषा तो है लेकिन हमारे लिए इस बात का अधिक महत्त्व है कि यह एक अन्तर्राष्ट्रीय भाषा है। मारीशस, सूरीनाम, गियाना, फीजी, अफ्रीका के कई देश इस बात का मान करते हैं कि भारत की राष्ट्रभाषा को अन्तर्राष्ट्रीय भाषा बनाने में उनका हाथ रहा है। आज हिन्दी अनेक देशों में बोली जाती है। अनेक देशों में हिन्दी की पत्र–पत्रिकाएँ प्रकाशित होती हैं। बोलने वालों की संख्या को देखते हुए आज हिन्दी विश्व की चार प्रमुख भाषाओं में से एक है।[५] सम्मेलन में देश के प्रमुख साहित्यकारों, कवियों, विश्वविद्यालयों के प्रतिनिधियों, हिन्दी–प्रचार संस्थाओं तथा विभिन्न देशों के प्रतिनिधियों ने अपने–अपने विचार व्यक्त किये। सभी ने हिन्दी को राष्ट्रभाषा और अन्तर्राष्ट्रीय भाषा बनाने पर विचार व्यक्त किये। इससे हिन्दी का राजभाषाई पक्ष प्रबल बना और इसकी लोकप्रियता की अभिवृद्धि हुई। इसी तारतम्य में मारिशस में १६ अगस्त, १९७६ को दूसरा हिन्दी–विश्व–सम्मेलन हुआ और उसमें भी अफ्रीकी तथा एशियाई देशों ने हिन्दी को राष्ट्रसंघ में अधिकृत भाषा का स्थान दिलाने का संकल्प पारित किया।

०७.०१७. अन्य हिन्दी संस्थाओं द्वारा राजभाषा-हिन्दी को मान्यता :–

उक्त हिन्दी-सेवी-संस्थाओं के अतिरिक्त विभिन्न प्रदेशों में जो हिन्दी संस्थाएं कार्यरत् थीं उन सबने हिन्दी की अधिमान्यता का स्वागत किया और स्वेच्छा से राजभाषा के रूप को संवारने के लिए योगदान किया। स्थानीय बोलियों, प्रादेशिक भाषाओं और साहित्य-निर्माण के द्वारा इन संस्थाओं ने हिन्दी को सम्पर्क भाषा बनाकर जन-जीवन में हिन्दी के प्रति प्रेम बनाए रखा। इन संस्थाओं में प्रमुख थीं–राष्ट्रभाषा-प्रचार-समिति, पूना, विदर्भ-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, नागपुर तथा सर्वोदय साहित्य मण्डल। विनोवाजी के नेतृत्व में इस मण्डल ने देवनागरी-लिपि के परिमार्जन और प्रसार में बड़ा योग दिया है। पन्द्रह राज्य भाषाओं में देवनागरी-लिपि का प्रवेश इन्हीं की प्रेरणा का प्रतिफल है।

०७.०१७१. कवि-सम्मेलनों के माध्यम से :–

हिन्दी के प्रचार और प्रसार में कवि-सम्मेलनों के माध्यम से जनता ने हिन्दी को पर्याप्त समर्थन दिया। स्वातन्त्र्योत्तर-युग में दिनकर, बच्चन, सुमन, रमँई काका, बेढव बनारसी, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', गोपालदास 'नीरज', बालकवि बैरागी, काका हाथरसी, निर्भय हाथरसी, आदि कवियों ने मंच की कविता के द्वारा नई चेतना को जन्म दिया जिससे हिन्दी के प्रति जनता की अभिरुचि जागृत हुई।

०७.०१७२. चित्रपट के माध्यम से :–

चित्रपट के माध्यम से भी हिन्दी के प्रचार में सहायता मिली और लोकभाषा हिन्दी का स्वरूप निर्माण हुआ।

---

५. प्रतिवेदन, विश्व-हिन्दी-सम्मेलन, पृ. १५.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

समाचार-पत्रों के माध्यम से भी आधुनिक हिन्दी की रूप-रचना में सहयोग मिला। दैनिक-पत्रों में हिन्दुस्तान, नवभारत टाइम्स तथा नईदुनिया, साप्ताहिकों में धर्मयुग, साप्ताहिक हिन्दुस्तान, ब्लिटज़, मासिकों में सरिता, मुक्ता, कादम्बिनी, नवनीत तथा त्रैमासिकों में सम्मेलन-पत्रिका, भाषा प्रमुख-पत्र हैं। इन पत्रों से एक ओर तो साहित्य-सर्जना हुई और दूसरी ओर हिन्दी की प्रतिष्ठा में जन-सहयोग मिला।

०७.०१७३. दूरदर्शन (टी. वी.) के माध्यम से:–

वर्तमान समय में शासन द्वारा हिन्दी के प्रचार–प्रसार और जनरुचि को जाग्रत करने के लिए हिन्दी कवि-सम्मेलनों, हिन्दी, उर्दू, पंजाबी कवि–सम्मेलनों, हिन्दी नाटकों, हिन्दी काव्य-नाटिकाओं, उपन्यासों को प्रमुखता से दिखाया जाता है। इस प्रकार वर्तमान युग के सबसे सशक्त माध्यम दूरदर्शन के द्वारा भी शासन हिन्दी को प्रोत्साहित करके इसके विकास, परिवर्धन और प्रतिस्थापन के लिए सतत प्रयत्नशील है।

निष्प्रह साहित्य-सेवियों ने भी सर्जनात्मक साहित्य-निर्माण के द्वारा हिन्दी के अभावों को दूर करने का सतत् प्रयास किया है। ये साहित्य-सेवी ललित-साहित्य का निर्माण तो कर ही रहे थे, ज्ञान-विज्ञान के उपयोगी साहित्य का भी निर्माण करते रहे। परिणामतः राजभाषा-हिन्दी समृद्ध हो गई और आज विश्वभाषाओं के समक्ष अपने कांतिमय रूप में उपस्थित है।

०७.०२ (अ) हिन्दी–भाषी राज्यों द्वारा :–

जनता ने जब हिन्दी को हृदय से अपना लिया तब जनता द्वारा चुने हुए प्रतिनिधियों ने जनता की इच्छानुसार उसे वैधानिक रूप देकर 'राज्यभाषा' अथवा सह राजभाषा बना दिया। विभिन्न राज्यों के विधानमण्डलों ने अपने–अपने राज्य में यह अभिस्वीकृति वैध रूप से प्रदान कर दी। इनमें तीन प्रकार के राज्य हैं–हिन्दीभाषी और अहिन्दीभाषी प्रादेशिक राज्य हैं तथा केन्द्र प्रशासित राज्य। इन राज्यों में स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी के विकास में जो योग दिया, उसका उल्लेख प्रस्तुत परिच्छेद में दिया जा रहा है।

०७.०२१ (ब) उत्तर प्रदेश :–

स्वतन्त्रता प्राप्ति के उपरान्त सर्वप्रथम अक्टूबर सन् १९४७ ई. में उत्तरप्रदेश ने ही अपनी राजभाषा–हिन्दी घोषित की थी। उसी समय से राज्य सरकार का यह सतत् प्रयत्न रहा है कि सरकारी कार्यों में हिन्दी की प्रगति उत्तरोत्तर बढ़ाई जाए। अन्ततः २६ जनवरी, १९६८ ई. से समस्त सरकारी कार्यों में हिन्दी का प्रयोग विधितः अनिवार्य कर दिया गया। वर्तमान सरकार द्वारा मई १९७१ ई. में यह आदेश भी दिये गए कि 'अँग्रेज़ी इस प्रदेश की राजभाषा नहीं है। अतः इसका उपयोग पूरी तरह और तत्काल बन्द होना चाहिए और इस आदेश का उल्लंघन अनुशासनहीनता मानी जाएगी।[६] संविधान के अनुच्छेद ३४५ के अनुसार हिन्दी को राजभाषा घोषित किया गया। उत्तरप्रदेश विधानमण्डल द्वारा 'उत्तरप्रदेश

---

६. स्वतन्त्रता रजत जयन्ती अभिनन्दन ग्रन्थ, प्रथम संस्करण, १ जुलाई, १९७३ ई., पृ. १८८।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

राजभाषा अधिनियम (१९५१)' पारित हुआ जिसके अनुसार राज्य-सरकार ने एक विज्ञप्ति के द्वारा यह घोषित किया कि १ नवम्बर, १९५२ ई. से कुछ कार्यों में देवनागरी-लिपि में लिखित हिन्दी का प्रयोग होगा। इसके उपरान्त उत्तरप्रदेश राजभाषा अधिनियम १९५१ ई. (यथा संशोधित) के अधीन एक विज्ञप्ति जारी की गई कि २६ जनवरी, १९६८ ई. से समस्त राजकीय प्रयोजनों में भी देवनागरी-लिपि में लिखित हिन्दी का प्रयोग किया जाएगा। एक अन्य विज्ञप्ति में कहा गया कि शासकीय कार्यों में भारतीय अंकों के अन्तर्राष्ट्रीय रूप का प्रयोग किया जा सकता है।

दिसम्बर १९५५ ई. के आदेश के अनुसार हिन्दी में अच्छी टिप्पणी लिखने, आलेख तैयार करने वाले कर्मचारियों को प्रोत्साहन दिया गया, नकद पुरस्कार दिये गये, यह योजना कई वर्षों तक चलती रही, अब समाप्त कर दी गई है। सरकार का सरकारी गजट, अधिसूचनाएँ इत्यादि अँग्रेज़ी के साथ हिन्दी में भी छापी जाती है। सरकारी कार्यालयों से हिन्दी में कार्य करने की प्रगति एवं कठिनाइयों का ब्यौरा हर छः माह में सरकार को प्रतिवेदन के रूप में भेजा जाता है। सरकार—बिहार, राजस्थान, गुजरात, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, पंजाब, हरियाणा, हिमाचल-प्रदेश और दिल्ली प्रशासन से पत्र-व्यवहार हिन्दी में करती है। हिन्दी के प्रयोग को बढ़ाने के लिये राज्य सचिवालय की एक शाखा के रूप में 'भाषा-विभाग' नाम से एक पृथक् विभाग स्थापित किया गया। गत वर्ष सचिवालय पुनर्गठन योजना के अन्तर्गत यह विभाग ६ अनुभागों में विभक्त कर दिया गया। यह विभाग अनुवाद, जिलों में चल रहे हिन्दी टंकन तथा आशुलिपि प्रशिक्षण केन्द्र निःशुल्क संचालित करता है। सन् १९६९ ई. में राज्य के सभी सम्भागों के मुख्यालयों में तथा कानपुर में हिन्दी टंकन के १० प्रशिक्षण केन्द्र खोले गये। सचिवालय को छोड़कर इस समय आगरा, इलाहाबाद, बरेली, बस्ती तथा नरेन्द्रनगर (टिहरी, गढ़वाल) में हिन्दी टंकन तथा मेरठ, वाराणसी और फतेहपुर में हिन्दी टंकन एवं हिन्दी आशुलिपि दोनों का प्रशिक्षण दिया जा रहा है। राज्य सरकार ने सन् १९४८ ई. में ही राज्य के तत्कालीन शिक्षामन्त्री डॉ. सम्पूर्णानन्द की अध्यक्षता में एक तदर्थ समिति बना दी थी, जिसे बाद में 'हिन्दी शब्दकोश समिति' के नाम से अभिहित किया गया। इस समिति ने सामान्य प्रशासन, शिक्षा, वन, पुलिस, वित्त, लेखा, चिकित्सा इत्यादि विभागों से सम्बन्धित शब्दावलियाँ तैयार करके प्रकाशित कीं १९६२ ई. में। उत्तरप्रदेश प्रशासन शब्दकोश नाम से एक अँग्रेज़ी-हिन्दी शब्दकोश समिति का कार्यकाल समाप्त कर आयोग द्वारा तैयार की गई शब्दावली को अपनाने का निश्चय किया। हिन्दी की मौलिक तथा अनुवाद की श्रेष्ठ पुस्तकों के लिये 'हिन्दी-समिति', 'हिन्दी ग्रन्थ अकादमी', और 'हिन्दी-भवन' का निर्माण किया। उच्चकोटि के लेखकों को प्रतिवर्ष नकद पुरस्कार देने की योजना भी है।

०७.०२२. राजस्थान :—

सन् १९४९ ई. को २२ रियासतों का एकीकरण कर राजस्थान की स्थापना हुई। इसी समय से राजस्थान की राजभाषा-हिन्दी घोषित हुई। १४ फरवरी, १९५० ई. को एक आदेश प्रसारित करके उच्च न्यायालय की भाषा हिन्दी कर दी गई। १९५२ ई. में राजभाषा अधिनियम बनाकर विधान-सभा तथा विभागों के लिये राजभाषा-हिन्दी घोषित की गई। राजस्थान में अजमेर का विलय होने पर पुनर्गठित राजस्थान राज्य के लिये राजस्थान

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

राजभाषा विषेयक १९५६ ई. में पारित किया गया । १ मई, १९५७ ई. को इसकी पुष्टि की गई । राजस्थान में हिन्दी में कार्य करने से उत्पन्न कठिनाइयों का निराकरण करने के लिये स्व. श्री हरिभाऊ उपाध्याय की अध्यक्षता में १९५८ ई. में एक समिति का गठन किया गया। इस समिति में राज्य के सचिवगण, लोकसभा एवं विधान-सभा के सदस्यगण, विश्वविद्यालय तथा अन्य गैरसरकारी संस्थाओं के प्रतिनिधि सदस्य थे । इन्होंने समस्याओं को खोजा और समय-समय पर अपने सुझाव प्रस्तुत किये । पर्याप्त संख्या में हिन्दी टंकनयन्त्र, हिन्दी टंकक, शीघ्रलिपिक उपलब्ध कराने, पर्यायवाची-प्रशासनिक शब्दावली व मार्गदर्शिका आदि तैयार कराने इत्यादि के कार्य करवाये गये । अहिन्दीभाषी कर्मचारियों द्वारा टंकन सीखने, परीक्षा उत्तीर्ण करने पर वेतन-वृद्धि और अग्रिम वेतन राशि देकर प्रोत्साहित किया गया । हिन्दी के विकास और प्रचार-प्रसार के लिये १९६५ में भाषा-विभाग की स्थापना की गई। प्रतिवर्ष लगभग ५,००,००० रुपये का बजट प्रावधान भाषा निदेशालय के लिए किया जाता है जिसमें से अधिकांश राशि हिन्दी टंकणयन्त्रों के क्रय हेतु खर्च की जाती है। भाषा-विभाग ने अब तक हिन्दी टंकणयन्त्रों का वितरण, हिन्दी टंकक और शीघ्रलिपि का प्रशिक्षण, हिन्दी अनुवाद और विभिन्न प्रकार की शव्दावलियों का प्रकाशन इत्यादि महत्त्वपूर्ण कार्य किए हैं । जोधपुर; वीकानेर, अजमेर, उदयपुर तथा कोटा जिलों के मुख्यालयों पर सम्बन्धित जिलाधीश की देख-रेख में हिन्दी टंकन और शीघ्रलिपि के लिए कक्षाएँ चलाई जाती है, उन्हें प्रशिक्षित किया जाता है । राजाभाषा-हिन्दी के प्रचार-प्रसार के लिये 'भाषा-परिचय' त्रैमासिक का प्रकाशन प्रारम्भ किया गया है । विभिन्न प्रकार के सन्दर्भ प्रस्तुत करने के लिए एक कक्ष भी कार्यरत् है जिसके द्वारा टेलीफोन पर या पत्र द्वारा पूछे जाने पर हिन्दी में पर्याय, वाक्यांश, प्रारूपण आदि के सम्बन्ध में सलाह एवं निर्देश दिए जाने की व्यवस्था है । राज्य में शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर हिन्दी एक अध्ययन विषय के रूप में स्वीकृत है ।

०७.०२३ बिहार :-

भारत में अपना संविधान लागू होने के बाद बिहार राज्य ने राजभाषा-हिन्दी के विषय में विचार किया और उसके अनुसार संविधान के अनुच्छेद ३४५ के अधीन 'ऑफिशियल लैंग्वेज एक्ट' १९५० ई. बना । किन्हीं कारणों से इसका क्रियान्वयन नहीं हो सका । बाद में इसकी अवधि भी बढ़ाई गई । २६ नवम्बर, १९६० ई. को एक अधिसूचना जारी करके 'बिहार ऑफिशियल लैंग्वेज एक्ट' (१९५०) '२८ नवम्बर, १९६० ई. से सम्पूर्ण राज्य में क्रियान्वित किया गया और राजभाषा-विभाग स्थापित किया गया । इसकी स्थापना का उद्देश्य था—हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाना, उसके प्रचार-प्रसार में सहयोग देना एवं अन्य भाषाओं के विकास में अपना योगदान देना । विभाग द्वारा राज्य के नियम, अधिनियम, कानून इत्यादि का अनुवाद किया । एक अनुवाद विभाग प्रारम्भ किया । इसे कई भागों में बाँटा जैसे—प्रकीर्ण विभाग, गजट-रिपोर्ट विभाग और हिन्दीत्तर अनुवाद शाखा । सन १९७१-७२ में कई परामर्श समितियों का गठन हुआ जिसके अन्तर्गत राज्य के विद्वान साहित्यकारों का सहयोग प्राप्त किया । अँग्रेज़ी में पारित राज्य के अधिनियमों का प्राधिकृत पाठ, अखिल भारतीय मान्यता प्राप्त शैली और शब्दावली में तैयार कराने के लिए न्यायविदों और भाषाविदों की एक समिति 'बिहार हिन्दी विधायी समिति' के नाम से गठित की गई । इसके माध्यम से

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

हिन्दी में अनुवाद का कार्य सरल हो गया तथा कार्य में स्वत: ही तेजी आ गई। सन् १९७१-७२ की हिन्दी-समिति की बैठकों में कई निर्णय लिये गये—सरकारी गाड़ियों की नम्बर प्लेट हिन्दी में हो, एक त्रैमासिक पत्रिका का प्रकाशन हो, एक-एक प्रमण्डल हिन्दी-समिति गठित की जाए,' इत्यादि।

०७.०२४. मध्यप्रदेश :–

वर्तमान मध्यप्रदेश का गठन होने पर इसमें संविलीन होने वाले राज्यों के मुख्य-मन्त्रियों के सम्मेलन ने यह महत्वपूर्ण निर्णय लिया था कि 'नये मध्यप्रदेश की राजभाषा-हिन्दी ही होगी।' इसके अनुसार १ नवम्बर, १९५६ ई. को हिन्दी को राजभाषा बनाने के लिये प्रयत्न किया। सितम्बर १९५७ ई. में मध्यप्रदेश राजभाषा अधिनियम (१९५७) पारित किया गया। यह ७ फरवरी, १९५८ ई. से प्रभावशील हो गया। कुछ अपवादों को छोड़कर सभी शासकीय कार्यों में हिन्दी का उपयोग अनिवार्य कर लिया गया। इसके उपरान्त शासन ने हिन्दी में कार्य करने से उत्पन्न समस्याओं को दूर करने के लिये 'भाषा संचालनालय' को आदेश दिए, शासन ने राजकाज में हिन्दी के उपयोग के विस्तार के उद्देश्य से सुझाव देने केलिए ८ मई, १९६२ ई. को मुख्यमन्त्री की अध्यक्षता में एक मन्त्री परिषद् बनाई। पारिभाषिक शब्दावली का निर्माण, अँग्रेज़ी-हिन्दी प्रशासन शब्दकोश, वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग, विधि-आयोग आदि द्वारा निर्मित शब्दावली का समावेश भी किया एवं समय-समय पर हिन्दी-सहायिका' का प्रकाशन भी किया। इसने प्रशासकीय सामग्री के हिन्दी अनुवाद का भी कार्य किया। राज्य के सम्भागीय मुख्यालयों पर हिन्दी शीघ्रलेखन, मुद्रलेखन प्रशिक्षण केन्द्रों में शीघ्रलेखन और मुद्रलेखन का प्रशिक्षण दिया जाता है। राज्य के सचिवालयों और अन्य कार्यालयों में अहिन्दी-भाषी कर्मचारियों के प्रशिक्षण के लिये मध्यप्रदेश राष्ट्रभाषा प्रचार समिति की सहायता से सचिवालय, पुलिस महानिरीक्षक एवं आदिम जाति कल्याण संचालनालय में हिन्दी-भाषा प्रशिक्षण केन्द्र चलाये जा रहे हैं। इन केन्द्रों में राष्ट्रभाषा प्रचार समिति की 'परिचय' परीक्षा के स्तर की शिक्षा दी जाती है। शासन ने इस परीक्षा को मैट्रिक स्तर की परीक्षा के समकक्ष मान्यता दी है। इस कार्य को संचालित करने के लिए इस समिति को नियमित रूप से वार्षिक अनुदान के रूप में सहायता दी जाती है। भाषा-संचालनालय के माध्यम से हिन्दी के प्रचार-प्रसार का कार्य करने वाली स्वैच्छिक साहित्यिक संस्थाओं को लगभग १,१८,००० रुपये का वार्षिक अनुदान दिया जाता है। इसी प्रकार व्यक्तिगत संगठनों को भी अनुदान दिया जाता है।

चतुर्थ पंचवर्षीय योजना[७] में भाषाओं के विकास पर व्यय किया गया। तृतीय आयोजना के दौरान २.२६ लाख रुपये व्यय किये गये और ५ हिन्दी शीघ्रलेखन तथा मुद्रलेखन केन्द्र खोले गये। १६३ हिन्दी शीघ्रलेखकों तथा १३३७ मुद्रलेखकों को प्रशिक्षित किया गया तथा कुछ पुस्तकों का अनुवाद किया गया। १९६९-६७ से १९६८-६९

---

७. मध्यप्रदेश की चतुर्थ पंचवर्षीय योजना (१९६९-७४), मध्यप्रदेश शासन योजना एवं विकास विभाग, पृ. ७८-७९।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

तक तीन वार्षिक आयोजना वर्षों के दौरान १.९७ लाख रुपये की व्यवस्था में से १.३४ लाख रुपये व्यय किये गये। अनेक विभागीय पुस्तिकाएँ अँग्रेज़ी से हिन्दी में अनुवादित की गईं। अँग्रेज़ी-हिन्दी प्रशासन शब्दकोश तैयार किया गया और भोपाल में एक सम्भागीय भाषा इकाई की स्थापना की गई। इसके अतिरिक्त हिन्दी-भाषा शीघ्रलेखन तथा मुद्रलेखन की प्रतियोगिता परीक्षाएँ भी आयोजित की गईं। चतुर्थ आयोजना में ४ लाख रुपये की व्यवस्था की गई है। राज्य के अर्थाभावग्रस्त साहित्यकारों और कलाकारों को आर्थिक सहायता, मुद्रलेखकों और लिपिकों द्वारा हिन्दी मुद्रलेखन की परीक्षा पास करने पर वेतन वृद्धियाँ, पुरस्कार वितरण इत्यादि दिये जाते हैं। अन्य हिन्दीभाषी राज्यों से पत्र-व्यवहार हिन्दी में किया जाता है।

०७.०२५. हरियाणा :-

इसका निर्माण १ नवम्बर, १९६६ ई. को हुआ। इसके निर्माण के साथ ही राज्य-विधान-मण्डल ने राजकीय भाषा अधिनियम (१९६९) पारित करके हिन्दी को २६ जनवरी, १९६९ ई. से राज्य स्तर तक राजभाषा के रूप में प्रतिष्ठित कर दिया।[८] सरकार ने अधिकाधिक हिन्दी के प्रसार के लिये सभी जिला मुख्यालयों, मुख्य उपमण्डल केन्द्रों तथा राजधानी चण्डीगढ़ में टाइप; आशुलिपि का प्रशिक्षण तथा हिन्दी का ज्ञान देने के निमित्त अनेक श्रेणियाँ चलाईं। कर्मचारियों के उपयोग के लिये कई महत्त्वपूर्ण पुस्तकें हिन्दी में छापी। शिक्षा के क्षेत्र में हिन्दी को यहाँ पर शीर्ष स्थान प्राप्त है। हिन्दी पुस्तकों की सहायता के लिये, छापने के लिये हिन्दी ग्रन्थ अकादमी की स्थापना की गई है। हरियाणा में सभी सरकारी पदों पर नियुक्ति के लिए हिन्दी अनिवार्य है। प्रतिवर्ष राज्य स्तर पर कवि-सम्मेलन, नाटक, कहानी, निबन्ध इत्यादि की प्रतियोगिताएँ आयोजित की जाती है जिससे हिन्दी अधिक से अधिक लोकप्रिय बने, उसका प्रचार-प्रसार हो! सरकार आर्थिक सहायता देकर भी लोगों को प्रोत्साहित करती है। हिन्दी के लिए उचित साहित्यिक वातावरण निर्माण करने के लिये शासन साहित्यिक पत्रिकाओं का भी प्रकाशन करता है।

०७.०२६. हिमाचल-प्रदेश :-

इस प्रदेश में हिन्दी को २६ जनवरी, १९६५ ई. से एक अधिसूचना के द्वारा राजभाषा घोषित किया गया परन्तु उसके विकास की ओर २६ जनवरी, १९७१ ई. से ध्यान दिया गया। वर्तमान में विधान-सभा का कार्य हिन्दी में किया जाता है।[९] प्रशासनिक स्तर पर हिन्दी के विकास के लिए एक दस सूत्री कार्यक्रम क्रियान्वित किया जा रहा है। हिन्दी के श्रेष्ठ लेखकों को और उनकी रचनाओं को पुरस्कृत करने की योजना चलाई जा रही है। प्रादेशिक भाषा-संस्थान द्वारा हिन्दी में एक त्रैमासिक पत्रिका का प्रकाशन भी किया जाता है। हिन्दी के प्रचार-प्रसार के लिए ७ हिन्दी-परिषदें कार्यरत् हैं जो हिन्दी के विभिन्न कार्य-

---

८. स्वतन्त्रता रजत जयन्ती अभिनन्दन ग्रन्थ : प्रथम संस्करण, १५ जुलाई, १९७३ ई. पृष्ठ १९२।

९. स्वतन्त्रता रजत जयन्ती अभिनन्दन ग्रन्थ : १९७३ ई., पृ. १९४।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

क्रमों को आयोजित करके हिन्दी का प्रसार करती हैं। यहाँ के मुख्यमन्त्री श्री शान्ताकुमार ने हिमाचल-प्रदेश से अँग्रेज़ी हटाकर हिन्दी को समस्त सरकारी कामकाज की भाषा सन् १९७८ ई. से घोषित कर दी है।

०७.०२७. दिल्ली प्रदेश :–

३ जून, १९५६ ई. की बैठक में हिन्दी को राजभाषा बनाया जिसे भारत सरकार ने स्वीकार कर लिया। दिसम्बर १९६६ ई. में भारत सरकार का एक हिन्दी सलाहकार मण्डल हिन्दी के प्रयोग और प्रगति का सर्वेक्षण करने दिल्ली आया। हिन्दी के विकास के लिए कई योजनाएँ बनाई गई। १९६७ में महानगर में कार्यकारी-परिषद् की स्थापना हुई जिसमें विभिन्न विद्वान सम्मिलित हुए। कार्यकारी परिषद् ने निर्णय किया कि १५ अगस्त, १९६८ ई. तक सम्पूर्ण प्रशासन की भाषा हिन्दी हो जाए। हिन्दी अनुवाद, हिन्दी टाइप, आशुलिपि इत्यादि का प्रशिक्षण एवं प्रतियोगिताएँ आयोजित की जाती हैं। एक हिन्दी सलाहकार समिति है जो हिन्दी के विकास का कार्य देखती है। भाषा कर्मशाला योजना के अन्तर्गत कर्मचारियों को प्रशिक्षण दिया जाता है। हिन्दी-विभाग ने शब्दावली–निर्माण का कार्य प्रकाशित किया है।

निष्कर्ष यह है कि सातों हिन्दी-भाषी प्रदेश अपने-अपने राज्यों में हिन्दी को राजभाषा बनाने के अधिनियम तो पारित कर चुके हैं, किन्तु प्रादेशिक हिन्दी को राज्यभाषा नहीं बनाया। परिणाम है कि संघभाषा हिन्दी ही अपने दोनों रूपों में यहाँ की राजभाषा है। प्रान्तीय राजभाषा में प्रदेश की बोलियों का प्रभाव परिलक्षित होता है। इसलिए प्रादेशिक हिन्दी का स्वरूप भिन्न-भिन्न राज्यों में भिन्न-भिन्न प्रकार का है।

०७.०३. अहिन्दी-भाषी राज्यों द्वारा :–

अहिन्दीभाषी राज्यों में महाराष्ट्र, गुजरात और गोवा में राजभाषा-हिन्दी को पर्याप्त समर्थन प्राप्त है। इन राज्यों में वह सह-राजभाषा है।

पंजाब और जम्मू-कश्मीर में इसके प्रति विरोधी दृष्टिकोण अपनाया गया है। पंजाब के अकाली शासनकाल में हिन्दी का उग्र विरोध हुआ और कश्मीर में अँग्रेज़ी सह-राजभाषा होने से हिन्दी को राजकीय कार्य में कोई महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त नहीं है।

दक्षिण के चारों राज्य में हिन्दी की स्थिति अच्छी है। राष्ट्रभाषा-प्रचार के माध्यम से, गांधीजी की प्रेरणा से जो मौलिक कार्य इस क्षेत्र में हुआ है उससे केरल, आन्ध्र, और कर्नाटक में हिन्दी-प्रेम बढ़ा है जबकि तमिलनाडु में उग्रभाषावाद ने विरोधी वातावरण बनाया है।

पूर्वांचलिय राज्यों में उड़िसा में वातावरण अनुकूल है जबकि पश्चिम बंगाल में उग्र। असम में हिन्दी की प्रगति धीमी है। केन्द्रशासित पूर्वांचलीय राज्यों में ईसाई मिशनरियों के कारण हिन्दी को अँग्रेज़ी से संघर्ष करना पड़ रहा है।

इस स्थिति का पृथक-पृथक विवेचन किया जा रहा है।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

०७.०३१. गुजरात :—

गुजरात में हिन्दी का प्रचार कार्य महाराजा सयाजीराव गायकवाड़ के समय से हुआ। इन्होंने अपनी रियासत बड़ौदा में हिन्दी को अनिवार्य स्थान दे रखा था। राज्य के कर्मचारियों के लिये हिन्दी आवश्यक थी तथा अनिवार्य रूप से पढ़ाई जाती थी। सन् १९३७ ई. से महात्मा गांधी के प्रयत्न से 'राष्ट्रभाषा-प्रचार-समिति' ने हिन्दी के लिये कार्य करना प्रारम्भ किया। इस समिति ने अपने परीक्षा केन्द्र खोले, कक्षाएँ चलाई जो आज भी चलती हैं। इस समिति का कार्य १९३७ ई. से लेकर सन् १९५१ ई. तक उत्तरोत्तर बढ़ता ही गया। सन् १९५१ ई. में बम्बई राज्य ने इस समिति द्वारा चलाई जाने वाली परीक्षाओं की मान्यताओं को समाप्त कर दिया। जिससे इसके कार्य में व्यवधान उत्पन्न हुआ और प्रगति की गति शिथिल हो गई। वर्तमान समय में 'गुजरात प्रान्तीय' राष्ट्रभाषा-प्रचार-समिति (अहमदाबाद) और 'गुजरात विद्या-पीठ' हिन्दी के प्रचार-प्रसार का कार्य करते हैं। राष्ट्रभाषा-प्रचार-समिति (वर्धा) के दूसरे अधिवेशन से जो १९५० ई. में हुआ था, बापू की स्मृति में प्रतिवर्ष हिन्दीतरभाषी साहित्यकारों को १,५०१ रुपये का नकद पुरस्कार देती है। सन् १९५१ ई. से गुजरात प्रान्तीय राष्ट्रभाषा-प्रचार-समिति 'राष्ट्रवीणा' नामक एक पत्रिका नियमित प्रकाशित करती है। प्रारम्भ में यह त्रैमासिक थी परन्तु स्व. माखनलाल चतुर्वेदी की सूचनानुसार सन् १९६४ ई. से मासिक के रूप में प्रकाशित हो रही है। गुजरात ने वर्धा समिति को 'हिन्दी-दिवस' मनाने का सुझाव दिया जिसे नागपुर सम्मेलन में स्वीकार किया गया। जिस दिन से भारतीय संविधान ने हिन्दी को राजभाषा स्वीकार किया उसी दिन को हिन्दी-दिवस के रूप में मनाया जाता है। सन् १९६० ई. में गुजरात राज्य की स्थापना हुई तभी से गुजरात में हिन्दी एक विषय के रूप में प्राथमिक कक्षा से लेकर हाईस्कूल और अब विश्वविद्यालय स्तर तक पढ़ाया जाता है। हिन्दी के क्षेत्र में गुजरात का अपना विशेष स्थान है। गुजरात से 'राष्ट्रभाषा-प्रचार-समिति' का कार्य ही इतना अधिक है कि भारतवर्ष की प्रमुख हिन्दी प्रचारक संस्थाओं में उसका अपना स्थान और महत्त्व है। १९५७ ई. में राज्य के हाई-स्कूलों की आठवीं, नवीं, दसवीं और ग्यारहवीं कक्षाओं में हिन्दी की पढ़ाई अनिवार्य कर दी गई है। इतना ही नहीं हिन्दी विषय की परीक्षा उत्तीर्ण करना अनिवार्य और आवश्यक है। हिन्दी विषय में परीक्षा पास किए बगैर एस. एस. सी. (स्नातकोत्तर) में उत्तीर्ण नहीं माना जाता। अन्य राज्यों के (हिन्दीभाषी) साथ पत्र-व्यवहार हिन्दी में किया जाता है। राज्य-विधान-सभा की कार्यवाही साधारणतया गुजराती में होती है लेकिन मन्त्री या सदस्य हिन्दी में भी भाषण देते हैं।

०७.०३२. महाराष्ट्र :—

महाराष्ट्र राज्य सरकार ने प्रादेशिक भाषा मराठी को, द्वितीय महाराष्ट्र राज्य-स्थापना-दिवस १ मई, १९६२ ई. से राजकाज की भाषा के रूप में स्वीकार किया। इस राज्य में त्रिभाषा फार्मूला स्वीकार किया गया है। राज्य अन्य राज्यों से और केन्द्रीय सरकार से पत्र-व्यवहार मुख्यतः अँग्रेज़ी में ही करता है। शासकीय स्तर पर कोई पत्र-व्यवहार हिन्दी में नहीं होता। महाराष्ट्र में हिन्दी का शिक्षण कार्य पर्याप्त मात्रा में होता है। प्राथमिक; माध्यमिक तथा विश्वविद्यालय स्तर पर माध्यम के रूप में

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

हिन्दी का प्रयोग होता है। महाराष्ट्र राज्य ने राजभाषा-हिन्दी के प्रचार-प्रसार के लिये प्रयास किये हैं। सरकार ने महाराष्ट्र राज्य मा. शि. मण्डल की ओर से हिन्दी विषय में, मार्च की एस. एस. सी. परीक्षा में प्रथम, द्वितीय, तृतीय और चतुर्थ क्रमांक पाने वालों के लिए क्रमशः रु. १००, रु. १५०, रु. १००१ और रु. ५०१ के विशेष पुरस्कार रखे गये हैं। राज्य की ओर से जूनियर-हिन्दी-शिक्षक सनद परीक्षा के लिए प्रथम रु. १०० और द्वितीय रुपये ७५ तथा सीनियर-हिन्दी-शिक्षक सनद के लिए रु. १५० और द्वितीय रुपये १००। इस प्रकार के पुरस्कार दिए जाते हैं। राज्य शिक्षा—विभाग की ओर से सन् १९३८ ई. से अध्यापकीय प्रशिक्षार्थ 'डिप्लोमा इन एज्युकेशन' का शिक्षण प्रारम्भ किया गया है। बम्बई के सचिवालय में 'भाषा—संचालनालय' नामक एक नया विभाग खोला गया है, जो राज्यभाषा मराठी के साथ ही अन्य भाषाओं के विकास की योजनाओं में मार्गदर्शन देने का कार्य भी करता है।

महाराष्ट्र राज्य में हिन्दी के प्रचार का कार्य करने वाली हिन्दी—प्रचार संस्थाओं को आर्थिक अनुदान देने की प्रविधि निर्धारित करने एवं हिन्दी विषयक कार्यों में सहायता-मार्गदर्शन करने के हेतु शासन की ओर से सन् १९६८ ई. के प्रारम्भ में महाराष्ट्र राज्य हिन्दी सलाहकार समिति की स्थापना की गई।

०७.०३३. गोवा :—

गोवा में पराधीन रहने के समय से ही राष्ट्रभाषा-प्रचार-समिति, वर्धा की ओर से हिन्दी—प्रचार का सूत्रपात हुआ। सन् १९५१—१९६१ में पुर्तगाली शासन के द्वारा राष्ट्रभाषा के प्रचार पर प्रतिबन्ध लगा दिया। फिर दिसम्बर १९६१ में गोवा पुर्तगाली दासता से मुक्त होते ही हिन्दी—प्रेमियों ने हिन्दी—प्रचार का कार्य प्रारम्भ किया और नाट्य संस्था के द्वारा उत्साहप्रद प्रगति की। यहाँ एम. ए. विषय को लेकर हिन्दी में अध्ययन की व्यवस्था है। मुख्य रूप से केन्द्र शासित प्रदेश होने से इसकी प्रगति केन्द्रीय नीति पर निर्भर है।

०७.०३४. उड़ीसा :—

सन् १९३२ ई. में पुरी कांग्रेस का अधिवेशन हुआ जिसमें स्वयंसेवकों को सामान्य जानकारी देने के उद्देश्य से हिन्दी-प्रचार का कार्य प्रारम्भ किया और हिन्दी सिखाने का कार्य श्री रामानन्द शर्मा ने किया। १९३३ ई. में उत्कल प्रान्तीय राष्ट्रभाषा-प्रचार-सभा की स्थापना की गई। इसके सभापति स्वामी विचित्रानन्ददास थे। १९३९ ई. में सभा पंजीयत हुई। इसी के द्वारा सम्मेलन की परीक्षा के लिए परीक्षा-केन्द्र प्रारम्भ किया गया। परिणाम-स्वरूप पुरी, भद्रक, ब्रह्मपुर और बालेश्वर में हिन्दी-प्रचार केन्द्र स्थापित किये गये। राष्ट्रभाषा-प्रचार-समिति-ने प्रारम्भिक, प्रवेश, परिचय, कोविद और राष्ट्रभाषा रत्न की परीक्षाएँ प्रारम्भ की जिसे राज्य सरकार ने मान्यता दी। इन परीक्षाओं को उत्तीर्ण करने पर उन्हें हिन्दी-शिक्षक बनाया गया, वेतन, महँगाई भत्ते इत्यादि भी दिये जाने लगे। उत्कल राष्ट्रभाषा-प्रचार-समिति को राज्य सरकार ने जमीन और अनुदान दिया। वर्तमान में प्रतिवर्ष लगभग ४० रुपये अनुदान मिलता है। इसके साथ ही केन्द्रीय सरकार हिन्दी-शिक्षण-केन्द्र पुस्तकालय, टंकणवर्ग और हिन्दी-प्रचारक-शिक्षक शिविर के लिए भी अनुदान देती है। शासन की सहायता से प्रत्येक जिले में सभा की ओर से स्थायी प्रचार केन्द्र खोले हैं और वैतनिक प्रचारक इन केन्द्रों में नियुक्त किये गए हैं। प्रान्त के विभिन्न स्थानों पर ३० केन्द्रीय हिन्दी-शिक्षण-केन्द्र

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

सभा द्वारा चलाये जाते हैं। सभा की ओर से कटक तथा भुवनेश्वर में हिन्दी टंकन वर्ग भी चालू किया गया है। सभा ने हिन्दी-उड़िया की पुस्तकें प्रकाशित की, स्कूल-कॉलेज की पाठ्य-पुस्तकें, साहित्यिक पुस्तकें और अनुवाद भी किये।

०७.०३५. पंजाब :–

पंजाब प्रारम्भ से ही द्विभाषी प्रदेश रहा है। ब्रिटिश शासनकाल में सरकारी और गैरसरकारी कार्यों के लिये उर्दू और हिन्दी का प्रयोग किया जाता था। स्वतन्त्रता के उपरान्त पंजाब का बटवारा हुआ, कुछ भाग पाकिस्तान में गया और शेष भारत में। हमारे यहाँ के पंजाबी प्रदेश में पंजाबी और हिन्दी के प्रयोग की पूर्ण स्वतन्त्रता थी। इसके उपरान्त 'सच्चर फार्मूला' स्वीकार किया गया जिसके अनुसार पंजाब हिन्दी क्षेत्र और पंजाबी क्षेत्र निर्धारित किए। जहाँ पर स्कूलों में दोनों ही भाषाएँ माध्यम के रूप में प्रयोग की जाती रही। वहाँ सभी परीक्षार्थियों को उत्तर-पुस्तिका में उत्तर लिखने के सम्बन्ध में स्वतन्त्रता थी वे चाहे पंजाबी में लिखें या हिन्दी में। पंजाब में सभी स्तर पर हिन्दी का क्रम सन् १९६६ ई. तक चलता रहा। नवम्बर १९६६ ई. में इस प्रदेश का पुनः बटवारा हुआ। एक हरियाणा और दूसरा पँजाब। 'सच्चर फार्मूला' समाप्त करके सरकारी तथा गैरसरकारी शिक्षण संस्थाओं में प्राथमिक से लेकर विश्वविद्यालय तक पंजाबी को शिक्षा–माध्यम बना दिया तथा केवल गुरुमुखी–लिपि में, पंजाबी भाषा में, परीक्षाओं में उत्तर पुस्तकें लिखने का कठोर नियम बनाया। यह १९६८ ई. के एक आदेश के अनुसार किया गया। पंजाब सरकार ने छठी कक्षा से दूसरी भाषा के रूप में हिन्दी–पढ़ाने का नियम तो बना दिया, किन्तु यह प्रयोग में हो रहा है कि हिन्दी पढ़ने वाले छात्रों को निरुत्साहित किया जाता है। अकाली सरकार ने शिक्षा-विभाग में पंजाबी का आधिपत्य स्थापित करने के उपरान्त सचिवालय तथा सरकारी विभागों में पंजाबी का प्रयोग अनिवार्य कर दिया। हिन्दी के प्रयोग पर पूर्णतः प्रतिबन्ध लगा दिया। अहिन्दीभाषी क्षेत्रों में पंजाब ही एक ऐसा प्रदेश है जहाँ पर हिन्दी पर कुठाराघात किया गया है। प्रचार–प्रसार तो दूर रहा, उसके प्रयोग पर प्रतिबन्ध भी लगा दिया गया है।

०७.०३६. कश्मीर :–

जम्मू–कश्मीर की क्षेत्रीय भाषा कश्मीरी है। राजकाज में उर्दू, प्रयुक्त होती है। अँग्रेज़ी सहायक भाषा है। किन्तु हिन्दुस्तानी का रूप यहाँ अवश्य प्रचलित है। जम्मू-कश्मीर में डोंगरी का प्रचार है, राजकाज की हिन्दी का प्रचार बहुत कम है। राष्ट्रभाषा प्रचार-समिति के तत्वावधान में हिन्दी का शिक्षण अवश्य होता है तथा युवक वर्ग इसके प्रति रुचि लेता है फिर भी हिन्दी की प्रगति संतोषजनक नहीं कही जा सकती। प्रशासन अवश्य पुरस्कार आदि देकर हिन्दी के विकास में सहयोग देता है।

०७.०३७. आन्ध्र :–

दक्षिण भारत में जब से हिन्दी का प्रचार–प्रसार चला उसी के समानान्तर आंध्रप्रदेश में हिन्दी के लिये कार्य होने लगा। सन् १९१८ से १९३५ ई. तक के समय को 'जागरण-काल' या 'प्रबोध–युग' कहा जाता है। इसमें हिन्दी के आन्दोलन का प्रारम्भिक स्वरूप

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

दिखलाई देता है। इस समय राष्ट्रीयता के परिप्रेक्ष्य में आन्ध्र ने एक सामान्य भाषा की आवश्यकता का अनुभव किया और यहाँ के लेखकों ने उस कार्य में अपना सक्रिय तथा रचनात्मक योगदान देना आरम्भ किया। सन् १९३७ से १९४९ ई. तक 'साधना-युग' कहा जाता है। इस समय तक हिन्दी का प्रचार आन्ध्र की शिथिल जनता में किया गया फलस्वरूप सरकार ने इस कार्य को मान्यता दी और विद्यालयों में हिन्दी पढ़ाना प्रारम्भ हुआ। 'साधना-युग' में आकर हिन्दी अध्ययन-अध्यापन का विषय बन गई। इस समय हिन्दी का प्रचार आन्ध्र में पर्याप्त हुआ। सन् १९५० ई. से १९६० ई. तक के समय को जो स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद का है को 'विकास-युग' कहते हैं। हिन्दी को संविधान में स्वीकार कर लिया था तब से उसका विकास पहले की अपेक्षा कई गुना अधिक बढ़ गया।

राज्य सरकार ने अपने विद्यालयों में सभी विद्यार्थियों को पांचवी कक्षा से ही हिन्दी को द्वितीय भाषा के रूप में सिखाने का प्रबन्ध कर रखा है। प्रत्येक छात्र के लिए जो पाठशाला में प्रविष्ट होता है चाहे उसकी मातृभाषा कुछ भी हो उसे हिन्दी का अध्ययन द्वितीय भाषा के रूप में करना अनिवार्य है। आन्ध्र-प्रदेश सरकार ने कई माध्यमिक विद्यालयों में हिन्दी-अध्यापन के लिये प्रथम श्रेणी के पण्डित और आवश्यक विद्यालयों में द्वितीय श्रेणी के पण्डित नियुक्त किए हैं। हिन्दी के प्रचार-प्रसार के लिये राज्य सरकार के साथ-साथ प्रदेश की साहित्य अकादमी का भी पर्याप्त योगदान है। जिसने राष्ट्रभाषा के प्रसार के लिये समय-समय पर प्रतियोगिताएँ और पुरस्कृतियां देने की योजनाएँ बना रखी हैं। यहाँ पर हिन्दी का प्रचार अधिक नहीं हो पाता है क्योंकि यहाँ पर माध्यमिक स्तर के उपरान्त हिन्दी अनिवार्य विषय नहीं है। अतः साधारण विद्यार्थी का दृष्टिकोण यह हो जाता है कि जिस भाषा को उच्च शिक्षा में पढ़ने की आवश्यकता नहीं है उसे निम्न स्तर में भी लगन से सीखने की क्या आवश्यकता है ? इस प्रकार हिन्दी का मार्ग अवरुद्ध-सा प्रतीत होता है।

०७.४३८. कर्नाटक :—

मैसूर राज्य का नया नाम कर्नाटक है। १९२४ ई. में जब भारतीय कांग्रेस का अधिवेशन बेलगांव में हुआ तो 'हिन्दुस्तानी' सेवादल के शिविरों में हिन्दी-प्रचार का कार्य प्रारम्भ किया गया। हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन से प्रेरणा पाकर सन् १९४२ ई. में 'मैसूर हिन्दी-प्रचार-परिषद्' की स्थापना हुई। प्रारम्भ से आज तक यह परिषद् मैसूर के गांव-गांव में हिन्दी के प्रचार का कार्य कर रही है और हिन्दी की परीक्षाएँ संचालित करती है। एक पत्रिका का भी प्रकाशन किया जाता है।

हिन्दी के प्रचार के लिये सरकार पर्याप्त प्रोत्साहन देती है, अनुदान दिया जाता है। राज्य सरकार के अनुदान से राज्य में तीन हिन्दी-शिक्षक-प्रशिक्षण महाविद्यालय चल रहे हैं और इसी अनुपात में पुस्तकालय एवं वाचनालय भी है। शिक्षा संस्थाओं में छठी कक्षा से हिन्दी पढ़ाई जाती है और तृतीय भाषा के रूप में परीक्षा के लिए हिन्दी अनिवार्य विषय है। सरकारी कर्मचारियों को हिन्दी की एक नियत परीक्षा उत्तीर्ण करना होती है। प्रोत्साहन के रूप में सौ रुपये पुरस्कारस्वरूप प्रदान किये जाते हैं। शासन के निर्देशन में पाठ्यपुस्तकें छपवाई जाती है जिससे उसमें एकरूपता बनी रहे। यहाँ पर हिन्दी के लिए कुछ विरोध अवश्य है परन्तु वह नगण्य है। राज्य में हिन्दी लोकप्रिय बनती जा रही है।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

०७.४३९. तमिलनाडु :—

सन् १९६५ से १९६७ ई. में सम्पूर्ण दक्षिण भारत में और विशेष करके तमिलनाडु में स्थान-स्थान पर हिंसात्मक आन्दोलन हुए। हिन्दी-विरोधी आन्दोलन उग्र हो गया। सन् १९६७ ई. में आम चुनाव हुए। तमिलनाडु में हिन्दी का विरोध करने वाले लोगों की सरकार स्थापित हो गई। प्रारम्भ में हिन्दी पर इसका प्रभाव नहीं पड़ा परन्तु अन्त में छात्रों की माँग का बहाना करते हुए सरकार ने तमिलनाडु से त्रिभाषा सूत्र (तमिल-अँग्रेज़ी-हिन्दी) को हटाकर द्विभाषा सूत्र (अँग्रेज़ी-तमिल) को अपना लिया। राज्य सरकार ने हिन्दी अध्यापकों को अन्य विषय पढ़ाने पर बाध्य किया। कई हिन्दी अध्यापकों को नौकरी से निकाल दिया। केन्द्र सरकार ने इन्हें विभिन्न प्रकार की सहायता दी। वर्तमान तमिलनाडु सरकार की हिन्दी-विरोधी नीति स्पष्ट है।

देश के अन्य राज्यों की तुलना में यहाँ हिन्दी-विरोधी कार्य सबसे अधिक होते हैं। हिन्दी के विरोध में यह राज्य अग्रणी है। यहाँ पर सन् १९२३ ई. से ही जब राजगोपालाचारी मुख्यमन्त्री थे और सुब्बारायन शिक्षा-मन्त्री थे 'हिन्दुस्तानी' भाषा का विरोध होता था और तमिल के लिये प्रोत्साहन दिया जाता था।

०७.०४४०. केरल :—

केरल में 'दक्षिण-भारत-प्रचार-सभा' ने हिन्दी के प्रचार-प्रसार का कार्य किया। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पूर्व केरल के स्कूलों में हिन्दी पढ़ाई जाती थी। अँग्रेज़ी के कारण सरकारी कर्मचारियों का हिन्दी के प्रति विरोधी मनोभाव ही रहा। बदल-बदलकर आने वाले सत्तारूढ़ दलों ने हिन्दी को जड़ से उखाड़ फेंका। पहले त्रावणकोर और बाद में समस्त केरल में सरकार अतिरिक्त समय में हिन्दी अध्यापकों की नियुक्ति करके निम्न श्रेणी में लाने लगी। इस कारण भारत की राष्ट्रभाषा पढ़ाने वाले हिन्दी अध्यापक दूसरे अध्यापकों से हीन एवं दीन माने जाने लगे। आज भी केरल में यही दुरावस्था बनी हुई है, पर भाग्यवश महाविद्यालयों में यह बाधा नहीं आई। संविधान में राजभाषा हिन्दी घोषित हो जाने के उपरान्त भी केरल सरकार सरकारी कार्यालयों में हिन्दी नहीं चाहती है। कार्यालयों का कामकाज हिन्दी में करने की कोई व्यवस्था नहीं है। कुछ प्रयत्न केन्द्र सरकार की ओर से किये जाते हैं परन्तु वे बड़े नगरों तक सीमित हैं तथा नगण्य हैं। केरल सरकार भी अपने सरकारी कार्यालयों में कर्मचारियों के लिये हिन्दी आवश्यक नहीं मानती है।

सन् १९६५ ई. से केन्द्र सरकार को मद्रास राज्य के हिन्दी विरोधी आन्दोलन के कारण अपनी नीति में परिवर्तन करना पड़ा। तय यह हुआ कि जब तक अहिन्दी प्रान्तों के लोग हिन्दा सीखकर हिन्दी को राजभाषा के तौर पर स्वीकार करने को तैयार न हो जाएं, तब तक हिन्दी के स्थान पर अँग्रेज़ी ही केन्द्र सरकार की राजभाषा रहेगी। फलतः केरल में और केरल सरकार ने हिन्दी के लिये सरकारीतौर पर कोई प्रयत्न नहीं किया।

०७.०४४१. पश्चिमी बंगाल :—

बंगाल में हिन्दी का प्रचार-प्रसार बहुत पहले से हो रहा है। बंगला के हिन्दी-विद्यालयों में बंगला को अनिवार्य कर दिया और राज्य के बंगला विद्यालयों में सातवीं कक्षा

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

तक हिन्दी अनिवार्य कर दी गई। सरकारी सूचनाएँ और विज्ञापन बंगला व अंग्रेज़ी के साथ हिन्दी में भी होते हैं। केन्द्रीय सरकार ने बंगला में कार्य करने वाले सरकारी कर्मचारियों को हिन्दी सिखाने के लिये योग्य अध्यापकों की नियुक्तियाँ की। पूर्वी रेलवे के प्रधान तथा ऐसे अधीनस्थ कार्यालयों में जहाँ हिन्दीतर कर्मचारियों की संख्या अधिक है; हिन्दी-प्रशिक्षण केन्द्र खोले गए हैं। गृहमन्त्रालय की ओर से पोस्टमास्टर जनरल के कार्यालय में हिन्दी में टंकन प्रशिक्षण भी चल रहा है। राज्य सरकार हिन्दी के प्रचार-प्रसार के लिये प्रयत्नशील है।

०७.०४४२. असम :–

असम में सन् १९३४ से राष्ट्रभाषा का प्रचार चल रहा है। यहाँ के राजनीतिज्ञों ने गांधीजी के हिन्दुस्तानी का समर्थन किया और सन् १९५० से अपनी समिति की परीक्षाएँ स्वयं संचालित की हैं। यहाँ गोहाटी राष्ट्रभाषा भवन में गवेषणागार है जिसमें हिन्दी मुद्रणालय; पुस्तकालय तथा विद्यालय संचालित हो रहा है। असम के मुख्यमन्त्री, राष्ट्रभाषा समिति के पदेन अध्यक्ष हैं इसलिए असम, मणिपुर, त्रिपुरा, मेघालय, अरुणाचल, नागालैण्ड और मिजोरम में राष्ट्रभाषा के प्रचार का प्रभाव पड़ा है।

०७.०४४३. पूर्वांचल में हिन्दी :–

मणिपुर में सन् १९५० में राष्ट्रभाषा-प्रचार-समिति की स्थापना हुई और सरकार का:सहयोग पाकर शिक्षा में ४ थी कक्षा से ८ वीं कक्षा तक हिन्दी को अनिवार्य विषय बना दिया गया है। हिन्दी-शिक्षण और प्रचार-कार्य पर मणिपुर सरकार पर्याप्त व्यय कर रही है। हिन्दी के प्रचार और विकास की ओर मणिपुर में पर्याप्त कार्य है, किन्तु केन्द्रीय शासन की नीति के कारण मातृभाषा मणिपुरी और राष्ट्रभाषा-हिन्दी का अहित हो रहा है। पूर्वांचल में अरुणाचल-प्रदेश की स्थिति सबसे अच्छी कही जा सकती है। कक्षा ४ थी से ९ वीं तक ६ वर्ष तक हिन्दी पढ़ाई जाती है। मिजोरम, नागालैण्ड, मेघालय, त्रिपुरा आदि केन्द्रशासित प्रदेशों में हिन्दी-प्रचार-प्रसार में शिक्षा-मन्त्रालय की नीति ही कार्य रूप में परिणित होती है।

०७. ०४. केन्द्रीय सरकार द्वारा :–

भारतीय संविधान ने केन्द्रीय सरकार पर यह उत्तरदायित्व डाला है कि वह हिन्दी के विकास के लिए ऐसी कार्यवाही करे जिससे हिन्दी भारत की सामाजिक संस्कृति के सब तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बने। इस कर्त्तव्य के निर्वाह के लिए केन्द्रीय शासन ने जो कार्य किये हैं, उनका विवरण इस प्रकार है :—

०७. ०४१. साहित्य-अकादमी तथा हिन्दी ग्रंथ अकादमियों की स्थापना :–

१९५४ ई. में स्थापित साहित्य-अकादमी एक राष्ट्रीय संगठन है जिसका उद्देश्य भारतीय वाङ्मय का विकास तथा उच्च साहित्यिक मानदण्ड स्थिर करना, सभी भारतीय भाषाओं में साहित्य-रचना को प्रोत्साहन देना तथा उनमें समन्वय स्थापित करना और उसके द्वारा देश की सांस्कृतिक एकता को सुदृढ़ बनाया है।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

भारतीय साहित्य की एक राष्ट्रीय ग्रन्थ-सूची तैयार करना साहित्य अकादमी का एक प्रमुख कार्य है। इस ग्रंथ-सूची में बीसवीं शताब्दी में रचित १४ भारतीय भाषाओं के साहित्यिक महत्व के समस्त ग्रंथों तथा भारत में प्रकाशित अथवा भारतीयों द्वारा रचित अँग्रेज़ी-ग्रन्थों का उल्लेख रहेगा। अभी अकादमी ने एक सविस्तार भारतीय लेखक-परिचय ग्रन्थ प्रकाशित किया है। साहित्य-अकादमी अब तक ये ग्रन्थ प्रकाशित कर चुकी है- कालिदास-रचित 'मेघदूत' का सटीक संस्करण, मलयालम-साहित्य का इतिहास, बंगला-साहित्य-का साहित्य, एंथालाजी ऑफ संस्कृत लिटरेचर का द्वितीय खण्ड : असमिया, उर्दू कश्मीरी, पंजाबी, तमिल तथा तेलुगू कविताओं के काव्य-संग्रह, बंगला का वैष्णव गीतिकाव्य, गुजराती के एकांकी। गुजराती, तमिल तथा तेलुगू की कहानियाँ : तमिल में भारती की कुछ कविताओं का संग्रह, मराठी में आगरकर तथा रजवाड़े के गद्य-संग्रह और सिन्धी में दीवान कौड़ामल के गद्य का संग्रह, सम-सामयिक भारतीय साहित्य और कहानियों के संग्रह तथा रूसी-हिन्दी शब्दकोश। इनके अतिरिक्त कालिदास-रचित 'विक्रमोर्वशीयम्' तथा 'कुमारसम्भवम्' के सटीक संस्करण : असमिया तथा उड़िया साहित्य के इतिहास तथा एंथालाजी ऑफ संस्कृत लिटरेचर का एक और खण्ड भी शीघ्र ही प्रकाशित हो जाएँगे। भारतीय कविता १९५३ ई॰ शीर्षक से एक काव्य-संग्रह प्रकाशित हो चुका है जिसमें १४ मुख्य भाषाओं की कविताओं तथा उनके हिन्दी पद्यानुवादों का संग्रह है। दूसरा काव्य संग्रह (१९५४-५५) तथा तीसरा काव्य-संग्रह (१९५६-५७) प्रकाशित हो चुके हैं।

अधिकांश भारतीय तथा कई विदेशी साहित्यिक ग्रंथों का कई भारतीय भाषाओं में अनुवाद किया जा चुका है और ये प्रकाशित भी हो चुके हैं। श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर की रचनाएँ (मूल बंगला देवनागरीय-लिपि में) आठ खण्डों में प्रकाशित करने के कार्यक्रमों के अन्तर्गत दो खण्ड 'एकतरशती' तथा 'गीत-पंचशती' शीर्षक से प्रकाशित किए जा चुके हैं। एकविंशती (२१ लघु-कथाएँ) के गुजराती, पंजाबी तथा मराठी-संस्करण भी प्रकाशित हो चुके हैं। ठाकुर-शताब्दी के सम्बन्ध में अँग्रेज़ी में "टैगोर होमेज" शीर्षक एक श्रद्धांजलि-ग्रंथ भी प्रकाशित किया जा रहा है।

साहित्य-अकादमी अँग्रेज़ी तथा संस्कृत में क्रमशः 'इण्डियन लिटरेचर' और 'संस्कृत प्रतिभा' नामक दो अर्द्धवार्षिक पत्रिकाएँ भी प्रकाशित कर रही है।

यह प्रतिवर्ष भारतीय भाषाओं में प्रकाशित उत्कृष्ट ग्रंथों पर पुरस्कार भी प्रदान करती है।[१०] इसके अतिरिक्त यह हिन्दी-प्रदेशों में स्थापित हिन्दी-ग्रंथ-रचना-अकादमियों के कार्यों में समन्वय भी करती है। उत्तर-प्रदेश, मध्यप्रदेश, राजस्थान, बिहार तथा हरियाणा राज्यों में स्थापित हिन्दी ग्रंथ-रचना-समिति में विरचित ग्रन्थों के मानकीकरण का कार्य भी इसी अकादमी द्वारा किया जाता था, किन्तु प्रादेशिक भाषाओं के रचनाकारों के विरोध के कारण पर्यालोचन का कार्य इसने बन्द कर दिया। विभिन्न हिन्दी प्रदेशों में ज्ञान-विज्ञान की अनन्त पुस्तकें लिखी गई, किन्तु समन्वय के अभाव में राज्य स्तरीय

---

१०. भारत-१९६१, प्रकाशन-विभाग, पृ० ८८-८९।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

समितियों द्वारा रचित ग्रंथों का स्तर मानक स्तर तक नहीं पहुँच पाया। इतने पर भी ये समितियाँ कार्यरत हैं तथा इनके द्वारा विश्वविद्यालय के स्तर की पुस्तकों की रचना और प्रकाशन का कार्य नियमित रूप से चल रहा है।

०७.०४२. शिक्षा-मन्त्रालय द्वारा :–

भारतीय संविधान के अनुसार देश का शासन सुचारू रूप से चलाने के लिए कार्यों का विभाजन किया गया। धारा ३५० के अन्तर्गत भाषा संबंधी प्रावधानों का वर्णन है। उन प्रावधानों के लिये केन्द्रीय शिक्षा-मन्त्रालय के अन्तर्गत भारतीय भाषाओं के प्रचार-प्रसार का उत्तरदायित्व है। अतः शिक्षामन्त्रालय ने अपने दृष्टिकोण से अनेक कार्यक्रम प्रारम्भ किये। इन कार्यक्रमों को २ वर्गों में विभाजित किया गया है—(१) हिन्दी-भाषी राज्य में। और (२) अहिन्दी-भाषी राज्यों में। इन रूपों में हिन्दी-भाषा के विकास कार्यों को शिक्षा-मन्त्रालय ने आसानी से संचालित किया है। केन्द्रीय शिक्षा-मन्त्रालय ने मुख्य रूप से हिन्दी संस्थाओं को आर्थिक सहायता प्रदान की है।[११] जो कि अहिन्दीभाषी राज्यों में हिन्दी अध्यापकों की नियुक्ति करने और हिन्दी अध्यापक प्रशिक्षण महाविद्यालयों की स्थापना करने के लिए दी जाती है।[१२] यह सहायता शत-प्रतिशत दी जाती है। इस योजना के अन्तर्गत दो महाविद्यालय आन्ध्रप्रदेश में, एक गुजरात में, दो केरल में और एक-एक मद्रास एवं उड़ीसा और पश्चिम बंगाल में तथा तीन मैसूर में भी ऐसे महाविद्यालय खोलने की योजनाएँ हैं।[१३] इस योजना से पर्याप्त संख्या में हिन्दी अध्यापक अहिन्दी-भाषी राज्यों के हिन्दी-शिक्षण तथा हिन्दीभाषी राज्यों के लोगों के लिए इन्हें उपलब्ध हो सकें। यह मन्त्रालय विश्वविद्यालय स्तर की पुस्तकों का हिन्दी तथा अन्य

---

११. नईदिल्ली, केन्द्रीय-शिक्षा-मन्त्रालय ने सन् १९६७-६८ में भी हिन्दी के विकास और प्रचार के लिए दी जाने वाले वित्तीय सहायता जारी रखने का निश्चय किया। इसके लिए सार्वजनिक हिन्दी संस्थाओं से प्रार्थना-पत्र मांगे गये। सहायता देते समय अहिन्दीभाषी राज्यों में हिन्दी के प्रचार और विकास की योजनाओं को प्रोत्साहन दिया गया है। जो संस्थाएँ यह सहायता लेना चाहें उन्हें अपनी राज्य सरकार के माध्यम से निर्धारित आवेदन-पत्र पर प्रार्थना-पत्र देना चाहिए—राष्ट्रभाषा सन्देश, १६ मई, १९६७, भाग-२, अंक २६, पृ. ६

१२. नई दिल्ली, शिक्षा राज्यमन्त्री प्रोफेसर शेरसिंह ने लोकसभा में बताया कि हिन्दी के प्रसार के लिए केवल अहिन्दी-भाषी राज्यों को केन्द्रीय सहायता दी जाती है। यह सहायता स्कूलों में हिन्दी अध्यापकों की नियुक्ति और हिन्दी-शिक्षक-प्रशिक्षण महाविद्यालयों की स्थापना के लिये दी जाती है—राष्ट्रभाषा सन्देश, १ सितम्बर, १९६८, भाग–४, अंक – ५, पृ. १.

१३. हिन्दुस्तान वार्षिकी—१९६९–७०, सम्पादक-हरिदेव पाठक, शिवकुमार गोयल, चतुर्थ संस्करण १९६९, पृ. १५७.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

भारतीय भाषाओं में अनुवाद, प्रकाशन और मुद्रण भी करता है।[१४] जो इसके अधीन कार्यरत विभिन्न आयोगों द्वारा संचालित किया जाता है। सरकारी कार्यालयों के लिए उपयोगी साहित्य, पारिभाषिक विश्वकोश, वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली इत्यादि का निर्माण भी इस मन्त्रालय के विभिन्न मण्डलों के द्वारा किया जाता है।[१५] केन्द्रीय सरकार के शिक्षा-मन्त्रालय ने भारतीय भाषाओं के विकास के लिये चौथी योजना के अन्तर्गत १८ करोड़ रुपये व्यय किये हैं।[१६] मध्यप्रदेश सरकार ने तृतीय योजनाकाल में हिन्दी-भाषा के विकास और प्रसार हेतु २६ लाख रुपये व्यय किये हैं।[१७] विदेशों में हिन्दी-प्रचार के लिये इस मन्त्रालय ने अनेक योजनाओं को संचालित किया है।[१८] हिन्दी के कार्य को विदेश में

---

१४. शिक्षामन्त्रालय, भारत सरकार के केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय के तत्वावधान में प्राविधिक पुस्तकों की मुद्रण तथा प्रकाशन विषयक पुस्तकों की उपनामिका समिति की बैठक ३-४ जून को नैनीताल में श्री कृष्णचन्द्र बेरी की अध्यक्षता में हुई। समिति ने निर्णय लिया कि पोलेटेकनिक तथा विश्वविद्यालय स्तर पर प्रकाशन और मुद्रण विषय के पाठ्यक्रमानुसार पुस्तकें हिन्दी में प्रकाशित की जाएँ और आगामी सत्र से ये विषय हिन्दी के माध्यम से ही पढ़ाये जाएँ— राष्ट्रभाषा सन्देश : १ तथा १६ जून, १९७३, भाग–८, अंक २३–२४, पृष्ठ ५.

१५. सन् १९५० ई. में वैज्ञानिक-शब्दावली के रूप पर भारत सरकार ने विचार किया। १९४० ई. में शिक्षा-सलाहकार-मण्डल ने जिसके अध्यक्ष अकबर हैदरी थे इसकी संस्तुति की। १९४१ ई. में इस मण्डल ने इसे स्वीकार करके एक मण्डल की स्थापना करने तथा विभिन्न प्रश्नों पर विचार किया। १९४७ ई. में डॉ. ए. लक्ष्मणस्वामी मुदालियर के सभापतित्व में निर्णय लिया और सन् १९५० ई. में वैज्ञानिक और पारिभाषिक शब्दावली मण्डल की स्थापना हुई। हेमलसिंह सजवाणा– तकनीकी शब्दावली क्षेत्र में केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय का योगदान– भाषा (त्रैमासिक), दिसम्बर १९६६, पृ. १०२.

१६. राष्ट्रभाषा संदेश, १ नवम्बर, १९६८, भाग–४, अंक ९, पृ. ५.

१७. मध्यप्रदेश की चतुर्थ पंचवर्षीय योजना (१९६९–७४) म. प्र. शासन, योजना एवं विकास विभाग, पृष्ठ. ७८

१८. 'विदेशों में हिन्दी–प्रचार का कार्यक्रम' केन्द्रीय शिक्षा–मन्त्रालय ने चौथी पंचवर्षीय योजनाकाल में विदेशों में हिन्दी-प्रचार के लिए एक विस्तृत कार्यक्रम तैयार किया है। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत मारिशस को हिन्दी का एक मुद्रणालय भेंट में दिया जाएगा। ब्रिटेन तथा अमेरिका के विश्वविद्यालयों के साथ केन्द्रीय भारतीय भाषा संस्थान की सहकारी प्रयोजन में प्रारम्भ करने का भी निश्चय किया गया है। मारिशस में स्थापित हिन्दी-पुस्तकालय के लिए मुफ्त पुस्तकें प्रदान करना, विभिन्न पुस्तकालयों तथा भारत की सार्वजनिक संस्थाओं में वितरण के लिए मारिशस के दो-तीन लेखकों के लिए यात्रा-व्यय तथा आतिथ्य-सत्कार के लिए अनुदान, त्रिनिडाड व गियाना में हिन्दी तथा संस्कृत के पुस्तकालयों की स्थापना और उच्च-हिन्दी तथा हिन्दी-प्रशिक्षण के अध्ययन के लिए फेलोशिप प्रदान करना, कार्यक्रम के उद्देश्य हैं–राष्ट्रभाषा सन्देश : १ जून, १९७०, भाग–५, अंक २१, पृ. ६

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

बढ़ावा देने के लिये कुछ आर्थिक अनुदान भी दिये हैं। समय-समय पर विदेशी विश्व-विद्यालयों में भारतीय विद्वान भेजे जाते हैं, हिन्दी के विदेशी विद्वानों को ही आमन्त्रित किया है एवं विदेशी विद्वान भारत में हिन्दी की स्थिति तथा भाषा के अध्ययन के लिए आते रहे हैं। [१९] इसी प्रकार विदेशी छात्रों को हिन्दी की शिक्षा देने के लिये भारत में विभिन्न प्रकार की सुविधाएँ तथा व्यवस्था भी इस मन्त्रालय ने उपलब्ध करवाई है।

(अ) केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा :-

केन्द्रीय शिक्षामन्त्रालय ने केन्द्रीय-शिक्षण-मण्डल नामक एक स्वायत्त निकाय स्थापित किया जिसके द्वारा संचालित केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा की स्थापना की, जो हिन्दी अध्यापक-प्रशिक्षण और अनुसंधान संस्था का संचालन कर रहा है। संस्थान हिन्दी अध्यापकों के प्रशिक्षण और अनुसंधान संस्था का संचालन कर रहा है। संस्थान हिन्दी अध्यापकों के प्रशिक्षण के लिए तीन विभिन्न पाठ्यक्रम चला रहा है जो कि अध्यापक प्रशिक्षण प्रभाव-पत्र (टी. टी. सी.), बी. एड. और एम. एड. के समतुल्य है। संस्थान शब्द-भण्डार तथा विशेष रूप से अहिन्दी-भाषी राज्यों की आवश्यकता के सन्दर्भ में हिन्दी अध्यापन की तकनीकों पर अनुसन्धान भी करता है। इसके अतिरिक्त इस संस्थान ने अहिन्दी-भाषी राज्यों के स्वैच्छिक संगठनों और राज्य सरकारों द्वारा प्रतिनियुक्ति हिन्दी अध्यापकों के प्रशिक्षण के लिए दो पुनश्चर्या पाठ्यक्रम भी चालू किये हैं। [२०] संस्थान अपने दस वर्ष के अल्पकाल में ही शिक्षण-प्रशिक्षण का न केवल एकमात्र राष्ट्रीय अपितु अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति का एक ज्वलन्त प्रमाण है कि इसके निदेशक डॉ. ब्रजेश्वर वर्मा संयुक्त राज्य अमेरिका के इलिनाय विश्वविद्यालय में एक सेमिस्टर के लिए हिन्दी के विजिटिंग प्रोफेसर के रूप में नियुक्त होकर वहाँ गये थे।

---

१९. हिन्दी-भाषा के अध्ययन के लिये आये अमेरिकन विद्वान प्रा. डॉ. 'हैरमन वान ओल्फन से बातचीत'; राष्ट्रभाषा सन्देश, १६ फरवरी, १९७६, भाग-११, अंक १५ : पृ. २ से ७ तक एवं चेकोस्लोवाकिया के चार्ल्स विश्वविद्यालय में दर्शन-शास्त्र के प्रवक्ता एवं हिन्दी विद्वान डॉ. ओडोलन स्मेकेल का भाषण-'राष्ट्रभाषा सन्देश' : १७ और २४ मार्च, १९६६ : भाग-१, अंक ३४, ३५, ३६, पृ. १.

२०. केन्द्रीय हिन्दी संस्थान का समारम्भ-'भारत सरकार के शिक्षामन्त्रालय द्वारा स्थापित केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा में अहिन्दी भाषा-भाषी प्रदेशों के लिए-(१) हिन्दी शिक्षण निष्णात (२) हिन्दी शिक्षण पारंगत (एकवर्षीय पाठ्यक्रम) तथा (३) हिन्दी शिक्षण पारंगत (द्विवर्षीय पाठ्यक्रम) की परीक्षाओं की पढ़ाई की व्यवस्था है। इन परीक्षाओं के उद्देश्य क्रमशः-(अ) हिन्दी शिक्षक, महाविद्यालयों में पढ़ाने तथा हिन्दी-भाषा-शिक्षण सम्बन्धी अनुसंधान कार्य और वैज्ञानिक पद्धति पर शिक्षण सामग्री और उपकरण तैयार करने तथा राजकीय कार्यालयों से सम्बन्धित हिन्दी-शिक्षण योजनाओं में कार्य करने के लिये योग्य हिन्दी शिक्षकों, प्रशिक्षकों और अनुसंधानकर्त्ताओं तथा (ब) और (स) हाईस्कूलों और हायर सेकन्डरी स्कूलों के लिए योग्य हिन्दी शिक्षकों को प्रशिक्षण देना है....-राष्ट्रभाषा सन्देश : १६ जुलाई, १९६९, भाग ५, अंक २, पृ.-२।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

फोर्ड फाउन्डेशन ने एक भाषा-प्रयोगशाला भेंट रूप में दी है, जिसमें १६ विद्यार्थी एक साथ ध्वनि-अभ्यास कर सकते हैं और जिसकी कीमत लगभग ८० हजार रुपये है। ब्रिटिश कौंसिल के भारत स्थित प्रतिनिधि ने स्वयं जून ७२ में संस्थान की गतिविधियों से परिचित होने के लिये आगरा आकर सांकेतिक भेंट के रूप में २००० रुपये की पुस्तकें प्रदाय की। इसके अन्य महत्वपूर्ण कार्य हैं — राष्ट्रीय मान्यता, नवीन प्रवृत्तियाँ, विदेशियों को हिन्दी अध्ययन ग्रन्थ, प्रकाशन और भावी योजनाएँ। भावी योजनाओं के अन्तर्गत संस्थान की चार योजनाएँ शिक्षा-मन्त्रालय के अनुमोदन के पश्चात् योजना-मन्त्रालय अथवा वित्त-मन्त्रालय द्वारा अनुमोदित हैं —(१) प्रसार और प्रकाशन-विभाग स्थापित करने की योजना (२) एक अनुसन्धान विभाग की स्थापना (३) ४० विदेशियों के लिए हिन्दी-शिक्षण-प्रशिक्षण पाठ्यक्रम का आयोजन और (४) हैदराबाद में संस्थान का एक क्षेत्रीय केन्द्र। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि यह संस्थान भारत सरकार द्वारा अनुमोदित कार्यक्रमों को संविधान की धारा ३५१ द्वारा संघ सरकार पर जो उत्तरदायित्व और भार डाला गया है उसमें भारत सरकार का हाथ बँटा रहा है।[२१] यह गत ८ वर्षों से अहिन्दी-भाषा-भाषियों के लिए एक अखिल-भारतीय निबंध प्रतियोगिता का आयोजन करता आ रहा है, जिसमें नकद पुरस्कार दिये जाते हैं। अन्य कार्यों के अन्तर्गत 'अहिन्दी-भाषियों की हिन्दी रचनाओं को प्रोत्साहन', हिन्दी का समान सेवा के लिए प्रयोग तथा विदेशी विद्वानों की सेवाओं के उपयोग हैं।

शिक्षा—मन्त्रालय के अन्तर्गत केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय और वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग कार्य करते हैं। शिक्षा के माध्यम के रूप में भारत के ९० विश्वविद्यालयों में से ४३ ने हिन्दी को शिक्षण के माध्यम के रूप में अपना लिया है। इन विश्वविद्यालयों में से ४३ ने हिन्टी को शिक्षण के रूप में अपना लिया है। इन विश्वविद्यालयों में स्नातक स्तर की शिक्षा में कला, समाज-विज्ञान और विज्ञान के विषयों में हिन्दी को शिक्षण का माध्यम स्वीकार किया है। कुछ विश्वविद्यालयों में विधि और चिकित्सा की शिक्षा भी हिन्दी के माध्यम से दी जा रही है। आजकल ५६ विश्वविद्यालयों में हिन्दी में स्नातकोत्तर शिक्षा और शोध की सुविधाएँ उपलब्ध है। इनमें से २५ अहिन्दी-भाषी क्षेत्र में हैं। माध्यम के साथ ही विश्वविद्यालयों के स्तर की पुस्तकों का निर्माण और हिन्दी—पाठ्यक्रमों में वर्तमान सन्दर्भ जोड़ने की योजनाएँ भी कार्यान्वित की जा रही है।

०७.०४२१. केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय :—

सन् १९५१ ई. में शिक्षा-मन्त्रालय में एक 'हिन्दी एकक' की स्थापना हुई।[२२] बाद में यही 'एकक' प्रभाग में परिवर्तित किया गया। भारत सरकार के निर्णय के अनुसार हिन्दी के प्रचार-प्रसार सम्बन्धी कार्यों को मूर्त रूप देने के लिए १ मार्च, १९६० ई. को शिक्षा-मन्त्रालय के अधीनस्थ कार्यालय के रूप में केन्द्रीय—हिन्दी—निदेशालय की स्थापना की

---

२१. 'हिन्दी-शिक्षण-प्रशिक्षण के क्षेत्र में केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा की महत्वपूर्ण सेवाएँ—' राष्ट्रभाषा सन्देश : १ जुलाई, १९७२, भाग-८, अंक १, पृ. ४-५।

२२. डॉ, शिवराज वर्मा—हिन्दी का राष्ट्रभाषा के रूप में विकास : १९७०, पृ. २३६।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

गई।[२३] राष्ट्रपति के २७ अप्रैल, १९६० ई. के आदेश के द्वारा केन्द्रीय सरकार के विभिन्न मन्त्रालयों और विभागों में प्रयुक्त होने वाली असांविधिक संहिताओं, नियम-पुस्तकों, नियमावलियों, विनियमावलियों, फार्मों आदि का हिन्दी अनुवाद, सरकारी कामकाज में हिन्दी के प्रयोग के लिए आवश्यक समझा गया और यह कार्य निदेशालय को सौंपा गया। इस कार्य के लिये निदेशालय में एक अलग 'अनुवाद एकक' की स्थापना की गई।

सन् १९६८–६९ ई. में ८५ मानक नियम पुस्तिकाएँ और २४५४ फार्म अनुवाद के लिए प्राप्त हुए। इनके अतिरिक्त ११ नियम पुस्तिकाएँ और ५२४ फार्मों का हिन्दी अनुवाद पुनरीक्षण के लिए प्राप्त हुए। इसके अतिरिक्त ६६ नियम पुस्तिकाओं और १६१४ फार्मों के हिन्दी अनुवाद को अंतिम रूप देकर संबंधित विभागों को वापस भेजा गया। ५२४ फार्मों के अनुवाद का पुनरीक्षण करके उन्हें भी लौटाया गया।

१९६९–७० में १५० नियम पुस्तिकाएँ और २९९६ फार्म अनुवाद के लिए प्राप्त हुए। इनमें से १२५ नियम पुस्तिकाओं और ३९५० फार्मों के अनुवाद को अन्तिम रूप देकर संबंधित विभागों को भिजवाया गया। १७ नियम पुस्तिकाएँ और २११७ फार्म पुनरीक्षण के लिए प्राप्त हुए; इनमें से ४ नियम पुस्तिकाओं और १००० फार्मों के हिन्दी अनुवाद का पुनरीक्षण करके संबंधित विभाग को भेजे गये। बाहर के अनुवादकों से अनुवाद कराने की योजना इस अवधि में भी प्रचलित रही।

१९७०-७१ में १४१ नियम पुस्तिकाएँ और ३५० फार्म अनुवाद के लिए प्राप्त हुए। इनके अलावा १० नियम पुस्तिकाएँ और फार्मों का हिन्दी अनुवाद पुनरीक्षण के लिए प्राप्त हुए। इस वर्ष ७० नियम पुस्तकों और ९०० फार्मों के हिन्दी अनुवाद को अन्तिम रूप देकर संबंधित विभागों को भिजवाया गया और १२ नियम पुस्तिकाओं और ६०० फार्मों के अनुवाद का पुनरीक्षण करके संबंधित विभाग को भेजा गया।

इनके अतिरिक्त सन् १९६८ से १९७८ तक हिन्दी-भाषी राज्यों के विनियोजन लेखे, वित्तलेखे तथा लेखा परीक्षा प्रतिवेदनों का भी अनुवाद करके भेजा गया।[२४]

पत्राचार पाठ्यक्रम :–

शिक्षा-मन्त्रालय के केन्द्रीय-हिन्दी-निदेशालय ने कुछ श्रेणी के सरकारी कर्मचारियों और केन्द्रीय स्कूलों के अध्यापकों के लिए हिन्दी पत्राचार पाठ्यक्रम प्रारम्भ करने का निश्चय किया है। यह पाठ्यक्रम प्रारम्भ में उन व्यक्तियों के लिए प्रारम्भ किया गया था

---

२३. हिन्दुस्थान वार्षिकी : १९६९–७०, सम्पादक-हरिदत्त पाठक, शिवकुमार गोयल, पृ. १५८ एवं हिन्दी वार्षिकी, १९७०, केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, शिक्षा तथा समाज कल्याण--मन्त्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, पृ. २६६.

२४. हिन्दी वार्षिकी १९७०, केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, शिक्षा तथा समाज–कल्याण मन्त्रालय, भारत सरकार; नई दिल्ली, पृ. २६७–२६८। इनके अतिरिक्त आँकड़ों के लिए हिन्दुस्तान वार्षिकी, १९६९–७०, सम्पादक–पाठक–गोयल, पृष्ठ १५८.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

जो नियमित रूप से कक्षाओं में नहीं जा सकते हैं और अपने अतिरिक्त समय में अध्ययन करना चाहते हैं।[२५] निदेशालय ने अहिन्दी-भाषा-भाषी तथा विदेशी छात्रों को पत्राचार के द्वारा हिन्दी सिखाने के लिए हिन्दी प्रवेश, हिन्दी प्रबोध तथा हिन्दी प्रवीण परीक्षाएँ गत १ मार्च, १९६८ ई. से प्रारम्भ की है। १९६९-७० की हिन्दी प्रवेश परीक्षा में १९८७ तथा हिन्दी प्रबोध एवं हिन्दी प्रवीण में ७०० छात्रों ने भाग लिया है।[२६]

छात्रवृत्तियाँ :-

नई दिल्ली, शिक्षामन्त्रालय अहिन्दी-भाषी राज्यों के एक हजार छात्रों को १९६८ ई. से हिन्दी के मैट्रिक के बाद के अध्ययन के लिए छात्रवृत्ति दे रहा है। छात्रवृत्तियों का राज्यवार ब्यौरा इस प्रकार है- आन्ध्रप्रदेश २०५, आसाम- ३१, गुजरात-५४, जम्मू और कश्मीर-९, केरल-९५, मद्रास-१९०, महाराष्ट्र-१०४, मैसूर -१३३, नागालैण्ड-१, अण्डमान निकोबार-१, चण्डीगढ़-१, दादरा और नगर हवेली -१, गोआ, दमन और दीव-१, मणिपुर-२, नेफा-१, पांडुचेरी-१, त्रिपुरा-३ और लंकादीव- १। इन छात्रवृत्तियों में प्रतिवर्ष संशोधन किये जाते हैं।

अहिन्दी-भाषी राज्यों में पढ़ने वाले प्रियुनिवर्सिटी, इन्टरमीडिएट और स्नातक स्तर के छात्रों को ५० रुपये प्रतिमाह छात्रवृत्ति दी जाती है, जबकि हिन्दी-भाषी क्षेत्रों में पढ़ने वाले छात्रों को ८० रुपये महीने की छात्रवृत्ति दी जाती है। कला स्नातक के द्वितीय वर्ष के छात्रों को ७५ रुपये और तीसरे वर्ष के छात्रों को १०५ रुपये महीने की दर से छात्रवृत्ति दी जाती है। स्नातकोत्तर, एम. लिट., शोध-उपाधि के छात्रों को १०० रुपये मासिक और हिन्दी अध्यापक-प्रशिक्षण के छात्र को १२५ रुपये मासिक की दर से वृत्ति मिलती है।[२७] मानक ग्रंथ योजना के अन्तर्गत २१०० शीर्षक अनुवाद के लिए स्वीकार किए जा चुके हैं जिनमें से ४३२ का प्रतिलिप्याधिकार (कापी राइट) मिल चुका है। हिन्दीतरभाषी राज्यों के हिन्दी-साहित्यकारों को जिनकी मातृभाषा हिन्दी नहीं है, प्रोत्साहन देने के लिए १९६५ ई. से शिक्षा-मन्त्रालय द्वारा जो योजना कार्यशील है उसके अन्तर्गत वर्ष १९६८-६९ ई. के लिए आठ साहित्यकारों को एक-एक हजार रुपये के प्रथम पुरस्कार और छह को पाँच-पाँच सौ रुपए के द्वितीय पुरस्कार दिए गए।

भारत सरकार ने विदेश स्थित सभी भारतीय मिशनों को निर्देश जारी किए हैं कि वे आपनी बातचीत में तथा हिन्दी जानने वाले विदेशियों के साथ वार्तालाप करते समय हिन्दी का प्रयोग करें। अधिकारियों से कहा गया है कि वे उपयुक्त अवसर पर हिन्दी में भाषण दें और निमन्त्रण-पत्र आदि हिन्दी में छपवाएं। शिक्षा-मन्त्रालय के

---

२५. राष्ट्रभाषा सन्देश, १६ अक्टूबर, १९६८, भाग ४, अंक ८, पृष्ठ ८, हिन्दी वार्षिकी १९७०, पृष्ठ २६८ एवं वही, १६ जुलाई, १९६८, पृ. २.

२६. वही, १६ जून, १९७१, भाग-६, अंक २४, पृ ६.

२७ राष्ट्रभाषा सन्देश, १६ जुलाई, १९६८, भाग-४, अंक २, पृ. १। इसी प्रकार 'हिन्दी अध्ययन के लिए छात्रवृत्तियाँ'-वही, १६ सितम्बर, १९७०, भाग-६, अंक ६, पृ. २

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय ने 'हिन्दी वर्तनी का मानकीकरण [२८] शीर्षक एक पुस्तिका प्रकाशित की है। इसमें विशेषज्ञों द्वारा निर्धारित नियमों की उदाहरण सहित व्याख्या की गई है। मन्त्रालय ने सन् १९६१ ई. में इस कार्य के लिए एक विशेषज्ञ समिति गठित की थी जिसने सन् १९६२ ई. में इसे मान्यता प्रदान की। वर्तनी की एकरूपता, भाषा के स्वाभाविक विकास तथा व्याकरण, वाक्य विन्यास और वर्तनी के नियम, भाषा के विकास में बाधक न बने इस उद्देश्य से इसका निर्माण किया गया।

इस मन्त्रालय ने 'परिवर्धित नागरी-लिपि का विकास' [२९] भी किया है जिससे नागरी-लिपि अन्य भाषाओं के लिए सुगम हो तथा टंकनयन्त्र, टेलिप्रिन्टरों के अनुकूल भी हो। इस प्रकार का निर्णय सन् १९६१ ई. में मुख्यमन्त्रियों के सम्मेलन में लिया गया था, जिसका क्रियान्वयन सन् १९६७ ई. में विशेषज्ञों के द्वारा किया गया।

वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग :–

राष्ट्रपति ने २७ अप्रैल, १९६० ई. के आदेश के अनुसार [३०] वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग की स्थापना अक्टूबर १९६१ ई. में हुई। यह आयोग प्रारम्भ में शिक्षा-मन्त्रालय के केन्द्रीय-हिन्दी-निदेशालय के अन्तर्गत कार्य करता था। बाद में, १ अक्टूबर, १९६५ ई. से यह स्वतन्त्र रूप से कार्य करने लगा। इस आयोग के प्रमुख कार्य हैं—[३१]

(१) वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली का सर्वेक्षण।

(२) इस शब्दावली का विकास और समन्वय सम्बन्धी सिद्धान्तों का निरूपण।

(३) हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाओं की शब्दावलियों का अनुमोदन करना तथा

(४) इन शब्दावलियों के आधार पर अनुवाद तथा मौलिक रचना द्वारा विश्वविद्यालय स्तर पर मानक ग्रन्थों तथा पाठ्यपुस्तकों का निर्माण। इस आयोग ने कार्य करने के पूर्व सर्वमान्य सिद्धान्त निरूपित किए—

(१) अन्तर्राष्ट्रीय शब्दावली को यथारूप लिप्यांतरित करके आत्मसात करना निश्चित किया गया।

(२) संकल्पनाओं को व्यक्त करने वाले शब्दों का सामान्यतः अनुवाद करना तय किया गया।

---

२८. राष्ट्रभाषा सन्देश, १ नवम्बर, १९६८, पृ. २.

२९. राष्ट्रभाषा सन्देश; १ जून, १९६७, पृ. २ एवं वही, १६ मई, १९७३, भाग-५ अंक २२, पृ. २।

३०. हिन्दी का राष्ट्रभाषा के रूप में विकास–डॉ. शिवराज वर्मा, १९७०, पृ. २३८ एवं भाषा, सितम्बर, १९७३, पृ. ४०–राष्ट्रपति के आदेशानुसार 'वैज्ञानिक शब्दावली बोर्ड' की जगह वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग बनाया गया—हिन्दी वार्षिकी, १९७०, पृ. २८५।

३१. हिन्दी वार्षिकी, १९७०, पृ. २८५।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

आयोग का कार्य दो प्रकार का रहा—(१) विभागीय शब्दावली और (२) प्रशासनिक शब्दावली की मांग की पूर्ति करना और विश्वविद्यालयों की विभिन्न शाखाओं के लिए शब्दों की मांग की पूर्ति करना।

पहले वर्ग में प्रशासन शब्दावली और पदनाम शब्दावली को अन्तिम रूप दिया गया और बाद में उनका एक समेकित संस्करण भी निकालकर निःशुल्क प्रचारिक किया गया। डाक-तार शब्दावली का प्रकाशन के साथ दूसरे वर्ग की शब्दावली के लिए विषयवार इकाइयां स्थापित की गई हैं। आयुर्विज्ञान, इन्जीनियरी, वनस्पति-विज्ञान, प्राणि-विज्ञान, रसायन-विज्ञान, भौतिक-विज्ञान, भूगोल, भैषजी, गणित, भौतिक, नृविज्ञान, सांस्कृतिक भूविज्ञान, अर्थशास्त्र, राजनीति-विज्ञान, वाणिज्य, शिक्षा, मनोविज्ञान, दर्शन, पुस्तकालय विज्ञान, ललितकला, गृह-विज्ञान, पत्रकारिता और मुद्रण, भाषाविज्ञान, समालोचना, समाज-विज्ञान और सैन्य-विज्ञान।

इस समय तक विज्ञान तथा मानविकी के विभिन्न विषयों में आयोग २१ शब्दावलियां प्रकाशित कर चुका है। इनमें दो लाख से अधिक शब्दों का समावेश किया गया है।

अब तक विभिन्न विषयों के लगभग ३,९७,२५० पारिभाषिक शब्द बनाए जा चुके हैं और इनमें से ३,५९,५०० शब्दों को अन्तिम रूप दिया जा चुका है। विस्तृत ब्यौरा इस प्रकार है—[३२]

पारिभाषिक शब्दावली निर्माण के क्षेत्र में जनवरी, १९७१ तक हुए कार्य का विवरण

विषय	वर्षभर में बनाये गये शब्द	वर्षभर में जितने शब्दों को अन्तिम रूप दिया गया	अब तक बने कुल शब्द	अब तक जितने शब्दों को अंतिम रूप दिया गया
१	२	३	४	५
कृषि	—	१४४७	८०५३	७५००
नृतत्व-विज्ञान (भौतिक)	७५६	७५६	४८०६	४८०१
नृतत्व-विज्ञान (सामाजिक)	—	—	५८२५	५८२५
वनस्पति-विज्ञान	—	—	१३३७२	१३३७२
रसायन	—	१८६४	२७६८०	२७६८०
विभागीय	१२००	१२००	१०२०४	६४६४
रक्षा	९३९८	६६१०	१०५८०	१०५८०
अर्थशास्त्र	—	—	६३८०	६३८०

३२. हिन्दी वार्षिकी, १९७०, पृ. २८६.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

विषय	वर्षभर में बनाये गये शब्द	वर्षभर में जितने शब्दों को अन्तिम रूप दिया गया	अब तक बने कुल शब्द	अब तक जितने शब्दों को अंतिम रूप दिया गया
१	२	३	४	५
वाणिज्य	१६००	१६००	५६२०	५६२०
शिक्षा	—	—	६०७९	६०७९
ललित-कलाएँ	—	—	—	—
मुद्रण और पत्रकारिता	९२८	९२८	९६८६	९६८६
भूगोल	—	—	१६९४३	१६९४३
भूविज्ञान	—	—	२०११०	२०११०
इतिहास	४	—	१२०३४	१२०३४
गृह-विज्ञान	—	—	६६३८	६६३८
पुस्तकालय-विज्ञान	—	—	६८४२	६८४२
भाषा-विज्ञान	—	—	५०६४	५०६४
साहित्य-समीक्षा	—	—	२२५५०	२२५५०
गणित	—	—	३७८५७	३७८५७
चिकित्सा-विज्ञान	—	—	३८५४३	३८५४३
भैषज-विज्ञान	—	—	५७५४	५७५४
भौतिकी	—	५५०	१५८३०	१५८३०
राजनीति-विज्ञान	—	—	१५०००	१५०००
मनोविज्ञान	—	—	५३७५	५३७५
समाज-शास्त्र	—	—	९३३०	९३३०
प्राणि-विज्ञान	—	—	२५००	१५५००
इंजीनियरी (वैद्युत)	७२२	—	९०६७	५९९७
,, (गणित)	९१	—	१४६८२	९०२८
,, (सिविल)	३९२	—	१९९५०	१४८१६
,, (दूरसंचार)	—	—	५६००	२४२४०
जोड़ —	२४४८९	१०४५५	३९७३५७	३५९४९०

०७.०४३. गृहमन्त्रालय द्वारा हिन्दी-प्रसार :-

इस मन्त्रालय ने राजभाषा-हिन्दी के विकास के लिए समय-समय पर अनेक कार्य किए हैं। इसने सन् १९६१ ई. में राजभाषा-आयोग की स्थापना की। यह आयोग प्रति तीसरे वर्ष पुनर्गठित किया जाता है। इसमें एक अध्यक्ष, हिन्दी का प्रतिनिधित्व करने वाले

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

४ सदस्य, और ११ विभिन्न क्षेत्रीय भाषाओं का प्रतिनिधित्व करने वाले ४ सदस्य होते हैं। इस आयोग ने प्रमुख कानूनों का हिन्दी में अनुवाद कराया। संसद के सभी विधेयकों के हिन्दी अनुवाद, भारत के संविधान का हिन्दी और अन्य प्रादेशिक भाषाओं में अनुवाद, केन्द्रीय सरकार के अन्य मन्त्रालयों तथा विभागों को राजभाषा सम्बन्धी विभिन्न आदेशों तथा अनुदेशों के पालन सम्बन्धी कार्यों का संचालन तत्परतापूर्वक किया है।[३३] भारत सरकार ने केन्द्रीय सरकार के विभिन्न विभागों के कर्मचारियों को हिन्दी सिखाने और शीघ्र प्रशिक्षित करने के लिए कई योजनाएँ चलाई हैं। जुलाई १९५२ ई. में एक योजना तैयार की, जिसके अनुसार ६ मास का एक पाठ्यक्रम रखा। इसके अनुसार 'हिन्दी-प्रबोध' की परीक्षा संचालित की जाती थी और जिसकी पढ़ाई-व्यवस्था निःशुल्क थी। अक्टूबर १९५५ ई. में सरकार ने अधिक व्यापक और पूरक योजना इस सम्बन्ध में जारी की।[३४] गृहमन्त्रालय ने १ अक्टूबर, १९५५ ई. से 'हिन्दी-शिक्षण-योजना' का श्रीगणेश किया। संविधान की व्यवस्था के अन्तर्गत राष्ट्रपति ने आदेश[३५] निकालकर हिन्दी-भाषा का प्रयोग भी प्राधिकृत कर दिया। सन् १९६०-६१ ई. में केन्द्रीय सरकारी कर्मचारियों को हिन्दी टंकन और आशु-लेखन का प्रशिक्षण देने की व्यवस्था की गई है।[३६] इनके प्रशिक्षण की व्यवस्था इस समय कलकत्ता, बम्बई, मद्रास, जबलपुर, बंगलौर, दिल्ली और नई-दिल्ली में है। इस योजना का प्रचार-प्रसार व्यापक स्तर पर किया जा रहा है। इनसे सम्बन्धित परीक्षाएँ ली जाती हैं जहाँ पर प्रतिवर्ष कर्मचारियों को प्रशिक्षण एवं परीक्षा उत्तीर्ण करने के लिए अवसर दिए जाते हैं। गृह-मन्त्रालय की हिन्दी-शिक्षण-योजना के अन्तर्गत जन. १९६४ ई. से अन्तिम हिन्दी परीक्षा (प्राज्ञ) या हिन्दी टंकन या हिन्दी आशुलेखन की परीक्षाएँ उत्तीर्ण करने वाले अराजपत्रित केन्द्रीय सरकारी कर्मचारियों को जिन्होंने पहले कोई हाईस्कूल के समकक्ष या कोई अन्य उच्च परीक्षा हिन्दी में उत्तीर्ण नहीं की है, प्रोत्साहन के रूप में वैयक्तिक वेतन दिया जाए, जो उनकी एक वेतन-वृद्धि के बराबर होगा। यह वेतन-वृद्धि भावी वेतन-वृद्धि में मिला दी जाती है। ये परीक्षाएँ तीन प्रकार की होती है। हिन्दी प्रबोध, प्रवीण और प्राज्ञ। ये क्रमशः प्राथमिक स्तर, माध्यमिक स्तर और साधारण ज्ञान के स्तर के लिए होती है। इस सम्बन्ध में भारत सरकार ने ३० जुलाई, १९६० ई. को हिन्दी का ज्ञान आवश्यक

---

३३. राष्ट्रभाषा सन्देश, १ तथा १६ जनवरी, १९६९ : अंक १३-१४, पृ. १२.

३४. राजभाषा-आयोग का प्रतिवेदन, १९५६ : भारत सरकार : पृ. ९८.

३५. पद १-७-राष्ट्रपति का आदेश स. ५९।२।५४-पब्लिक, दिनांक ३-१२-१९५७.
पद ८-राष्ट्रपति का आदेश स. एस. आर. ओ. ९३८-ए, दिनांक २७-५-१९५२.

३६. मद्रास में सरकारी कर्मचारियों के लिए हिन्दी आशुलिपि तथा हिन्दी टंकन का प्रशिक्षण, राष्ट्रभाषा सन्देश, रविवार, १६ नवम्बर, १९६९, भाग-५, अंक १०. पृ. २.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

होने का आदेश दिया है।[३७] इन परीक्षाओं के लिए सरकार ने वर्ग निर्धारित किए हैं। सरकार के ३० जुलाई, १९६० ई. के आदेश के अनुसार ये परीक्षाएँ अनिवार्य रूप से उत्तीर्ण करना पड़ती थीं। सरकार के २२ जनवरी, १९६२ ई. के आदेश के अनुसार अब केवल प्रबोध परीक्षा अनिवार्य रखी गयी है। सरकार ने कर्मचारियों को प्रोत्साहन देने के लिए सन् १९५६ ई. से नकद पुरस्कार देने की एक योजना भी बनाई है। यह योजना आजकल, व्यापक रूप से क्रियान्वित की जा रही है।[३८] जो कर्मचारी 'प्रबोध' और 'प्रवीण' परीक्षाएँ पास करेंगे उन्हें २५० रु दिया जाएगा, और जो 'प्राज्ञ' परीक्षा पास करेंगे उन्हें ३०० रु. दिया जाएगा। जून, १९६४ ई. से सरकार ने प्रवीण, प्रबोध और प्राज्ञ परीक्षाओं को अच्छे अंकों से उत्तीर्ण करने पर एक नई योजना बनाई। हिन्दी-शिक्षा-योजना की प्रगति के विषय में स्वराष्ट्र मन्त्रालय के राज्य मन्त्री ने अपने एक लिखित बयान में बताया कि इस योजना के अन्तर्गत अब तक लगभग २ लाख, १९ हजार सरकारी कर्मचारियों ने हिन्दी की एक या एक से

---

३७. 'सरकारी कर्मचारियों के लिए हिन्दी का ज्ञान आवश्यक' भारत सरकार के सभी मन्त्रालयों और विभागों को नया आदेश दिया है कि मूल शिक्षा और काम के आधार पर तृतीय श्रेणी तक के ४५ वर्ष की आयु से कम के सभी सरकारी कर्मचारियों को हिन्दी-भाषा का निर्धारित ज्ञान आवश्यक रूप से प्राप्त कर लेना चाहिए। हिन्दी-शिक्षा के लिए सरकारी कर्मचारियों को तीन भागों में बांटा गया है। जिन सरकारी कर्मचारियों की भर्ती के लिए हाईस्कूल या उससे कम की शिक्षा का स्तर रखा गया था और जो पत्र-व्यवहार का या लिखा-पढ़ी का काम नहीं करते, उनको प्रबोध परीक्षा (प्राथमिक) हिन्दी पास करनी होगी। इस वर्ग में कार ड्राइवर, इंजन ड्राइवर, कार्ड छांटने वाले, बिजली की मशीनों पर काम करने वाले, डाकिये, टेलीफोन आपरेटर आदि शामिल किये गये हैं।

डॉक्टरों, वैज्ञानिकों, सरकारी वर्कशापों के निरीक्षकों और प्रयोगशाला के प्रबन्धकों को हिन्दी प्रवीण (माध्यमिक स्तर) की परीक्षा पास करनी होगी। तीसरे वर्ग में वे सभी कर्मचारी हैं—जिनको सचिवालय का काम करना, टिप्पणियां लिखना तथा पत्र-व्यवहार करना पड़ता है। इन सबको हिन्दी प्रज्ञा परीक्षा (मैट्रिक्युलेशन के स्तर के समकक्ष) पास करना अनिवार्य होगा।

स्वराष्ट्र-मन्त्रालय ने सभी कर्मचारियों को हिन्दी का ज्ञान प्राप्त करने का आदेश ३० जुलाई, १९६० ई को दिया और उसी के अन्तर्गत प्रबोध, प्रवीण और प्राज्ञ नामक तीन पाठ्यक्रमों की व्यवस्था की गयी थी। आरम्भ में सभी कर्मचारियों के लिए प्राज्ञ स्तर तक हिन्दी में दक्षता की बात कही गयी थी लेकिन बाद में २२ जनवरी, १९६२ ई. को नया आदेश जारी करके उन कर्मचारियों के लिए केवल प्रबोध परीक्षा अनिवार्य रखी गयी थी। —राष्ट्रभाषा सन्देश, १६ अक्टूबर, १९६८, पृ. १.

३८. हिन्दी सीखने के लिए नकद पुरस्कार—'राष्ट्रभाषा सन्देश: १ अप्रैल, १९६९, भाग ४, अंक १९, पृष्ठ ७.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

अधिक निर्धारित परीक्षाएँ उत्तीर्ण कर ली हैं। उन्होंने कहा कि अभी लगभग ३ लाख कर्मचारियों को हिन्दी में प्रशिक्षण देना शेष है।[३९] हिन्दी के अधिकाधिक विकास के लिए शासन ने सन् १९६४ ई. में एक हिन्दी-सलाहकार-समिति का गठन किया। गृहमन्त्री इसके अध्यक्ष थे। सन् १९६७ ई में इस समिति का पुनर्गठन किया गया। भारत सरकार के हिन्दी सलाहकार इसके उपाध्यक्ष बनें और बीस गैरसरकारी इसके सदस्य नियुक्त किए गए।[४०] इसके अतिरिक्त सरकार ने भारतीय भाषाओं के विकास के लिए १५ फ़रवरी; १९६६ में 'भारतीय भाषा-समिति' नामक एक सलाहकार समिति स्थापित करने का निर्णय लिया है।[४१] विविध मन्त्रालयों में हिन्दी के विकास और प्रचार के काम में समन्वय स्थापित करने के लिए 'केन्द्रीय-हिन्दी-समन्वय-समिति' बनाने का निर्णय किया है।[४२]

स्वराष्ट्र-मन्त्रालय ने केन्द्रीय सरकार के कार्यों में हिन्दी के अधिक-से-अधिक प्रयोग के लिए एक अनुदेश प्रचलित किया है। उसमें कहा गया है कि जिन राज्यों ने हिन्दी को अपनी राजभाषा के रूप में नहीं अपनाया है उनके और केन्द्रीय सरकार के बीच पत्राचार के लिए अँग्रेज़ी का प्रयोग होगा। उन राज्यों के साथ जिनकी भाषा हिन्दी नहीं है भारतीय संघ के साथ हिन्दी में पत्राचार कर सकते हैं ऐसी स्थिति में उनके साथ किये जाने वाले पत्राचार में अँग्रेज़ी का प्रयोग अनिवार्य नहीं होगा। जिन राज्यों में हिन्दी अपना ली है उनसे प्राप्त होने वाले सभी पत्रों का उत्तर हिन्दी में दिया जाना चाहिए।[४३] केन्द्रीय सरकार ने अब जो नियम बनाये हैं उनके अनुसार हिन्दीभाषी राज्यों के साथ केन्द्रीय पत्र-व्यवहार कुछ विशेष प्रकरणों को छोड़ हिन्दी में ही किया जाता है।[४४]

केन्द्रीय सरकार ने प्रथम श्रेणी के अधिकारियों तथा भारतीय प्रशासनिक सेवा के अधिकारियों को हिन्दी का प्रशिक्षण देने के लिये लालबहादुर शास्त्री राष्ट्रीय प्रकाशन अकादमी, मसूरी में व्यवस्था की है। अधिकारीगण अपने विभागीय प्रशिक्षण के साथ ही

---

३९. हिन्दी शिक्षा-योजना की प्रगति–राष्ट्रभाषा सन्देश, १ अप्रैल १९६९, भाग–४। अंक १९, पृष्ठ ६.

४०. हिन्दी का राष्ट्रभाषा के रूप में विकास, डॉ. शिवराज वर्मा : १९७०, पृष्ठ २४२.

४१. भारतीय भाषा समिति का संगठन-राष्ट्रभाषा सन्देश, ७ अप्रैल, १९६६, भाग-१, पृ. ७

४२. 'केन्द्रीय हिन्दी समन्वय समिति'–राष्ट्रभाषा सन्देश, १ अक्टूबर, १९६७, भाग ३, अंक ७, पृष्ठ ५। इसके अध्यक्ष प्रधानमंत्री होंगे और सचिव होंगे समिति के सदस्य श्री रामधारीसिंह 'दिनकर'। इसके सदस्य होंगे–सर्वश्री मोरारजी देसाई, यशवंतराव चव्हाण, त्रिगुणसेन, मनुभाई शाह, गोविन्द मेनन, गंगाशरणसिंह, जी. सुब्रह्मण्यम, सेठ गोविन्ददास, प्रकाशवीर शास्त्री, उमाशंकर दीक्षित और नाथ पै।

४३. राष्ट्रभाषा सन्देश, १ अक्टूबर, १९६८; भाग–४। अंक, ७, पृ. १.

४४. दैनिक नवभारत टाइम्स, नयी दिल्ली, शुक्रवार, २४ सितम्बर, १९७६, पृ. १.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

साथ हिन्दी का प्रशिक्षण भी यहाँ प्राप्त करते हैं। भारतीय लेखा-सेवा, राजस्व-सेवा, पुलिस-सेवा, वन-सेवा, इंजीनियरी-सेवा तथा अन्य अखिल भारतीय अधिकारियों के लिये विभागीय स्तर पर प्रशिक्षण दिया जाता है।

विभिन्न मन्त्रालयों के मध्य राजभाषा सम्बन्धी उपबन्धों, आदेशों तथा योजनाओं को समन्वित करने की दृष्टि से एक राजभाषा–विभाग की स्थापना, २६ जून सन् १९७५ से की है। इस विभाग के अन्तर्गत राजभाषा से सम्बन्धित उपबन्धों, न्यायालयों, प्रशासकीय कार्यालयों; मन्त्रालयों और विभिन्न केन्द्रीय संकायों द्वारा किये गये हिन्दी कार्यों का समन्वय किया जाएगा। कार्यान्वयन की गतिविधियों पर नियन्त्रण रखने तथा अशासकीय क्षेत्र से परामर्श करने के लिये प्रधानमन्त्री की अध्यक्षता में एक उच्चस्तरीय हिन्दी-समिति गठित की गई है। राजभाषा–विभाग के सचिव इस समिति के पदेव सचिव भी हैं। इस प्रकार गृह-मन्त्रालय राजभाषा के विकास में गतिशील हो गया है और प्रशासन में कसावट ला रहा है। अखिल भारतीय और उच्च सेवाओं की भर्ती-परीक्षाओं में अब हिन्दी को माध्यम के रूप में स्वीकृति मिल चुकी है तथा विभागीय परीक्षाओं में सन् १९७० से, रेल, ऊर्जा, संचार, सूचना और प्रसारण, निर्माण और आवास, नागर-विमानन तथा पर्यटन मन्त्रालयों में हिन्दी का उपयोग हो रहा है।

०७.०४४. सूचना एवं प्रसारण मन्त्रालय :–

हिन्दी की अभिवृद्धि और प्रसार में महत्वपूर्ण योग दिया है। इसने अपने विविध-विभागों द्वारा हिन्दी को लोकप्रिय और व्यावहारिक बनाने में महत्वपूर्ण कार्य किया है। पत्र-सूचना कार्यालय द्वारा हिन्दी समाचार सेवा संचालित की जा रही है। हिन्दी टेलिप्रिन्टरों के द्वारा समाचार-पत्रों में जो समाचार दिए जा रहे हैं वे प्रशासन की नीति का स्पष्ट चित्र अंकित करते हैं। फिलम-विभाग द्वारा वृत्तचित्रों तथा फिल्मों पर नियन्त्रण रखा जाता है। सामाजिक और राष्ट्रीय मर्यादा के अनुकूल फिल्मीकरण की प्रवृत्ति को प्रोत्साहित किया जाता है। संगीत, नाटक विभाग द्वारा हिन्दी नाटकों का मंचन तथा प्रदर्शन करने से हिन्दी की लोकप्रियता बढ़ी है। प्रकाशन-विभाग द्वारा अनेक विषयों पर महत्वपूर्ण ग्रन्थ प्रकाशित हुए हैं और 'आजकल' तथा 'बाल-भारती' नामक दो मासिक पत्रिकाएँ नियमित रूप से प्रकाशित की जा रही है। इसी विभाग द्वारा हिन्दी-वार्षिकी का प्रकाशन एक उपलब्धि है। प्रसारण के क्षेत्र में आकाशवाणी पर नियन्त्रण रखकर देश के चित्र को समुचित विधि से प्रस्तुत करने का श्रेय इसी मन्त्रालय को है। इस समय उसके ६४ प्रसारण केन्द्र हैं, जिनके द्वारा अखिल भारतीय स्तर के १३ समाचार बुलेटिन प्रसारित किए जाते हैं। 'विविध-भारती' तथा 'हवा-महल' के कार्यक्रमों के द्वारा हिन्दी को लोकप्रिय बनाने का कार्य इसी मन्त्रालय ने किया है। 'विविधा' नामक पत्रिका से आकाशवाणी अपने कार्यक्रमों का विवरण प्रसारित कर हिन्दी के स्वरूप निर्माण में योग देने में अग्रणी रहा है। अहिन्दीभाषियों के लिये हिन्दी का ज्ञान कराने के लिये हिन्दी के पाठ और हिन्दीभाषियों के लिये हिन्दीतर भाषाओं के पाठ प्रसारित कर हिन्दी के प्रचार में यह पर्याप्त योग देता है। इसी प्रकार शिक्षा के क्षेत्र में अध्यापन-विधि के प्रसारण; वार्ताएँ तथा विषय-ज्ञान के प्रसारण भी किए जाते हैं। सर्वभाषा कवि-सम्मेलन के प्रसारण से राष्ट्रीय मंच पर सभी भाषाओं को गणतन्त्र दिवस के अवसर पर एक

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

स्थान में प्रस्तुत कर दिया जाता है। अतः यह मन्त्रालय हिन्दी के जनभाषा रूप का प्रसारक है। हिन्दी में प्रकाशित पत्र-पत्रिकाओं में पर्याप्त प्रगति हुई है। सन् १९५० में ९५० पत्र-पत्रिकाएँ प्रकाशित होती थीं जबकि सन् १९७६ के अन्त तक इनकी संख्या ३२०२ तक पहुंच चुकी है।[४५]

०७.०४५. अन्य मन्त्रालय :–

डाक-तार विभाग ने यह निर्णय किया है कि हिन्दी और मराठीभाषी क्षेत्रों में रजिस्ट्री, पार्सल और मनी-आर्डर की रसीदें, देवनागरी में दी जाए। देवनागरी में तार देने की व्यवस्था प्रचलित है ही। इसी प्रकार बचत बैंकों की पास बुक, डाकियों को देवनागरी-लिपि की जानकारी, अँग्रेज़ी और हिन्दी शब्दों के पर्याय, कहावतों और मुहावरों के अर्थ, प्रशासकीय टिप्पणी लिखने का मार्ग-दर्शन, राजभाषा सम्बन्धी आदेशों की जानकारी, शासकीय प्रकाशनों की सूचना आदि विषयों की जानकारी देने की व्यवस्था की गई है।

रेल-मन्त्रालयों के कार्यालयों में भी प्रगति हुई है। रेल-मन्त्रालय के अधीन हिन्दी-भाषी क्षेत्रों में स्थित कार्यालयों में हिन्दी में कार्य होने लगा है। प्रोत्साहन देने के लिये, हिन्दी में कार्य करने वाले कर्मचारियों और अधिकारियों को पुरस्कृत किया जाता है। साथ ही अन्तंकार्यालयीन हिन्दी प्रयोग प्रतियोगिता आयोजित की जाती है जिससे विविध कार्यालयों में सामूहिक कार्य करने की भावना उत्पन्न हुई है।

रक्षा-मन्त्रालय में तीनों सेनाओं के कमानों में आदेश के रूप में हिन्दी शब्दावली का प्रयोग सन् १९५७ से हो रहा है। तीनों सेनाओं के सैनिकों और अधिकारियों के लिये हिन्दी की परीक्षा पास करना अनिवार्य है। जवानों की पदोन्नति के लिये ली जाने वाली परीक्षाएं हिन्दी में ही होती है। रक्षा-मन्त्रालय के कार्यालयों में अधिकांश कार्य हिन्दी में हो रहा है।

राष्ट्रीयकृत बैंकों तथा भारतीय स्टेट बैंकों में हिन्दी-कक्ष का गठन किया गया है, जिनमें हिन्दी के प्रयोग की व्यावहारिकता का परीक्षण हो रहा है। अभी तक की प्रगति से हिन्दी-लेखा-पद्धति अधिक व्यावहारिक और उपयोगी सिद्ध हुई है। सभी बैंक अँग्रेज़ी के अतिरिक्त हिन्दी में विज्ञापन जारी करते हैं और पत्रों का उत्तर हिन्दी में देते हैं। हिन्दी में हस्ताक्षर किए हुए चेक स्वीकार किए जाते हैं।

केन्द्रीय सरकार द्वारा नियन्त्रित निगमों में टाइपरायटर कर्मचारी नियुक्ति, प्रपत्रकों का निर्धारण तथा कार्यालयीन कार्य हिन्दी में करने के आदेश दिए गए हैं। जिनका पालन तत्परतापूर्वक हुआ है।

विदेश-मन्त्रालय ने मॉरिशस, फिजी, गुयाना, सूरीनाम, त्रिनिडाड, नेपाल, श्रीलंका, थाईलैण्ड, कीनिया, और मलेशिया आदि १० देशों में हिन्दी की स्वैच्छिक सेवा करने वाली

---

४५. राजभाषा-हिन्दी के बढ़ते चरण : भारत सरकार, पृ. २९.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

संस्थाओं को सहायता देने, विद्वानों को आमन्त्रित करने, हिन्दी अध्ययन के लिये छात्रवृत्ति देनें, प्रकाशनों को प्रोत्साहित करने, समाचार-पत्रों का विनिमय करने, हिन्दी पुस्तकों एवं टाइपरायटरों को प्रदान करने की योजना कार्यान्वित की है। इससे हिन्दी के परस्पर प्रचार और प्रसार में पर्याप्त प्रगति हुई है। आज संसार के ३० देशों के ९४ विश्वविद्यालयों में हिन्दी पढ़ाई जा रही है और बल्गानिया, चेकोस्लोवाकिया, जर्मन गणराज्य, रूमानिया, युगोस्लाविया, मैक्सिको और इटली आदि देशों में हिन्दी प्राध्यापक भेजे गये हैं। विदेशों से आने वाले छात्रों के लिये हिन्दी सीखने पर ५०० रु. की छात्रवृत्ति भी प्रदान की जा रही है।

विधि-मन्त्रालय संसद के लिये कानून निर्माण करता है और न्यायालयों के लिये भाषा-नीति का निर्धारण करता है। प्रामाणिक विधि शब्दकोश बनाकर तथा कानूनों का निर्माण कर विधि-मन्त्रालय ने २५ जनवरी, १९६५, के पश्चात् अँग्रेज़ी के स्थान पर हिन्दी में अदालती कार्यवाही करने का आदेश जारी किया है। सर्वोच्च न्यायालय में अभी बहस की अनुमति अवश्य दी गई है किन्तु न्यायाधीशों द्वारा कोई निर्णय नहीं दिये गये। उच्चन्यायालयों में उत्तरप्रदेश के एक न्यायाधीश द्वारा निर्णय दिया जा चुका है और वह अपने प्रयोजन में पूर्ण सिद्ध हुआ है। कानून और अदालतों की भाषा में परिनियम पुस्तक और विधि निर्णय की आड़ में अभी तक हिन्दी में कार्य की गति धीमी है, किन्तु सत्र न्यायालयों और लघु-न्यायालयों में हिन्दी में ही सारा कामकाज होता है। कानून निर्माण की भाषा और अदालतों की भाषा में परिवर्तन की अपेक्षा है, किन्तु न्यायपालिका इस दिशा में इतनी सचेष्ट नहीं है कि वह सरलता से अँग्रेज़ी के स्थान पर हिन्दी का व्यवहार करें।

निष्कर्ष :—

केन्द्रीय शासन द्वारा योजनाबद्ध रीति से राजभाषा—हिन्दी के विकास के लिये जो कार्य किए गये उनके आधार पर यह कहा जा सकता है कि अनुवादकों और सरकारी कर्मचारियों में ऐसी हिन्दी का प्रयोग किया जाए तो संस्कृतनिष्ठ, प्रान्जल और परिष्कृत हो। उनकी दृष्टि से ऐसी ही हिन्दी शुद्ध है। यह धारणा विभिन्न कार्यालयों द्वारा हिन्दी के प्रसार तथा विकास और संघ के विभिन्न सरकारी प्रयोजनों के लिये उत्तरोत्तर उपयोग में गति लाने के लिए बनाये गये कार्यक्रमों में प्रयुक्त भाषा के कारण पनपी। वस्तुतः अनुवाद की भाषा के कारण हिन्दी दुरूह बनती जा रही है। होता यह है कि सरकारी काम-काज के लिये पहले अँग्रेज़ी में मसौदे तैयार कर लिये जाते हैं फिर उनका अनुवाद हिन्दी में कर दिया जाता है। कानूनों से सम्बन्धित हिन्दी तो अत्यन्त जटिल हो जाती है। यदि उसे सरल बनाया जाए तो दण्ड-प्रक्रिया संहिता के अनुवाद और उच्चतम-न्यायालय-पत्रिका की भाषा से वह भिन्न हो जाती है। इससे हिन्दी अपने मूल प्रकृति से हट जाती है और कृत्रिम बन जाती है, तब इस पर अस्पष्टता का आरोप लगाकर, अविकसित भाषा घोषित कर दिया जाता है। चाहिये यह कि हिन्दी ज्ञाता व्यक्तियों द्वारा टिप्पण, आलेखन और प्रारूप हिन्दी में ही बनाये जाएँ और उनके प्रारूपों को अधिकृत माना जाए। इससे भाषा का सहज, सरल और सुबोध रूप प्रचलित होगा तथा हिन्दी जनता की भाषा के निकट आ जाएगी।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

०७. ०५. विदेशों में हिन्दी :—

भारत की सीमाओं के बाहर हिन्दी का विकास जिन देशों में हुआ है वे हैं— अर्जेन्टाइना, आस्ट्रेलिया, आस्ट्रिया, बैल्जियम, कनाड़ा, चीन, चेकोस्लोवाकिया, डेन्मार्क, पश्चिम जर्मनी, फिनलैण्ड, फ्रान्स, जर्मन जनवादी गणतन्त्र, हंगरी, इटली, जापान, मैक्सिको, नेपाल, निदरलैण्ड, न्यूजीलैण्ड, नार्वे, पोलैण्ड, कोरिया गणतन्त्र, रुमानिया, श्रीलंका, स्वीडन, ब्रिटेन, संयुक्तराज्य अमेरिका, रूस और युगोस्लाविया, इनमें से कनाड़ा, पश्चिम जर्मनी, स्वीडन, ब्रिटेन और संयुक्तराज्य अमेरिका में हिन्दी अध्यापन केन्द्र या तो स्वतन्त्र रूप से चल रहे हैं या विश्वविद्यालयों में अध्यापन विभाग के रूप में प्रचलित हैं। अन्य देशों में अध्यापन केन्द्र के रूप में ही हिन्दी का विकास किया जा रहा है। इन देशों के विद्यार्थी भाषा-विज्ञान के अध्ययन के हेतु हिन्दी का अध्ययन करते हैं अथवा स्वतन्त्र रूप से हिन्दी विषय लेते हैं।

प्रवासी-भारतवासी व्यापार, नौकरी तथा उद्योग-धन्धों के लिए जिन-जिन देशों में गये हैं, उन-उन देशों में वे अपनी-अपनी भाषाएँ भी ले गये हैं। उनमें राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रति प्रेम जागृत है और उन्होंने इसके प्रचार और प्रसार के लिये अपनी-अपनी संस्थाएँ स्थापित की और ये लोग विदेशों में हिन्दी-प्रचार के स्वयं-सेवक बन गए। मारिशस, फीजी, गियाना, दक्षिण अफ्रिका, सूरीनाम, त्रिनिडाड ऐसे ही देश हैं। इन देशों में भारतीय मूल के निवासी जाकर बस गये हैं और उन्होंने हिन्दी-प्रचार जारी रखा है। मारिशस इन सबमें अग्रणी है। यहाँ के प्रधानमन्त्री सर शिवसागर रामगुलाम ने प्रथम हिन्दी-विश्व-सम्मेलन की सन् १९७५ में अध्यक्षता की और सन् १९७६ में अपने देश में द्वितीय हिन्दी-विश्व-सम्मेलन आयोजित कर हिन्दी को अन्तर्राष्ट्रीय भाषा बनाने का संकल्प ग्रहण किया। इसी प्रकार दक्षिण अफ्रिका में, कीनिया और जाम्बिया में राष्ट्रभाषा-हिन्दी-प्रचार-समिति वर्धा की शाखाएँ उस हिन्दी-प्रचार को आगे बढ़ाने में लगी रहीं, जिसका आरम्भ गांधीजी ने अपने दक्षिण अफ्रिका प्रवास के समय किया था। प्रवासी-भारतवासियों की हिन्दी-सेवा के कारण ही अन्तर्राष्ट्रीय संगठन 'यूनेस्को' के द्वारा हिन्दी को मान्यता मिली है और एक पत्रिका 'यूनेस्को कूरियर' भी प्रकाशित की जाती है।

स्वतन्त्र भारत के दूतावास विश्व के अनेक देशों में संस्थापित हैं। इन दूतावासों के माध्यम से सांस्कृतिक आदान-प्रदान होता रहता है। अतः विश्व की राजधानियों में दूतावास के भारतीय अधिकारी और कर्मचारियों के द्वारा हिन्दी का प्रचार-प्रसार सम्बन्धित राजधानियों में बढ़ा है। इस दिशा में बंगला देश, बर्मा, मलयेशिया, सिंगापुर, इण्डोनेशिया, वियतनाम, कम्बोडिया, थाईलैण्ड आदि पूर्वी द्वीपसमूह के देशों में हिन्दी के प्रति स्वाभाविक अनुराग है क्योंकि इन देशों की विचारधारा रामायण की कथा से प्रभावित है। प्राचीन काल में ये देश स्वर्णद्वीप कहलाते थे और भारत का इनसे सांस्कृतिक सम्बन्ध जुड़ा हुआ था। यही स्थिति दक्षिण अमेरिका के ब्राजील, बोल्विया, युरूग्वे और पेरू देशों की है; जहाँ भारतीय-जन अपने प्राचीनकालीन सम्बन्धों के कारण आदर की दृष्टि से देखे जाते हैं। यहाँ उनकी भाषा हिन्दी, पवित्र भाषा के रूप में पढ़ी जाती है।

विदेशों में शोध-कार्य के हेतु विश्व-विद्यालयों में हिन्दी का अध्ययन होता है। ब्रिटेन से हमारा पुराना सम्बन्ध है इसलिए केम्ब्रिज और ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालयों में हिन्दी का

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

शोध-कार्य और अध्यापन होता रहता है। अमेरिका में ३३ स्थानों पर तथा पश्चिम जर्मनी में १७ स्थानों पर अध्यापन केन्द्र हैं। जहाँ हिन्दी का भाषा-वैज्ञानिक और साहित्यिक अध्ययन होता रहता है। कनाड़ा की 'कोलम्बिया' और 'आन्टोरियो' तथा 'क्यूबैक' विश्वविद्यालयों में हिन्दी का अध्यापन शोध-कार्य के लिए भी हो रहा है। इस दृष्टि से हिन्दी में आधुनिकता का सन्दर्भ जुड़ गया है। इस प्रकार विदेशों में हिन्दी का अध्यापन ६० देशों में तथा प्रचार-प्रसार १०६ देशों में हो रहा है। इसीलिए राष्ट्रसंघ में बोलनेवालों की जनसंख्या की दृष्टि से इसका स्थान दूसरा हो जाता है। यह दृष्टिकोण सूरीनाम के विद्वान श्रीरामनारायण शास्त्री का है।[४६] विदेशी भाषाओं एवं साहित्य के अध्ययन से हिन्दी अपने व्यापक रूप में विश्वभाषा बन जाती है और उसके साथ उसकी लिपि देवनागरी विश्वलिपि की अधिकारिणी हो जाती है। राष्ट्र की सीमा को लांघकर हिन्दी ने विश्वमानव की चेतना को अभिव्यक्त किया है।

०७.०६. उपसंहार :—

राजभाषा-हिन्दी ने अपने ३१ वर्षीय जीवन-काल में जो समृद्धि अर्जित की है वह उसे आज विश्व का सक्षम भाषा बना देती है। विश्व में कम-से-कम ६० करोड़ व्यक्ति ऐसे हैं जो हिन्दी को बोलते और समझते हैं। भारत के ३६ करोड़ हिन्दी-भाषी और छह करोड़ अहिन्दी-भाषी सफलतापूर्वक अपने विचार हिन्दी में व्यक्त कर सकते हैं। विदेशों में रहने वाले आठ करोड़ लोग हिन्दी को समझ जाते हैं। हिन्दी की उपेक्षा करके हम अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में उसके प्रवेश को रोक नहीं सकते। हिन्दी का समर्थन या विरोध की चर्चा छोड़कर हम आगे बढ़ गये हैं। राष्ट्रीय पृष्ठभूमि से अन्तर्राष्ट्रीय सन्दर्भ में ले जाकर हिन्दी को विश्ववाणी का रूप दिया गया है। हिन्दी अब अतीत-काल में नहीं रम रही है बल्कि वर्तमान की अराजक स्थितियों का सामना कर रही है। यद्यपि आज भी वह अपनी अहमियतता में कुछ अटपटेपन का अनुभव कर रही है फिर भी उसने अपनी सीमाएँ बढ़ा ली है और आज वह जनता, हिन्दी-भाषियों, अहिन्दी भाषियों और विश्वभाषाओं के समक्ष अपना अस्तित्व प्रकट कर रही है। उसका यह नया रूप कुछ लोगों को अटपटा और अविकसित प्रतीत होता है, किन्तु जब जर्मन-हिन्दी, राजस्थानी-हिन्दी को विज्ञान के गहन तत्व समझाएगी, अमेरिकी-हिन्दी, रूसी-हिन्दी से अंतरिक्ष-विज्ञान पर चर्चा करेगी, जापानी-हिन्दी, उत्कलीय हिन्दी से इस्पात-उद्योग का व्यापार करेगी तब तमिल, बंगाली और पंजाबी अपना विरोध स्वयमेव वापस ले लेंगी तथा हिन्दी को वही सहयोग देंगी जो मराठी, गुजराती या उड़िया दे रहीं हैं। जनता ने जब हिन्दी को अपना लिया है तब राज्य-सरकारें और केन्द्र क्यों न अपनाएँगे? जब केन्द्र इसे हृदय से स्वीकार कर लेगा तब विश्व के हिन्दीभाषी इसको अपनाकर राष्ट्रसंघ में उचित स्थान पर प्रतिष्ठित करेंगे।

---

४६. प्रतिवेदन, विश्व-हिन्दी-सम्मेलन : जनवरी १९७५, पृ. ४७.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

अध्याय–८

मूल्यांकन : स्वरूप, उपलब्धियाँ, महत्व

०८. ००. आधुनिक भारत :–

२६ जनवरी, १९५० के दिन भारत गणराज्य बना और भारत के अन्तिम गवर्नर-जनरल चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य ने अपना पदभार प्रथम राष्ट्रपति बाबू राजेन्द्रप्रसाद को सौंपकर सत्तान्तरण के प्रतीक बनें। इस दिन भारत के वे प्रान्त जो अँग्रेज़ों के प्रशासन में थे और वे देशी-राज्य जो अपने आप में स्वतन्त्र थे, एक ऐसे संघ में विलीन हो गए जो गणतन्त्रीय, भारत संघ कहलाया। यह आधुनिक भारत है, जिसमें विदेशी और स्वदेशी राज्यों की भौगोलिक सीमाएँ समाप्त होकर एक भारत के रूप में प्रतिष्ठित हुई। यह भारत का विशाल स्वरूप है। इसके पूर्व १४ अगस्त, १९४७ की मध्य रात्रि को १२ बजे इसके कुछ प्रांत इससे विलग हो गये और वे पाकिस्तान कहलाये। कालान्तर में यह पाकिस्तान सन् १९७१ में बंगला–देश और पाकिस्तान के रूप में दो भागों में विभक्त हो गया। साथ ही नेपाल और भूटान के राज्यों ने अपनी सत्ता अक्षुण्ण बनाये रखी और वे भारत से स्वतन्त्र रहे। भारतीय उप–महाद्वीप का यह नवगठन आधुनिक भारत के भौगोलिक अस्तित्व का द्योतक है। यही वह आज का स्वतन्त्र आधुनिक भारत है।

०८.०१. आधुनिक राजभाषा :–

स्वतन्त्र भारत में अनेक भाषाएँ हैं। सभी भाषाएँ भारत की सांस्कृतिक परम्परा की समान उत्तराधिकारिणी है। इन भाषाओं में पन्द्रह भाषाएँ संविधान में अधिमान्य हैं और वे संविधान की धारा ३४४ (१) और ३५१ के मन्तव्यानुसार अष्टम परिशिष्ट में परिगणित हैं। वे हैं—असमी, बंगाली, गुजराती, हिन्दी, कन्नड़, कश्मीरी, मलयालम, मराठी, उड़िया, पंजाबी, संस्कृत, सिन्धी, तमिल, तेलुगू और उर्दू।[१] इनमें से हिन्दी भारत की राष्ट्रीय सम्पर्क की भाषा है। ये भाषाएँ विविध परिवारों और परम्पराओं से जुड़ी हुई हैं। असमी, बंगाली, गुजराती, हिन्दी, मराठी, उड़िया, पंजाबी, संस्कृत और सिन्धी आर्य–कुल की आधुनिक देशभाषाएँ हैं, जबकि कन्नड़, मलयालम, तमिल और तेलुगू द्राविड़ परिवार के अन्तर्गत आती हैं। कश्मीरी, भारत–ईरानी परिवार की दरद-भाषा-परिवार की है।[२] उर्दू का सम्बन्ध आर्य–परिवार से तो है किन्तु उसने अपनी प्रकृति परिवर्तित कर अरबी–फ़ारसी के

---

१. भारत का संविधान : जगदीशलाल : १९७७, पृ. २३७ (नामावली रोमन वर्णमाला के अक्षरों के क्रम के अनुसार है)।

२. भाषा–विज्ञान : मैक्समूलर : अनु.–उ. ना. ति. : पृ. ५७६–५७७।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

सामी परिवार में अपना स्थान बनाया है। इन विभिन्न परिवारों में भारतीय महाद्वीप की भौगोलिक सीमाओं के अन्तर्गत सामासिक और सांस्कृतिक एकता है। ये अपनी मूल प्रकृति में अपनी-अपनी वंश परम्पराओं को सन्निहित किये हुए है। आज इनकी भौगोलिक सीमाएँ भाषावार प्रांत निर्माण योजना के अधीन सन् १९५६ से ही निर्धारित हो चुकी है और सम्बन्धित प्रदेशों ने इन्हें सांविधानिक मान्यताएँ दे रखीं हैं। असमी–असम राज्य, बंगाली–पश्चिमी बंगाल, गुजराती–गुजरात–राज्य, हिन्दी–उत्तरप्रदेश–मध्यप्रदेश–विहार–राजस्थान–दिल्ली–हरियाणा–हिमाचल–प्रदेश (हिन्दी–प्रदेश), मराठी–महाराष्ट्र, उड़िया–उड़ीसा, पंजाबी पूर्वी पंजाब, तमिल–तमिलनाडु, तेलुगू–आन्ध्र, कन्नड़–कर्नाटक और मलयालम–केरल राज्यों की राज्यभाषाएँ हैं। सिन्धी-स्वतन्त्रता पूर्व के सिन्ध प्रान्त की भाषा थी, किन्तु पाकिस्तान के निर्माण के बाद निर्वासित होने पर सिन्ध के निवासियों ने भारत के विभिन्न भागों में बसकर इसे जीवित रख रखा है। अतः यह भारत–भर में फैली हुई एक पृथक् भाषा–भाषी वर्ग सिन्धियों की भाषा है। संस्कृत–प्राचीन भारत की राजभाषा रही है और पूरे देश में जाति, वर्ण, रंग–विहीन संस्कृति पोषक भारतीयों की भाषा है। उर्दू का उद्गम यद्यपि भारतीय है, किन्तु यह अरबी–फ़ारसी–तुर्की–पश्तो–बलूची बोलियों से प्रभावित होकर इरानिक वर्ग में चली गई है। हिन्दी का परिवार इन भाषाओं में सबसे बड़ा है और वह भारत के प्रत्येक भाग में बोली तथा समझी जाती है। सांस्कृतिक समारोहों, व्यापारिक प्रयोजनों तथा शैक्षिक कार्यों के लिए इसका प्रयोग भारत भर में होता है। राष्ट्रीय सम्पर्क की भाषा होने के नाते यह एक जीवित भाषा है। इसलिए लचीली, सादी और ग्रहणशील है। यह बदलती हुई परिस्थितियों के अनुरूप अपने आपको ढालने में समर्थ है।

०८.०२. आधुनिकता और राजभाषा :–

हमारी भाषाएँ आधुनिक तभी हो सकती है जबकि वे समकालीन और भविष्य के विचारों का समावेश करने की क्षमता रखेंगीं। आज कोई भी राष्ट्र ज्ञान-विज्ञान की प्रगति को अनदेखा नहीं कर सकता। पिछले तीन दशकों में अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में संसार में नई–नई दिशाओं में नये–नये विचारों का सृजन हुआ है। इन विषयों में हिन्दी ने अनुवाद के माध्यम से सम्पर्क बनाया है। वह आधुनिकता-बोध और युग-बोध के अनुकूल अपने आपको ढाल रही है। ज्ञान और विज्ञान के क्षेत्र में समसामयिकता को अपनाने वाली हिन्दी ही आधुनिक-हिन्दी है। वह भारत-संघ के संविधान में धारा ३४४(१) और ३५१ में परिभाषित है। वह प्राचीन राजभाषाओं से इसलिए पृथक है कि उसके वर्तमान रूप में नवीनता है। इसके राजभाषा पद ग्रहण करने के पूर्व अँग्रेज़ी राजभाषा थी जो पुर्तगाली-डच और फ्रान्सिसी-भारत के अतिरिक्त भारतीय महाद्वीप की सरकारी कामकाज की भाषा थी। अँग्रेज़ी के पहले मुगल और पठान शासन-काल में फ़ारसी राजभाषा थी जो पठानों, तुर्कों और मुगलों के राज्यकाल में प्रचलित थी। इसके पूर्व प्राचीन भारत की राजभाषा संस्कृत थी जो पूरे जम्बूद्वीप में प्रचलित रही थी। यह जम्बूद्वीप कल का विशाल भारत था जिसमें पश्चिमी एशिया, वर्तमान भारतीय उप-महाद्वीप और पूर्वी एशिया के देश सम्मिलित थे। इसी संस्कृत भाषा की उत्तराधिकारिणी आज की राजभाषा-हिन्दी है।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

०८.०३. आधुनिक हिन्दी की प्रकृति :–

यह राजभाषा अपने संस्कारों में संस्कृत को ही अपना मूलाधार बनाती है। यों तो इसका जन्म सन् ७७८ ई. के लगभग हो चुका था और 'कुवलय-माला-कथा' नामक ग्रन्थ में मध्यदेश की बोलचाल की भाषा को भारती कहा गया था। ७वीं शताब्दी के पुष्य[३] नामक कवि का उल्लेख भी हिन्दी के आदिकवि के रूप में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने अपने हिन्दी-साहित्य के इतिहास में किया है। इसके बाद पश्चिम में जैन-साहित्य और पूर्व में वज्रयानी संतों की अपभ्रंश रचनाओं में भी इस हिन्दी की झलक मिलती है, किन्तु यह स्वरूप बोलचाल तक ही सीमित था। वस्तुतः हिन्दी का अविर्भाव मध्यप्रदेश की शौरसैनी अपभ्रंश से हुआ है। यह शौरसैनी अपभ्रंश शौरसैनी प्राकृत से अविर्भूत हुई थी और शौरसैनी प्राकृत मध्यप्रदेश की पाली-भाषा से विकसित हुई थी। पाली-भाषा मध्यप्रदेश एवं पश्चिम क्षेत्रवासियों की बोलचाल की भाषा थी और उस संस्कृत से विकसित हुई थी जो सप्तसिन्धु प्रदेश[४] से देवभाषा के रूप में लोकप्रिय थी और यह संस्कृत ही वैदिक-भाषा से निकली थी, जिसे देववाणी छान्दस कहा जाता था। इस प्रकार हिन्दी का विकास-क्रम है - वैदिक संस्कृत-संस्कृत-पाली-प्राकृत-शोरसैनी, प्राकृत-शोरसैनी अपभ्रंश और हिन्दी।[५]

०८.०४. विकास के क्रम में हिन्दी के रूप :–

इस प्रकार हिन्दी का आविर्भाव १०वीं सदी में हो चुका था और यह आगे चलकर राजपूत राजाओं, मुस्लिम आक्रांताओं और विदेशी धर्म-प्रचारकों का आश्रय पाकर हिन्दवी, हिन्दुई, हिन्दुस्तानी, खड़ी-बोली और नागरी आदि नामों से विकसित होती हुई आधुनिक हिन्दी बन गई है।[६] हिन्दवी के आदिकवि अमीर खुसरो हैं (१२५३–१३२५ ई.)। हिन्दुई का नामकरण मलिक मोहम्मद जायसी[७] ने किया है (१५२०–१६०० ई.)। हिन्दुस्तानी के प्रयोक्ता अकबरी दरबार के कवि अब्दुल रहीम खानखाना[८] (१५५६–१६०३),

---

३. हिन्दी–साहित्य का इतिहास : रामचन्द्र शुक्ल : पृ. ७।

४. सप्तसिन्धु प्रदेश वैदिककाल में उस क्षेत्र को कहा जाता था जो आजकल अफगानिस्तान, पश्चिमी पंजाब, पूर्वी पंजाब, हरियाणा, और हिमाचल का सम्मिलित भू–भाग है।

५. भोलानाथ तिवारी : हिन्दी–भाषा : पृ. १०५–१०९।

६. डॉ. सतीश कुमार रोहरा—भाषा एवं हिन्दी-भाषा : पृ. १४७–१७७।

७. तुर्की, अरबी, हिन्दुई, भाषा जैती आहिं, तैंहि महं मारग प्रेम कर, सबै सराहे ताहि—पदमावत–रामचन्द्र शुक्ल–जायसी ग्रन्थावली, पृ. ३०१।

८. यों देखत हिन्दी बोल। ऐब न राखें हिन्दी बोल-दक्खिनी हिन्दी : बाबूराम सक्सेना, पृ. १०१।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

खड़ी-बोली का सर्व-प्रथम प्रयोग लल्लूजीलाल (सन् १८०३ ई.) किया है। नागरी का नामकरण शारदाचरण मित्र ने सन् १९०७ में किया है और हिन्दी शब्द का प्रथम प्रयोग दक्खिनी के कवि शाही नीराजी ने १४७५ ई. में किया है। इस प्रकार ऐतिहासिक दृष्टि से हिन्दी की मूलाधार संस्कृत है और भाषाई विकास परम्परा में उसकी मूल प्रकृति भारतीय आर्य-भाषाओं की है।

संस्कृत की उत्तराधिकारिणी होने से हिन्दी की मूल प्रकृति संस्कृत की है, किन्तु सन्तों और वैष्णव भक्तों के कारण इसका सम्पर्क द्राविड़ भाषाओं से होता रहा जिससे वह संयोगात्मक से वियोगात्मक भाषा बन गई। इसी के पश्चात् यह मुसलमानी भाषाओं के सम्पर्क में आई और अरबी-फ़ारसी शब्दों को ग्रहण कर मिश्रित भाषा बन गई। महाकवि तुलसी का 'दाम' [९] शब्द और विहारी का 'सबी' [१०] शब्द इस बात के प्रमाण हैं कि हिन्दी मध्यकाल में मिली-जुली भाषा थी और उसने सभी दिशाओं से शब्द और विचार ग्रहण किए। इस मिश्रण का प्रभाव यह पड़ा कि वह देश की बोलचाल की भाषाओं में अग्रणी हो गई। राजस्थानी के चन्दबरदाई, पंजाबी के गुरूनानक, गुजराती की मीरावाई, अवधी के जायसी और तुलसी, व्रजभाषा के सूर और रसखान, बुन्देली के केशवदास, बघेली के महाराजा विश्वनाथसिंह जू देव, खड़ी-बोली के अमीर खुसरो और कबीर, मैथिली के विद्यापति आदि साहित्यकारों का आश्रय पाकर अभिव्यक्ति क्षमता और शब्द भण्डार की दृष्टि से यह जनभाषा बन गई। इस प्रकार विकास की दृष्टि से ३ रूप बन गए—

(१) ठेठ हिन्दी—जिसमें तद्भव शब्दों की प्रधानता है।

(२) शुद्ध हिन्दी—जिसमें तद्भव और तत्सम् दोनों प्रकार के शब्द मिलते हैं तथा

(३) उच्च हिन्दी—जिसमें तत्सम शब्दों की प्रधानता है।

०८.०५. हिन्दी का समग्र स्वरूप :—

आज हिन्दी का जो स्वरूप मिलता है उसका अर्थ यदि समग्र हिन्दी-भाषा से घटित करें तो प्रतीत होगा कि ऐसी हिन्दी का स्वरूप निर्धारण करना असम्भव है। इस दृष्टि से उसका प्रयोग साहित्य के क्षेत्र में ही रहेगा, किन्तु जन-साधारण की सम्पर्क भाषा के रूप में हिन्दी अभिव्यक्ति प्रधान बन गई है। व्याकरण की दृष्टि से उसका गठन गौण है। आज उसका स्वरूप उस भाषा के रूप में है जिसे गांधीजी हिन्दुस्तानी कहते थे। नाम बदल दिया गया है किन्तु उसकी ध्वनि-सम्पदा, शब्द-सम्पदा, व्याकरणिक-संघटन और अर्थ-प्रेषणीयता में वह खड़ी-बोली, हिन्दुस्तानी के अधिक समीप है। उसे यदि हिन्दुस्तानी-हिन्दी कहें तो

---

९. भरद्वाज सुनु जाहि जब होई विधाता बाम
भूरि मेरू सम जनक जन ताहि व्याल सम दाम—तुलसी

१०. लिखन बैठी जाकी सबी-गहि-गहि गरब गरूर—बिहारी

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

उसका स्वरूप अधिक बोधगम्य हो जायगा। आज वह हिन्दी-भाषी प्रदेश की राज्यभाषा है, अहिन्दीभाषी प्रदेशों की राजभाषा है, पूरे भारत की सम्पर्क भाषा है और हिन्दी समर्थक विदेशी राष्ट्रों की विश्वभाषा है। उसके भाषाई रूप को हम पांच भागों में बांट सकते हैं—

(१) उत्तरी-हिन्दी—जिसे हिन्दुस्तानी, उर्दू निष्ठ, ब्रजी, अवधी, पहाड़ी, बुन्देली, कश्मीरी अथवा कन्नौजी हिन्दी कहते हैं।

(२) पश्चिमी-हिन्दी—जिसे मराठी, पंजाबी, हरियाणवी, सिन्धी, राजस्थानी अथवा गुजराती हिन्दी कहते हैं।

(३) दक्षिण-हिन्दी-जिसे-मलयाली—तमिल, तेलुगू या दक्खिनी हिन्दी कहते हैं।

(४) पूर्वी-हिन्दी—जो बंगाली, असमी, उड़िया, बिहारी, भोजपुरी, मगही अथवा मैथिली हिन्दी कहते हैं।

(५) मध्य-हिन्दी—जिसे बघेली, छत्तीसगढ़ी, मालवी अथवा निमाड़ी-हिन्दी कहते हैं।

हिन्दी के इस रूप में सभी प्रान्तीय भाषाओं का सम्मिश्रण हुआ है।[११] अतः इस रूप में वह मिश्रित भाषा है। अपने शुद्ध रूप में फिर भी वह खड़ी-बोली ही बनी हुई है। भारतीय भाषाओं और बोलियों से ध्वनि, शब्द, वाक्य और अर्थप्रेषण के रूप लेकर यह हिन्दी राजभाषा बनने की क्षमता रखती है।

०८.०६. राजभाषा-हिन्दी का स्वरूप :—

भाषा-वैज्ञानिक तथा राष्ट्र के नेता राजभाषा-हिन्दी के इसी रूप के कपल्क हैं। उनकी यह कल्पना भारतीय संविधान के अनुच्छेद ३५१ में इस प्रकार की गई है :—

(१) हिन्दी को देश की सामासिक संस्कृति के सभी तत्वों का माध्यम बनाना है।

(२) उसकी प्रकृति के साथ हस्तक्षेप नहीं किया जाएगा।

(३) वह हिन्दुस्तानी और अष्टम-सूची में उल्लिखित अन्य भारतीय भाषाओं के रूप, शैली और पदावली को आत्मसात करेगी।

(४) आवश्यकता पड़ने पर वह मुख्यतः संस्कृत से तथा गौणतः अन्य उल्लिखित भाषाओं से शब्द ग्रहण करेगी।

संविधान में परिकल्पित इस स्वरूप का, हिन्दी की मूल प्रकृति से इतना अधिक साम्य है कि वह भारत की एक सामासिक भाषा बन गई है, जो हिन्दी-भाषी प्रान्तों में मूलभाषा के रूप में और अन्य राज्यों में सहभाषा के रूप में बोली और समझी जाती है। विभिन्न रूपों के उदाहरण इस प्रकार हैं—

---

११. देखिए 'हिन्दी का सामासिक रूप' पत्रक : संलग्न, संदृश्य इसी पुस्तक के पृ. २२७ पर, भाषा : त्रैमासिक : दिसम्बर १९७१, पृ. १८।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

संदृश्य—१

हिन्दी का सामासिक स्वरूप

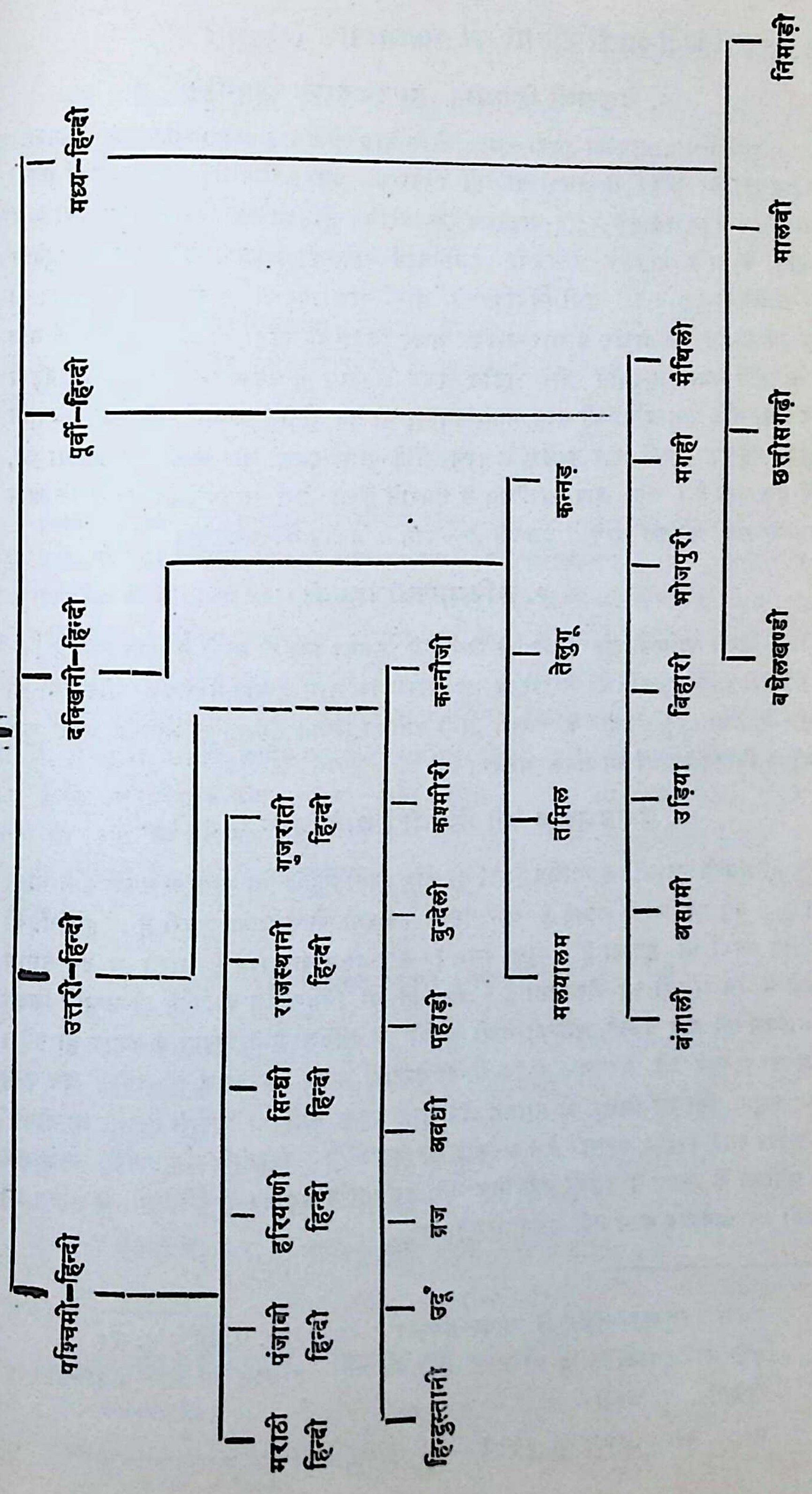

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri
Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

०८.०६१. हिन्दी-भाषी राज्यों की राजभाषा : (१–७)

१. देहलवी हिन्दी (हिन्दुस्तानी हिन्दी)

हमारी भाषा-समस्या दूसरी समस्याओं के साथ ही हल होगी। इसके लिए मूक और दरिद्र जनता को, सदियों से पिसती आ रही जनता को, देशव्यापी पैमाने पर हरकत में लाना होगा। वह बहुत बड़े-एक महान्-आपरेशन के दौरान ही आयेगी। तभी वह भाषा और साहित्य के प्रति जागरूक हो सकेगी, तभी उनमें भावात्मक एकता स्थापित होगी, क्षुद्रता और संकीर्णता दूर होगी, तभी सामन्तवादी और साम्राज्यवादी तत्वों के गंदे मवाद को भारतीय समाज के शरीर से चीर-फाड़कर अलग किया जा सकेगा। इस आपरेशन के बाद ही भारतीय समाज तन्दुरुस्त और सुडोल होकर इतिहास के विकास-मार्ग पर आगे बढ़ेगा और तभी और समस्याओं की तरह भाषा-समस्या भी हल होगी, अन्यथा नहीं। सुधारवादी नेताओं, संसद सदस्यों और कालेज के प्रोफेसरों के पास इसका और किसी भी समस्या का, कोई हल नहीं है। अगर आप आपरेशन से घबराते हैं तो मेरा यह निश्चित मत है कि आप इन समस्याओं को हल करने से घबराते हैं—वक्त के तकाजे को टालते हैं। [१२]

२. हरियाणवी हिन्दी

हिन्दी माध्यम को लेकर जो विवाद है उसका मूल दो बातों से जुड़ा हुआ है :— (१) हिन्दी-भाषी प्रदेशों के नागरिकों को प्रारम्भिक लाभ होगा, विशेषकर नौकरियों की तलाश में तथा (२) अँग्रेज़ी के कारण बनी वर्तमान स्थिति समाप्त हो जायेगी और कुछ लोगों के निहित स्वार्थों को धक्का पहुँचेगा। [१३]

३. उत्तरप्रदेश की हिन्दी (प्रादेशिक हिन्दी)

'अँग्रेज़ी हटाओ' आन्दोलन कोई दो-चार हफ्ते, महीने या साल में सफल होने वाला नहीं है। यह एक लम्बी लड़ाई है और इसकी पेचीदगी को समझना जरूरी है। हमें अँग्रेज़ी को तीन स्तरों से हटाना है पहला स्तर है अहिन्दी-भाषी राज्य। भारत के इन तमाम राज्यों में अब अँग्रेज़ी का बोलबाला है। भला हो, डॉ. त्रिगुण-सेन का, जैसे ही उन्होंने शिक्षा के माध्यम की बात चलाई, अहिन्दी-भाषी राज्यों के अँग्रेज़ी-प्रेमी विद्वान बे-नकाब हो गये। वे अपनी जनता को बरगलाते थे कि हिन्दी तुम्हारी भाषा को खत्म कर देगी। अब उन्हें स्पष्ट कहना पड़ा कि शिक्षा का माध्यम अँग्रेज़ी ही रहना चाहिए। 'अँग्रेज़ी हटाओ आन्दोलन' का दूसरा स्तर केन्द्रीय सरकार है। सरकार को चलाती है—राजनीतिक पार्टियाँ। जब तक इन पार्टियों के अन्दर से अँग्रेज़ी नहीं निकलेगी, तब तक वे सरकार या लोकसभा के अन्दर भी अँग्रेज़ी का व्यवहार खत्म नहीं करेंगी। [१४]

---

१२. हंसराज रहबर—'हमारी भाषा-समस्या' : सा. प. भा. स. वि. : पृ. २१।

१३. डॉ. राजेन्द्रपालसिंह : भारतीय भाषा-समस्या : साहित्य परिचय-भाषा-समस्या विशेषांक, पृ. ७१।

१४. सा. प. भा. स. वि. : पृ. १६–१७।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

४. मध्यप्रदेशी-हिन्दी

चाहे आंशिक रूप से ही क्यों न हो ? किसी भी स्तर पर जिस भाषा ने भारतीय मानवता में एकता की भावना पैदा की हो, ऐसी किसी भी भाषा को विदेशी मानना गलत है। यदि दक्षिण और पूर्व के हमारे देशबन्धुओं को हिन्दी से परहेज हो तो हम हिन्दी के साथ-साथ अँग्रेज़ी को भी खुले दिल से स्वीकार करें। अतः यह आवश्यक है कि हिन्दी-भाषा के पक्षपाती अँग्रेज़ी का विरोध छोड़ दें।

किसी भी भाषा को किसी विशिष्ट धर्म, सम्प्रदाय या जाति के साथ जोड़ने में बहुत बड़ा धोखा है। न उर्दू मुसलमानों की है, न पंजाबी सिखों की है और न संस्कृत हिन्दुओं की है।[१५]

५. बिहारी-हिन्दी

मुझे इस बात का व्यावहारिक अनुभव प्राप्त है कि प्रायः पिचानवें प्रतिशत दक्षिण भारतीय हिन्दी को उत्तर-भारत की भाषा मानते हैं और उनका एक स्पष्ट भ्रम यह है कि उत्तरप्रदेश के लोगों की मातृभाषा ही हिन्दी है। हिन्दी किसी की अपनी मातृभाषा तो कभी नहीं रही। हिन्दी का प्रारम्भिक विकास उत्तर भारत में हुआ और इन सभी भाषाओं और बोलियों के मेल पर हुआ। फलतः ये सभी भाषाएँ और बोलियाँ हिन्दी के अत्यन्त निकट पड़ती है। प्रायः यहाँ शिक्षा का माध्यम भी हिन्दी है। फलस्वरूप कुछ लोग अपने घरों में भी हिन्दी का ही प्रयोग करते हैं इसलिए दक्षिण भारतीयों को यह भ्रम हो जाता है कि उत्तरप्रदेश के लोगों की मातृभाषा हिन्दी है। अब इधर कुछ लोगों ने यह प्रचार भी किया कि दरअसल बिहारियों की मातृभाषा हिन्दी है, जबकि बिहार में भोजपुरी, मैथिली तथा मगही आदि भाषाएँ तथा संथाली, मुण्डारी, उरांव आदि बोलियाँ प्रचलित हैं।[१६]

६. राजस्थानी-हिन्दी

'हिन्दी राजस्थान की भाषा नहीं है-' जैसे नारे लगाने वाले नासमझ और नादान नेताओं की बात मान ली जाए और दूसरे प्रदेश भी यही कहने लग जाएँ कि हमारी भाषा तो अवधी है, हिन्दी नहीं है, तब तो बेचारी हिन्दी की रक्षा ईश्वर ही कर सकता है। जरूरी है कि इन बोलियों का गला न घोंटे और ना ही ये बोलियाँ अपने पागल बेटों के कुठार से हिन्दी की हत्या करा दें। आज हिन्दी को ख़तरा है, विदेशी भाषाओं से, अँग्रेज़ी के गुलामों से, हिन्दुस्तानी अँग्रेज़ों से, आइ. सी. एस. के दकियानूसी अफसरों से[१७]

---

१५. दादा धर्माधिकारी : राज्यों में शिक्षा का माध्यम : सा. प. भा. स. वि., पृ. ११५।

१६. सी. भास्करराव : सा. प. भा. स. वि. : पृ. २७।

१७. परदेसी—सा. प. भा. स. वि. : पृ. ८९।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

७. हिमाचल-प्रदेश की पहाड़ी हिन्दी

प्रशासनिक स्तर पर राजभाषा-हिन्दी को बढ़ावा देने की ओर सरकार विशेष ध्यान दे रही है। २१ जनवरी; १९७१ से एक दस सूत्री कार्यक्रम भी राज्य में कार्यान्वित हो रहा है, जो इस प्रकार है :—

(१) जो सरकारी कर्मचारी पूरी तरह या कुछ मामलों में हिन्दी में कार्य करना चाहें, वे बिना किसी रोक-टोक के ऐसा कर सकते हैं और उन्हें इसकी पूरी छूट है।

(२) राज्य सचिवालय और उससे नीचे के सभी विभागों के सरकारी कर्मचारी सभी प्रकार के प्रार्थना-पत्र हिन्दी में ही दें और मिसिलों पर अपने हस्ताक्षर भी हिन्दी में ही करें।

(३) सचिवालय तथा अन्य सभी विभागों में हिन्दी में प्राप्त सभी प्रार्थना-पत्रों और इसी प्रकार हिन्दी के अन्य सरकारी-पत्रों के उत्तर भी केवल हिन्दी में ही दिये जाएँ।

(४) सचिवालय की सभी शाखाओं-प्रशाखाओं और नीचे के सभी विभागों के उपस्थिति-रजिस्टर हिन्दी में ही लिखें जाएँ और उन पर केवल हिन्दी में ही हस्ताक्षर किये जाएँ।

(५) वेतन-बिल हिन्दी में बनाए जायें और उन पर सभी कर्मचारियों के हस्ताक्षर भी केवल हिन्दी में ही मान्य हों।

(६) लिफाफों पर सभी प्रकार के पते, चाहे पत्र हिन्दी के हों या अँग्रेज़ी के, अनिवार्य रूप से हिन्दी में लिखे जाएँ।

(७) सचिवालय की सभी शाखाओं-प्रशाखाओं तथा दूसरे सभी विभागों के कार्यालयों के रजिस्टर-जैसे प्रतिदिन की डायरी, रजिस्टर, डाक भेजने का रजिस्टर (डिस्पैंच), टेलीफोन रजिस्टर और ऐसे ही अन्य सभी रजिस्टर अनिवार्य रूप से हिन्दी में ही लिखे जाएँ।

(८) सभी सरकारी कर्मचारियों की चरित्र-पत्रिकाएँ भी हिन्दी में ही लिखी जाएँ। केवल टेक्निकल (तकनीकी) और विज्ञान सम्बन्धी कुछ अपवादों को छोड़कर बाकी सभी मामलों में मिसिलों पर टिप्पणी हिन्दी में ही लिखी जाएँ।

(९) सभी प्रकार के स्मरण-पत्र, प्राप्तियाँ तथा अँग्रेज़ी के अन्य सभी छोटे-छोटे पत्रों के उत्तर भी केवल हिन्दी में ही दिए जाएँ।[१८]

०८.०६२. अहिन्दी-भाषी राज्यों की राजभाषा :—

८. कश्मीरी-हिन्दी

हिन्दी सीखने और इम्तहानात पास करने वाले पसमान्दा उम्मीदवारों को हौंसला अफ़ज़ाई के लिये नक़द इनामात की रक़म बढ़ाने के लिए मौज़ूं ग्रांट अता की जाए।

---

१८. देवताओं की घाटी में हिन्दी : स्वतन्त्रता र. ज. अ. ग्रं. ; पृ. २२०-२२१।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

समिति को हर साल उम्मीदवारों को निसाबी किताबें मुफ्त देने और फीस न लेने से मरकजी समिति को नकद लगभग २०,०००) रुपये का भारी बोझ अदा करना पड़ता है। हर साल दो सैशनों में लगभग २,५०० उम्मीदवार शामिल होते हैं। इस बोझ से छुटकारा हांसिल करने के लिये हमें मुआवज़ा मिलना चाहिये।

मुख़्तसरतौर पर हम यह कहना चाहते हैं कि गांधीजी के चलाये हुए मिशन को यानी हिन्दी के ज़रिये क़ौमी यक़जहती को बढ़ावा देने के लिये हम वैलागतौर पर मुसम्मम इरादा लेकर चल पड़े हैं। इस पेड़ की आब्यारी करना हम सबका फर्ज़ है। हमारा नसब-उल-एन है —भारत जननी एक हृदय हो (मादरे हिन्दी की औलाद एक दिल हों)। [१९]

९. पंजाबी-हिंदी

अन्त में, हम इसी निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि किसी भी विद्यार्थी को किसी भाषा-विशेष को अपना माध्यम बनाने के लिये बाधित नहीं करना चाहिये। प्रत्येक विद्यार्थी को यह छूट होनी चाहिये कि वह विश्व-विद्यालय स्तर पर चाहे अँग्रेज़ी को या हिन्दी को या क्षेत्रीय भाषा को अपना माध्यम बनायें। पर्याप्त विद्यार्थी स्वेच्छा से ही देश की दो सम्पर्क भाषाओं अर्थात् अँग्रेज़ी व हिन्दी को अपना माध्यम बना लेंगे। इस प्रकार विद्वान व्यक्ति देश के एक भाग से दूसरे भाग में जा सकेंगे और कोई भी भाषा किसी पर जबरदस्ती थोपी भी नहीं जायेगी। [२०]

१०. गुजराती-हिन्दी

यदि हम खासतौर से अनुच्छेद ३५१ को देखें तो हमें मालुम होगा कि संघ की भाषा का उद्देश्य वास्तव में हमारी राजनीतिक व्यवस्था में ऐसा ही एक अद्वितीय एकताकारक दायित्व सम्हालना है। इसी प्रकार हमारे विश्व-विद्यालय, विधान-मण्डल और न्यायपालिका भी, विशेषतः अहिन्दी-भाषी क्षेत्रों में दूसरे क्षेत्रों के लोगों को प्रादेशिक भाषा या भाषाओं के साथ-साथ हिन्दी का प्रयोग करने की अनुमति दे सकते हैं। स्कूलों और कालिजों में हिन्दी दूसरी भाषा के रूप में पढ़ाई जायेगी, इसलिये ऐसी व्यवस्था करने में कोई बाधा भी नहीं होगी। इससे यह माना जा सकता है कि आगे चलकर हमारी शिक्षा-व्यवस्था में संघीय भाषा हिन्दी के अनिवार्य शिक्षण का प्रबन्ध होगा। स्पष्ट है कि हिन्दी का प्रयोग क्रमशः अधिकाधिक बढ़ाने एवं उसे अँग्रेज़ी की जगह स्थापित करना, सरल बनाने में यह पहला और तात्कालिक उपाय है। [२१]

११· महाराष्ट्र की हिन्दी

महाराष्ट्र के संत शिरोमणि-ज्ञानेश्वर महाराज का यह मंत्र—'है विश्वचि माझे घर' 'सारा विश्व मेरा घर' हम सबके लिए प्रेरणा का सन्देश देता है। उसी विश्वात्मक भावना को लेकर इस विश्व-हिन्दी-सम्मेलन की योजना की गई है। महाराष्ट्र के शासकों और

१९. श्री मुहम्मद मसअद खान : स्वतन्त्रता रजत जयन्ती, अभिनन्दन ग्रंथ, पृ. २८१-८२
२० प्रो. गुरुबख्तलाल : शिक्षा का माध्यम : स. प. भा. स. वि., पृष्ठ १५८
२१. श्री मगनभाई पी. देसाई : राजभाषा आयोग का प्रतिवेदन, १९५६ पृष्ठ २९७.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

राज्यकर्त्ताओं की यह परम्परा रही है कि उन्होंने हमेशा ही संतों के सामने अपना मस्तक झुकाया है। छत्रपति शिवाजी महाराज ने, जिन्होंने न्याय और नीति के सिद्धान्तों पर शासन-तंत्र का निर्माण किया, हमेशा संतों और विद्वानों का आदर ही किया है। हमारी भी यही धारणा है कि राजा को तो अपने ही देश में पूजा होती है लेकिन विद्वानों की सर्वत्र पूजा होती है। इसीलिए आज विश्व के सभी विद्वानों, साहित्यकारों, कवियों और कलाकारों को यहाँ इस सभा मण्डप में देखकर लगता है कि आपने हमें अपार गौरव प्रदान किया है। मैं केवल एक मुख्यमंत्री की हैसियत से आपका स्वागत नहीं कर रहा हूँ और न किसी एक दल या पक्ष--विशेष की तरफ से लेकिन महाराष्ट्र की समूची जनता की तरफ से कर रहा हूँ। इसमें सभी पक्षों, विचारों, धर्मों और पंथ के लोग सम्मिलित हैं। राष्ट्र और मानवता के हित में जो भी कार्य होता है उसमें महाराष्ट्र ने सदैव योगदान देने का प्रयत्न किया है। [२२]

१२. उड़ियाई–हिन्दी

सभा ने आज तक हिन्दी–उड़िया की प्रायः ८० पुस्तकें प्रकाशित की है। इनमें कुछ पुस्तकें प्रान्त के स्कूलों में पाठ्य–पुस्तक के रूप में चलती है, बाकी साहित्यिक पुस्तकें हैं। उड़िया–साहित्य के लब्धप्रतिष्ठित साहित्यकारों की कुछ उपादेय पुस्तकों का हिन्दी में अनुवाद भी किया गया है। हिन्दी-भाषी जनता के हृदय में उड़िया–साहित्य के प्रति अभिरुचि पैदा करने के उद्देश्य से ही इस प्रकार के अनुवाद प्रस्तुत किये गये हैं।

१९५९ ई. में सभा ने अपना रजत जयन्ती उत्सव मनाया था। उस अवसर पर डॉ. हरेकृष्ण महताब के सम्पादकत्व में एक 'रजत जयन्ती ग्रंथ' प्रकाशित किया गया था, जिसकी भारत के तत्कालिक प्रधानमन्त्री पण्डित जवाहरलाल नेहरू तथा अन्य नेताओं ने भूरि-भूरि प्रशंसा की थी। 'राष्ट्रभाषा-पत्र' नाम से सभा का एक मासिक–पत्र भी निकलता है, जिसके गत तीस वर्षों में कई विशेषांक निकले हैं। [२३]

१३. बंगाली–हिन्दी

मैं यह अनुभव किये बिना नहीं रह सकता कि आयोग के प्रतिवेदन में केन्द्र की ओर से कुछ कार्यक्रम और कार्य प्रणालियाँ सुझाने का प्रयत्न तो किया गया है, परन्तु इस बात का विचार भली प्रकार नहीं किया गया कि भाषाओं के सम्बन्ध में आज देश की साधारण स्थिति क्या है? अथवा भविष्य में हमारी जनता के अनेक बड़े मार्गों पर उनकी प्रतिक्रिया क्या होगी? इसके अतिरिक्त. भारत के अहिन्दी-भाषी लोगों के सामने यह अन्तिम निर्णय के समान उपस्थित करने का प्रयत्न किया गया है कि अँग्रेज़ी के स्थान पर यथाशीघ्र हिन्दी का प्रयोग करने लगना और न्याय और शासन की नींव अपनी शिक्षा प्रणाली और फलतः अपने आन्तरिक जीवन तक को पूर्णतया हिन्दी से भर डालना, एक देशभक्ति पूर्ण कर्त्तव्य तो है ही, तुरन्त किये जाने योग्य सुधार का कार्य भी किये हैं। [२४]

---

२२. वसन्तराव नाईक : स्वागत भाषण : वि. दि. स. पृष्ठ. ८४.

२३. सुश्री विनीता पाटक : स्वतन्त्रता रजत जयन्ती अभिनन्दन ग्रंथ, पृष्ठ. २५६.

२४. डॉ. सुनीतिकुमार चटर्जी : राजभाषा-आयोग का प्रतिवेदन, १९५६, पृष्ठ. २२७

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

१४. असमी-हिन्दी

हमारे असम प्रान्त में दो प्रकार के स्कूल हैं – एक में असमिया में ही शिक्षा दी जाती है और दूसरे (मिडिल इंगलिश स्कूल) में माध्यम असमिया होने पर भी अँग्रेज़ी विषय को सिखाने में ही विद्यार्थी और अध्यापकों की अधिक-से-अधिक शक्ति व्यय होती है। परन्तु देखा जाता है मिडिल इंगलिश स्कूल में पढ़ने वाले विद्यार्थी मिडिल वर्नाक्यूलर (एम. वी.) में पढ़ने वालों से अपने को ऊँचा मानते हैं और उनसे हमेशा अलग रहने की कोशिश करते हैं। इन दोनों में दूसरा भेद यह भी है कि एक परिश्रम से भागने या घृणा करने लगते हैं – फलतः ये देश में बेरोजगारी की समस्या को वढ़ाते हैं। [२५]

१५. तमिली-हिन्दी

भाषा का जानकार और हिन्दी-भाषा का विद्वान होकर भी, अँग्रेज़ी और दूसरे बिषयों के अधकचरे शिक्षकों और एक-भाषी तमिल विद्वानों के सामने नगण्य समझे जाकर अपने दिनों को पहाड़-सा काटते रहने वाले तमिल-भाषी हिन्दी-पंडित यदि स्वार्थ-साधक होते तो अपना धंधा (अध्ययन–अध्यापन) छोड़कर दूकानी (व्यापार) करने लगते, यदि अपनी ली हुई भाषा के प्रति अभिमान न रखते तो दूसरे विषयों के अध्यापक वन जाते पर वे न तो स्वार्थ–साधक हैं, न निरभिमानी, वे तो राष्ट्रप्रेमी हैं। हां आमतौर पर जनता भी राष्ट्रप्रेमी है। अब भी आपको हिमालय पर गर्व है, गंगा-यमुना की पवित्रता मान्य है, काशी उसके लिए मोक्ष–दायक है, राम और कृष्ण प्यारे हैं, तुलसी–सूर और मीरा पूज्य हैं। इसी भित्ति पर तमिलनाडु का हिन्दी–पंडित अपने को पिसवा रहा है। [२६]

१६. तेलुगू-हिन्दी

आंध्र के कविसम्राट श्री विश्वनाथ सत्यनारायण ने कहा था–'(आज) अँग्रेज़ी को लाकर लड़कों के सिर पर लादने की कोशिश की जा रही है। क्यों? इसलिये कि वे अपनी मातृभाषा भूल जायें। जीवन–भर अँग्रेज़ी में डूबने पर भी ९९ प्रतिशत लोगों को अँग्रेज़ी ठीक से नहीं आती। मातृभाषा में ऐसी बात नहीं है।

अगर हम भाषा सम्बन्धी राग–द्वेषों को तजकर देखें तो हम समस्त भारत के लिये सम्पर्क भाषा के रूप में हिन्दी को स्वीकार कर सकते हैं। [२७]

१७. केरल की हिन्दी

अँग्रेज़ी का मोह कब तक ?

आधुनिक मलयालियों का हस्ताक्षर उनके अँग्रेज़ी-प्रेम का और एक प्रमुख साक्ष्य है। मेरी ही बात लीजिये। मैं जितनी मात्रा में हिन्दी और मलयालम जानता हूँ उतनी मात्रा में अँग्रेज़ी नहीं जानता। तो भी मेरा हस्ताक्षर अँग्रेज़ी में है, हिन्दी या मलयालम में नहीं।

---

२५. चित्र महन्त : भारत की भाषा-समस्या : साहित्य-परिचय, भाषा-समस्या, वि. अं., पृ. ८१।

२६. हरिहर दुरैस्वामी 'क्या तमिलनाडु में हिन्दी लोकप्रिय बनेगी ?' : साहित्य-परिचय : भाषा-समस्या विशेषांक : पृ. १८५।

२७. श्र. क. पंकज : अँग्रेज़ी का आंचल छोड़ो, सा. प. भा. स. वि, पृ. २१९।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

यही प्राय: सभी मलयालियों की बात है। कई ऐसे मलयाली भी मिलेंगे जो अँग्रेज़ी के सभी अक्षर भी नहीं जानते, पर अपना हस्ताक्षर करते हैं अँग्रेज़ी में। मेरी माताजी मलयालम सिखाती रही हैं। वे अँग्रेज़ी (रोमन-लिपि) के वे ही अक्षर जानती हैं जो उनका नाम लिखने के लिये आवश्यक हैं तो भी वे अपना हस्ताक्षर अँग्रेज़ी में ही करती हैं।[२८]

१८. कन्नड़ी-हिन्दी

मैसूर राज्य में कर्नाटक-विश्वविद्यालय, मैसूर विश्वविद्यालय तथा बेंगलूर विश्व-विद्यालय इन तीनों विश्वविद्यालयों में शिक्षा का माध्यम कन्नड़ बनाने के लिए यहां के तीनों उपकुलपतियों ने अपनी सम्मति व्यक्त की है। इन तीनों का विचार यही है कि शिक्षा का माध्यम मातृभाषा (प्रादेशिक भाषा) होनी चाहिए।

अन्त में इतना कह देना पर्याप्त है कि ज्यों-ज्यों देश में पुनर्जागरण का ज़ोर बढ़ता जाता है, त्यों-त्यों जनता पूर्ववत गहराई से अपनी भाषा, साहित्य आदि के विषय में सोचने भी लगती है। प्रादेशिक भाषाओं तथा हिन्दी को बढ़ावा देने की मांग ऐसी स्थिति में एक सही मांग है। हिन्दी का भविष्य उज्ज्वल और आशादायक है। मेरा पूर्ण विश्वास है कि वह दिन जल्दी ही आ जायेगा जबकि हिन्दी सभी क्षेत्रों में अपना सम्मान प्राप्त कर लेगी। हिन्दी हमारी अपनी राष्ट्र-भाषा है। हिन्दी अमर रहे ताकि भारतवर्ष अमर रहे।[२९]

१९. सिन्धी-हिन्दी

यदि दूसरों को सहनशीलता बरतने की सलाह देने वाले राजाजी स्वयं भी उसका पालन करें और एक परायी भाषा को वर्तमान की तरह सदा अखिल भारतीय सरकारी भाषा के पद पर बिठाये रखने के खातिर दूसरी बार विभाजन की दहकाने वाली बातें नहीं बोला करें। यह पहला अवसर नहीं है जब उन्होंने प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से इस तरह की धमकी दी हो। इससे पहले भी वे इसी ढंग के बोल बोलते रहे हैं, जिसका नतीजा यह निकलता है कि दूसरे लोग भी ऐसी ही धमकियां दुहराने लगते हैं।[३०]

०८.०६३. केन्द्रीय प्रशासन की राजभाषा (२०-२४)

२०. केन्द्र में प्रयुक्त हिन्दी

आयोग को भारत के संविधान का हिन्दी और क्षेत्रीय भाषाओं में अनुवाद तैयार करने का काम भी सौंपा गया है। संविधान का अद्यतन हिन्दी अनुवाद तैयार किया गया था, परन्तु हिन्दी में संविधान का प्राधिकृत पाठ जारी करने में सम्बन्धित कुछ मुख्य कानूनी और संवैधानिक प्रश्न उपस्थित हो जाने के कारण उस पर आगे कारंवाई नहीं की जा सकी। तथापि भारत की स्वतन्त्रता की पच्चीसवीं वर्षगांठ की स्मृति में हिन्दी में संविधान का अद्यतन अनुवाद २६ जनवरी, १९७३ को प्रकाशित किया गया था।[३१]

---

२८. के. जी. बालकृष्ण पिल्ले : भाषा (त्रैमासिक) : दिसम्बर, १९६९, पृष्ठ १९७.

२९. प्रो. अन्नकानेश गोड़क । सा. प. भाषा -समस्या : पृ. १०५

३०. सिन्धी भाषा के प्रमुख दैनिक "हिन्दुस्तान" १५ दिसम्बर, १९६७ से : (सा. प. भा. स. वि.) : पृष्ठ १८५

३१. वार्षिक मूल्यांकन रिपोर्ट, १९७२-७३ : गृहमन्त्रालय : २७

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

२१. प्रशासन की भाषा, हिन्दी

हिन्दी के प्रशासन की भाषा के रूप से सम्बन्धित पहलुओं पर विचार करते समय प्रशासन को बहुरँगी कार्यकलाप को ध्यान में रखना बहुत ही आवश्यक है। भारतवर्ष में आज प्रशासन को न केवल परम्परागत प्रशासन के कार्यों को देखना पड़ता है, बल्कि उसे वाणिज्यिक, औद्योगिक, वैज्ञानिक तथा चिकित्सा आदि क्षेत्रों में भी व्यवस्था करनी पड़ती है। आज यदि उद्योग-मन्त्रालय, भारतीय-उद्योग के विविध क्षेत्रों में अपनी प्रशासनिक कुशलता का परिचय दे रहा है तो कृषि-मन्त्रालय, कृषि की नयी-नयी तकनिकों के उपयोग द्वारा कृषि का उत्पादन बढ़ाने में प्रयत्नशील है। इसी प्रकार यदि स्वास्थ्य-मन्त्रालय चिकित्सा के क्षेत्र में अनगिणत प्रयोग कर रहा है तो परमाणु ऊर्जा विभाग परमाणविक अनुसन्धान और उनके कल्याणकारी प्रयोगों में व्यस्त है। इस प्रकार आज का प्रशासन अनेक लोकोपयोगी कार्यों में लगा हुआ है।[३२]

२२. कानून की भाषा, हिन्दी

विधि की भाषा की विशिष्टताएँ, उसके लक्ष्य के अनुरूप ही होती है। साहित्य और विधि की भाषा में कोई समानता नहीं है। प्रारूपकार का उद्देश्य होता है कि उसके प्रारूप का एक ही अर्थ निकले और उसके उद्देश्य के अनुसार एक-सा अनुपालन किया जाए। प्रारूपकार का ध्यान परिणाम पर केन्द्रित होता है, भाषा के गठन या अलंकारों पर नहीं। प्रारूपकार का यह प्रयास होता है कि कुछ भी विवक्षित न रहे, सभी अभिव्यक्त और सन्देह से परे हो। विधि में एक ही बात को अनेक बार, अनेक स्थानों पर कहना आवश्यक हो जाता है। साहित्य के क्षेत्र में यह दोष माना जाएगा किन्तु विधि में नहीं। विधि के क्षेत्र में एक शब्द का एक ही अर्थ होना चाहिए। साहित्य में श्लेष अलंकार है किन्तु विधि में वह दोष हो जाएगा।[३३]

२३. शिक्षा का माध्यम, हिन्दी

हमारी भाषायी समस्याओं के अन्तः संघर्ष के पांच कारण हैं— (१) प्रौद्योगिक-आर्थिक उन्नति की योजनाओं के साथ-ही-साथ भाषा-परिवर्तन का आयोजन अर्थात् स्तरीय तकनीकी जनशक्ति को कायम रखते हुए प्रशिक्षण के माध्यम में परिवर्तन। (२) प्रजातन्त्र में जन-सामान्य का वर्चस्व हो जाने के कारण उसके द्वारा अपने सीमित भाषायी साधनों से पाश्चात्य वैज्ञानिक उपलब्धियों को प्राप्त करने का आग्रह, जबकि जन-सामान्य का एक ही भाषा-क्षेत्र में भाषा-भौगोलिक वितरण विभिन्न है जिसके कारण सूक्ष्म कल्पनाओं को एक ही सर्वमान्य शब्द से व्यक्त करने के लिए संस्कृत की सहायता लेने की जरूरत पड़ जाती है। (३) वैज्ञानिक-तकनीकी शिक्षित-वर्ग का अपनी भाषाओं का अपर्याप्त ज्ञान, साथ ही वैज्ञानिक अँग्रेजी के ऐतिहासिक विकास की सीढ़ियों से अपरिचय। (४) भाषा की समृद्धि में साहित्यिक-दार्शनिक पदावली पर केन्द्रित ध्यान और इसी साहित्य को भाषा की शक्ति का

---

३२. सुधाकर द्विवेदी : प्रशासन की भाषा : वि हि. स. वि. : पृ. ११७

३३. ब्रजकिशोर शर्मा : विधि और विधायी कार्यों की भाषा : वि. हि. स. : पृ १२४.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

साहित्य मानना; इस कारण अन्य क्षेत्र के साहित्यिक को वह सम्मान नहीं मिला जो मिलना चाहिए इससे वहाँ की भाषा का सहवर्ती विकास नहीं हुआ। (५) परिवर्तन का संक्रान्ति काल और दृढ़ इच्छा शक्ति और बड़े परिमाण में प्रत्येक्ष कर्म का अभाव।

इन कठिनाइयों के बावजूद भारतीय भाषाओं में पिछले तीन दशकों में काफी प्रगति हुई है। इस अवसर पर उसका संक्षिप्त लेखाजोखा करना उचित होगा। [३४]

२५. महामहिम उपराष्ट्रपति श्री बी. डी. जत्ती.

राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय संदर्भ में हिन्दी की उपलब्धियां एवं संभावनाओं पर आज बड़े विस्तार से विचार हुआ, बहुत से मूल्यवान सुझाव रखे गये, कुछ प्रस्ताव पारित हुए तथा घोषणाएँ की गईं। मुझे पूरी आशा है कि हिन्दी को उसका परिष्कृत स्थान प्रदान करने के लिए आप सबके सतत प्रयत्न और निष्ठापूर्ण प्रयास तथा सद्भावना सार्थक होंगे। भारत में सरकारी क्षेत्र में इस दिशा में जो भी कार्य किया जा रहा है, उसको एक व्यापक रूप तो आपके सहयोग के बिना नहीं दिया जा सकता। इसी मंतव्य से हमारे देश में यह कार्यभार ऐच्छिक संस्थाओं ने भी वहन किया है। इस विश्व-हिन्दी सम्मेलन के आयोजन का श्रेय गांधी जी की प्रेरणा तथा आशीर्वाद से स्थापित राष्ट्रभाषा-प्रचार समिति, वर्धा को प्राप्त है। राष्ट्रसंघ, पी. ई. एन., विश्व तमिल कांग्रेस, विश्व तेलुगू परिषद, सोवियत संघ संयुक्त राज्य अमेरिका, इंग्लैण्ड, इटली स्वीडन पोलैण्ड, चैकोस्लाकिया, पूर्व एवं पश्चिम जर्मनी, जापान, थाईलैण्ड, बंगलादेश, मारीशस, त्रिनिडाड, फीजी इत्यादि देशों के सहयोग से यह विशाल समारोह एक आत्मीयता के वातावरण में सम्पन्न हुआ है। हम आपकी भावनापूर्ण योगदान के लिए आप सबको धन्यवाद देते हैं। [३५]

०८.०६४. जनता की सम्पर्क भाषा, हिन्दी (२६–२८)

२६. आचार्यश्री विनोबा की हिन्दी.

विश्व-हिन्दी के साथ-साथ 'विश्व-नागरी' भी चले। इश काम में देर करने की आवश्यकता नहीं है। कुछ लोगों का विचार है कि इस दिशा में हमको धीरे-धीरे आगे बढ़ना होगा, जिससे कुछ भय मालूम न हो। मैं ऐसा नहीं मानता। देवनागरी लिपि न मानी जाए। वह 'संस्कृत लिपि' है-ऐसा माना जाए। संस्कृत, मराठी, हिन्दी, पाली, मागधी, अर्धमागधी, नेपाली-इन सभी भाषाओं की लिपि देवनागरी है। जब संस्कृत विश्वभाषा बनने की योग्यता रखती है, तो उसकी लिपि देवनागरी को 'विश्व-नागरी' के रूप में फैलाने में किसी बाधा का भय क्यों होना चाहिए ? [३६]

---

३४. डॉ. गोपाल शर्मा, 'ज्ञान-विज्ञान का माध्यम' वि. हि. स. : पृष्ठ १३१

३५. महामहिम उप-राष्ट्रपति श्री बी. डी. जत्ती; अध्यक्षीय भाषण : वि. हि. स. : पृ १४३

३६. विश्व हिन्दी सम्मेलन का प्रतिवेदन, १९७५ पृ. ७९.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

२७. प्राध्यापकीय भाषा

हिन्दी तथा हिन्दीतरभाषी क्षेत्रों में जिस रूप में हिन्दी-शिक्षण का कार्य चल रहा है; उसे और तीव्र गति से आगे बढ़ाने के लिए यह आवश्यक है कि हम हिन्दी-शिक्षण-पद्धति को वैज्ञानिक बनाएँ और भाषा-विज्ञान की सहायता से विश्व में द्वितीय भाषा-शिक्षण के लिए जो भी नवीन पद्धति आविष्कृत हुई है उसे उपयोग में लायें । यह कार्य तीन भागों में विभक्त किया जा सकता है-(१) एक तो हिमाचल प्रदेश, हरियाणा, दिल्ली, राजस्थान, उत्तरप्रदेश, बिहार एवं मध्यप्रदेश आदि हिन्दीभाषी राज्यों में जहाँ शिक्षा का माध्यम हिन्दी है, इसके शिक्षण की व्यवस्था वहाँ की प्रचलित बोलियों और हिन्दी के अध्ययन की तुलनात्मक पद्धति द्वारा सम्पन्न की जा सकती है । इन क्षेत्रों के अतिरिक्त पंजाबी, कश्मीरी, सिन्धी एवं उर्दू भाषी क्षेत्रों के लोगों को भी इसी पद्धति से हिन्दी की शिक्षा दी जा सकती है। (२) इस कार्य के दूसरे भाग के अन्तर्गत गुजराती, मराठी, उड़िया, बंगला एवं असमिया-भाषी लोगों के हिन्दी-शिक्षण की बात आती है। ऊपर की तरह इनका भी हिन्दी भाषा के साथ तुलनात्मक अध्ययन होना चाहिए। (३) रे भाग के अन्तर्गत दक्षिण की तमिल, तेलुगू, मलयालम एवं कन्नड़ भाषाएँ आती हैं। हिन्दी और इन भाषाओं के तुलनात्मक व्याकरण एवं कोष की रचना ऊपर की भाँति ही आवश्यक है। जहाँ उच्चारण, व्याकरण, एवं लिपि तीनों के क्षेत्रों में कठिनाइयाँ हैं, किन्तु हिन्दी के साथ संबंधित भाषाओं की तुलनात्मक सामग्री तैयार हो जाने पर ये कठिनाइयाँ भी दूर की जा सकती हैं। [१७]

२८, जन-संचार की भाषा हिन्दी

सबसे पहला हिन्दी-पत्र किसी हिन्दीभाषी क्षेत्र से न निकलकर कलकत्ते से प्रकाशित हुआ । यह था 'उदन्त मार्तण्ड' जो ३० मई, १८२६ को श्री युगलकिशोर शुक्ल ने प्रकाशित किया था । यह पत्र डेढ़ वर्ष चला और इसके बाल कलकत्ते के जिन अन्य हिन्दी पत्रों का हमें उल्लेख मिलता है उनमें सबसे पहला 'बंगदूत' है। राजा राममोहनराय, श्री आर. एम. मार्टिन, दीवान द्वारकानाथ ठाकुर, श्री राजकृष्णसिंह और बाबा राधानाम मिश्र ने मिलकर यह पत्र निकाला था और इसका पहला अंक १० मई, १८२९ को निकला था। इस पत्र के साथ-ही-साथ अँग्रेज़ी और बंगला का पत्र भी निकलता था और बहिन्दीभाषियों द्वारा हिन्दी-पत्र निकालने की यह परम्परा बराबर जारी रही। उत्तरप्रदेश में हिन्दी के दो पत्र सबसे पहले प्रकाशित हुए। पहला—'बनारस अखबार' था, जो १८४५ में निकला। उसके सम्पादक श्री गोविन्द रघुनाथ थत्ते थे। दूसरा—'सुधारकर' १८५० में निकला जिसके सम्पादक श्री तारामोहन मैत्र थे। इसी तरह कलकत्ता से 'जगतदीपक भास्कर' व 'ज्ञानदीप' निकलता था और १८४६ में मार्तण्ड नाम का साप्ताहिक-पत्र निकलता था। एक ही पृष्ठ

---

१७. डॉ. उदयनारायण तिवारी : भाषा-शिक्षण और सहायक सामग्री, बि. हिं. स., पृ. १३७-१३८।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

पर अँग्रेज़ी, हिन्दी, फ़ारसी, बंगला और उर्दू में यह पत्र निकलता था। इन सब पत्रों के संचालक सम्पादक हिन्दीभाषी नहीं थे। [३८]

०८.७६५ विदेशों में भाषा–हिन्दी

२९. इटली की हिन्दी

इन पंक्तियों के लेखक ने दिल्ली में (तब के) एक प्रतिष्ठित मन्त्रीजी से इस बात की शिकायत की थी कि विदेश में हमारे सांस्कृतिक प्रतिनिधि बहुत अच्छे ढँग का काम नहीं कर रहे—और इसका एकमात्र इलाज यही था कि इन सांस्कृतिक अफसरों को सरकार अँग्रेज़ी के सिवाय दूसरी योरोपीय भाषाएँ सीखने को 'बाध्य' करे। उदाहरण के लिये मैंने उस सरकारी उदाहरण का उल्लेख किया था कि जिन दो इटालवी लेखकों को भारत सरकार का 'मेहमान' बनाकर भारत बुलाया गया था, उन्होंने स्वदेण लौटकर भारत के बारे में दो वेहद बुरी पुस्तकें लिखीं। मन्त्रीजी हैरान होकर मुझसे कहने लगे 'आपका कहना ठीक है पर बताइए, हम क्या करें ? विदेण में बैठे ये लोग हमारे कान और आँखें हैं। 'मैंने हँसते हुये कहा'; यदि मेरी आँख या कान में कुछ खराबी आ जाये, तो मैं तुरन्त डॉक्टर के पास जाऊँगा। आप भी यह क्यों नहीं करते ?' [३९]

30. रूसी–हिन्दी

सोवियत प्रतिनिधि मण्डल के नेता डॉ. चेलिशेव ने रूस और भारत की भाषायी समस्याओं में समानता स्थापित करते हुए कहा–हिन्दी भारत की महान और समृद्ध भाषा है और वह उच्च स्तरीय ज्ञान–विज्ञान और अनुसंधान के माध्यम के रूप में भारतीय जनता की आवश्यकताओं को पूर्ण करने में सर्वथा समर्थ है। संस्कृत भाषा के अपार शब्द-भण्डार के कारण वह सूक्ष्म अभिव्यक्तियों और संकल्पनाओं को भी पूर्ण यथार्थता और स्पष्टता के साथ व्यक्त कर सकती है। इसके अतिरिक्त ज्ञान-विज्ञान और टेक्नालाजी को साधारण जनता तक पहुंचाने में भी सक्षम है। अँग्रेज़ी जब तक ज्ञान–विज्ञान के विषयों की शिक्षा का माध्यम रहेगी, तब तक ज्ञान–विज्ञान का आम लोगों में प्रचार नहीं हो सकेगा और इस क्षेत्र में मौलिक चिन्तन-लेखन को प्रोत्साहन नहीं मिलेगा। भारतीयों के अँग्रेज़ी मोह पर खिन्नता प्रकट करते हुए डॉ. चैलिशेव ने आगे कहा कि हिन्दी के असन्तोषजनक विकास का सबसे बड़ा कारण अँग्रेज़ी–मोह संकल्प का अभाव ही रहा है। [४०]

३१. मॉरीशस की हिन्दी

---

३८. जगदीशप्रसाद चतुर्वेदी : वि. भा. की चेतना : भारत और हिन्दी : वि. हि. स, पृ. १११।

३९. लक्ष्मणप्रसाद मिश्र, राष्ट्रभाषा-हिन्दी : साहित्य-परिचय, भाषा-समस्या, वि. अ., पृ.३७

४०. वि. हि. स. प्रतिवेदन ७५। पृ. ५१.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

भारत और दूसरे देशों के लिए जो इस सम्मेलन में भाग ले रहे हैं, यह एक ऐतिहासिक दिन है। इस अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन की महानता इस बात से स्पष्ट है कि आज यहाँ बहुत से हिन्दी-प्रेमी देश उपस्थित हैं। आज हमारे बीच सोवियत संघ, अमरीका, कनाड़ा, जापान, बंगलादेश, इटली, श्रीलंका, फीजी, त्रिनिडाड आदि के लेखक और विद्वान मौजूद हैं और सबसे महत्वपूर्ण हैं प्रधानमन्त्री श्रीमती इंदिरा गांधी।

मॉरीशस के भारत-प्रेम का परिचय देते हुए उन्होंने बताया कि किस प्रकार हमारे बाप-दादा डेढ़ सौ वर्ष पहले मजदूर के रूप में मॉरीशस आए और पथरीली ज़मीन को समतल बनाकर उन्होंने गन्ने की खेती की, जबकि उन्हें जीवन की मामूली सुविधाएँ भी प्राप्त नहीं थी। बहुत से लोग पढ़े-लिखे भी नहीं थे। हजारों मील दूर अपनी मातृभूमि से अलग होकर उन्होंने एक नया संसार बसाया।[४१]

३२. यूनेस्को की-हिन्दी

यूनेस्को ने शिक्षा, विज्ञान, संस्कृति तथा अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टि से महत्वपूर्ण प्रकाशनों का हिन्दी अनुवाद करवाकर शिक्षकों, विद्यार्थियों, पुस्तकालयों, लेखकों, कलाकारों एवं विशेषज्ञों को विश्व-ज्ञान का लाभ पहुँचाया है। अब तक ३६ तकनीकी अध्ययन की पुस्तकों का अनुवाद कराकर प्रकाशन किया गया है तथा यूनेस्को की १५ अन्य पुस्तकों का हिन्दी में अनुवाद किया जा रहा है। १९६७ से 'यूनेस्को-केरियर' जो यूनेस्को द्वारा प्रकाशित मासिक पत्रिका है, का हिन्दी संस्करण भी निकाला जा रहा है। यह पत्रिका अब भारत तथा अन्य देशों के अनेकों हिन्दी पाठकों तक पहुँचाई जाती है।[४२]

०८.०६६ राजभाषा हिन्दी का आदर्श रूप :-

स्वतन्त्रता-प्राप्ति के बाद हम यथार्थ की भूमि पर उतरे। इसके पहले हम स्वप्नों की दुनिया में विचरते थे। हिन्दी-सेवकों की यह धारणा थी कि हिन्दी के राजभाषा स्वीकृत होने के साथ-ही-साथ हिन्दी अपना गौरवमय स्थान तुरन्त ग्रहण कर लेगी और उसका साहित्य देखते-देखते समृद्ध हो जायेगा, पर ऐसा हुआ नहीं। वास्तविकता की दुनिया में अप्रत्याशित बाधाएँ खड़ी हुई। स्वभावतः हिन्दी के पुराने सेवकों के मन में झुंझलाहट पैदा हुई और एक बड़ी प्रतिक्रिया यह हुई कि अँग्रेज़ी का पक्ष दृढ़तापूर्वक स्थापित हो गया। दूसरी प्रतिक्रिया हुई है, अनेक स्वीकृति-अस्वीकृत भाषाओं ने सिर उठाया। अगर ध्यान से इस समस्या पर विचार किया जाए तो दोनों में से एक भी ऐसी नहीं जिससे चिन्तित हुआ जाए। ये दोनों ही प्रतिक्रियाएँ हिन्दी की शक्ति की द्योतक हैं।[४३]

उक्त उदाहरणों से यह स्पष्ट हो जाता है कि केन्द्रीय हिन्दी के राजभाषाई रूप निर्माण में हिन्दी की प्रादेशिक बोलियाँ, भारत की भाषाएँ, भारत का केन्द्रीय प्रशासन और विदेशी भाषाएँ योग दे रहीं हैं तथा हिन्दी को सार्वदेशिक भाषा के रूप में विकसित

---

४१. वि. हि. स. : प्रतिवेदन : पृ. १४-१५.
४२. श्री अशर डिलियान- यूनेस्को की ओर से शुभकामनाएँ : वि. हि. स. वि. : पृ १०२
४३. आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी : स्व. र. ज. अ. ग्र. : पृष्ठ ७२३.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

कर रहीं हैं। वह भारत सरकार की कार्यपालिका, न्यायपालिका और विधायिका के विचारों की अभिव्यक्ति का समर्थ माध्यम बन गई है। उसके २ स्वरूप स्पष्ट हैं। हिन्दी-भाषी राज्यों में वह प्रादेशिक भाषा है जबकि भारत संघ के प्रायोजनों के लिए वह सार्वदेशिक भाषा है। इस रूप में वह विविध मन्त्रालयों की प्रशासनिक भाषा, शिक्षण की भाषा, कानून निर्माण की भाषा, अदालतों की भाषा और प्रसारण की भाषा के विविध रूपों में प्रचलित है। हिन्दी का यह स्वरूप विकसित भाषा का सक्षम रूप है और इसी के कारण यह विश्वभाषाओं में प्रमुख स्थान पाने की अधिकारिणी हो गई है।

०८.०७ हिन्दी की समस्याओं का समाधान :-

हिन्दी के इस व्यापक, समर्थ रूप को देखकर कुछ लोगों ने इसका विरोध किया और कुछ ने समर्थन। विरोध दो दिशाओं से हुआ — एक दिशा थी देश और दूसरी दिशा है, विदेश। देश में हिन्दी का विरोध करने वाले अँग्रेज़ी के पक्षधर थे। उच्च प्रशासनिक सेवाओं में नियुक्त अखिल भारतीय सेवा के अधिकारियों ने मनोवैज्ञानिक उच्चता बनाये रखने के लिए, अँग्रेज़ी का समर्थन और हिन्दी का विरोध किया। इनको प्रेरणा और प्रश्रय दिया उन राजनेताओं ने जो संविधान-निर्माण काल में हिन्दी को राजभाषा बनाये जाने के पक्ष में नहीं थे। नेहरूजी, राजाजी, मौलाना आज़ाद, के एम. मुंशी आदि मनीषियों ने अपनी प्रतिभा का उपयोग हिन्दी विरोध में किया। प्रधानमन्त्री के रूप में लोकतंत्रीय दृष्टिकोण को बनाये रखने के लिये यद्यपि नेहरूजी ने हिन्दी के विकास के लिये समय-समय पर घोषणाएँ की किन्तु उनका कार्यान्वियन न हो सका और इसमें बाधक बने उच्च वर्ग के अधिकारी। जिन अधिकारियों ने हिन्दी समर्थन का स्वांग रचा वस्तुतः वे भी अँग्रेज़ी-शिक्षण के संस्कारों से मुक्त नहीं हैं। इसलिए इन सबके संकेतों पर पूँजीवादी और सामन्तवादी प्रतिष्ठानों द्वारा संचालित एकाधिकार के समाचार-पत्रों ने हिन्दी-विरोध का स्वर प्रखर किया। यहीं प्रान्तीय भाषाओं को उकसाया गया और बंगाली; तमिल तथा पंजाबी के द्वारा हिन्दी का विरोध कराया गया। उग्र भाषावाद के प्रबल प्रतिरोध से कतिपय राज्यों में हिन्दी विकास रुका पड़ा है। विदेशों की ओर से जो विरोध हुआ वह भी आर्थिक, बौद्धिक और विस्तारवादी नीति के कारण हुआ। आर्थिक इसलिए कि विदेशों की अँग्रेज़ी पुस्तकें बिकने से अँग्रेज़ी लेखकों, विदेशी व्यापारियों और विदेशी राष्ट्रों को आर्थिक लाभ होगा। इन पुस्तकों के पढ़ने से विदेशों की विचारधारा, भारतीय जनमानस में प्रसारित होगी जिससे देशी विचार मंद होंगे और आधुनिकता के नाम पर उधार लिये हुए विचार प्रखर बनेंगे। इस कारण भारतीय बुद्धिवादियों में अपने धर्म, देश, संस्कृति और भाषा के प्रति अनास्था जागृत होगी। यही अनास्था उन्हें बौद्धिक गुलाम बनाएगी। इसी दृष्टिकोण से अँग्रेज़ी समर्थकों ने हिन्दी का विरोध किया है।

हिन्दी का समर्थन करने वाले और 'हिन्दी-चलाओ' का नारा देने वाले लोग संस्कारवादी भारतीय हैं। ये लोग भारतीय संस्कृति के प्रभाव से स्वदेशी-भाषा का प्रयोग कर रहे हैं। तिलक, गांधी और सुभाषचन्द्र बोस की परम्परा को आगे बढ़ाने वाले,

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

पुरुषोत्तमदास टण्डन, सेठ गोविन्ददास तथा रामधारीसिंह 'दिनकर' ने हिन्दी के पक्ष का समर्थन किया है और जो लोग इसका विरोध कर रहे थे उन्हें हिन्दी का व्यापक दृष्टिकोण समझाने की चेष्टा की है। सुनीतिकुमार चटर्जी और हिन्दुस्तानी के प्रबल समर्थक राष्ट्रपति जाकिर हुसैन को इन लोगों ने अँग्रेज़ी के मोह से मुक्त किया तथा हिन्दी के पक्ष का प्रतिपादन किया है। भारत की राजनीति; सामाजिक, सांस्कृतिक; शैक्षणिक और सार्वजनिक जीवन पद्धति को अग्रसर करने वाली हिन्दी का विरोध न तो प्रादेशिक भाषाओं से है और न किसी विदेशी भाषा से। वह तो सहयोग की वाणी से, अपने देश में, अपना राज चाहती है। इसलिए इसके समर्थन में जनता का बहुत बड़ा भाग कार्य करता रहा है।

स्वतन्त्रता के पूर्व राष्ट्रध्वज, राष्ट्रगीत और राष्ट्रभाषा के 'त्रेत' का जो सम्मान था, उसे उत्तराधिकारी के रूप में हिन्दुस्तानी के माध्यम से हिन्दी ने प्राप्त किया है। पूरे भारत के लोग इसे एक छोर से दूसरे छोर तक यदि बोल नहीं सकते, लिख नहीं सकते, तो समझ तो अवश्य लेते हैं। इसलिए इसके प्रति सबका अपनत्वभाव विद्यमान है। साधारण जनता के मध्य भावों को परस्पर समझाने वाले माध्यम के रूप में हिन्दी जनता और प्रशासन के मध्य एक कड़ी है। वह हिन्दी-पंजाबी, हिन्दी-मराठी, हिन्दी-कश्मीरी, हिन्दी-गुजराती, हिन्दी-उड़िया, हिन्दी-बंगला, हिन्दी-असमी; हिन्दी-तमिल, हिन्दी-तेलुगू, हिन्दी-कन्नड़, हिन्दी-मलयालम और हिन्दी-नेपाली के युग्म में सम्प्रेषण की भाषा है, तो कहीं कलकतिया-हिन्दी, बम्बइया-हिन्दी, मद्रासी-हिन्दी, देहलवी-हिन्दी, के रूप प्रचलित हैं। हिन्दी का यह सार्वजनिक रूप उसे भारत की राजभाषा की मान्यता अपने आप दिला देता है।

०८.०८. राजभाषा-हिन्दी का भावी-स्वरूपः–

भारतीय संविधान के अनुच्छेद ३५१ में यह कहा गया है कि राजभाषा-हिन्दी की समृद्धि हिन्दुस्तानी और अन्य भारतीय भाषाओं के सहयोग से परिवर्तित की जाए। इस दिशा–दर्शन से लक्ष्य स्पष्ट हो गया है। जैसे ही हिन्दी विकसित होकर राजकाज के लिए सक्षम हो जाए उसी समय अँग्रेज़ी का प्रयोग बन्द कर दिया जाए याने अँग्रेज़ी का स्थान हिन्दी ले लेगी लेकिन कब लेगी, यह प्रश्न हिन्दी के विकास पर निर्भर है। तीन दशकों की यात्रा में हिन्दी ने अपनी ध्वनि-सम्पदा में अभिवृद्धि की है, शब्द भण्डार को भरा है, व्याकरणिक प्रयोगों को जनानुकूल बनाया है तथा अपनी सम्प्रेषणीयता को बोधगम्य कर लिया है। उसने आर्यभाषाओं की परम्परागत ध्वनियों को आत्मसात तो किया ही है साथ ही अरबी–फ़ारसी की क़, ख़, ग़, ज़, फ़, ध्वनियों को भी अपनाया है। इसी के साथ अँग्रेज़ी के 'ऑ' और ' ' को स्वीकार कर हिन्दी के 'काल' (समय) और अँग्रेज़ी के काल (टेलीफोन का बुलावा) में अन्तर किया है तथा 'गेराज' (कोष), 'गेराज' (मशीन सुधारने का स्थल) में भी भेद किया है। देशीभाषा की ध्वनियों में से मराठी 'ळ' और तमिल-भाषा की 'ए' और 'ओ' ध्वनियों के ह्रस्व रूप को भी अपनाया है। इससे उसकी उच्चारण-क्षमता बढ़ी है और उसकी लिपि देवनागरी इतनी समर्थ हो गई है कि वह भारत क्या विश्व की किसी भी उच्चरित ध्वनि को लिपिबद्ध कर सकती हैं। हिन्दी की यह पाचनशीलता, ध्वनि-विज्ञान के क्षेत्र में भाषाई क्रांति का बीजारोपण है।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

राजभाषा-हिन्दी की शब्द-सम्पदा चार स्रोतों से बढ़ी है। आर्यभाषाओं के शब्द उसने अपने संस्कारों से प्राप्त किए हैं। संस्कृत, पाली, प्राकृत, अपभ्रंश तथा उत्तरी भारत की देशभाषाओं में प्रचलित शब्दों का दाय देकर हिन्दी को समृद्ध बनाया है। इसी प्रकार तमिल, तेलुगू, मलियालम, कन्नड़ के शब्दों से हिन्दी ने अपनी स्थानीय आवश्यकताओं की पूर्ति की है। तीसरा स्त्रोत भारत की आदिम जातियों की भाषाओं का है। मुण्डा, भीली, गौढ़ी, कोलपु, संथाली, बोरो, नगा, खासी और जिप्सी भाषाओं से प्रचलित शब्दों को लेकर हसिया, खुरपी, मूसा जैसे सरल शब्दों का प्रयोग प्रचलित किया है। चौथे प्रकार के शब्द विदेशी हैं जो अरबी, फ़ारसी, तुर्की, पश्तो, 'उर्दू', के माध्यम से एक ओर सेतू था। अँग्रेज़ी, फ्रांसीसी, पुर्तगाली, रूसी और यूनानी दूसरी ओर से प्राप्त हुए हैं। इन विदेशी शब्दों का भण्डार आधुनिक हिन्दी में २० प्रतिशत है। यह शब्द-सम्पदा अपने आप में पूर्ण है। अन्तर्राष्ट्रीय पारिभाषिक और तकनीकी शब्दावली के बहुप्रचलित शब्दों को इसने यथातथ्य रूप में अपना लिये हैं। रूस का "स्पुतनिक", अमेरिका का "अपोलो", ब्रिटेन का "थर्मामीटर", अरबी की "किताब", पुर्तगाली की "कमीज"; डेनमार्क का "बटन"; जर्मनी का "नाज़ी", इटली का 'फासिस्ट', जापान का "तोजो" आज हिन्दी का उतना ही अपना है जितना उन देशों का।

व्याकरणिक प्रयोग के क्षेत्र में आज हमने मराठी के 'नापास' को स्वीकार कर लिया है। मलयाली और सिन्धी के प्रयोग "हारने" शब्द" को हमने उसी अर्थ में अपनाया है जिस रूप में वह भाषा अपनाती है। सिन्धी और मलयाली में "हारने" का अर्थ है अनुत्तीर्ण होना।" विद्यार्थी परीक्षा में हार गया" का अर्थ है अनुत्तीर्ण हो गया। इसी प्रकार मराठी का "च" प्रत्यय भी हमने उसी रूप में स्वीकार किया है। तुमकू आनाचा पड़ेगा" (नागपुरी–हिन्दी) या 'तुमकू ओनोच मंगता' (बंबइया–हिन्दी) जैसे प्रयोग भी बोलचाल की हिन्दी में हो रहे हैं। यदि पंजाबी-हिन्दी बोलने वाला "आपने कहाँ जांणा है" कहता है या हरियाणा के मुख्यमन्त्री 'मने की कि बैठो ना' का प्रयोग करता है तो यह भाषाई प्रयोग, भाषाई सामर्थ को बढ़ाएगा ही। इन प्रयोगों में राजभाषा–हिन्दी ने अखिल भारतीय प्रकृति के अनुरूप स्थानीय लोकोक्तियों को और मुहावरों को परिष्कृत किया है तथा उनको जनता में प्रयोग योग्य बनाया है। इस प्रवृत्ति से हिन्दी में जो लचीलापन आया है और वह भारतीय संविधान की कल्पना के अनुकूल है। भाषा का दृष्टिकोण अपने आपको दुरूह बनाना नहीं है किन्तु जन–सुलभ करना है। यही कारण है कि राजभाषा–हिन्दी ने अपना लक्ष्य निर्धारित कर लिया है और वह जनता के बीच में, जनता की भाषा बनकर, जन–जीवन में परस्पर सहयोग के सम्प्रेषण की सशक्त माध्यम बनी रहना चाहती है। इस दृष्टि से हिन्दी केन्द्रीय शासन के समस्त प्रयोजनों के लिये वह भाषा होगी जो भारत की सभी भाषाओं के सहयोग से अँग्रेज़ी का स्थान ले लेगी। हिन्दी का यह सार्वदेशिक रूप है।

०८.०९. उपलब्धियाँ :–

राजभाषा–हिन्दी का स्वरूप जब स्पष्ट है कि हिन्दी अन्तर्राज्यीय व्यवहार के लिये संचार की भाषा होगी और अँग्रेज़ी के हटने के बाद प्रादेशिक भाषाओं की सहयोगिनी होगी

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

तब इसके सर्वव्यापी होने का भ्रम निर्मूल है। बात स्पष्ट है, आज जहाँ–जहाँ अँग्रेज़ी है वहाँ-वहाँ हिन्दी होगी, किन्तु हिन्दी, अँग्रेज़ी को सह-भाषा मानकर उसके साथ वैसा ही व्यवहार करेगा जैसे कि वह भारतीय प्रादेशिक भाषाओं के साथ करती है। हिन्दी ने अपने रूप-विकास में एक बोली से विकसित होकर राजभाषा का पद पाया है अब वह इतनी समर्थ हो गई है कि अँग्रेज़ी का स्थान सरलता से ग्रहण कर सकती है। वह उस प्रादेशिक हिन्दी से भिन्न है जो विभिन्न हिन्दी-प्रदेशों में प्रचलित है। इसीलिए प्रस्तुत शोध में प्रादेशिक हिन्दी को राज्य-भाषा और अखिल भारतीय हिन्दी को राजभाषा का नाम दिया गया है। हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, दिल्ली, राजस्थान, मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश और बिहार के राज्यों में जो हिन्दी है वह राज्यभाषा है जबकि केन्द्रीय सरकार द्वारा व्यवहृत सार्वदेशिक हिन्दी राजभाषा है। यह राजभाषा देवनागरी–लिपि में लिखी होनी चाहिए, रोमन अक्षरों में नहीं। इसलिए उसने अपनी पहचान और अपना अस्तित्व पूर्णतः स्वतन्त्र बना लिया है। वह देवनागरी लिपि वाली हिन्दी है जिसका प्रयोग भारत के नागरिक सरकारी कामकाज के लिये करते हैं।

इसने अपने अभावों को दूर कर लिया है। २६ जनवरी, १९५० में जब यह राजभाषा बनी तब यह जनता की बोलचाल की भाषा थी। उस समय इसमें न तो प्रामाणिक शब्दावली थी और न प्रामाणिक राजकार्य का साहित्य। ३१ वर्षों के सतत् प्रयास से इसने अपनी दुर्बलताओं को दूर कर लिया है और यह अँग्रेज़ी का स्थान लेती जा रही है। २६ जनवरी; सन् १९६५ ई. से सांविधानिक दृष्टि से हिन्दी राजभाषा है और अंग्रेज़ी केन्द्र की सह–राज–भाषा है। यह स्थिति केन्द्र ने सन् १९६७ के राजभाषा संशोधन अधिनियम के द्वारा निर्मित की है। यह संशोधन हिन्दी के बढ़ते चरणों में बाधक हुआ है और इसने दुहरा शासन के दोषों को उत्पन्न कर दिया है। इसके कारण अंग्रेज़ी का प्रयोग राजकाज में अविश्चित काल तक होता रहेगा। हिन्दी समृद्ध और समर्थ होने पर भी हिन्दी का उसका अपना स्थान नहीं ले पाएगीं। इस समस्या का एक मात्र हल प्रादेशिक भाषाओं का प्रयोग है जो स्वभाव–प्रेम के कारण प्रान्त–विशेष स्वीकार कर लेंगे और जब प्रान्तीय भाषाएँ राजकीय प्रयोग में आने लगेगी तब परस्पर सम्पर्क के लिए हिन्दी स्वयमेव संयोजक कड़ी बन जाएगी। यह एक ऐसा पहलू है जो सन् १९६७ के राजभाषा संशोधन अधिनियम की बुराई को निरस्त कर सकेगा।

राजभाषा-हिन्दी ने विरोधों के मध्य सहनशीलता का परिचय दिया है। एक ओर तो वह स्वयं विकसित होती रही है और दूसरी ओर अँग्रेज़ी तथा देशीभाषाओं के विरोध को उदारता से सहती रही है। यह उसकी गतिशीलता है। उसने अपने आपको, विविध परिवेशों से शक्ति प्राप्त कर, पुष्ट किया है। उसकी यह ग्रहणशीलता और पाचन शक्ति उसे व्यापक भाषा बना देते हैं। राजभाषा के रूप में आज यदि वह एक ओर देशी भाषाओं में परस्पर विचार-विमर्श का साधन है, वहीं दूसरी ओर भारतीय दूतावासों और हिन्दी अध्ययन–केन्द्रों के द्वारा विश्व भाषाओं को अपने अस्तित्व का बोध करा रही है।

उसका स्वरूप सरल है, ध्वनियाँ सहज है, शब्द सुबोध हैं, व्याकरण लचीला है, अभिव्यक्ति व्यापक है और सम्प्रेषणीयता विश्वजनीन है। क्षण-क्षण परिवर्तित होने वाले ज्ञान-विज्ञान के कण-कण को बटोरने की क्षमता आज उसमें है। उसकी पत्र-पत्रिकाएँ, उसमें सामयिक प्रकाशन और उसका साहित्य आधुनिकता को परख-परखकर अपना रहे हैं।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

आधुनिक ज्ञान-बोध के साथ ही साथ भाषाई शुद्धता; व्यावहारिकता और कमनीयता को बनाये रखकर राजभाषा-हिन्दी जन-जन की भावनाओं को अभिव्यक्त कर रही है। वह शिक्षा के क्षेत्र में प्राथमिक स्कूलों से लेकर विश्वविद्यालयों तक, सांस्कृतिक क्षेत्र में नाटक से लेकर संगोष्ठियों तक, न्यायालयों में वाद प्रस्तुत होने से निर्णयों तक, सेनाओं में जवानों से लेकर सेनापतियों तक और जन-जीवन में मजदूर से लेकर नेताओं तक में इसकी पैठ है। इसका एकमात्र लक्ष्य है, विचारों का वहन। इन विचारों में उसका, स्वच्छ, सुन्दर, सबल और सक्षम रूप ही उसकी सामाजिकता का पोषक है। यह सामाजिकता भारतीयता लिये हुए है और भारत की सहनशीलता, विविधताओं में एकता उत्पन्न कर देती है। इसलिए राजभाषा के सर्वग्राही स्वरूप ने सभी समस्याओं का समाधान व्यापक दृष्टिकोण से किया है और अन्य समस्याओं को उत्पन्न ही नहीं होने दिया।

७८.१० महत्व :—

विश्व की तृतीय शक्ति के रूप में भारत का महत्व सर्वस्वीकृत है। इसने अपनी तटस्थ नीति से विश्व को सहनशीलता का सन्देश दिया है। इसलिए इस देश की राजभाषा भी विश्व की भाषाओं के साथ तटस्थता बरतते हुए नियमित सम्पर्क स्थापित किये हुए है। बोलने वालों की संख्या की दृष्टि से विश्व में उसका स्थान तीसरा है। इसीलिए दोनों विश्व-सम्मेलनों में इसे राष्ट्रसंघ में उचित स्थान दिलाने हेतु संकल्प पारित किए गए हैं।

भारत में राष्ट्रीय जागरणकाल से लेकर आज तक यह सामान्य जनता की भाषा रही है। इसी के माध्यम से स्वतन्त्रता आई और भारत के सभी आम चुनावों में जनसम्पर्क का सबसे बड़ा साधन यही रही है, इसलिए जनता और सरकार के मध्य सम्पर्क की कड़ी के रूप में इसका अनूठा महत्व है। इसमें साहित्यिक सम्पन्नता, लब्धप्रतिष्ठित-साहित्यकार; उपलब्धता, भाषाई लोच और प्रसारण की क्षमता अन्य भारतीय भाषाओं से अधिक है। मैथिलीशरण गुप्त, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', रामधारीसिंह 'दिनकर', हरिवंशराय 'बच्चन', शिवमंगलसिंह 'सुमन', हजारीप्रसाद द्विवेदी, महादेवी वर्मा, उपेन्द्रनाथ 'अश्क', रामकुमार वर्मा, धीरेन्द्र वर्मा, डॉ. नगेन्द्र जैसे अनेक साहित्य मनीषियों की वाणी इसी भाषा में व्यक्त हुई है। इसलिए इसने समग्र राष्ट्र को एकता के सूत्र में बांधा है।

आज हिन्दी ज्ञान-विज्ञान की, संधिविग्रह की, युद्ध और शान्ति की, उद्योग और वाणिज्य की भाषाई आवश्यकताओं को पूर्ण करती है। इसके माध्यम से उन्नत, वैज्ञानिक, इंजीनियर, कानूनदां, प्रशासक, दार्शनिक, अर्थशास्त्री, वाणिज्य विशेषज्ञ, सेना-संचालक और महान् नेता प्रतिष्ठित हुए हैं। इसलिए राजभाषा-हिन्दी सभी देशीभाषाओं को साथ लेकर भारत की संयोजिका भाषा बनी है। अपने दृश्य रूप में यह देवनागरी-लिपि को सक्षम बना रही है। इसलिए आज वह अपनी दुरूहता को छोड़कर जन-जीवन के सम्प्रसारण का समर्थ माध्यम बन गई है। ऐसी ही हिन्दी के लिये राष्ट्रसंत कबीर का क्रांतिमन्त्र है—

शब्दे मारिया मर गया, शब्दे छोड़ा राज।
जे नर शब्द पिछानिया ताका सरिया काज॥

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

नवम-अध्याय

शोध-सामग्री

ग्रन्थ-सूची

१. अंग्रेज़ी हटाओ क्यों और कैसे ? — डॉ. वेदप्रताप वैदिक; अखिल भारतीय अंग्रेज़ी हटाओ सम्मेलन, नई दिल्ली, १९७३.

२. अभिनव हिन्दी व्याकरण — ना. नागप्पा, राजपाल एण्ड संस; दिल्ली, सं. २०१८ वि.

३. अर्थतत्व की भूमिका — डॉ. शिवनाथ; नागरी-प्रचारिणी-सभा, सं. २०१८ वि.

४. आदेशों की पुस्तिका — भारत सरकार, राजभाषा प्रभाग, गृह-मन्त्रालय, १९७५.

५. ब्रजभाषा — धीरेन्द्र वर्मा, हिन्दुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद, १९५४,

६. (इण्डिया वार्षिक) — दि पब्लिकेशन्स डिविजन, १९५४.

७. इण्डियन लिंग्विस्टिक्स — सुकुमार सेन, लिंग्विसटिक सोसाइटी, ऑफ इंडिया, १९५९,

८. ए ग्रामर ऑफ दि हिन्दी लैंग्वेज — एस. एच. केलॉग, मिशन प्रेस इलाहाबाद, १९५६

९. ऋषि दयानन्द के पत्र — स. पं. भगवद्दत, सस्ता साहित्य मण्डल, दिल्ली, १९५५

१०. कांग्रेस का इतिहास — पट्टाभिसीतारामय्या, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली, १९५५

११. खड़ी-बोली का आन्दोलन — डॉ. शितिकंठ, ना. प्र. स. काशी, १९६९.

१२. खड़ी-बोली, स्वरूप और साहित्यिक परम्परा. ओंकार 'राही', लिपि प्रकाशन, दिल्ली; १९७५;

१३. ग्रामीण-हिन्दी — डॉ. धीरेन्द्र वर्मा, साहित्य भवन (प्रा). लि. इलाहाबाद-३, १९७१.

१४. ग्रामीण-हिन्दी की बोलियाँ — डॉ. हरदेव बाहरी, किताब महल, १९६६.

१५. जायसी ग्रंथावली — स. रामचन्द्र शुक्ल, ना. प्र. स. काशी, सं. २०२६ वि.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

१६. दक्खिनी हिन्दी — डॉ. बाबूराम सक्सेना, हिन्दुस्तानी अकादमी, संवत्, १९५२

१७. दी इण्डिया कांस्टिट्यूशन — ग्रानविल आस्टिन; आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, दिल्ली, १९७२

१८. दी कांस्टिट्यूशन ऑफ इण्डिया — जगदीशलाल देहली ला हाऊस, दिल्ली दिल्ली १३, १९७७.

१९. दी इंडियन कांस्टिट्यूशन — वी. आर. एस. अय्यर, वी. आर. एस. अय्यर इन्दौर, १९५५.

२०. दी ग्रामेटिकल स्ट्रक्चर आफ लेंग्वेजेस. — ज्यूल ब्लाक, दक्खन कॉलेज; पूना -६, मई, १९५४

२१. ध्वनि विचार (मराठी) — ए. जी. केलकर, दक्खन कॉलेज; पूना ६. मई, १९५५

२२. नागरी अंक और अक्षर — गौरीशंकर हीराचन्द ओझा, हि. सा. स. प्रयाग; २०११ वि. ग्यारहवां,

२३. नागरी दि कामन लिंकस्क्रिप्ट — विनोबा भावे; गांधी बुक हाउस, नई दिल्ली, १, १९७३.

२४. भारत की प्राचीन संस्कृति — रामजी उपाध्याय, किताब महल, १९४८

२५. भारत की भाषाएँ और भाषा सम्बन्धी समस्याएँ — सुनीतिकुमार चट्टोपाध्याय, इन्द्रचन्द्र नारंग हिन्दी भवन, इलाहाबाद, १९५१.

२६. भारतवाणी — इन्दिरा गांधी; भारत सरकार नई दिल्ली १९७५; जिल्द ३.

२७. भारतीय भाषाओं के साहित्य का संक्षिप्त इतिहास — संकलित, केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, भारत सरकार; १९५८

२८. भारत्त की राष्ट्रभाषा — काका कालेलकर, स्वागत समिति, हि. सा समिति, इन्दौर, १९३५,

२९. भारतीय आर्य-भाषा और संस्कृति — डॉ. सुनीतिकुमार चटर्जीन कल प्रशाकजमरा दिल्ली-६; १९६३.

३०. भारतीय प्राचीन लिपिमाला — गौ. ही. ओझा; स्काटिश मिशन अजमेर, १९१८

३१. भारतीय संस्कृति — शिवदत्त ज्ञानी, राजकमल प्रकाशन; दिल्ली-६ १९४३.

३२. भाषा एवं हिन्दी-भाषा — डॉ. सतीशकुमार रोहरा, हिन्दी प्रचारक संस्थान, वाराणसी, १९७२.

३३. भाषा-शिक्षण तथा भाषा-विज्ञान. :— ब्रजेश्वर वर्मा, केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा, १९६९;

३४. भाषा — जो वान्द्रियंज (अनु.) हिन्दी; समिति सूचना विभाग, लखनऊ; १९६६.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

३५. भाषा और संवेदना — रामस्वरूप चतुर्वेदी, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, १९६४.

३६. भाषालोचन — आ. सीताराम चतुर्वेदी हिन्दी साहित्य कुटीर, बनारस–१, सं. २०१० वि.

३७. भाषा भूगोल — डॉ. कैलाशचन्द्र भाटिया, हि. सा. उत्तरप्रदेश, लखनऊ, १९७३.

३८. भाषा–विज्ञान — मैक्समूलर, अनु.–डा. उदयनारायण तिवारी, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली–७, १९७०.

३९. भावात्मक एकता — डॉ. ओमप्रकाश शास्त्री, सन्मार्ग प्रकाशन, दिल्ली, १९७४.

४०. भाषा-विज्ञान कोश — डॉ. भो. नाथ तिवारी, ज्ञानमण्डल, लि., वाराणसी, सं. २०२०. वि.

४१. भाषा-विज्ञान के सिद्धान्त और हिन्दी-भाषा -- डॉ. द्वारिकाप्रसाद सक्सेना, मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ; दिल्ली, १९७२.

४२. मद्दयानन्द प्रकाश — स्वामी सत्यानन्द, आर्य-समाज, दिल्ली, २०१८ वि.

४३. महर्षि दयानन्द सरस्वती का जीवन चरित. — देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय, अनु. पं. घासीराम आर्य सा. मंडल अजमेर, सं. १९९० वि.

४४. माडर्न लिंग्विस्टिक्स — सीमन पाटर, एण्डर डी. लि. १३–१४, कार्लेलिली, स्ट्रीट, लंदन, १९५५.

४५. राजभाषा-हिन्दी — सेठ गोविन्ददास, हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग, १९६५.

४६. राष्ट्रभाषा की कुछ समस्याएँ — नन्ददुलारे वाजपेयी (राजपाल एण्ड संस) नई दिल्ली, १९६२.

४७. राजर्षि अभिनन्दन ग्रंथ — विजयेन्द्र स्नातक व गोपाल व्यास, प्रादेशिक हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, दिल्ली १९६०.

४८. राष्ट्रभाषा का इतिहास — किशोरीदास वाजपेयी, जनवाणी प्रकाशन, सं. २००७ वि.

४९. राष्ट्रभाषा हिन्दी का स्वरूप विधान — डॉ. रामेश्वर मिश्र, भारतीय ग्रंथ निकेतन, दि. १९७५.

५०. राष्ट्रभाषा हिन्दी : समस्याएँ और समाधान — डॉ. देवेन्द्रनाथ शर्मा, राजकमल प्रकाशन, १९६५.

५१. राष्ट्रभाषा और राष्ट्रीयभाषा — रामधारीसिंह 'दिनकर', अजन्ता प्रेस, पटना–४, १९५६.

५२. राष्ट्रभाषा विचार संग्रह — प्रा. नं. चि. जोगलेकर, ६२४ सदाशिवपेठ पुणे–२, १९५४.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

५३. लिपि-विकास — राममूर्ति मेहरोत्रा, साहित्यरत्न भण्डार, आगरा, १९५०.

५४. लिटरेचर इन लिंग्विस्टिक्स — ओ. एल. चवरिया, दक्खन कॉलेज, पूना–६, १९५४.

५५. लिटरेचर्स इन माडर्न इंडियन लैंग्वेजेस — स. बी. के. गोकाक, सूचना तथा प्रसारण मन्त्रालय; १९५६.

५६. लैंग्वेजेस एण्ड द लिंग्विस्टिक प्राब्लम्ज़ — सुनीतिकुमार चटर्जी, आक्सफोर्ड पेम्पलेट्स १९४५.

५७. वैज्ञानिक शब्दावली में प्रक्रियात्मक रूप — डॉ. बाबूराव सक्सेना, हिन्दुस्तान अकादमी, १९५२.

५८. विल्सन फिलालॉजिकल लेक्चर्स आन लैंग्वेजेस डिलिवर्ड इन १८७७. — रामकृष्ण भण्डारकर, मेसर्स राधाबाई आत्माराम सेगोन; बाम्बे, १९१४

५९. शुद्ध हिन्दी — डॉ. हरदेव बाहरी, लो. भा. प्र., इलाहाबाद १, १९७१.

६०. संस्कृति के परिव्राजक : काका साहेब कालेलकर समर्पण ग्रंथ — रतनलाल बजोरिया, स. सा. नं. दिल्ली, १९६५

६१. सरल भाषा-विज्ञान — डॉ. मनमोहन गौतम, हिन्दी संसार; दिल्ली–६, १९५८.

६२. सामान्य भाषा-विज्ञान — डॉ. बाबूराव सक्सेना, हि. सा. स. प्रयाग; १९६७

६३. स्टेटिस्टिकल एब्स्ट्रेक्ट फार ब्रिटिश इंडिया फ्राम १९१८–१९ से १९२७–२८ — भारत सरकार, गव्हर्नमेंन्ट ऑफ इण्डिया सेन्ट्रल पब्लिकेशन, कलकत्ता, १९३०.

६४. स्वतन्त्रतापूर्व हिन्दी संघर्ष का इतिहास — स. रामगोपाल; हि. सा. स. प्रयाग, शक १८८६.

६५. स्वतन्त्रता रजत जयन्ती अभिनन्दन ग्रंथ — सं. गोपालदास व्यास, दिल्ली प्रादेशिक हिन्दी-साहित्य-१९७३

६६. हिन्दी समास रचना का अध्ययन — डॉ. रमेशचन्द्र जैन, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा; १९६४.

६७. हिन्दी-भाषा और साहित्य — श्यामसुन्दरदास; इंडियन प्रेस लिमिटेड, प्रयाग, १९१४.

६८. हिन्दी का व्याकरणिक प्रारूप — डॉ. बाबूराव सक्सेना, भारत के महारजिस्ट्रार द्वारा प्रकाशित.

६९. हिन्दी-साहित्य का इतिहास — रामचन्द्र शुक्ल, नागरी-प्रचारिणी-सभा, काशी, सं. २०१८ वि.

७०. हिन्दी की शब्द-सम्पदा — विद्यानिवास मिश्र, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, १९७२.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

७१. हिन्दी-साहित्य कोश, भाग-१-२ — धीरेन्द्र वर्मा, ज्ञान मण्डल लिमिटेड, वाराणसी, सं. २०२० वि.

७२. हिन्दी-भाषा में अक्षर तथा शब्द. — डॉ. कैलाशचन्द भाटिया, ना. प्र. स., वाराणसी, १९७२.

७३. हिन्दी-भाषा और साहित्य को आर्य-समाज की देन. — डॉ. लक्ष्मीनारायण गुप्त, आ. सा. मं. लि., अजमेर, १९५४.

७४. हिन्दी और प्रादेशिक भाषाओं का वैज्ञानिक इतिहास. — शमशेरसिंह नरूला, राजकमल प्रकाशन, १९५८.

७५. हिन्दी की तद्भव शब्दावली — डॉ. सरनामसिंह शर्मा 'अरुण', कॉलेज बुक डिपो, अजमेर, १९६८.

७६. हिन्दी का भविष्य — नर्मदेश्वर चतुर्वेदी, पूर्वांचल प्रकाशन, इलाहाबाद, १९७५.

७७. हिन्दी की वेसिक शब्दावली — डॉ. कैलाशचन्द भाटिया, अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय, अलीगढ़ १९६८.

७८. हिन्दी में प्रत्यय विचार — मुरारीलाल उप्रेति, वि. पु. मं., आगरा, १९६४.

७९. हिन्दी का व्यावहारिक रूप — विनयमोहन शर्मा, राधाकृष्ण प्रकाशन, १९=८.

८०. हिन्दी-भाषा का सामान्य ज्ञान, खण्ड—१-३. — पी. डी. शर्मा, विश्वविद्यालय, उज्जैन, प्रकाशन, वि. २०३१

८१. हिन्दी-भाषा में अक्षर तथा शब्द की सीमा. — डॉ. कैलाशचन्द भाटिया, काशी नागरी-प्रचारिणी-सभा, वाराणसी, सं. २०२७ वि.

८२. हिन्दी-भाषा का इतिहास — लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय, मैकमिलन एण्ड कम्पनी लि. कलकत्ता, १९७०.

८३. हिन्दी-भाषा सर्वेक्षण — स. डॉ. मुंशीराम शर्मा, प्रत्यूष प्रकाशन, कानपुर—१२, १९७२.

८४. हिन्दी का गद्य साहित्य — डॉ. रामचन्द्र तिवारी, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी-१, १९६८.

८५. हिन्दी-साहित्य का इतिहास — स डॉ. नगेन्द्र, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली, १९७३.

८६. हिन्दी-भाषा — डॉ. भोलानाथ तिवारी, किताब महल, इलाहाबाद, १९६६.

८७. हिन्दी—पत्रकारिता — कृष्णबिहारी मिश्र, मिश्रबन्धु कार्यालय, जबलपुर, १९६८.

८८. हिन्दी-भाषा-आन्दोलन — सं.-लक्ष्मीचंद, हि. सा. स. प्रयाग, शकाब्द १८८५.

८९. हिन्दी का राष्ट्रभाषा के रूप में विकास — डॉ. शिवराज वर्मा, आ. एण्ड सं, दिल्ली १९७०.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

९०. हिन्दी सा. एक ऐतिहासिक समीक्षा. — पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी, लो. चे. प्र.; जबलपुर १९६९.

९१. हिन्दी साहित्य का इतिहास — डॉ. राममूर्ति त्रिपाठी, मा. च. बुक डिपो, उज्जैन, १९६८.

पत्र-पत्रिकाएँ

१. कनाड़ा — कनाड़ा सरकार, उद्योग, व्यापार तथा वाणिज्य मन्त्रालय, कनाड़ा सरकार, दिसम्बर १९७५.

२. कोर्स डी. लेंग एटडि सिविलाइजेशन फ्रांकेसिस — जी. मागर, फ्रांसिस लाइब्रेरी, हैचटी, पेरिस, १९६७.

३. देवनागर (त्रैमासिक) — सं डॉ. नगेन्द्र, वात्स्यायन आर. रा. एण्ड सं., दिल्ली-६; वर्ष-२, अंक-२, २०११ वि.

४. नागरी-प्रचारिणी पत्रिका — सं. रामचन्द्र शुक्ल, का. ना. प्र. स., बनारस, जनवरी, १९१२, भाग-१६.

५. साहित्य परिचय : भाषा-समस्या विशेषांक १९६८ — सं. राजनाथ शर्मा एण्ड विनोदकुमार अग्रवाल, वि. पु. मं. आगरा-२, जनवरी-फर १९६८

६. मुक्ता (पाक्षिक) — सं. विश्वनाथ, दिल्ली प्रेस, नई दिल्ली सितम्बर (द्वितीय) १९७४.

७. वही — वही वही जुलाई (प्रथम) १९७६

८. राष्ट्रभाषा सन्देश (पाक्षिक) हि. सा. स., प्रयाग

" " ५, १२, अग., १९६५ "

" " २ सितम्बर " "

" " १६ मई १९६७ "

१६ दिसंबर १९६७, १६ मार्च तथा १ अप्रैल, १९६८, १ तथा १६ जनवरी. १९६९, १६ अक्टूबर १९६९, १६ दिसम्बर १९६९, १६ जनवरी १९७०, १६ मार्च १९७०, १ जून १९७०, १६ अगस्त १९७०, १६ सितम्बर १९७०, १६ जनवरी १९७१, १६ नवम्बर १९७२, १ व २६ जनवरी १९७३, १ फरवरी १९७३, १५ फरवरी १९७३, १ फरवरी १९७४, १५ जून १९७४, १ अप्रैल १९७५, जनवरी १९७६, १६ फरवरी १९७६, १ अप्रैल १९७६, १६ अप्रैल १९७६।

९. वीणा (मासिक) श्री मध्यभारत-हिन्दी-साहित्य-समिति, इन्दौर : मई १९३६, मार्च १९४२, जून और जुलाई १९४५, अगस्त १९४५, सितम्बर-अक्टोबर १९४५, नवम्बर १९४७, जनवरी १९४८, जून १९४८, अगस्त १९७२, अक्टूबर-नवम्बर १९७५, स्वर्ण-जयन्ती-विशेषांक १९७८,

१०. सरस्वती (मासिक) -फरवरी १९४२, जून १९४२; सं. देवीदत्त शुक्ल, इंडियन प्रेस लि., प्रयाग.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

११. विश्ववाणी (त्रैमासिक), जनवरी १९४५, अप्रैल १९४५
विश्ववाणी संस्कृति केन्द्र, इलाहाबाद,
१२. विशाल भारत (मासिक)–सं. बनारसीदास चतुर्वेदी, प्रवासी प्रेस, कलकत्ता, जुलाई–दिसम्बर १९३७.
१३. वाणी (मासिक)–सं.–गयाप्रसाद द्विवेदी 'प्रसाद', होल्कर राज्य (खरगोन) कार्तिक संवत् १९९१
१४. हरिजन, १० अगस्त १९४७
१५. हरिजन, १२, अक्टूबर १९४७
१६. लीडर, २५ मई १९४९
१७. हिन्दू, ११ अगस्त १९४९, २३ अगस्त १९४९, २७ अगस्त १९४९, ३० अगस्त १९४९, १६ और १७ सितम्बर १९४९, ३० अगस्त १९५८.
१८. हिन्दुस्तान टाइम्स (साप्ताहिक)–८ अगस्त १९४९, २७ अगस्त १९४९, नई दिल्ली.
१९. साहित्य सन्देश, जुलाई–अगस्त १९५७
२०. हिन्दुस्तानी (त्रैमासिक)-जनवरी १९३८, हिन्दुस्तान एकेडेमी, इलाहाबाद.
२१. नागरी-प्रचारिणी पत्रिका, सं. श्यामसुन्दरदास, काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा, संवत् १९९१.
२२. भारत (वार्षिक)–वार्षिकी, सूचना तथा प्रसारण मन्त्रालय, भारत सरकार, १९७६.
२३. राष्ट्रभाषा; दिसम्बर १९५७.
२४. केशरी, २ सितम्बर १९५६; ११ दिसम्बर १९५३.
२५. समीक्षा सन्दर्भ (मासिक)–मार्च १९७७.
२६. धर्मयुग (साप्ताहिक), १५ सितम्बर १९७४, नवभारत टाइम्स, दिल्ली.
२७. नई दुनिया (दैनिक) २८ फरवरी १९७६, नई दुनिया प्रेस, इन्दौर
२८. भाषा (त्रैमासिक) केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय. शिक्षा तथा समाज कल्याण मन्त्रालय, भारत सरकार, जून १९६२, सितम्बर १९६२, जून–सितम्बर १९६३, अगस्त १९६४, सितम्बर-दिसम्बर १९६९, दिसम्बर १९६६, सितम्बर, दिसम्बर १९७०, मार्च–जून १९७२, सितम्बर, दिसम्बर १९७३, मार्च–जून १९७५।
२९. सरिता (पाक्षिक), सं.–विश्वनाथ, दिल्ली प्रेस, नई दिल्ली फरवरी (प्रथम) १९७६, मार्च (द्वितीय) १९७७, जनवरी (प्रथम) १९७८.
३०. सम्मेलन पत्रिका (त्रैमासिक)–साहित्य-संस्कृति-भाषा विशेषांक, सं. ज्योतिप्रसाद मिश्र निर्मल, रामप्रताप त्रिपाठी शास्त्री, हि. सा. स, प्रयाग, भाग-५८, संख्या २, ३, ४ शक १८८४.
३१. वही वही वही, भाग ३७, संख्या १, सन् १९५० भारतेन्दु अंक.
३२. वही वही वही, भाग-३९, संख्या १ संवत् २००९.
३३. वही वही वही, भाग-५७, संख्या १, २ शक १८९३
३४. साहित्य सन्देश (भाषा-विज्ञान विशेषांक), साहित्य भंडार, आगरा, भाग–१९ अंक-१, २, जुलाई-अगस्त १९५७.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

३५. हिन्दी अनुशीलन, सं.–रामस्वरूप चतुर्वेदी, भारतीय हिन्दी परिषद, प्रयाग, वर्ष २४, अंक १, २, जनवरी से जून १९७१ तक, वर्ष २३, अंक १–४, १९७०.

३६. हिन्दी वार्षिकी १९७०, सूचना तथा प्रकाशन विभाग, नई दिल्ली–१९७०.

३७. हिन्दुस्थान वार्षिकी (१९६९-७९) सं. हरिदत्त पाठक, शिवकुमार गोयल, हिन्दुस्थान समाचार, नई दिल्ली–१, १९६९–७०.

०९.०२ वार्षिक प्रतिवेदन.

१. प्रतिवेदन, विश्व हिन्दी सम्मेलन, नागपुर (भारत, विश्व-हिन्दी-सम्मेलन की राष्ट्रीय समिति,) जनवरी १९७५.

२. मध्यप्रदेश की चतुर्थ पंचवर्षीय योजना (१९६९-७४), मध्यप्रदेश शासन योजना एवं विकास विभाग.

३. राजभाषा हिन्दी के बढ़ते चरण (१९६५-७५), भारत सरकार, राजभाषा विभाग, गृहमन्त्रालय, नई दिल्ली १९६५-७५.

४. राजभाषा-आयोग का प्रतिवेदन १९५६, भारत शासन, नई दिल्ली, १९५८ में प्रकाशित।

५. वार्षिक मूल्यांकन रिपोर्ट (१९७२-७३), भारत सरकार गृहमन्त्रालय, १९७२-७३.

०९.०३. प्रश्नावली और पत्र-व्यवहारः–

'भारत की आधुनिक राजभाषा स्वरूप और समस्याएँ' विषय पर भारत शासन के केन्द्रीय मन्त्रालय (गृहमन्त्रालय, विदेशमन्त्रालय, सूचना तथा प्रकाशन मन्त्रालय), को विषय से सम्बन्धित प्रश्नावली भेजी तथा उस पर उनके विचार, सम्मतियाँ और साहित्य। देश के विभिन्न विश्वविद्यालयों के अध्यक्षों और विद्वानों से भी पत्र-व्यवहार किया तथा उनकी सम्मतियाँ माँगी। वे विद्वान हैं--डॉ. उदयनारायण तिवारी--दारागंज, इलाहाबाद; डॉ. भगीरथ मिश्र, अध्यक्ष, सागर विश्वविद्यालय, सागर; डॉ. धीरेन्द्र वर्मा, अध्यक्ष हिन्दी-विभाग, सागर विश्वविद्यालय, सागर। डॉ नगेन्द्र--१६ केवलरीलेन दिल्ली--७, डॉ. वेदप्रताप वैदिक, सह--सम्पादक, नवभारत टाइम्स, बी--२/६१ सफदरगंज एनक्लेव नई दिल्ली; डॉ. विनयमोहन शर्मा--ई/६, अरेरा कालोनी भोपाल; डॉ. ब्रजेश्वर वर्मा, निदेशक केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा (उ प्र); डॉ. विजयेन्द्र स्नातक-अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, फादर कामिल बुल्के--अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, सेन्ट जेवियर कालेज, राँची (बिहार), अनन्त गोपाल शेवड़े, महासचिव विश्व-हिन्दी-सम्मेलन, नागपुर; मारीशस के प्रधानमंत्री--सर शिवसागर रामगुलाम; प्रादेशिक शासन (म. प्र.), राजभाषा-विभाग के सचिव, मध्यप्रदेश शासन, श्री रमाप्रसन्न नायक, संचालक केन्द्रीय सचिवालय, हिन्दी परिषद; बी. आर. नारायण, सहायक शिक्षा अधिकारी, केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, ७ वेस्ट ब्लाक, रामकृष्णपुरम; श्री गुलजारीलाल, अनुभाग अधिकारी, विदेश मन्त्रालय, नई दिल्ली; संसद सदस्य लोकसभा-श्री नवाबसिंह चोहान, ४० अशोक रोड़, नई दिल्ली, राजभाषा समिति के सदस्यगण। इनमें से कतिपय विद्वानों की सम्मितियाँ और सुझाव प्राप्त हुए, जिनसे विषय के अध्ययन में सरलता रही।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

डॉ. दिलीप कुमार चौहान

एम.ए., पीएच.डी.
साहित्यरत्न, सम्पादन कला विशारद

आत्मज : श्री शेषनारायण चौहान
जन्म तिथि : ८, अगस्त, १९४७, इन्दौर
रचनाएँ : प्रकाशित ७ ग्रंथ।

समय-समय पर विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में समीक्षाएँ, लेख और लघुकथाएँ प्रकाशित तथा आकाशवाणी से वार्ताएँ प्रसारित।

इन्दौर, गुना, देवास तथा सांवेर के म.प्र. के शासकीय महाविद्यालयों में हिन्दी के प्राध्यापक एवं 'वीणा' मासिक के अवैतनिक व्यवस्थापक तथा '*मालवा के लोकगीत*' ग्रंथ के संपादक।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy: Dayanidhi Mishra ji.

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

प्रकाशक : श्री हिन्दी साहित्य समिति, इन्दौर

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji